॥ ॐ ॥

सुलभ वास्तुशास्त्र

अथवा

आधुनिक भवन निर्माण प्रणाली

मूलकर्ता —

वास्तुवाचस्पति, रघुनाथ श्रीपाद देशपांडे,

बी ई, ए एम् आय ई इंजिनियर,

बॉम्बे पी डब्ल्यू डी

भाषांतरकार —

प कृष्ण रमाकान्त गोखले, नारदमुनि

–१९३१] मूल्य ४) रु [प्रथमावृत्ति

प्रकाशक:—
रघुनाथ श्रीपाद देशपांडे,
इंजिनियर, पी डब्ल्यु डी संगमनेर,
जि अहमदनगर, बॉम्बे प्रेसिडेन्सी

मुद्रक
एस् व्ही परुळेकर,
मुंबईवैभव प्रेस, सेंडर्स्टरोड
गिरगांव, मुंबई नं ४

Residential Buildings Suited to India

पृष्ठ सख्या ३१०; मनोहर वाईडिंग; उत्कृष्ट जिल्दार कागज

यह किताब अंग्रेजीमें लिखी है अपितु अंग्रेजी न पढे हुए लोगोंको आसानीसे जानकारी होगी इसी तरह इसमें छोटे बडे ९० मकानोंके नक्शे मनोहर बाह्य दृश्यके साथ २६५ चित्रोंमें दिये गये हैं। अखिल भारत वर्षके विद्वानोंसे इस किताबको कितना पुरस्कार मिला है यह नीचे देखिये।

Mysore Economic Journal—"A *excellent practical hand book* which ought to be welcome to both amateur builders and professional engineers The chief utility of the book is its *informative character* Much that is to be found in *it cannot be found in any other book* we are aware of Altogether an *excellent* manual of Building construction of *high practical utility*

The Hindustan Relew, Patna—An excellent treatise on the practical aspects of planning and constructing domestic buildings This *Meritorious work* should prove helpful *specially* to middle classes. By its publication the author has rendered a useful *service to the country*

The Indian Rly Magazine Madras—A *very useful* publication. The author has done a *real service* He is *not a theorist* but a *practical house builder* He makes

no fetish of Western ideas, but knows well what is required for his poor countrymen.

The Hindustan Times, Delhi—An *excellent work* on the practical aspects of planning and constructing domestic buildings suited to Indian conditions We are sure that the work would be of great educational value not only to engineers and contractors but to the reading public in general

The New India, Adyar, Madras—Mr Deshpande has handled the whole subject in a homely manner and with an eye to a *harmonious blending* of *the ancient and modern methods* of building construction His work *is quite original* he is the first engineer who has succeeded in dealing in a non technical manner with the problems of building construction.

Mysore Engineers Association Bulletin—The book will be found useful for laymen and school and college students as it contains a *fund* of *information* of general interest in constructing comfortable dwellings. *Practising Engineers, too* can take many hints and tips from the author The designs contained are numerous and varied. On the whole the author deserves thanks for his *very useful publication*

Local self-Govt Quarterly Journal, Bombay—Mr S S. Naik I C E; B Sc (Edin) Engineer writes—A profusely illustrated book of *absorbing interest* The author s attempt at making Engineering problems easy enough for laymen is *very successful The plans given are really very good* and *very useful* and will fit in for most cases. A *very able* and *useful* book an *excellent guide* with elevations, costs and useful notes etc. it leaves nothing to be desired.

भूमिका
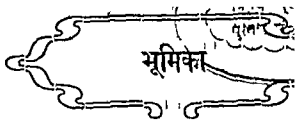
उस परमपिता परमात्माने संसार में स्थिरता उत्पन्न करनेके हेतु प्राणिमात्रमें आत्मरक्षा और सुखप्राप्तिके भाव कूट-कूट कर भर दिये हैं। संसार के समस्त जीव, चाहे वे जलचर या नभचर अथवा व्योमचर हों, सबके सब अपने जीवनकी अन्तिम घडी तक इन भावोंके भक्त बने रहते तथा उनके प्राप्तिकी निरन्तर चेष्टा करते रहते हैं।

तात्विक दृष्टिसे विचार करने पर प्राणिमात्रको जिस प्रकार अपनी आत्मरक्षा और सुखप्राप्तिके लिये भोजन और वस्त्रकी नितान्त आवश्यकता प्रमाणित होती है उसी प्रकार उसे अपने लिये सर्व्वाङ्गीणरूपसे उपयुक्त निवासस्थानकी भी आवश्यकता बोध होती है। यही कारण है कि, हम कृमी-कीट-पतङ्गोंसे लेकर मनुष्योंतक जिस तरह सर्व्वसमानरूपसे भोजन और पावरणकी खोजमें भटकते देखते हैं, उसी तरह उन्हें अपने लिये निवासस्थान बनाने, बनवाने अथवा प्राप्त करने के प्रयत्नमें निरन्तर तल्लीन हुए देखते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, जीवमात्रकी आत्मरक्षा और सुखको स्थिर रखनेवाला एक महत्वपूर्ण साधन निवासस्थान भी है। इसी लिये हम पक्षियों को घोंसले बनाते, चूहोंको बिल खोदते, मधुमक्षिकाओंको छत्ते बनाते, चाटी और दीमकको बमीरे तैय्यार करते, वन्य पशुओंको मॅंदि बनाते तथा मनुष्योंको घर बनाते देखते हैं।

ईश्वरकी रचनामें मनुष्य ये समस्त जीवधारियोंका राजा सिद्ध हुआ है। अत उसमें अन्य जीवोंकी अपेक्षा यह भाव विशेष रूपसे सम्पन्न है। यही कारण है कि हम अपने घरकी अबोध कन्याओं तथा शिशुओं तकको मिट्टीके घरले और प्रासाद बनाते देखते हैं। विशेषकर दीवालीके समय तो मारतके प्रत्येक घरमें इसका प्रत्यक्ष प्रमाण देखनेको मिलता है।

यदि दूरदृष्टिसे देखा जाय तो हमारा मानवी समाज अपना निजी घर बनवानेमें बड़ा गौरव और पुरुषार्थ समझता है। यद्यपि किसी का छोटा-मोटा और टूटा-फूटाही

पर क्यों न हो तथापि वह घरवाले धीसम्पन्न मनुष्यको बड़ी अधिक मान सम्पन्न और विश्वसनीय समता जाता है। फिर चाहे उसके घरमें भूजी भांग भी क्यों न मिले। वह बेघरवाले करोड़पतिसे बड़ी अच्छा है।

उक्त विवेचनमें सर्व साधारण मानवसमाजके हितकी दृष्टिसे मनुष्यमात्रका निजी निवासस्थान होना कितना आवश्यक है यह भली भांति सिद्ध हो जाता तथा साथही साथ यह भी प्रमाणित होता है कि मनुष्यके हृदयमें निवास करनेवाली आत्मरक्षा तथा सुखप्राप्तिके भावही इस नश्वर जगत्में मनुष्यकी नश्वर देहको सुखपूर्वक रहनेके निमित्त उसे निजी निवासस्थान बनानेको बाध्य करते हैं। उन्ही भावोंकी विस्तार-परम्पराके साथ जिस कार्य-परम्पराका उदय होता है उसीको सर्वसाधारण भाषामें 'वास्तुशास्त्र' (Science of Building construction) कहते हैं। यह स्थापत्यशास्त्र (Engineering) का एक उपाङ्ग है।

स्थापत्य-शास्त्रकी उपयुक्तताके सम्बन्धमें विचार करनेपर यह भली भांति सिद्ध हो जाता है कि यह कला काष्ट पाषाणादि पदार्थोंके नैसर्गिकरूपमें इच्छानुकूल परिवर्तन करती हुई उनमें सौन्दर्य उत्पन्न करती तथा उनकी उपयोगिता बढ़ाती है। प्रकृतिनिर्मित जड़ पदार्थोंमें इसके द्वारा विभिन्न भावोंकी उत्पत्ति होती रहती है। इसके द्वारा देशका मूर्तिमान् इतिहास प्रकट होता, वहांके निवासियोंके गुणधर्म, स्वभाव आचार, विचार और व्यवहारोंका पता चलता है।

भारतवर्षमें यह शास्त्र नवीन नहीं अपि तु सबसे प्राचीन है। प्रथम यह हमारे यहां मौखिक रूपमें रहा। पश्चात् समय पाकर उसका समावेश वेदसूत्र ग्रन्थोंमें स्मृतियोंमें तथा पुराणोंमें हो गया।

आज भी मत्स्यपुराण भृगुसंहिता, मयमत, मानसार, नारदशिल्प, वास्तुविद्या इत्यादि सैकड़ों अत्युत्तम प्राचीन ग्रंथ महाकराल कालके मुहसे बच रहे देखनेमें आते हैं। कालावधिके पश्चात् ज्यों ज्यों इस शास्त्रका विस्तार होता आरम्भ हुआ त्यों त्यों उसे वर्योंके अतिरिक्त एक स्वतन्त्र रूप दिया गया और स्थापत्य वेदके नामसे उपवेदोंकी एक शाखा बना गया है। इसीके पश्चात् इस शास्त्र सम्बन्धी १८ संहितायें बनीं। वेदादिकोंमें जो विश्वकर्माका नाम आता है तथा रामायण महाभारतमें मयासुरका उल्लेख होता है वे तत्कालीन स्थापत्य शास्त्रके

पूर्णज्ञाते एवम् सूत्रधार थे। विश्वकर्माके अनुयायी धार्मिक वास्तु-विज्ञानको-तथा मयासुरके अनुयायी व्यावहारिक वास्तुको प्रवर्तक थे।

हमारे यहाँ आज ऐसे ग्रन्थोंकी खोज करना तथा उनका पुनरुद्धार करना अत्यन्त आवश्यक कार्य है। किन्तु कितने दुःखकी बात है कि, आज हमारा समाज उस ओरसे मुँह फेरे हुए है। यदि कोई एक्का-दुक्का इन शास्त्रीय विषयोंके अन्वेषणकी ओर झुकता भी है तो उसे समाजकी कोई सहायता नहीं मिलती। पाश्चात्य देशोंमें ऐसे लेखकों तथा प्रकाशकोंको वहाँका समाज तन-मन-धनसे सहायता पहुँचानेमें तत्पर रहता है। किन्तु यहाँ यदि किसीने वैसा प्रयत्न किया भी तो सिवाय आर्थिक और सामुदायिक हानिके उसे कोई लाभ नहीं होता। यही कारण है कि, ऐसे-ऐसे महत्वपूर्ण शास्त्रोंका हमारे यहाँ कोई अन्वेषण और विकास नहीं होने पाता।

बड़े हर्षकी बात है कि, इधर कुछ दिनोंसे देशके कतिपय विद्वान् इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नकी ओर झुके हैं। स्थापत्यशास्त्रके सम्बन्धमें हिन्दीमें आज यह पहिलाही इस स्वरूपमें उद्योग हुआ है। यह भी मेरी स्वीय कल्पनाके कारण नहीं अपितु इसका सारा श्रेय है मेरे परम मित्र श्रीयुत **रघुनाथ श्रीपाद देशपाण्डेजीको**। आपने इसी नामकी एक पुस्तक सर्वसाधारण समाजके उपयोगकी दृष्टिसे मराठीमें लिखी है। जिसका यह हिन्दीमें भावानुवाद है। इसमें सन्देह नहीं कि, इसमें मैंने आवश्यकतानुसार योग्य परिवर्तन किये हैं। किन्तु फिर भी कुछ मतविरोध ऐसे रह गये हैं, जिन्हींमें उक्त लेखक महोदयके भावोंसे बंधा हुआ होने कारण दल न कर सका। फिर भी जहाँ अत्यन्त आवश्यक मालूम हुआ वहाँ मैंने समझौतेके रूपमें दोनोंही भावोंका सम्मेलनसा कर दिया है। अस्तु,

इसमें सन्देह नहीं कि, क्या यह अनुवाद और क्या मूल पुस्तक दोनोंही न तो ऐतिहासिक विवेचन करते हुए लिखी गयी हैं और न इसमें उन सारी बातोंका समावेश किया गया है, जिससे मनुष्य स्थापत्य शास्त्रकी साङ्गोपाङ्ग शिक्षा ग्रहण करे अथवा स्थपतिवर्ग तथा उनके कर्मचारीगणोंको इस शास्त्रके सम्बन्धमें कुछ तादृश नवीन जानकारी हो। तथापि सार्वजनिक हितकी दृष्टिसे स्थापत्यशास्त्रके सम्बन्धमें जो कुछ भी जानना अनिवार्य है तथा जिसके ज्ञान बिना मनुष्य अपना निवासस्थान सस्ता-सुलभ-सुन्दर और सुदृढ नहीं बना सकता उसीका समावेश प्रस्तुत पुस्तकमें किया गया है। वर्तमान व्यापार युगमें व्यवसायी ठगोंसे बचनेके

निमित्त नियामस्थान भवनोंकी अभिलाषा रखनेवाले मनुष्योंको स्थापत्य शास्त्र सम्बन्धी प्रारम्भिक ज्ञानका होना अत्यन्त आवश्यक है और यही इस पुस्तकका मूल उद्देश है।

यदि इस उपक्रमको समाजने अपनाया तो इसमें सन्देह नहीं कि शीघ्रही इस शास्त्रके सम्बन्धमें सम्पूर्ण दृष्टियोंसे परिपूर्ण ऐसा एक सुन्दर विशाल ग्रन्थ किसी विद्वान् द्वारा निर्माण होकर भारतमाताके साहित्य भांडारकी शोभा बढ़ायेगा तथा अन्य विद्वान् उसका अनुसरण करते हुए देशके अन्य लुप्तप्राय शास्त्रोंका पुनरुद्धार करनेको अग्रसर होंगे।

अन्तमें मैं अपने उन परम कृपालु स्नेहियोंको जिन्होंने मुझे इस पुस्तकका अनुवाद करनेमें आशातीत सहायता प्रदान की है, हार्दिक धन्यवाद देता हूं। उन कृपासागर स्नेहियोंमें ग्वालियरके एडमिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर श्रीयुत डॉ॰ यशवन्त गोविन्द आपटे तथा मेरे आत्मबन्धु सही श्रीयुत विन्धेश्वरी प्रसादजी मिश्र पैलेस इञ्जिनियरके नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। वस्तुत यदि पूछा जाय तो इन्हीकी सहायतासे मेरा यह अनुवाद इतने शीघ्र मूर्तस्वरूपमें आ सका है इति।

आपका विनयावनत

ग्वालियर — कृष्ण रमाकान्त गोखले 'नारदमुनि'

अनुक्रमणिका

हिंदी सुलभ वास्तुशास्त्र

१—लागत

जिस समय मनुष्य अपने रहनेके लिये अपना निजी भवन बनवानेका सकल्प करता है, उस समय उसके सन्मुख प्रमुखतया दो विकट समस्याएं उपस्थित हो जाती हैं । जिनको सुलझाये बिना वह अपने इष्ट उद्देश्यको कार्य परिणत् करनेमें कभी समर्थ नहीं हो सकता । वे समस्याए ऐसी जटिल एवम् विकट होती हैं कि, यदि आरम्भ ही से मनुष्य उनकी ओर ध्यान न दे तो आगे चलकर उसके कुल संकल्प मे बडी-बडी बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं। जिनके कारण उसे अपने किये पर अत्यन्त पश्चात्ताप करना पडता तथा भयङ्कर हानिके साथ-साथ चित्तके आनन्दसे एवम् मनोनीत आशामय कल्पनाओंसे सदाके लिये हाथ धोना पडता है। किन्तु यदि आरम्भमें ही मनुष्य उनकी ओर ध्यान रखता हुआ भवन निर्म्माणके मनोरथ की पूर्तिका विचार करे तो उसका वही काय अत्यन्त उत्तम, आनन्ददायी और आशामय रूपसे सम्पन्न होता है।

किसी भी कार्य्यको करने का सकल्प करनेके पूर्व्व मनुष्यको अपनी शक्ति-परिस्थिति एवम् आवश्यकताका अन्दाज लगाना पडता है। यों तो इस आशामय जगत्में मनुष्यकी आवश्यकताए कभी कम नहीं होतीं। तथापि जो आवश्यकताए उसकी शक्ति एवम् परिस्थितिकी अधिकार सीमामें आती हैं वे अवश्य पूर्ण होती हैं और मनुष्यको उन्हींसे कुछ आशा करनी चाहिये तथा उन्हींको सन्मुख रखते हुए अपने जीवन सौख्यका मार्ग स्थिर करना चाहिये।

उदाहरणार्थ,—"अपने निवासके लिये भवन निर्म्माण करना।" इस आवश्यकताकी पूर्तिका सकल्प करनेके पूर्व्व मनुष्यको अपनी आर्थिक परिस्थिति तथा अनिवार्य आवश्यकतायें इन दो बातोंका आरम्भसे ही अन्दाज कर लेना चाहिये। आधुनिक जगतमें पूंजी ही मनुष्यमात्रकी प्रबल शक्ति है। अत पहिले उसका अन्दाज लगाते हुए उद्दिष्ट भवनके आकार-प्रकार-सौन्दर्य एवम् आवश्यक सुख साधनोंका आयोजन और निर्धारन करना चाहिये। यह नहीं कि, पूजी है,-एक हजार रुपये और आयोजन किया इतना लम्बा-चौड़ा कि, उसमे पूंजीसे अधिक खर्च होवे। यदि सौभाग्यसे 'पूजी'का कोई प्रश्न सन्मुख उपस्थित न हो और पर्य्याप्त रूपसे खर्च करनेकी गुञ्जाइश हो, तो भी यह देखना आवश्यक है कि, हमारा (Scheme) कार्यक्रम क्या है? हम अपने निवास गृहमें किन-किन बातोंकी आवश्यकता है और उनके लिये हमें कितना अर्थ व्यय करना उचित एवम् आवश्यक है?? यह नहीं कि पैसा खूब हुआ, इसलिये झोंकते चले उसे बेफिक्रीके साथ अन्धाधुन्द। इस प्रकारकी नीति धारण करना भी पूंजीका अपव्यय करते हुए मूर्खता मोल लेना है।

इन्हीं दो समस्याओंको दृष्टिकोणमें रखते हुए भवननिर्म्माणका सकल्प करनेके पूर्व्व उसमें कार्यरूपमें लाई जानेवाली योजनाओंकी ओर ध्यान रखकर तत्-प्रीत्यर्थ होनेवाले खर्चका एक अन्दाजी ब्यौरा लगाना पड़ता है। जिसके लिये बड़े अनुभवके पश्चात् स्थपतिवर्गने कुछ साधारण नियमसे बना रखे हैं। जो प्रत्येक मनुष्य समझ सकता और उनकी शरण लेकर अपने लिये उपयुक्त एवम् अपनी शक्तीके भीतर निवास स्थान बनवानेके लिये उसके खर्चका अन्दाजी ब्यौरा बता सकता है। प्रस्तुत पुस्तकके प्रेमी पाठकोंके हितार्थ हम उन नियमोंको नीचे उद्धृत कर देते हैं—

मुख्य सूचना—जिस भवनका सृजन करना हो, उसके चौकीकी बाह्यगत लम्बाई-चौड़ाईका परस्परमें गुणाकार कर वर्गफुटमें

उसका क्षेत्रफल निकाल ले। पश्चात् जिस श्रेणीका भवन बनाना हो उसके अनुसार उक्त क्षेत्रफलसे निम्नलिखित दरोका गुणाकार कर दे। ऐसा करनेसे इष्ट खर्चके ब्यौरेका अन्दाज निकल आता है। सम्भव है कि, इन दरोंमें देश-काल एवम् पात्रको देखते हुए समयानुसार कुछ परिवर्तन करना पडे तथापि स्थूल मानसे अन्दाज लगानेके लिये इन दरोंका अच्छा उपयोग होगा, इसमें सन्देह नहीं।

१ पत्थर अथवा पक्के ईंटोंकी चूने से जुडाई, बाहरसे सिमेण्ट की दरजें बनाना, भीतरसे चूने का गारा देना तीन इश्वी चूनेके कान्क्रीट पर शहाबादी पलस्तर का फर्श, काँच-चद्दर इत्यादि से बनने वाले खिडकियों के कपाट, सागवानी तरनबन्दी पर मगरौली खपडोंका छप्पर, इत्यादि समस्त आवश्यक एवम् उत्तम भवनके लिये उपयुक्त तथा साधारण नक्शीके काम सहित १० से १२ फुट ऊँचे, जिसके चौकी की ऊँचाई तीन फुट हो। कामम प्राय ५ रुपये प्रतिवर्ग फुटके हिसाबसे खर्च बैठता है।

२ पत्थर अथवा पक्के ईंटोंकी चूनेसे जुडाई, बाहर सिमेण्टकी दरजें, भीतर चूनेका गारा तीन इश्वी कान्क्रीटपर शाहाबादी पलस्तरकी फर्शबन्दी, पनालीदार चद्दरोंपर मगरौली खपडोंके छप्पर बैठकखाने मात्रकी खिडकियोंके कपाटोंमें काँच अथवा तावदान की नियुक्ति, अन्यान्य कपाट सादे अथवा 'शटर' दार, ९ फुट ऊँचे, जिसके चौकीकी ऊँचाई २ फुट हो, मजबूत किन्तु सौन्दर्यकी दृष्टिसे गौण काममें, प्राय ४॥ रु० प्रतिवर्ग फुटके हिसाब-से खर्च बैठता है।

३ पेटमें सागवानके लट्ठे देकर चतुर्दिक्से पत्थर अथवा पक्के ईंटोंकी मिट्टीके सहारे जुडाई, बाहरसे चूने अथवा सिमेण्ट की दरजें, भीतर मिट्टीका गारा, कमरोंके अर्द्धभागमें बालू पर चूनेसे युक्त शहाबादी पलस्तर। शेष अर्द्धभागमें बालुकामय फर्श, मगरौली अथवा नलीदार कौवेलुओंके छप्पर, खिडकियोंके कपाट सादे, ८ फुट ऊँचे -जिसके चौकीकी ऊचाई १॥ फुट हो, काममें प्राय ३॥। रु० प्रतिवर्ग फुटके हिसाबसे खर्च बैठता है।

उपरोक्त तीन श्रेणी विशेष भवनोंके लिये बैठने वाले खर्चका अन्दाजी ब्यौरा केवल एक मंजिलकी इमारतोंके लिये कूता गया है। किन्तु यदि उनकी जगह दो मंजिलके भवन बनाने हों तो उनके लिये होने वाले खर्चका अन्दाज प्रत्येक श्रेणी विशेषकी एक मंजिली इमारतके उक्त अन्दाजी खर्चके ब्यौरेके हिसाबमें दूसरे मंजिलके लिये प्रति वर्ग फुटके पीछे चार आने कम कर निकाल लेना चाहिये। उदाहरणार्थ,-मान लीजिये, हमें एक भवन बनानेमें दस हजार रुपये लगाने हैं। तो हम प्रथम श्रेणीका भवन दो हजार वर्ग फुटके घेरेमें, दूसरे श्रेणीका भवन २२२२ वर्ग फुटके घेरेमें तथा तीसरे श्रेणीका भवन २६७० वर्ग फुटके घेरेमें बना सकेंगे। अथवा और भी सुलभ पद्धति समझनेके लिये मान लीजिये हमारे पास भवन निर्म्माणके लिये दस हजार रुपयेकी पूँजी है, तो हम २००० वर्ग फुटके घेरकी एक मंजिली इमारत बनवानेके लिये इस प्रकार खर्च बैठगा—

१ प्रथम श्रेणी—२००० × ५ = १०,००० रुपये
  द्वितीय श्रेणी—२००० × ४॥ = ९,००० „
  तृतीय श्रेणी—२००० × ३॥। = ७,५०० „

यही यदि हमें इसी घेरेमें दो मंजिली इमारत बनवानी हो तो उसमें श्रेणी विशेषके हिसाबसे निम्न लिखित लागत बैठेगी—

२ प्रथम श्रेणी—२००० × ५ + २००० × ४॥। = १९,००० रुपये
  द्वितीय श्रेणी—२००० × ४॥ + २००० × ४। = १७५००
  तृतीय श्रेणी—२००० × ३॥। + २००० × ३॥ = १२,५०० „

कहीं-कहीं विशिष्ट आकारके इमारती खण्डोंके हिसाबसे लागत निकालनेकी परिपाटी है। इस परिपाटीमें एक-एक इमारती खण्ट दीवालकी भीतरी व्यवहारोपयोगी जगहके बराबर माना जाता है। यह जगह प्राय ५० वर्ग फुटके बराबर मानी जाती है और इसी हिसाबसे अर्थात ५० वर्ग फुटका एक खण्ड मान कर

तथा दीवालके लिये १५ से लेकर ३० प्रतिशत तककी जमीन और पकड़ी जाती और प्रत्येक खण्डका लागत दाम छूता जाता है। याने इस हिसाबसे प्राय: ६४ वर्ग फुटका एक इमारती खण्ड निर्धारित कर उसके हिसाबसे सारे भवनकी लागतका अन्दाज निकालते हैं। इस प्रणालीसे प्रथम श्रेणीके भवनको प्रत्येक खण्डके पीछे ३२० रु, द्वितीय श्रेणीके भवनको प्र ख पीछे २८० रु तथा तृतीय श्रेणीके भवनको प्र ख पीछे २४० रु लागत दाम बैठता है।

इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं भवन का लागत दाम घन फुटोंके हिसाबसे निकालनेकी भी परिपाटी है। इस पद्धतिमे जमीन पर बना हुआ भवनका सम्पूर्ण भाग एक सन्दूकनुमा समझ कर उसकी घनफुटोंमें नाप ली जाती है। उसमें 'सहन' इत्यादि भाग भी गणनामें आ जाते तथा ऊँचाई जमीनसे लेकर दीवालकी ऊपरी मिलान तक पकड़कर उसमें छतकी आधी ऊंचाई जोड दी जाती है। यदि छत पक्का एवम् चूनेका हुआ तो गचके कठघरे की पूरी ऊँचाई पकडी जाती है। लम्बाई-चौडाई की गणनाके लिये चबूतरे की नाप ली जाती है और सबको मिलाकर सम्पूर्ण भवनका घन फल निकाल लिया जाता है। इस हिसाबसे—

प्रथम श्रेणीके भवनको—५ आने

द्वितीयश्रेणी ,, ,, ४॥। आने

तृतीयश्रेणी ,, , ४॥। आनेके करीब

प्रति घन फुटके हिसाबसे लागत बैठती है।

उक्त विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि, प्रथम और द्वितीय श्रेणीके भवनोंमे इस निर्धारण प्रणालीके हिसाबसे प्राय: एकही लागत पड़ती है। इसका कारण यह है कि, भवनकी प्रत्येक श्रेणीके अनुसार उसकी ऊँचाई तथा उसके कारण निकलने वाले घनफल की वजहसे प्राय: उसकी लागतके प्रमाणमें ही कमी-बेशी होती रहती है। अस्तु।

भवन निर्माणका अन्दाजी खर्च कूतनेके पहिले सबसे प्रथम एक बात और ध्यानमें रखनी पडती है। वह यह है कि, भवनमें जितनेही बड़े-बड़े कमरे निकाले जाँय उतनाही लागतकी दृष्टिसे कम खर्च बैठता है। धर्मशाला, पथिकाश्रम अथवा किराया उगाहनेकी दृष्टिसे बनाये जानेवाले बड़े-बड़े भवनोंमें,-जिनमें छोटे-छोटे स्वतन्त्र कमरे बनाये जाते हैं अधिक खर्च बैठता है। इसका कारण यह है कि, भवनमें जितनेही अधिक कमरे बनाये जायगे, उतनीही दीवालें बढेंगी, उनके लिये अतिरिक्त साधन-सामग्री खर्च होगी कपाट, दरवाजे, खिडकियां बढेंगी तथा उससे रुपयोंका व्यय अधिक होगा।

२—किफायत

यों तो भवन निर्माण कार्यमें अधिक पूंजी लगायी करती है किन्तु साथही साथ उस शास्त्रसे अनभिज्ञ होनेके कारण यथेष्ट रूपसे धनका अपव्ययभी हो जाया करता है। यह तो मानी हुई बात है कि, जो शौकीन अपने रहनेके लिये भवन निर्माण करवानेका सकल्प करता है, वह अपनी शक्तिभर उसके निमित्त पर्याप्त प्रमाण मे पूंजी इकट्ठी कर रखता है। किन्तु इस शास्त्रसे नितान्त अनभिज्ञ होनेके कारण जो कार्य उसकी उस सग्रहित पूंजीमें होना चाहिये वह नहीं होने पाता और व्यर्थमें उसकी पूंजीका एक बड़ा हिस्सा अपव्यय होकर निकल जाता है। यह कार्य एक ऐसा कार्य है, जो बात-बातमें पैसा मांगता है। जहां इस तरह अनवरत पैसेकी आवश्यकता आ पड़ती है, वहाँ उसके निकलनेके भी कइ मार्ग खुल जाते हैं। स्वत शास्त्रसे अनभिज्ञ होनेके कारण भवने च्छुक मनुष्यको-दूसरोंका अवलम्ब लेना पड़ता है। जो मकान मालिककी अनभिज्ञतासे लाभ उठाकर यथेष्ट रूपसे अपनी झोलियाँ भरते रहते हैं। उन्हें-अपनी झोलियाँ भरनेके लिये स्थान-स्थान

पर गुञ्जाइशें रहती है। कार्य बृहद्-जटिल एवम् मोटीसी पूंजी खाने वाला होनेके कारण मालिकको यह पताही नहीं लगता कि, उसकी पूंजीमेसे कितना अँश वस्तुत भवन निर्म्माणके निमित्त-खर्च हुआ है और उसमे जितना कार्य हुआ है, वह उतने मूल्यका है या नहीं। इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं तो किंचित् दुर्लक्ष एवम् अनाभिज्ञताके कारण अफलातूनी खर्च हो जाया करता है। उसी खर्चको बचानेकी दृष्टिसे पाठकोंको निम्नलिखित बातोंका ज्ञान होना आवश्यक है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि, मकान मालिक मकान बनवाते समय केवल किफायत ही किफायत देखे। उसे सर्व्वदा यह ध्यान रखना चाहिये कि, भवन निर्माणके कार्यमें किफायतपर दृष्टि रखनेके साथ-साथ वह उसकी मजबूती-पुख्तई पर भी यथेष्ट ध्यान दे। क्योंकि, अधिकाँश रूपसे यह बात देखनेमे आती है कि, जो भवन सुदृढ, सुसम्बद्ध और ठोस रहते है वे चिरजीवी होते हुए सुन्दर-सुविशाल, अधिक पूंजी खाये हुए किन्तु तकलादी भवनोंकी अपेक्षा विशेष सस्ते सिद्ध होते है। तकलादी सुन्दर और विशाल भवन बनवाना श्रीमानोंको ही बर्दाश्त हो सकता है,-गरीबोंको नहीं! वे लोग उनकी प्रतिवर्ष मरम्मत करवा सकते और उसके भीत्यर्थ होने वाले वार्षिक खर्चका भार सह सकते हैं। किन्तु गरीबोंके लिये यह खर्च सहना नितान्त दुश्वार और असम्भव है। किफायत उसी जगह की जा सकती है जहाँ वह आवश्यक एवम् उचित हो। सतर्कता एवम् शास्त्रज्ञान होनेसे ही किफायतकी पूर्ति हो सकती है और उसीका दिग्दर्शन करानेके लिये नीचे लिखी कुछ आवश्यक बातोंकी ओर पाठकोंका ध्यान आकृष्ट किया जाता है—

१ भवनकी लम्बाई-चौडाई जितनी ही अधिक मिलती-जुलती हो, उतनाही कम खर्च उसके निर्म्माणमे बैठता है। तङ्ग और लम्बाकार भवन चौकोर भवनोंकी अपेक्षा अधिक महँगे पडते हैं। उदाहरणार्थ मान लीजिये कि एक भवन ८० फुट लम्बा और १० फुट चौडा है तथा दूसरा भवन ४० फुट लम्बा और ४० फुट चौडा

है, तो दोनोंही भवनोंका क्षेत्र फल सर्व्व साधारणरूपसे १६०० फुट,-बराबरही होगा । किन्तु यदि बाहरकी दीवालोंकी नाप हिसाबमें लेकर दोनों भवनोंके दीवालोंकी चोड़ाई १॥ फुट तथा ऊँचाई १० फुट पकड़ी तो पहिले भवनकी बाहरी दीवालकी नाप—

लम्बी दीवालें—२×८०×१॥×१०=४८००

नाटी „ „—२×२०×१॥×१०=१२०० कुल नाप ६००० घ० फु०

इसी प्रकार दूसरे भवनकी बाहरी दीवालकी नाप—

४×४०×१॥×१०=४८०० घ० फु०

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, पहिला क्षेत्रफल दूसरेकी अपेक्षा सवाया हो जाता है ।

इसके अतिरिक्त चौकोर भवन शीतकालमें गरम तथा ग्रीष्म ऋतुमें ठण्डा रहता है । उसका छत सादा और कम खर्चमें बनकर सुन्दर दिखलाई देता है । भवनके अन्तर्गत कमरोंकी अन्तर्गत स्वतन्त्रता एवम् संरक्षित (Privacy) रखनेके लिये मध्यमें आवागमनके लिये जो मार्ग (Passage) रखा जाता है, उसका क्षेत्रफल लम्बाकार भवनकी अपेक्षा चौकोर भवनमें बहुत ही कम रहता है और उसके कारण निवास एवम् व्यवहारके लिये चौकोर भवनमें पर्याप्त जगह (Living accommodation) मिल जाती है। किन्तु साथ ही साथ यह भी ध्यानमें रखनेकी बात है कि, चौकोर भवनके लिये भी यह नियम एक मर्यादा विशेष तक ही लागू रहता है । यदि वह भवन विशाल हुआ तो मध्य वर्तीय कमरोंमें यथेष्ट प्रकाश फैलनेके लिये उसके मध्यभागमें चौक अथवा स्थान-स्थान पर सहन एवम् आँगन रख छोड़ने पड़ते हैं । इसके अतिरिक्त इस परिस्थितिमें छतकी ऊँचाई भी बढ़ जाती है और किसी हदके बाद खर्च भी बढ़ जाता है ।

२ एक मञ्ज़िले भवनकी अपेक्षा उसके आधे क्षेत्रफल पर दोमञ्ज़िला भवन उत्तमताके साथ और कम खर्चमें निर्म्माण होता

है। इसमें सुविधा यह होती है कि, इस प्रकार की व्यवस्थामें नींव और छतका खर्च बच जाता है। जमीनके ऊपरसे बहनेवाली नालियों, तथा छतकी पनालियोंके लिये भी इस प्रकारके दो मझिले भवनमें अतिरिक्त व्यय नहीं करना पडता। सामान्यत: दो मझिले भवनोंके लिये जमीन भी कम लगती है। नगर और शहरोंमे बनाये जाने वाले भवनोंकी दृष्टिसे यह विशेष लाभजनक एवम् सुविधा की बात है। प्राय: यही तत्त्व आगे चलकर तीन मझिले भवनतक को किसी प्रकार लागू होता है। किन्तु इससे अधिक मझिलोंका भवन बनवानेके लिये नींव खूब सुदृढ-पुख्ती एवम् गहरी भरनी पडती है। साथ ही साथ दीवालोंकी मोटाई भी यथेष्ट प्रमाणमे बढानी पडती है। जिसके कारण खच बढ जाता है।

३ भवन निर्म्माण का खर्च कम करनेके लिये उसके मझिलोंकी ऊँचाई कम कर देना एक अत्यन्त सरल एवम् उपयुक्त साधन है। किफायत की ओर ध्यान रखते हुए जो भवन बनवाना हो, उसकी ऊँचाई ७।।, ८ फूट तक पर्य्याप्त हो जाती है। किन्तु चबूतरे की ऊँचाई में किसी तरहकी किफायत नहीं सोचनी चाहिये। कारण आरोग्यकी दृष्टिसे चबूतरेका यथेष्ट रूपसे ऊँचा रहना ही आवश्यक है। मझिल जितना ही अधिक ऊँचा होगा उतनीही घन फुट वायु उसके अन्दर समावेशित रहती है। किन्तु इस प्रकारके समावेश की अपेक्षा उसे खेलनेको पर्य्याप्त जगह मिलना आरोग्यकी दृष्टिसे विशेष महत्व रखता है। अत: इस सिद्धान्तको सन्मुख रखते हुए भवनमें जो खिडकियाँ बनवानी हों वे बडी और विशेषतया ऊँची बनवानी चाहिये। बम्बई-कलकत्ता आदि शहरोंमें जो भवन बनवाये जाते हैं, उनकी खिडकियाँ प्राय मझिलके तलेतक ऊँची रखी जाती है। आरोग्य की दृष्टिसे यह व्यवस्था नितान्त अच्छी और उपयुक्त है। ऐसी खिडकियोपर कलमदान रखनेसे उनके ऊँचे होने पर भी ये नितान्त सुन्दर प्रतीत होती हैं।

४ इसके अतिरिक्त लागतमें किफायत करनेका एक उपाय यह है कि, भवनकी बाहरी दीवालें जलवायुके प्रभाव तथा चोर

इत्यादिके उपद्रवसे बचनेकी दृष्टिसे भलेही पर्य्याप्तरूपसे मोटी बनाये, किन्तु भीतरी दीवालें ४॥ इससे अधिक मोटी न रखें । हाँ, यदि वैसीही आवश्यकता बोध हुई तो, ९ इञ्ची मोटाईके पङ्के बान्ध सकते हैं। छप्पर-छत अथवा मञ्जिलका भार सहनेके लिये इन पढवाके पेटमें लोहे अथवा लकड़ीके खम्भे-लग्धी इत्यादि देनेसे काम भली भाँति और सस्तेमें चल जाता है।

५ जिस जगह जो माल अधिक और कम खर्चमें मिल सकता हो उसका उपयोग करनेसे भी खर्चमें पर्य्याप्त बचत होती है । उदाहरणार्थ,-जहाँ पत्थरकी अधिकता हो वहाँ पत्थरका ही विशेष रूपसे प्रयोग करनेसे तथा जहाँ उसकी कमी हो और वह महँगा पड़ता हो वहाँ ईंटोंकाही व्यवहार करनमें पर्य्याप्त आर्थिक बचत होती है । कितनीही जगह नदी-नाले इत्यादि सन्निकट होनेसे वहाँ बालू-कङ्कड़-गिट्टी इत्यादि साधन सुलभतासे प्राप्त हो जाते हैं और साथही जलका अभाव न होनेके कारण यदि वहाँसे रेल्वे स्टेशन दूर न हों तो वहाँ 'सिमेण्ट' विशेष रूपसे सस्ता उपलब्ध हो सकता और कॉंक्रिटका काम विशेष सस्ता और अच्छा हो सकता है।

६ भवन निर्म्माण करवाते समय, सबसे आवश्यक ठोस एवम् महत्वपूर्ण बात ध्यानमें रखने योग्य यह है कि, जब कभी काम आरम्भ करवाना हो तब यह ध्यानमें रखे कि, जो काम छेड़ा जाय, उसका बँटवारा योग्य एवम् समुचित ढँगसे हो। यह नहीं कि जुड़ाई करने वाले कारीगरको सङ्गतराशीका और सङ्गतराशको पेंटराजका काम दे दिया जाय। प्रत्युत जो जिस क्रियाका कारीगर हो उसे वही कार्य्य भार देना चाहिये। साथही साथ यह भी नहीं होना चाहिये कि दरज भरनेके साधारणसे कार्य्यके लिये एक अधिक वेतन वाला क्षमतावान् कारीगर पेंटराज ही नियुक्त किया जाय । कारण ऐसा करनेसे किफायतके बजाय उल्टे अधिक द्रव्य हानि होती है । ऐसे-ऐसे मामूली काम साधारण-

नवसिखिए और-स्वल्प वेतनी पेशराजों द्वारा भी हो सकते है और उनके नियुक्तिकरणसे कामकी पूर्तिके साथ-साथ अर्थकी भी यथेष्ट बचत होती है।

७ लागतमें कमी होना बहुत कुछ अशोंमें मौसिम पर भी निर्भर रहता है। उदाहरणार्थ,-जाडेका मौसिम। इस मौसिममें दिन छोटा होता है। मजदूर लोग प्रायः ८ बजेसे पूर्व्व काम पर नहीं पहुँचते तथा सायङ्कालको ५॥ बजे ही, अन्धेर होनेके पूर्व्व घर चले जाते है। अतिरिक्त इसके सवेरे बडी शीत पडनेके कारण काम पर आते ही उनसे पूर्ण परिश्रमके साथ कार्य नहीं होता। हाथ-पैर अँकडे रहनेके कारण वे कुछ शिथिल रहते है। किन्तु वही गर्म्मीके मौसिममें दिन बड रहता है और वे सरलतासे ७ ही बजे अपने काम पर जाते है एवम् सायङ्कालके पूरे ६ बजे तक काम करते रहते है। यदि इस अवधिमें दोपहरकी छुट्टीके १॥-२ घण्टे बाद भी दिये जाँय तोभी प्राय ९ घण्टे से ऊपर अर्थात् जाडेके मौसिमकी अपेक्षा गर्म्मीमें सवाया काम होता है और व्यय की दृष्टिसे २० से लेकर २५ फी सदी तक मजदूरीमें बचत होती है।

८ कार्यका आरम्भ होतेही नियम-व्यवस्था एवम् समुचित साव धानी रखनेकी भी नितान्त आवश्यकता है। उदाहरणार्थ कौनसा माल कितना आया और उसमेंसे कितना खर्च हुआ, शेष माल कहाँ रखा गया इत्यादि बातोंका व्यौरेवार हिसाब रखना चाहिये। साथही साथ कौनसा काम कितना व्यय करनेसे हो सकता है, उसके करनेमें जो व्यय हुआ है वह वस्तुत समुचित है या नहीं, यदि खर्च अधिक बैठा है तो क्या, इत्यादि बातोंकी जाँच एवम् ध्यान सर्व्वदा रहना चाहिये तथा इस बातका प्रयत्न करना चाहिये कि, यदि किसी कार्यमें आशासे अधिक व्यय होता है, तो उसे कम करनेके लिये कोई ऐसा उपाय ढूँढ निकाले जिससे काम भी अच्छी तरहसे निकल जाय और व्ययभी कम हो। दैनिक वेतन

पर नियुक्त किये गये मजदूरोंमेंसे यदि कोई मजदूर काम चुराता हो और केवल दिनकी अवधि पूरी करताहो तो उसे तत्काल कामसे छुट्टी देनाही उत्तम है। कारण यह किसी न किसी तरह समय पूरा करनेकी चेष्टा करता है, काम नहीं। फल यह होता है कि, उस काम के पूरा होनेमें दिन अधिक लग जाते हैं और पूंजीका आशासे अधिक हिस्सा उस कामके प्रीत्यर्थ जितना खर्च देना चाहिये उससे अधिक,—व्यर्थमें व्यय हो जाता है।

९ एकबार आरम्भ किये हुए कार्य को किसी कारणवश रोक रखना भयानक हानिकर है। अतः प्रत्येक दिनका कार्य शेष होते ही पहिले यह जाँच कर लेनी चाहिये कि, दूसरे दिन जो कार्य आरम्भ होनेवाला है उसके लिये आवश्यक साधन-सामुग्रीमें से कोई वस्तु कम अथवा बिल्कुल ही चूक तो नहीं गयी है। यदि ऐसी कोई बात हो तो उसे उसी समय और उसी दिन मँगवा लेना चाहिये और यदि वह इतने शीघ्र उपलब्ध न हो सके तो दूसरे दिनके लिये कोई ऐसा कार्य निर्धारित कर रखना चाहिये कि मजदूर लोगोंको उस चूकी हुई अथवा कम पड़ी हुई साधन-सामग्रीके लिये अटक कर बैठे न रहना पड़े। दिनभरका काम समाप्त होते ही मजदूरोंको छुट्टी देते समय उनके मुकद्दमोंको बुलाकर दूसरे दिनका कार्यक्रम निर्धारित कर रखना चाहिये। जिसमें दूसरे दिन काम पर आये हुए मजदूर कामकी जानकारीके लिये रुके न रहें। तात्पर्य यह कि, प्रत्येक दिनका कार्य समाप्त होते ही दूसरे दिन आरम्भ होनेवाले कार्यकी उसी समय व्यवस्था कर रखना विशेष आवश्यक और व्ययकी दृष्टिसे काफी किफायत करता है।

१० यदि दरवाजे-खिड़कियों आदिके चौड़ाई की नाप, जहाँ तक सम्भव हो, एकही रखी जाय तो उसमें कारीगरोंको कार्य करनेमें विशेष सुभीता होता है। साथ ही साथ उनके एकाकारमें भवनका सौन्दर्य भी विशेष रूपसे बढ़ जाता है। इन दो बातोंके

अतिरिक्त एक तीसरा लाभ यह होता है कि, एकही चौडाईकी खिडकियो अथवा दरवाजोंके ऊपर जो कमाने, छाजन इत्यादि लगती है, उनके आधारके लिये व्यवहृत होनेवाली तख्तियों का आकार प्राय एकही होनेके कारण वे अल्प सरयामें लगती है और उससे खर्चकी बचत करनेम पर्य्याप्त सहायता मिलती है।

११ पेशराजीके काममे,-दरजोंको खोदकर, उन्हें पुन भरनेकी अपेक्षा उनका सृजन करते समयही यदि थोडी सतर्कता रखकर उन्हें भली भांति काटते हुए गुनियोंम ले लिया जाय तो नया माल खर्च न होकर पुराना माल नष्ट न होते हुए नयी दरजे भरनेका खर्च एवम् मेहनत बच जाती है । साथही साथ मजबुतीकी दृष्टिसे भी यह उपाय विशेष श्रेयस्कर सिद्ध होता है। यदि ऐसी ही आवश्यकता बोध हुइ तो २४ घण्टे पश्चात् दरजोंको करनीसे घोट देना चाहिये।

१२ परिस्थिति एवम् आवश्यकताको देखते हुए जो भी कार्य कराना हो, उसका विचार आरम्भमें ही सम्पूर्णरूपसे कर लेना चाहिये तथा एक पक्का कायक्रम निधारित कर उसीपर अन्ततक चलना चाहिये। यह नहीं कि, क्षण-क्षणपर कार्यक्रममें रद्दोबदल होता चला जाय । ऐसा करनेसे समय और अर्थ दोनोंहीकी हानि होती है। एकबार बने हुए कार्यको पुन नष्ट करना और उसकी जगह दूसरी योजना करना,-माल और मजदूरी दोनाहीका अपव्यय करना है।

१३ दरवाजोकी ऊँचाई ६ फुटकी रखना पर्य्याप्त हो जाता है। कहीं-कहीं यह निष्प्रयोजनही ६॥ से लेकर ७ फुट तक रखते हैं। यों तो यह ५॥। फुटही यथेष्ट है। किन्तु सब साधारणरूपसे ६ फुट रखनेमे कोई हानि नहीं। खर्चकी दृष्टिसे विचार करनेपर साधारणतया दीवालके लिये प्रति वर्ग फुटके हिसाबसे ७ आने खर्च बैठता है, किन्तु वही, दरवाजेके प्रतिवर्ग फुटके लिये प्राय २। रु अर्थात् दीवालकी अपेक्षा पचगुनी लागत पडती है। अत इससे यह स्पष्ट

हो जाता है कि, दरवाजे की ऊँचाईमें जितनी किफायत की जाय उतनी ही वह व्ययकी दृष्टिसे विशेष सन्तोष जनक सिद्ध होती है।

१४ भवन निर्म्माणमें जितनीही सादगीसे काम लिया जाय उतनीही खर्चकी बचत होती है। गोल अथवा अठ-पहेलुए भवनमें आगे-पीछे कोण निकालने पडते हैं। जिसके कारण खर्च अधिक बैठ जाता है। इसके अतिरिक्त इस प्रकारके भवनोंके छप्परका आकार टेढ़ा-मेढ़ा होनेके कारण उसके निर्म्माणमें खर्च तो अधिक बैठता ही है; साथही साथ उससे बर्साती पानी टपकनेकी सम्भावना रहती है।

१५ आगे चलकर यदि कोई मंजिल बनवानेका विचार हो तो आरम्भमेंही कुछ अधिक व्ययकर छत पर छप्पर लगवा देना चाहिये। जिसमें जिस समय मंजिलका निर्माण करना हो उस समय एकबार किया हुआ काम व्यर्थ नहीं जायगा। छतका पृष्ट भाग मंजिलकी सतह,-भूभाग-फर्श बन जायगी और बरामदे निकालनेसे भीवाले हो जायँगी। इसके विपरीत कार्य करनेसे एक बार चढ़ाया हुआ छप्पर तोड़कर यदि मंजिल बनानेका विचार किया जाय तो सारीकी सारी मजदूरी तो व्यर्थ जाती ही है; साथही साथ आरम्भमें लगे हुए माल का ४० प्रतिशत भाग भी हाथ नहीं लगता।

३—स्थान-निर्व्वाचन

भवन निर्म्माण करानेके पूर्व्व उसके लिये उपयुक्त स्थान निर्वाचन करना एक बड़ा जटिल-परिश्रमपूर्ण और आवश्यक कार्य है। शहरों अथवा कस्बोंमें यदि बीच बस्तीमें घर बनवाना हो तो उसमें मनुष्यको वहाँ की बस्ती की आनुषङ्गिक परिस्थिति पर निर्भर हो जाना पड़ता है और जो भी तथा जितना भी स्थान मिले उसे अपना सौभाग्य समझकर अपना संकल्प पूरा करना

पडता है। किन्तु जहाँ नयी बस्ती होती हो तथा जहाँ स्थान निर्वाचन के लिये-पर्य्याप्त गुञ्जाइश हो वहाँके लिये शास्त्रीय दृष्टिसे निम्न लिखित बातोंपर ध्यान रखना विशेष आवश्यक है—

यह एक साधारण नियमसा हो गया है कि, जो स्थान व्यापारादि कार्योंके लिये उपयुक्त समझा जाता है वह आरोग्यकी दृष्टिसे अत्यन्त हेय एवम् हानिकर सिद्ध होता है। व्यापारकी दृष्टिसे यदि स्थानका निर्व्वाचन किया जाय तो कितनीही बार ऐसे स्थान देखनेमें आते हैं, जो आज उजाड-ऊबड़-खावड एवम् मैदानके सदृश्य प्रतीत होते है। किन्तु आगे चलकर निकट भविष्यमें यदि उनके सन्निकट कोई नया मार्ग, स्टेशन, बाजार अथवा ऐसेही सार्व्वजनिक हलचलके केन्द्र खुलनेवाले हो, तो वेही स्थान बडा महत्व प्राप्त करते है और आरम्भिक दशासे उनका मूल्य सौगुना अधिक बढ जाता है। किन्तु यह एक ऐसी बात है, जो बड़े ही अनुभव तर्कज्ञान एवम् दूरदर्शिताके पश्चात् मनुष्य जान सकता है और उसके अनुसार अपने लिये उपयुक्त स्थानका निर्व्वाचन कर सकता है। तिसपरभी निश्चितरूपसे यह नहीं कहा जा सकता कि, उसका निर्व्वाचन ठीक ही हुआ है। कतिपय प्रसङ्गोपर उसका सारा अनुभव-दूरदर्शिता और तर्कज्ञान एक किनारे रह जाता है और वह अपने प्रयत्नमें अयशस्वी सिद्ध होता है।

इससे अच्छा और सरलमार्ग तो यह है कि, किसी परिचित और सार्व्वजनिक मार्गपर भूमि खरीद लें। इससे लाभ यह होता है कि उस स्थानविशेषकी सम्पूर्ण जानकारी,-उदाहरणार्थ,-वहाँ किस श्रेणीके लोग रहते है, किरायेका दर क्या प्रचलित है, उसे देखते हुए यहा भूमि लेना लाभदायक होगा या नहीं, अड़ोस-पडोस में कौन और कैसे लोग रहेंगे, वहाँ की जल वायु तथा स्वास्थ्य कैसा है, इत्यादि बातोंका समुचित ज्ञान सहजहीमें हो जाता है। तथा यदि पूंजीका यथेष्ट सूद न निकल सका तो कमसे कम रकम बट्टे खाते नहीं जाने पाती। वह लगती है तो कुछ न कुछ ले ही कर उठती है।

व्यापार की दृष्टिसे यदि भवन निर्माण करवाना हो तो वह एकही बडी गृहस्थीके उपयोगमें आने लायक न बनवाकर ऐसा बनवाना चाहिये कि, जिससे उसमें कमसे कम मध्यम श्रेणीके ५।६ कुटुम्ब सहजम और आराम पूर्वक रह सकें। उसकी रचना एक खण्ड (flat) कीसी हो और उसमें तीन-चार कमरोंकी पृथक्-पृथक् ऐसी व्यवस्था की रहे ताकि उनमें उक्त कथित ५।६ कुटुम्ब स्वतन्त्रता पूर्वक रह सकें। इस पद्धतिसे भवन निम्माण करवानेसे किराया अधिक मिलता है तथा इस बातका भय नहीं रहता कि, कहीं घर खाली तो नहीं पडा रहेगा —

अब यदि व्यक्तिगत रूपसे अपनेही रहनेके लिये भवन बनवाना हो तो उस समय स्थान निर्वाचन करनेके पूर्व निम्न लिखित बातों पर ध्यान रखना चाहिये—

१ जिस जगह भवन बनवाना हो, वह स्थान ऊँचा और ऐसा होना चाहिये कि जहाँ किसी किस्मका जल ठहर न सके और सीधा चारों ओर बह जाय। गढ्ढे अथवा समथल स्थानमें जलशोषण अधिक हुआ करता है। जिसके कारण वहाँकी जलवायु नम-सीलयुक्त और आरोग्यकी दृष्टिसे हानिकर होती है।

२ पथरीली जमीन यद्यपि नींवकी मजबूतीकी दृष्टिसे अत्यन्त अच्छी होती है और उसमें जल शोषण होनेका भय नहीं रहता तथापि गर्मीके मौसिममें वह खूब तपती और रातकोभी बड़ी देरके बाद ठन्डी होती है। इसके अतिरिक्त बाग-बगीचोंके काममें अथवा ड्रेनेजके लिये मोरी बनाने व्यम् पनालीकी खुदाई करनेके काममें इस प्रकार की जमीनसे बड़ा त्रास उठाना पड़ता है।

३ आरम्भमें बालू, पश्चात् तीन-चार फुटके नीचे कठोर कंकड अथवा चट्टान मिलनेसे, वह जमीन भवन निर्म्माणके लिये अत्यन्त उत्तम समझी जाती है। उससे दूय प्रकारकी जमीन वह होती है जिसके शीर्षभागपर मिट्टीकी सतह हो और नीचे कठोर कंकड़की

जमीन मिले। काली मिट्टीकी जमीन तो भवन निर्माणके लिये सर्वथैव निकृष्ट समझी जाती हैं।

४ समुद्रकी सन्निकटस्थ भूमि सृष्टिसौन्दर्यकी दृष्टिसे भलेही अच्छी हो तथापि वहाँकी जल-वायु नम होनेके कारण देहमें पसीना बहुत छूटता है, जी मिचलता है और शरीर सर्वदा रुग्ण रहा करता है। इसके अतिरिक्त स्थापत्यशास्त्रकी दृष्टिसे विचार करने पर ऐसी जगहपर भवनका निर्म्माण होनेसे, उसमें लगनेवाले समस्त लोहेके सामानोंपर जंग लग जाता है और एक अवधिके पश्चात् वह सामान नष्ट-भ्रष्ट होकर मकानको कमजोर बना देता है। इसका कारण यह है कि, समुद्रकी निकटस्थ भूमिमे जो वायु बहती रहती है, उसके साथ समुद्रस्थ क्षारमय जलके अत्यन्त सूक्ष्म तुषार सम्मिश्रित रहते हैं, जो लोहपर जमकर उसे खा डालते है। वनस्पति आदि पर भी इन तुषारोंका यही प्रभाव होता है। जिसके कारण वह ऐसी जगह पनपने एवम् टिकने नहीं पाती।

५ नाले, तलैय्या, खदान सरोवर, तलाव एवम् अपनी अन्तिम अवस्था पर पहुँचे हुए कुँए आदिके सन्निकट की भूमि भवन निर्म्माणके लिये नितान्त अनुपयुक्त है।

६ किसी समय जहाँ खदान, तलाव अथवा बडासा गड्ढा रहा हो किन्तु वह कालकी गतिसे कतवार आदिसे भर गया हो तो उसेभी त्याज्य समझकर छोड देना चाहिये। क्योंकि, ऐसी जगहमें भरा हुआ कतवार सडकर विषाक्तवायु पैदा करता है तथा निसर्गतया वहा की जमीन पुख्ती न होनेके कारण नींवके धस जानेका भय रहता है।

७ आमरास्ते पर जहाँ मोटरगाडी, घोडे आदिकी खूब धूम-धाम रहती है, वहाँकी जमीन व्यापारकी दृष्टिसे भलेही उपयोगी हो, किन्तु निरन्तरकी चहल-पहलके कारण वहाँ जो धूल उडती है वह आरोग्यकी दृष्टीसे मनुष्यके स्वास्थ्यको अत्यन्त हानिकर है।

८ यों तो निर्व्वाचित स्थानके चतुर्दिकाही किन्तु विशेषतया पश्चिम दिशाकी ओर-चाहे वह पर्य्याप्त दूरी परही क्यों न हो, गाय-बैल इत्यादिकी छत दिवालियाँ, घोडेके अस्तबल सण्डास, कोयले अथवा चूनेकी भट्टियाँ, चमडे पकानेके कारखाने, मिल इत्यादिका होना आरोग्यकी दृष्टिसे अत्यन्त हानिकर है। क्योंकि, उससे जलवायु दूषित हो जाती और स्थानकी शान्ति नष्ट हो जाती है। साथही निर्व्वाचित स्थानके पास ऊंचे वृक्ष भवन आदिका होना भी बुरा है। कारण उससे वायुको स्वतन्त्र रूपसे भ्रमण करनेमें बाधा पहुँचती है।

९ भूमिकी सतहके नीचे, दस फुटके भीतर जलका लगना अत्यन्त बुरा है। अतः स्थान निर्व्वाचन करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि उसके पास कहीं कोई कुँआ तो नहीं है और यदि है तो उसका जल भूमिकी सतहके नीचे १० फुटके भीतर तो नहीं है! कारण ऐसा होनेसे जल बरसने पर ऊपरकी और नीचेकी मिट्टी गीली हो जाती और हवामें नमी एवम् सर्दी आ जाती है।

१० रेल्वे स्टेशन, सार्व्वजनिक मार्ग-किन्तु जहाँ आमदरफ्त कम हो, पोस्ट ऑफिस, अस्पताल, बैङ्क, पाठशालाएं इत्यादि जहाँ के निकट हों, वह स्थान गार्हस्थिक सौख्यकी दृष्टिसे औरभी अच्छा है। विशेषतया पाठशालाएं तो अवश्यही घरके सन्निकट होनी चाहिये।

११ निर्धारित स्थानके सन्निकट जलकी व्यवस्था पूरी तरहसे होनी चाहिये, यदि स्वतन्त्र एवम् मीठे जलका कुआ हो तो बहुतही बेहतर बात है। किन्तु यदि वह न हो सके तो कमसे कम स्थान के सन्निकटही एक सार्व्वजनिक कुआ तो अवश्यही रहना चाहिये, जिसमें बारहों मास यथेष्ट परिमाणमें पानी भरा रहे।

१२ अड़ोस-पड़ोस, सद्भ्रान्त सुशील और धर्म्मनीपी होना चाहिये। यदि लफङ्गोंका जमघट एकत्रित हो तो कभी सुख नहीं हो सकता।

१३ जहाँतक सम्भव हो, जो स्थान भवनके लिये निर्व्वाचित किया जाय, उसका सर्व्वाधिकार अपने पास रहना चाहिये। यह नहीं कि, गिरवी की जमीन मिली हो अथवा थोडी अवधिके इकरार पर लिया हो अथवा कुछ मासिक रकम देने की शर्त्त लिखी हो। यदि इस प्रकारसे ली हुई जमीन पर भवन निम्मीण करनेका विचार हो तो कमसे कम १९९ वर्ष से अधिक की अवधिका पक्का एकरारनामा कर लेना चाहिये।

१४ मनुष्यको अपनी साम्पत्तिक दशाके सुधारका अन्दाज बहुत कुछ अंशोंमे पहिलेहीसे रहता है। साथही उसे आगे चलकर क्या-क्या अत्यधिक आवश्यकताएं हो सकती है, इसका भी अन्दाज वह बखूबी लगा सकता है। अत आरम्भमे जिस समय वह अपने भवनके लिये स्थान निर्व्वाचन कर जमीन खरीदे, उस समय उसे अपनी अधिकसे अधिक आवश्यकताको देखते हुए जमीन खरीद लेनी चाहिये। ऐसा करनेसे उसे अवसर मिलते ही वह अपनी आवश्यकतानुरूप अपने भवनमें यथोचित सुधार एवम् विस्तार कर सकता है। उसे बारबार जमीन खरीदने और दर-दाम करनेकी झंझट नहीं उठानी पडती।

४–दिशा निर्धारण
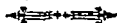
स्थान निर्वाचन करनेके पश्चात् एवम् कार्य्यारम्भ करनेके पूर्व्व इष्ट भवनके लिये दिशा निर्धारण करनेका विचारणीय प्रश्न उपस्थित होता है, । हमारे हिन्दू धर्म्म शास्त्रमें तो दक्षिणाभिमुख भवन होना वर्ज बतलाया है। किन्तु साथही साथ यदि उसके सामनेवाला भवन उत्तराभिमुख हो तो वैसा करनेमें कोई आपत्ति नहीं है, यह-भी स्पष्ट रूपसे अङ्कित है।

प्रमुखतया दिशा निर्धारणका उद्देश्य यही है कि, आगे चलकर उस भवनमें रहनेवाले परिवारको ऋतुचर्य्यासे कोई त्रास न

उठाना पड़े। पाश्चात्य देशोंमें, वहाँ की जल-वायु अत्यन्त ठण्डी होनेके कारण दिशा निर्धारणके समय यह विचार किया जाता है कि, किस दिशाकी ओर भवनका मुख निर्धारित करनेसे अधिकसे अधिक धूप भवनमें पड़ सकती और अधिकसे अधिक देर तक वहाँ ठहर सकती है। किन्तु हमारे भारतवर्षकी परिस्थिति पाश्चात्य देशोंसे नितान्त भिन्न है। यह ऊष्णता प्रधान देश है। अतः यहाँ आवश्यकता यह विचार करनेकी पड़ती है कि, क्या उपाय किया जाय जिसमें भवनको आवश्यकतासे अधिक धूपका सामना न करना पड़े। हमारे यहां सूर्य्य किरणोंके प्रखर तापसे दिन भर तो कष्ट होते ही रहते हैं। किन्तु साथही साथ रातकोभी तपन (गर्म्मी) से हमारा पिण्ड नहीं छूटता। दिन भर की कड़ी धूपके कारण हमारे यहाँ के भवनों का बाह्य भाग तथा चतुर्दिकस्थ भूमि इतनी तपी रहती है कि, वह रात्रिमें शीघ्रता से ठण्डी नहीं होती। दिन में भवन का बाह्य भाग एवम् सन्निकटस्थ भूमि सूर्य्य रश्मियोंके तीव्र ताप को शोषण करती रहती है तथा रात्रिके समय उस शोषित एवम् संग्रहित ऊष्णता के बाहर निसृत होते ही उसका संयोग भवन की सन्निकटस्थ वायु से हो जाता है। परिणाम यह होता है कि, यह वायु भी उत्तप्त हो उठती और भवनस्थ मनुष्यों के लिये अधिक ताप का कारण बन जाती है।

सूर्य रश्मियोंमें रुधिराभिसरण करने एवम् कृमि-कीटों का नाश करने की शक्ति है, यह सत्य है। साथ ही साथ हम यह भी मानते हैं कि उनके इष्ट परिमाणमें मिलते रहने से मनको अपूर्व आल्हाद मिलता है। किन्तु यदि उन रश्मियों में प्रखर तीव्रता का प्रादुर्भाव हो जाय तो वही रश्मि अत्यन्त तापदायी एवम् आरोग्य नाशक सिद्ध होती है। अतः इस सिद्धान्तसे हमारे यहाँ की जल वायु को देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि, हमारे यहाँ अपने भवन को सूर्य रश्मियों की अधिकता एवम् प्रखरता से बचाने की नितान्त आवश्यकता है और उसे ध्यानमें रखते हुए हमें अपने भवन का दिशा निर्धारण इस प्रकार करना चाहिये

कि, जिसमें प्रात'काल के समय, जिस समय सूर्य की किरणोंमें ऊष्णताका मान कम रहता है, उस समय वह प्रत्यक्ष रूपसे भवनके अन्तर्गत भागमें प्रसरित हो और वहाँ की वायुका सशोधन कर सकें तथा जिस समय उनका उत्ताप बढता है उस समय खिडकियाँ बन्द न करते हुए भी उनका प्रत्यक्ष प्रवेश भवन के भीतर न हो सके। सायङ्कालके समय जब वह पश्चिम दिशा से पुन' भवनके अन्तर्गत भाग में प्रवेश करें तब उनकी प्रखरताको कम करने के लिये भवनहीमें उस दिशाकी ओर कोई निश्चित एवम् स्थायी आयोजन रहना चाहिये।

इन सब बातोंकी पूर्तिके लिये सबसे उत्तम उपाय यह है कि, भवन के पूर्व दिशाकी ओर खिडकियाँ रखकर उनसे प्रात'कालीन कोमल धूप घरके भीतर आने दें। दोपहरके समय सूर्य ठीक मध्यमें होनेके कारण छप्परकी सहायतासे भवनकी रक्षा होती है। रहा सायङ्कालका प्रश्न। सो उस समयकी धूपके कष्ट बचने के लिये भवनकी पश्चिम दिशाकी ओर एक चौडा आंगन (बरामदा) बना देना चाहिये तथा उसके पीछे सहकारी कमरोंकी व्यवस्था होनी चाहिये। इन बरामदोंके कारण सहकारी कमरोंकी दीवालें तपने का कोई भय नहीं रहता। साथही साथ बाहरी ऊष्णवायु बरामदोंके भीतर पहुँच कर ठण्डी हो जाती और सन्निकटस्थ कमरोंमें पहुँच कर रातके समय शारीरिक एवम् मानसिक शान्ति रक्षाके लिये उपयोगी सिद्ध होती है। अस्तु।

तात्पर्य यह कि, भवनके लिये दिशा निर्धारण करते समय निम्न लिखित चार बातों पर विशेष रूपसे ध्यान रखना पडता है'—

(१) पूर्व और दक्षिणकी ओर खिडकियाँ रहें। ताकि प्रातः-कालकी कोमल धूप उनसे होती हुई भवनके भीतर आ सके।

(२) अत्यन्त ऊष्ण प्रदेशमें दो पहरके समय आराम करनेके लिये अथवा बैठकर काम करनेके लिये जो कमरा निर्धारित

किया जाय उसका सृजन उत्तर और पूर्व दिशाके मध्यमें होना चाहिये।

(३) पश्चिम और दक्षिण दिशाकी ओर भवनके बाहर चौड़े आँगन होने चाहियें और उनके पार्श्ववर्तीय भागमें सहकारी कमरे हों।

(४) सामान्यतः पूर्व और उत्तर दिशाके दर्मियानमें भवनका मुखद्वार होना चाहिये। इसका शास्त्रानुकूल नियम यह है कि, यह उत्तरसे पूर्वकी ओर उसी कोणके अक्षांश पर रहे जिस अक्षांश पर नगर अथवा ग्राम पृथ्वीकी भूमध्यरेखा (Equator) से बसा हो। उदाहरणार्थ -भूमध्यरेखासे पूना १८॥° बम्बई १०°, नागपूर २१°, दिल्ली १८।४०°, इलाहाबाद २५॥°, कलकत्ता २०°, कानपूर २६॥°, पटना १५।३७°, तथा आग्रा २७।° अंशपर बसा है।

५—भूमिखण्ड (Plot) में भवनकी रचना

स्थान निर्वाचन हो जानेपर उसपर भवनकी रचना किस प्रकार करनी चाहिये इस समस्याको सुलझानेके लिये निम्नलिखित बातोंपर ध्यान देना आवश्यक है —

(१) पड़ोसके घरोंके कारण अपने भवनमें धूप आनेके लिये तथा वायुके आवागमनमें बाधा उपस्थित न हो इस विचारसे दोनोंमें जो ऊँचा भवन हो उसके बराबर अपना भवन बनाते हुए उन दोनों घरोंके बीचमें कमसे कम दूना अन्तर छोड़ना चाहिये।

(२) गाड़ी अथवा मोटरके आवागमनके लिये यदि मार्ग रखना हो तो यह कमसे कम १० फूटका तो अवश्यही होना चाहिये।

(३) जिस दिशाकी ओर से प्रचुरताके साथ हवा चलती हो, उस ओर समयानुकूल प्रकारसे खुली जगह छोड़ते हुए भवन

निर्म्माण होना चाहिये। भारतवर्षमें प्राय सर्व्व साधारण रूपसे दक्षिण और पश्चिम दिशाओंसे आठ महिने निरन्तर हवाका बहाव रहता है तथा इसके ठीक विपरीत अर्थात् जाडे में उसका बहाव पूर्व्व और उत्तर दिशाओंसे हुआ करता है। शरीरशास्त्रकी दृष्टिसे विचार करने पर इन चार महिनोंमें हमें हवा की विशेष आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। वरन् अधिक हवा मिलनेसे द्विगुणित जाडा मालूम होता है। अत इस तत्व को सन्मुख रखते हुए अपने भवनका लम्बा भाग।विशेषत' जिसमें सहकारी कमरे इत्यादि आ सकें दक्षिण और पश्चिम दिशाकी मध्यवर्तीय वायु की दिशा साध कर निर्धारित करना चाहिये।

(४) शहर अथवा घनी बस्तियोंमे, जहाँ समस्त भवन सदर मार्गके समानान्तर होते है वहा अपना निजी भवनमी उन्हींका अनुकरण करते हुए बनाना पडता है। तथापि यदि घरके चारो ओर विशेषत' उसके सन्मुखस्थ भागमें थोडीसी खुली जगह, बाग इत्यादिके बहाने से छोडना सम्भव हो तो सदर मार्गके समान्तर भवन बनवानेकी कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। अब निर्व्वाचित भूमि खण्डमे कहाँ भवन बनाना उपयुक्त होगा यह निश्चित करनेका अत्युत्कृष्ट उपाय यह है कि, पहिले एक कागज पर उस भूमिखण्डका नकशा खींच ले। पश्चात् उसी मानाचित्रके अनुसार दूसरे कागज पर बनाये जाने वाले भवनका चित्र बनाकर कागजका निरुपयोगी भाग कैंचीसे काट ले और वह टुकडा भूमिखण्ड बने हुए नकशे पर रखते हुए आवश्यकतानुसार उसे घुमा फिराकर सब आवश्यक बातोंका विचार करते हुए अन्तमें भवन निर्म्माणके लिये उपयुक्त स्थान निर्धारण कर ले। कितनी ही बार यह देखा गया है कि, भवनके चारो ओर समान स्थान छोडनेकी अपेक्षा साधारणतया भवनको एक कोनेमे लेकर उसके दक्षिण और पश्चिमकी ओर यथासम्भव खुला स्थान छोडनेसे विशेष लाभ होता है।

६—स्थान की स्वच्छता।

जिस स्थान पर भवन बनवाना हो उस स्थान पर लगे हुए पेड़ पौधोंका अच्छी तरह समूल नाश कर डाले तथा यदि वहाँ पर गड्ढे-खाई आदि हों तो उन्हें भी पूर्णरूपसे मिट्टी एवम् पत्थरोंकी सहायता लेकर मजबूतीके साथ भर दे। इन्हें कतवार तथा काष्ठ-पत्र आदिसे भरना अच्छा नहीं। कारण ऐसा करनेसे उसके सड़ने पर रोगके उपद्रव होनेका निरन्तर भय बना रहता है। चींटियोंके बमीठोंको भी उस स्थान पर रहने देना अच्छा नहीं। उन्हें अच्छी तरह खोदकर उनमें रहने वाली चींटियोंकी रानीको सावधानीके साथ मार डालना चाहिये। कारण यही चींटियोंकी उत्पत्ति करने वाली होती है।

७—योजना चित्र

स्थान निर्धारण एवम् भवन की स्थापना कहाँ पर होनी चाहिये यह निश्चित हो जाने पर हमें किस नाप के और कितने कमरों की आवश्यकता है, इसका एक योजना-चित्र बनाने की आवश्यकता है। उसमें खिड़कियाँ, अल्मारियाँ, मोरियाँ एवम् खूँटियाँ तो दिखलानी ही चाहियें किन्तु साथ ही साथ, टेबुल, पलङ्ग, कोच बड़ी अल्मारियाँ प्रभृति नित्य नैमित्तिक आवश्यक वस्तुओं को रखने के स्थान भी अङ्कित कर देने चाहिये। यदि आरम्भ से ही इतनी सूक्ष्म योजना न की जाय तो अन्तमें भवन के निर्माण होने पर बड़ी दिक्कतें उठानी पड़ती हैं। उदाहरणार्थ-पलङ्ग के कारण दीवाल में बनी हुई अलमारी के कपाट अथवा खिड़कियाँ खोलनेमें आपत्ति होती है, कोच के कारण अल्मारी के कपाट पूरी तरह

खुल नहीं सकते। टेबुल-कुर्सी इत्यादि के कारण आवागमन का मार्ग बन्द हो जाता है। विशेष तो क्या इस जरासी आरम्भिक असावधानी से इस तरह के अनेकों कष्ट भवन के बन जाने पर निरन्तर उठाने पडते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि, इस प्रकार का योजना चित्र तैय्यार करने के लिये अत्यन्त अनुभव की आवश्यकता है और इसी लिये ऐसे समय किसी अनुभवी विद्वानशास्त्रीकी सलाह लेनी चाहिये। उसके सहारे एक बार योजनाक्रम स्थिर हो जानेपर उसम रद्द-बदल करनाभी ठीक नहीं। योजना चित्र चित्रण करते समय निम्नलिखित बातोंपर ध्यान रखना विशेष आवश्यक है—

(१) सुदृढता, उपयोगिता तथा सौन्दर्यका महत्व यथानुक्रम समझना चाहिये।

(२) सादगी और मजबूतीसे भवनमे जो एक प्रकारकी चिरस्थायी शोभा एवम् भव्यता आजाती है वह किसीप्रकारके पलस्तर, कृत्रिम नक्शी अथवा रङ्गाईके कामसे नहीं आती। ठोकने-पीटनेके कार्यसे अथवा जलवायुके प्रभावसे पलस्तर किये हुए स्थान फट जाते हैं और उनकी मरम्मत बेजोड़ रूपसे नहीं होती। यही दशा रङ्गाईके कामकी भी होती है। आरम्भमें तो रङ्गोंकी चमक दमक के कारण भवनका सौन्दर्य खिल जाता है। किन्तु कुछही दिनोंके पश्चात् यह चमक दमक जाती रहनेसे अथवा बर्सोती जलके दाग ऊपर पड़नेसे भवन उल्टा खराब दीखने लगता है।

(३) भवन एक स्थायी सम्पत्ति कही जाती है। इससे प्राप्त होनेवाले सुख-दुखका भागी केवल उसका निर्माणकर्त्ताही नहीं होता अपितु, उसका सारा परिवार एवम् भावी पीढी होती है। अतः आवश्यकता इस बातकी है कि, इस स्थायी सम्पत्तिको मूर्त्त स्वरूप देनेम निरर्थक किफायतही न सोची जाय। साथ ही यह भी न किया जाय कि, किसी न किसी तरह कच्चा काम कर दिया गया हो अथवा ऋण (कर्ज) निकालकर अपनी महत्वाकाँक्षाकी पूर्ति कर ली

गयी हो। दोनोंही दृष्टिसे भवन का भावी भविष्य अन्धकारमय हो जाता है।

(४) कार्य एवम् कारण को देखते हुए भवन का योजना चित्र होना चाहिये। यह नहीं कि, भवन किसी कार्य विशेषको करनेके अभिप्रायसे बनाया जा रहा हो और उसका योजनाचित्र ठीक उसके प्रतिकूल, असुविधाजनक बने। उदाहरणार्थ, मन्दिर, धर्मशालाए कार्यालय, रुग्णालय तथा निवासगृह इन सभा के कार्य, उपयोगिताए एवम् तदनुषङ्गिक सुविधाएं पृथक्-पृथक् हैं। अतः उनकी ओर देखते हुए भवन का योजनाचित्र निर्धारित करना चाहिये।

(५) भवन के प्रत्येक कमरेमे स्वतन्त्र वायु और प्रकाश यथेष्ट रूपसे निरन्तर मिलता रहे यह ध्यानमें रखते हुए योजनाचित्रका सृजन होना चाहिये।

(६) रसोंईघर, स्नानालय, सण्डास, शौचकूप इत्यादि विभाग जिनमें धूए अथवा दुर्गन्धियुक्त वायुका स्वतन्त्र वायुमें निरन्तर सम्मिश्रित होनेका भय हो यह एक दूसरे से पृथक्,-भवनके प्रमुख कमरोंसे दूर-रहनाही अच्छा है। निदान कमसे कम यह ऐसी जगह होने चाहिये जिससे भवनमें रहनेवाले मनुष्योंके आरोग्य को उनसे कोई उपसर्ग न हो सके। रसोंईघर जहां तक हो ईशान्य-अर्थात् पूर्व और उत्तर दिशाके कोणमे बनाना उत्तम है।

(७) सोनेके कमरे, जिनमे रात्रिके समय हमारी आयुका प्रायः एक तिहाई हिस्सा, दैनिक रूपमे निरन्तर ८।६ घण्टे विश्राममें व्यय होता है-पर्याप्तरूपसे विस्तृत एवम् स्वतन्त्र वायुके आवागमन होने चाहिये। उनका सृजन पश्चिम और दक्षिण दिशाके कोणमे होना विशेष श्रेयस्कर है।

(८) भवनके सम्पूर्ण कमरोंमें दिनके १० घण्टोंमे से किसी भी समय सूर्यके किरण पहुंचना आवश्यक है। कारण उनसे रोगजन्तुओं का नाश होता रहता है। उसी तरह कमरेके प्रत्येक कोनेमें

पर्याप्त प्रकाश पहुंचना चाहिये । अन्धकारमय स्थान रोगोंके निवासस्थान हुआ करते है। योजनाचित्रके निर्धारणका यह भी एक आवश्यक लक्ष्य है।

(९) भवन का प्रत्येक कमरा नितान्त स्वतन्त्र होना चाहिये और जहाँ तक सम्भव हो उससे बाहर निकलने का द्वार भी स्वतन्त्र होना चाहिये। यह नहीं कि, दूसरे कमरे से होकर जाना-आना पडे। इससे विपरीत दशा होने से दोनोंही कमरो का यथेष्ट भाग आने-जाने के कार्य में व्यर्थ रुक जाता है।

(१०) भवन से सटकर उसके आगे और पीछे थोडा बहुत आँगन होना अनिवार्य है।

(११) घर के चारों ओर बरामदे बनवाना अत्यन्त उत्तम है। किन्तु यदि उतना व्यय सहन करने का सामर्थ्य न हो तो कम से कम पूर्व, पश्चिम एवम् दक्षिण दिशाओं की ओर तो उन्हें अवश्य ही बनवाना चाहिये। यदि यह भी सम्भवनीय न हो सके तो पश्चिम और दक्षिण दिशा की ओर तो किसी भी प्रकार उनका सृजन हो ही जाना चाहिये। अन्त में यदि उतना भी व्यय करने की शक्ति न हो तो ग्रीष्मऋतु में जिस दिशाकी ओर से वायु बहती हो उधर ही उनका सृजन करे। तात्पर्य यह कि, प्रत्येक दशा में आरोग्य-शास्त्र की दृष्टि से बरामदोंका सृजन अनिवार्य है और वह कमसे-कम भवन की एक दिशामें तो अवश्यही रहना चाहिये।

(१२) भवन बनवाने के पूर्व आरम्भ में ही इस प्रकारकी योजना निर्धारित करनी चाहिये ताकि भविष्यमें विस्तार करने की इच्छा होने पर बनवाया हुआ भाग गिरवाना न पडे।

(१३) म्युनिसिपैलिटी तथा अन्य तदानुषङ्गिक नगर व्यवस्था नियामक संस्थाओंके नियमों को देखते हुए भवनस्वामी को अपने भवन का योजनाचित्र निर्धारित करना चाहिये।

८—मानचित्र

भवन निर्म्माण कार्यके लिये प्रमुखतया दो प्रकारके मानचित्रोंका व्यवहार होता है। एक तो स्थल-निदर्शक तथा दूसरा योजना दर्शक। प्रथम प्रकारके मानचित्रमें निम्नलिखित बातोंका निदर्शन होना आवश्यक है —

(अ) वास्तुभागकी लम्बाई-चौड़ाई को तथा उसके अन्तर्गत जहाँ भवननिर्म्माण करना हो उस स्थानको लाल स्याहीसे निर्दिशित करना पड़ता है। (ब) उत्तर दिशा, (क) पड़ोसमें यदि कोई सार्व्वजनिक पथ अथवा गली हो तो उसकी चौड़ाई तथा वह कहाँसे किधर को ओर जाती है इसका सम्पूर्ण उल्लेख करना पड़ता है। (ड) चतुर्दिक्स्थ भवन अथवा स्थायी सम्पत्तियोंका निर्देश। (ई) सर्वे नम्बर, (फ) वायुकी गति (ग) भूमिका उतार-चढ़ाव।

दूसरे प्रकारके मानचित्रोंमें तीन विभाग होते हैं। (अ) अधो-दर्शन (plan) अर्थात् ऊपरसे नीचे की ओर देखने पर कैसा दृश्य दिखलाई दे सकता है इसकी सटीक कल्पना का उल्लेख। यह विभिन्न मर्य्यादाओंको निर्देशित कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, भित्तिके अधोदर्शनमें भित्तिकी चौड़ाई कहाँ पर कितनी है यह ज्ञात हो सकता है। चौकीके दर्पिभागके अधोदर्शनमें चौकीके ऊपर कहाँ और किस चौड़ाईके दरवाजे बैठाते हैं यह मालूम हो सकता है। प्राय तीन फूटसे ऊपरवाले अधोदर्शनमें दरवाजे और खिड़कियाँभी दिखलायी दे सकती हैं। इसी प्रकार भवनके प्रथम खण्ड द्वितीयखण्ड इत्यादिका हिसाब जाना जा सकता है। (ब) लम्बे और चौड़े फहरोंमें (Longitudinal & cross sections) में यदि चौड़ेपर खड़े होकर देखा जाय तो भवनके दर्पिभागसे लेकर भित्तिभक्ति नींव तकका सम्पूर्ण दृश्य भाग दिखलाई देता है। अर्थात् इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, आगे और पीछेके

सम्पूर्ण भाग एकही सतहमे दिखलाने पड़ते हैं । इन च्छेदको जाननेकी मिस्त्रियोंको अत्यधिक आवश्यकता होती है। क्योंकि उनके बिना वे खिडकियों, ताखो, अलमारियों तथा खम्भोंको अधोदर्शनमें देखनेपर भी उनकी वस्तुत उँचाई नहीं जान सकते। च्छेदकी सम्यक् जानकारी किये बिना खिडकी की सतहकी उँचाई, खम्भेकी ऊँचाई, आधार स्तम्भकी मोटाई, खण्डकी ऊचाई फर्श-पाटण (Floor) की मोटाई, उनकी धरने तथा कडियोकी स्थापनाके स्थान, कैचियोंके प्रकार, छप्परोके ढ़ाल तथा भवनकी सम्पूर्ण ऊँचाई इत्यादि बातोंका निर्धारण करना अशक्य हो जाता है। यदि भवन विशाल और महत्वपूर्णहो तो स्थपतिवर्ग विभिन्न स्थानोंके अनेक च्छेद अपने मानचित्रमें दिखलाता है । क्या? इसीलिये कि, जिसमें मिस्त्रीको किसीभी बातकी जानकारीके लिये असुविधा न हो। (क) दर्शनी एवम् पार्श्वभाग तथा-बगलके दृश्य ।

इनसे भवनके बाह्यदर्शनकी यथातथ्य कल्पना होती है। उस कल्पनान्तर्गत दृश्य का काल्पनिक परन्तु यथार्थ मूर्तस्वरूप किसी न किसी परिमाणमे दिव्य दृष्टिसे देखनेके लिये भवन के विभिन्न भागोंकी ओर के दृश्य ही मानचित्रमे अंकित करने पडते हैं। भवन सुन्दर दिखलाई देनेके लिये यही आवश्यक नहीं है कि, उसमें खूब कलाकौशल्य-चित्रकारी एवम् पच्चेकारीकाही काम हो। किन्तु यदि उसके आकार-प्रकार के हिसाबसे उसकी उँचाई, चौकी, खिडकियाँ, दरवाजे इत्यादि सब प्रमाणबद्ध हों तथा उसकी बाह्य रचनामे सम पक्षता (Symmetry) अर्थात् " मक्षिकास्थाने मक्षिका " वाला हिसाब हो अथवा खड़ी मध्यरेषाकी एक ओर, जिस अन्तर पर खिड़कियां दरवाजे प्रभृति हों उसी अन्तर पर उसके दूसरी ओर भी उनका वास्तव्य रहे तो वही भवन नितान्त सुन्दर और रमणीय दिखलाई देता है । अत यहां पर यह बात निर्विवाद हो जाती है कि, भवनका यथार्थ कल्पना चित्र दृष्टिपटके सन्मुख लानेके लिये भवनकी विभिन्न दिशाओंके दृश्य मानचित्रमे दिखलाना नितान्त आवश्यक है।

९—बहिरंग या बहिर्दृश्य

भवन निर्माणका कार्य अधिकांश रूपसे मात्र भूमिखण्ड (Plot) पर निर्भर रहता है। यह यदि लम्बा, 'गामुखी' (आगे कम चौड़ा तथा पीछे फैला हुआ) अथवा उसके ठीक विपरीत अर्थात् 'व्याघ्र मुखी' हो तो प्रत्येक की दृष्टिसे नितान्त पृथक् प्रकार की शरण लेकर निर्माण कार्यकी पूर्ति करनी पड़ती है। साथही साथ उसके दर्शनी एवम् प्रमुख भाग की दिशापर भी कितनी ही बातें निर्भर रहा करती है। उदाहरणार्थ, पश्चिमाभिमुख भवनको विशेषतया मूसलधार वृष्टि, सायान्ह-कालीन धूप तथा वायुके प्रबल धक्के सहने पड़ते हैं और इसके लिये उसकी उस दिशा की ओर एक चबूतरासा निकालना पड़ता तथा उसकी सौंदर्य-वृद्धिके लिये उसके अग्रभाग पर लकड़ीका अथवा जालीदार कठघरा लगवाना पड़ता है। इस प्रकारकी अतिरिक्त व्यवस्थाके पश्चात् तब कहीं मुख्य भवनका धूप और वृष्टिसे संरक्षण होता है। किन्तु इससे वस्तुत: भवनका बाह्यरूप बिलकुलही बदल जाता है

यदि छोटा और सादा भवन हो तो व्ययकी दृष्टिसे उसका चौकोर होना विशेष सुविधाजनक होता है (चित्र संख्या १ देखिये)
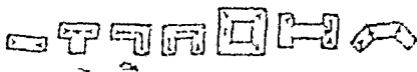
चि १ चि २ चि ३ चि ४ चि ५ चि ६ चि ७

इस प्रकारके भवनका एक छोर अथवा मध्यभाग त्रिभुजाकृति कोणमें बढ़ानेसे प्रकाश वायु एवम्, प्रशस्त स्थान यथेष्ट मिल जाता

है। (चित्र सख्या २ और ३) इससे बडे भवनकी यदि आवश्यकता हो तो अंग्रेजीके "H" अथवा 'U" अक्षरके सदृश्य आकार रचना करना विशेष सुविधाजनक है। (चित्र ४ और ६) धर्म्मशाला इत्यादिके सदृश्य, भवन-नीचे और ऊपर प्रत्येक खण्ड (Flats) मे दो कुटुम्ब रखकर मध्यवर्तीय भाग मे जीना रखनेके लिये अत्यन्त उपयुक्त होते है। इससे आगेकी श्रेणीमें चौतर्फा कमरे बनाकर भवन के मध्यवर्तीय भागमें चौक बनाया जाता है। (चित्र सख्या ५) हमारे यहाँ भवन निर्म्माणकी प्राचीन प्रणाली यही थी। किन्तु ऐसे श्रेणीके भवनों के चौक छोटे होनेसे खुली वायु पर्य्याप्त रूपसे नहीं मिलने पाती तथा धूपके कारण दीवाले तप जाने पर उनके ठण्डे होनेमें अत्यधिक देर लगती है। बड़ा चौक रखने से भवन का विस्तार अपेक्षा से बाहर बढ जाता है। सातवीं चित्र सख्यामें एक बडे किन्तु अत्यन्त सुविधाजनक भवन का नमूना दिखलाया गया है। उसमें सन्मुखस्थ भाग फैला हुआ होने के कारण प्रकाश और वायु को भवन के भीतर यथेष्ट रूप से सञ्चार करनेमें आवश्यक सुविधा मिल जाती है।

भवनका बाह्यरूप निसर्गसे मिलता-जुलता होनेसे उसमे विशेष सौन्दर्य आ जाता है। उदाहरणार्थ, किसी एक ऊबड़-खाबड़ काले पत्थरकी शिलापर पच्चेकारी-नक्शी अथवा पलस्तरका काम करनेकी अपेक्षा यदि उसपर उसी जातिके बडे-बडे पत्थरोकी रचना कर भवनमे भव्यता उत्पन्नकर दी जाय तो वह मजबूती और सौन्दर्य दोनोंही दृष्टिसे यथार्थ और उपयुक्त होता है। उसी तरह हरी-भरी सुन्दर वनश्रीके सन्निकट यदि ऊबड-खाबड एवम् बदसूरत पत्थरोका काम किया जाय तो वहभी अच्छा नहीं। उससे भवनकी शोभा बुरी तरह दब जाती है।

१०—शिल्प

अंग्रेजीमें शिल्प-जिसे Architecture कहते हैं वह भारतमें सामान्यतः बड़े ही संकीर्ण आशयसे समझा जाता है। उस आशयसे जो मथितार्थ निकलता है वह यह है कि, 'भवनके बाह्यगत दर्शनीय सौन्दर्यको वृद्धिंगत करनेके लिये जो कला-कौशल्यका काम किया जाता है, उसे शिल्प अर्थात् आर्किटेक्चर (Architecture) कहते हैं'। किन्तु तात्विक दृष्टिसे विचार करने पर शिल्प शब्दका अर्थ अत्यन्त व्यापक स्वरूपका होता है। इसका वास्तविक अर्थ यह है कि "जिस देशविशेष एवम् परिस्थितिमें कोई वस्तु निर्माण हुई, उसकी परिस्थिति तथा उस देशमें रहने वाले मनुष्योंकी अभिरुचिको देखते हुए उनकी मनोरचना पर उस वस्तुविशेषके स्वरूपमें जिस विशिष्ट प्रकारके कलाकौशल्यका मूर्तिमान स्वरूप उत्पन्न हो उसे शिल्प कहते हैं।" प्रत्येक देशविशेषमें उपलब्ध होनेवाली साधनसामग्री, जलवायु तथा परिवर्तनशील परिस्थितिके अनुसार उसमें थोड़ा बहुत परिवर्तन हो जाय, यह बात दूसरी है। किन्तु यह माननाही पड़ेगा कि, किसीभी शिल्पके मूलतत्वोंमें सत्य एवम् उपयुक्तताका समावेश होता है। सुसङ्गति (Harmony) यथायोग्यता (Fitness) तथा प्रमाणबद्धता (Proportion) यह विशेषताएं उनके पश्चात् अर्थात् उक्त तत्त्वोंको देखते हुए आती हैं। जिसमें सत्य है उसमें सौन्दर्य होगा, तथा जिसमें सौन्दर्य है उसमें मायका वास्तव्य होना अनिवार्य एवम् अवश्यम्भावी होता है। सारांश यह कि, पहिले उपयुक्तता एवम् तत्पश्चात् उसके अनुरूप योजना हुआ करती है। यही निसर्गका नियम है। उदाहरणार्थ—हिरन एक अत्यन्त चपल पशु है। इसलिये उसका शरीर हल्का होता एवम् पैर लम्बे तथा बारीक होते हैं। तत्पश्चात् अनुक्रमसे घोड़ा, ऊँट प्रभृति चतुष्पादोंको देखिये ! उनके वापरत्वके अनुसार उनका

शरीर तथा पैर किस प्रकार हल्के एवम् लम्बे होते हैं। हाथीकी गति मन्द होनेके कारण उसका शरीर भारी तथा पैर स्थूल होते हैं। इसी प्रकार शिल्पके प्राय सभी सौन्दर्यमय भागोंके सम्बन्धमें विचार करनेसे, 'उपयुक्तता' यही एक कारण उसकी अन्तःस्थली मे पाया जाता है। उदाहरणार्थ भवनमें कमान बनानेका हेतु यही होता है कि, वह भार सहन करनेमें पर्य्याप्तरूपसे समर्थ होती है। खिडकीके बाह्यगत छज्जे तथा चौकी पर स्थित चबूतरेनुमा फर्शी एवम् मंजिलकी सतहगत कड्नीका सृजन वर्षाका जल दीवाल परसे होता हुआ भवनके भीतर घुसने न पाये इस विचार-से होता है।

कोई भी सुन्दर भवन अथवा रमणीय वस्तु देखनेसे मनमें अकस्मात् जो एक तरह का विशेष आनन्द उत्पन्न होता है उसका कारण यह है कि, उस सौन्दर्यविशेष भवन अथवा वस्तुकी प्रत्यक्ष आकृति एक सामान्य रगमें हमारे मनश्चक्षुओंके सन्मुख स्पष्टरूपसे अङ्कित हो जाती है और उसके कारणही हमारे मनमें एक तरह का अपूर्व आनन्द उत्पन्न हो जाता है। यदि मान लिया जाय कि, उस वस्तुविशेष को चित्र-विचित्र रगोंसे रग दिया हो अथवा उस पर अत्यन्त बारीक एवम् प्रशंसनीय कलाकौशल्य युक्त कार्य किया हो तो वह तबतक स्पष्टरूपसे दृग्गोचर होना असम्भव है जब तक हम उसके नितान्त सन्निकट पहुँचकर नहीं देखते। अत ऐसी परिस्थितिमें यह स्पष्ट हो जाता है कि, भवन में मनोहरता उत्पन्न करनेके लिये नक्षी अथवा कलाकौशल्ययुक्त रगीन कामकी अपेक्षा उसकी बाह्य आकृति को सुन्दर बनाना विशेष श्रेयस्कर है। भवन का प्रत्येक भाग एक दूसरेसे मिलना चाहिये तथा सम्पूर्ण भवन पूर्णतया प्रमाणबद्ध होना चाहिये।

भारतीय शिल्पके प्रमुख लक्षण यह है कि, उसकी समथल कमान, स्थूल तथा बौने खम्भे, कड्नी, जालीदार छज्जा, चौड़े आङ्गन अथवा बरामदे, पक्का-छतदार अथवा न्यून ढालका छप्पर

इत्यादि प्रमाणबद्ध और शास्त्रानुकूल होना चाहिये। इससे भवनको चौड़ा-सुविशाल एवम् भव्य रूप प्राप्त होता है। यूरोपियन शिल्पमें अधिकतया ऊंचाईको प्रधानता दी जाती है। इसमें पतले एवम् ऊँचे खम्भे, परवलय कमान (Parabolic Arch) अथवा झुकावदार शिखर (Turrets) प्रवेशद्वारकी डेवढ़ी (Porch) अथवा कमसे कम सीढ़ियां ढँकने योग्य सामने आयी हुई कमान, (slate) स्तरयुक्त, नरम श्रेणीविशेष पत्थरका अत्यन्त ढालदार छप्पर, कचे धुंआकश, छप्परकी अन्तर्गत खिड़कियां (Dormour), तथा छरेदार गिलाया प्रभृतिका समावेश होता है। *

११—अन्तरङ्ग

भारतीय प्रणालीके भवनमें प्राय नीचे लिखे विभागोंका समावेश होता है —

(१) मिलन मन्दिर (सदर बैठक), २ शयन मन्दिर (Bedroom) एक अथवा अनेक इच्छित कमरे (३) व्यावहारिक अर्थात् स्त्रियोंके बैठने-उठनेका गृह (४) आँगन-चबूतरा अथवा खुला बरामदा (५) रसोंईगृह-स्वयम्पाकगृह (६) भोजनगृह (७) कोठी अर्थात् भण्डार (८) देवालय-ठाकुरद्वार (९) स्नानालय तथा (१०) जीना। इन सब आवश्यक विभागोंके अतिरिक्त यथाशक्ति अतिथिगृह, मेहमानोंके लिये निवासस्थान शिशुओंका क्रीड़ाङ्गण, पुष्पवाटिका (Nursery) इत्यादि विभागोंकाभी समावेश हो सकता है।

---

* [illegible] "Residential Buildings suited to India" नामक अंग्रेजी पुस्तकमें दिया है। [illegible]

आरम्भिक योजनाचित्र स्थिर करते समय उपरोक्त सभी विभाग किस प्रकार और कहाँपर निर्धारित होने चाहिये इसका निश्चय करना अत्यन्त अनुभव और चातुर्य्यका कार्य है। किफायतको देखते हुए बनाये गये योजनाचित्रमें प्रत्येक कमरेके लिये एक पृथक्‌ दालान होते हुए भी अपने आनेजानेके मार्गमें अधिक स्थान खर्च न हो, इसका ध्यान रखना अत्यावश्यक है।

किस दिशाकी ओर कौनसा कमरा रखना इसका निश्चय करना भी अत्यन्त महत्वपूण एवम्‌ विचारणीय कार्य है। उदाहरणार्थ - रसोई घर यदि पश्चिम दिशाकी ओर हो तो उससे भवनकी पूर्वस्थ दिशाकी ओर के सारे कमरोंमें धूँए तथा रसोई घरकी बुरी-भली वायु घुसनेका भय रहता है। आरोग्यशास्त्रकी दृष्टिसे इसका प्रति कार करना अत्यन्त आवश्यक है।

---

(१) सदर बैठक अथवा दीवानखाना

सदर बैठकका उपयोग साधारण रूपसे आये-गये आगन्तुकोंसे मिलने-जुलनेमें तथा बाहरी मनुष्योंसे गपसड़ाके लगाने एवम्‌ व्यावसायिक बातचीत करनेमें होता है। उसका क्षेत्रफल साधा रणतया मध्यम स्थितिके कौटुम्बिक भवनमें यथाशक्ति १५×१२ से लेकर १४×१६ तक होना चाहिये। भवन अत्यन्त छोटा ही क्यों न हो, किन्तु उसमें भी दीवानखानेका क्षेत्रफल कमसे कम उपरोक्त प्रमाणमें होना आवश्यक है। हाँ, यह हो सकता है, उससे प्रसंगानुसार शयनागार का काम ले लिया जाय। कुछ लोग इस सम्बन्धमें भोजन करनेवाले मनुष्योंकी सख्या निर्धारित कर उसके हिसाबसे क्षेत्रफल निर्धारित करते हैं। अत उस दृष्टिसे देखने पर दो पंक्तियोंको ८ फुट चौड़ा स्थान लगता है। इस दृष्टिसे चार पंक्तियोंको १५ फुट स्थान भी पर्याप्त हो जाता है। तथापि यदि १६ फुट स्थान दे दिया जाय तो विशेष उपयुक्त

होता है और बैठने-उठनेमें किसी प्रकारकी कमी नहीं रहती। विवाहादि कार्योंमें तथा सद्-भोजनमें भोजन भट्टोंकी संख्या अधिक होती है। किन्तु इस कमी-कदाचित् की असुविधाको कौटुम्बिक भवन निर्माण करते समय दृष्टिकोणमें रखना व्यर्थ है। कारण उससे व्यर्थमें अर्थकी हानि होती और निरन्तरके लिये प्राप्त स्थान रुक जाता है।

बैठकखाने में दरवाजे-खिड़कियाँ इत्यादि का निर्धारण उनके सृजन होनेके पूर्व्व ही पूर्ण विचार कर करना चाहिये। जिसमें यह न हो कि, बैठकखानेके बन जाने पर आवागमनके मार्गके कारण अथवा उसमें बनी हुई तथा रखी हुई अल्मारियों, टेबुल कुर्सियों, कोचों तथा अन्य आवश्यक वस्तुओंके कारण उनके खोलने एवम् बन्द करने में बाधा उपस्थित हो। इसके लिये आरम्भ में ही योजना चित्र बनाते समय इन सब बातोंका-विचार करते हुए उन्हें चित्रमें यथायोग्य स्थानमें अङ्कित कर देना उत्तम एवम् आवश्यक है।

दीवानखानेके प्रवेश द्वार कमसेकम ३×६ से लेकर ४'×६॥" तकके क्षेत्रफलके तो अवश्य ही होने चाहिये। उसी प्रकार खिड़कियाँ भी जहाँतक हो यथेष्ट रूपसे बड़ी होनी चाहियें। दरवाजोंके क्षेत्रफलका उक्त प्रमाण भी साधारण है। उससे बड़े दरवाजे होना अच्छा है, किन्तु छोटे होना ठीक नहीं। कारण किसी विशेष सम्मेलनके अवसर पर भीड़ एकत्रित होनेसे छोटी खिड़कियों और दरवाजोंवाले बैठकखानेमें उपस्थित जनताको पर्य्याप्त वायु एवम् प्रकाश मिलना असम्भव हो जाता है।

अंग्रेज लोग प्रायः सदर बैठकखानेको भवनके मध्यवर्तीय भागमें रखना पसन्द करते हैं। किन्तु हमारे भारतीय समाजका आचार-विचार-व्यवहार एवम् गुण कर्म्म स्वभाव तथा संस्कृति उनसे नितान्त भिन्न होनेके कारण हमें इस सम्बन्धमें उनका अनुकरण करना अच्छा नहीं। कारण उससे हमारे यहाँकी गृह

ललनाओंका स्वातन्त्र्य नष्ट हो जाता है और वह बैठकखानेके चतुर्दिक्स्थ कमरोंमें स्वतन्त्रता पूर्वक घूम-फिर नहीं सकतीं। उन्हें कौटुम्बिक कार्य करनेमें बन्धन सा हो जाता है और वह सदैव सङ्कुचितसी रहा करती हैं। अतिरिक्त इसके भारतीय प्रणालीसे बने हुए बैठकखानोंमें वायु तथा प्रकाश संग्रह करनेमें विशेष सुविधा होती है। इस पद्धतिसे बने हुए बैठकखानोंका प्रवेशद्वार बाहरी बरामदेमेंसे होना चाहिये। खण्डकी ऊँचाईका प्रमाण देखते हुए दीवानखानेकी सतहसे ७।८ फुटकी ऊँचाई पर चित्रादि लगानेके लिये उसकी चतुर्दिक्स्थ दीवालोंमें एक कगनीदार पट्टी जडनेसे दोहरा लाभ होता है। एक तो यह कि, उससे चित्रकी शोभा बढ़ती है तथा दूसरे दीवालोंको उस ऊँचाई तक जल अथवा तेलका मूल्यवान् रङ्ग देकर उसके ऊपरी भाग पर सफेदी कर देनेसे व्यय कम होता तथा सौन्दर्य एवम् आरोग्यकी दृष्टिसे विशेष लाभ होता है। साथही साथ तीसरी बात यह होती है कि, रातके समय दीपकके प्रकाशका शुभ्र सफेदी पर परावर्त्तन होकर वह अधिक स्पष्ट एवम् स्वच्छ हो जाता है। इस प्रकारके कमरोंमें स्थानस्थान पर खूटियाँ रहना भी अच्छा नहीं। कारण उनके रहनेसे उनपर कुछ न कुछ वस्त्र इत्यादि लटकेही रहते हैं, जो बैठकखानेको गोदामसा रूप देनेका कारण बन जाते हैं। उनकी जगह यदि एकही स्थान पर ५।६ खूटियोंकी चौखट जड़ दी जाय तो वह विशेष सुविधा जनक और सौन्दर्यपूरक है। इन कमरोंके दरवाजे भीतरकी ओर खुलनेवाले होनेकी अपेक्षा बाहरकी ओर अथवा पड़ोसके कमरोंमें खुलने वाले होने चाहिये।

---

(२)—शयनागार (Bedroom)

भवनका यह विभाग मनुष्य जीवनके लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें मनुष्यकी आयुका कम-अधिक प्रमाणमें प्राय एक तिहाई

भाग निद्राके कार्यमें व्यय हुआ करता है। अंग्रेजोंमें इसका महत्व समझते हुए प्राय १० से अधिक की आयुवाले किशोर वयस्क बालकों तक के मनुष्योंके लिये एक स्वतंत्र कमरा दिया जाता है। हमारे दारिद्र और अज्ञानके कारण हमारे यहाँ इस आवश्यक प्रश्नकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। यहाँ तो एकही बडे कमरेमें परिवारके अधिकसे अधिक मनुष्य खडे-तिर्छे बिछौने बिछाकर सो जाते हैं। देहातोंमें तो इससेभी विकट दशा देखनेमें आती है। वहाँ कुत्ते-गाय इत्यादि चौपाये तक इन कमरोंमें बान्ध दिये जाते हैं। इतनाही नहीं अपितु वायुके आयागमनके लिये यदि उनमें, कुछ छोटी खिडकियाँ बनी हो तो वह भी शीतके भयसे बन्द कर दी जाती हैं। परिणाम यह होता है कि, उससे श्वासो श्वासके लिये शुद्ध वायु मिलना बन्द हो जाता है। समाजमें विशेषत गृहस्थ ललनाओंमें क्षयादि रोगका प्रसार हो जाता है, एवम् दौर्बल्य, अकाल वार्धक्य, बालमृत्यु सङ्कुचित आयुर्मान इत्यादिका वास्तविक कारण—भवनक शयनागारोंकी उक्त दशा है। पुरुष वर्ग तो दिनमें अथवा किसी न किसी समय किसी न किसी बहानेसे बाहरके खुले वातावरण में घूम-फिर आता और अपने शरीर स्वास्थ्यके लिये कुछ न कुछ अंशो में बाहरकी स्वच्छ वायु ग्रहण कर लेता है। पर घरकी ललनाओंको उतनीभी खुली वायु मिलना असम्भव हो जाता है। अस्तु

शयनागार की खिडकियों की सतह जमीनसे प्राय १-१॥ फुट-पर होनी चाहिये। जिसमे भूमिपर सोनेवाले मनुष्योंके शरीर को वायु की लहरी प्रत्यक्षरूपमे स्पर्श नहीं कर सकती। यदि किसी कारणवश खिडकियो की सतह भूमिसे मिली हुई रखना हो तो उनके कपाट इस तरहके बनाने चाहियें ताकि, जब आव श्यकता हो तब नीचेका आधा भाग बन्द कर लिया जा सके। इसके लिये खिडकियोंको घूम-फिर सकने वाली झिलमिलियाँ (Venetion) लगाना विशेष अच्छा है। किन्तु इस प्रकार की योजना करना मध्यम श्रेणीके लोगोंको आर्थिक व्ययकी दृष्टिसे

असम्भव होगा। अत उसके लिये यह किया जा सकता है कि, जमीन से खिड़की का जितना भाग बन्द करना हो उस हिसाब से जमीन की सतह के समानान्तर एक फुट लम्बी और ५ इंच चौड़ाई की १।१ खिड़कियाँ बैठाकर शरीरको उनसे आनेवाली वायु स्पर्श न करे इस विचार से उनमें झिलमिलीदार तख्तियाँ तिर्छी जड़ दे तथा उनके सन्मुखस्थ दीवालमें छत अथवा खण्डके पेन्देमें लोहेके छड़ भर कर थोडी वडी खिडकियाँ जड़ दे। इस प्रकार की योजना होनेसे ताजी-स्वच्छ-ठण्डी और जड़ वायु निचली खिड़कियोंसे आकर कमरे की दूषित-तथा हल्की हवा ऊपरी खिड़कियोंसे बाहर निकल जायगी। अतिरिक्त इसके प्रत्येक खिड़की के ऊपर ६ से लेकर १। फुट तक की ऊँचाई का चौड़ा कलमदान (Ventilator) होना आवश्यक है।

शयनगृहमें जहाँतक हो अत्यन्त कम सामान होना चाहिये। इसके निर्म्माण के पूर्व्व योजनाचित्रमें पलग तथा पृथक् अलमारियोंके स्थान निर्देशित करते हुए उनके अनुसार उसमें बनने वाली खिड़कियों-दरवाजों तथा दिवालसे सलग्न अलमारियोंका स्थान निर्धारण करना अनिवार्य और सुविधाजनक है।

इस प्रकार के कमरोंका सृजन, वायुकी दिशाका अनुलक्ष्य करते हुए उसी ओर होना चाहिये। हमारे उत्तरी भारतवर्षमें तथा उधर दक्षिणस्थ महाराष्ट्र प्रान्तमें प्राय' प्रतिवर्ष ७।८ महिने पश्चिम और दक्षिण दिशाके कोणसे वायु का भ्रमण होता रहता है तथा शेष चार महिने ठीक इसकी प्रतिकूल दिशासे वायु बहती रहती है। यह चार महिनेकी अवधि विशेषतया शीतकालकी होती है। अत' उस अवधिमें यदि हमें विशेषरूपसे वायु न भी मिल सके तो भी काम चल सकता है। किन्तु ग्रीष्म और वर्षाकालमें उसका मिलना हमारे स्वास्थ्य एवम् सुखके लिये अनिवार्य एवम् आवश्यक है। अत उसी दिशाका अनुलक्ष्य करते हुए हमे अपने शयनगृहका सृजन करना उपयुक्त और श्रेयस्कर है।

अब यह प्रश्न सुलझाना थोडा कठिन है कि, हमारा शयनगृह कितना बडा होना चाहिये। मध्यमस्थितिके समाजकी आवश्यकताओंको देखते हुए थोडे बहुत अनुभवके पश्चात् हम यह कह सकते हैं कि, ऐसे समाजके लिये भवनके इस विशिष्ट विभागका आकार १२×१५′ होना पर्याप्त है। किन्तु यदि इससे भी बडा आकार हुआ तो कोई हानि नहीं वरन् उल्टे लाभ ही है। तथापि स्थानकी सकुचित दशा अथवा साम्पत्तिक स्थिति अनुकूल न होने पर भी इन कमरोंका आकार १०० वर्गफुटसे कम होना अच्छा नहीं। प्रकार विशेषको देखते हुए यह कमरे चौकोर होनेकी अपेक्षा कुछ लम्बे होना विशेष अच्छा है। उदाहरणार्थ १०′×१०′ फुट आकारके कमरेके मध्यमें एक टेबुल रखकर उसके इर्द-गिर्द जो थोडीसी जमीन बचती है उसकी अपेक्षा १२′×८ वाले क्षेत्र फलके कमरेमें उपरोक्त टेबुलके उसी स्थान पर रखनेसे उससे कहीं अधिक जगह बचती है। यों तो प्रथम आकारवाले कमरेका क्षेत्रफल १०० वर्ग फुट अर्थात् दूसरे कमरेके ९६ वर्ग फुटके क्षेत्र-फलकी अपेक्षा ४" वर्ग फुट अधिक होता है, तथापि दूसरे कमरेकी लम्बाई थोडी अधिक होनेके कारण यह प्रथम कमरेसे कहीं अधिक सुविधाजनक और सुव्यवस्थित सिद्ध होता है। यदि कमरा छोटा हो तो खिडकिया बडी रखते हुए दूषित वायुके ऊपरही ऊपर बाहर निकल जानेकी तथा स्वच्छ वायु भीतर पहुचनेकी व्यवस्था सरलतासे की जासकती है। शरीरशास्त्रवेत्ताओंने मनुष्यके श्वासोश्वासका परिमाण निकालते हुए यह निश्चय किया है कि, वह प्रत्येक घण्टेमे कितना कार्बोनिक एसिड गैस (शरीरस्थ दूषित वायु) बाहर छोडता रहता है तथा उसे उसी अवधिके भीतर कितनी शुद्ध वायु,-आक्सिजन वायु पहुचानेकी नितान्त आवश्यकता है। उस परिमाणको दृष्टिकोणमे रखते हुए स्थपतियोंने यह निर्णय किया है कि, मनुष्यके शयनागारमे प्रतिमनुष्यके पीछे कमसे कम १०० घन फुट जगह रह सके इतना बडा उसका आकार होना चाहिये। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि

यदि भवनके खण्डकी ऊँचाई १० फुट हो तो प्रत्येक मनुष्यके लिये कमसे कम ३० फुट जगह तो अवश्यही रहनी चाहिये। इससेभी स्पष्टरूपसे समझनेके लिये दीपकके प्रकाशकी यह सारिणी ध्यान में रखनी चाहिये—एक मोमबत्ती=½ मनुष्य, १ कन्दील अथवा काँच की चिमनी=१ मनुष्य, तथा १ ग्यासकी बत्ती=३ मनुष्य।

भवनमें जितना शुद्ध एवम् स्वच्छ वायुका महत्व है उतनाही प्रकाश तथा धूपका है। अत जहाँ तक सम्भव हो शयनागारमें प्रकाश और धूपके प्रत्यक्ष रूपसे प्रादुर्भूत होनेकी ओर ध्यान रखते हुए उनका सृजन होना चाहिये। धूप अथवा ऊष्ण वायुसे भवनस्थ कृमिकीटाणुओं एवम् रोगजन्तुओंका नाश होता रहता है, यह हम आरम्भमें लिखही चुके है। अत उस ओर ध्यान रखते हुए इस कार्यमें विशेष सावधानी रखनी चाहिये। दूषित ऊष्ण किन्तु हलकी हवा उक्त प्रकाश एवम् धूपके कारण नष्ट होकर ताजी एवम् स्वच्छ वायुका मार्ग सरल हो जाता है।

अन्तमें इस सम्बन्धमें दो बातें विशेष रूपसे ध्यानमें रखना आवश्यक है। एक तो यह कि, भवनके इतर विभागमे जाने के लिये शयनागारसे होते हुए न जाना पडे तथा दूसरी यह कि, स्नानालय तथा शौचकूप (सण्डास) की ओर जानेके लिये प्रत्येक शयनागारसे पृथक् मार्ग हो, दूसरे शयनागारसे होते हुए न जाना पडे।

---

(३) व्यावहारिक कमरा

व्यावहारिक कमरे को हम दूसरे शब्दोंमें स्त्रियोंके बैठने-उठने का कमराभी कह सकते है। स्त्रियाँ इसमें बैठकर नित्यही कुछ-न कुछ कौटुम्बिक कार्य करती रहती है। उनका गार्हस्थिक काय एवम् व्यवहार कभी बन्द नहीं होता। रसोई-पानी तथा अन्यान्य

नित्यनैमित्तिक कार्यों को करने के पश्चात् गौण कार्योंको
तथा बैठने-उठनेके लिये उन्हें एक स्वतन्त्र कमरे की आवश्य
होती है और उसी कमरे को हम उक्त नामसे सम्बोधन करते
यह कमरा प्राय: भवनके मध्यवर्तीय भाग में होता है । अत
उसे दूसरे शब्दोंमें मध्य-गृहभी कह सकते हैं। छोटे-छोटे भव
इन कमरोंका उपयोग प्रसङ्ग विशेष पर शयनागारकी तरह भी
सकता है। प्राचीन समयमें इस प्रकार के कमरे विशेष सुरा
होने के कारण उनमें मूल्यवान् सामान आदि रखनेकी परि
थी। उस समय परदे की प्रथा हमारे यहां अत्यधिक होनेके का
इस प्रकारके कमरों म प्राय अन्धकार सा रहता था । कि
आधुनिक परिवर्तित परिस्थितिम उनमें प्रकाश और वायुका र
नितान्त आवश्यक है । इन कमरोंकी दीवारोंमें १।१ अल्मा
जडनेसे मूल्यवान् सामुग्री रखनेके लिये अच्छा सुविधा हो जाती

---

(४) बरामदा-चबूतरा या आँगन

सौन्दर्य, सुविधा और स्वास्थ्य इन तीनों ही दृष्टिसे मते
भवनमें थोडा बहुत बरामदा चबूतरा या आँगन होना नित
आवश्यक है। इनके होनेसे कई लाभ होते हैं। प्रथम तो यह
बाहरसे आनेजानेवाला मनुष्य भवनके भीतर प्रवेश करे
पूर्व थोडी देरतक यहाँ रुक सकता है। दूसरा यह कि, उ
रहनेसे आगन्तुकोंको अपने जूते इत्यादि रखने तथा कुर्सी
बैठनेके लिये स्थान मिल जाता है। तीसरा और अत्यन्त मह
पूर्ण लाभ यह होता है कि, बाहरकी धूप तथा उष्ण वायु सी
भवनके भीतरी भागमें प्रवेश नहीं करती । चौथा उपर
यह होता है कि, उनके कारण भवनके भीतरी कमरा
बन्दिस्त रहती है । इनके होनेसे यह आवागमनके लि
भवनस्थ सार्वजनिक मार्ग बनानेमें विशेष सहायक स्था

सिद्ध होता है। भवनके पार्श्ववर्ती भागमें अर्थात् मध्य गृह और रसोई घरके सन्निकट आँगन होनेसे गृहललनाओंको पिसाई कुटाई आदि कार्य्योंके लिये स्वतन्त्र स्थान हो जाता है तथा वहाँ कपडे-लत्ते इत्यादि आवश्यक वस्त्र निरापद रूपसे सुखाये जा सकते हैं। इन सब बातोंके अतिरिक्त ग्रीष्मऋतुमें धूपसे बचते हुए क्षणभर हवामें बैठनेके लिये खुला स्थान मिल जाता है।

भवनके सन्मुखस्थ बरामदेके कारण भवनकी शोभा वृद्धि होती है। यदि यह बरामदा ३।४ फुटकी चौडाईका हुआ तो उसका उपयोग आवागमनके मार्गके लिये होता एवम् अन्तर्गत कमरोंका पोशीदापन कायम रहता है। यदि उसकी चौडाई ६॥ से ७ फुट तककी हुई तो उसमें बैठने-उठने तथा सोने इत्यादिके लिये पलङ्ग कुर्सी आदिकी व्यवस्था हो सकती है। किन्तु इसकी मध्यवर्तीय चौडाई रखनेसे वह किसी कामका नहीं रहता।

---

(५) स्वयम्पाक अर्थात् रसोईघर

यदि भोजनके लिय पृथक् कमरा रखना हो तो केवल रसोईके लिये सौवग फुटके आकारका कमरा पर्य्याप्त है। तथापि मध्यम श्रेणीके समाजकी दृष्टिसे रसोई घरमे थोडे बहुत मनुष्य बैठकर भोजन करसकें ऐसी व्यवस्था होना विशेष सुविधा जनक होता है। इस दृष्टिसे विचार करनेपर रसोई घरका क्षेत्रफल १५×८' होना चाहिये। इस कार्य विशेषके प्रीत्यर्थ जो कमरा बनाया जाय वह चौकोर बनानेकी अपेक्षा लम्बाकृति बनाना विशेष उपयुक्त होता है। रसोई घरमे निम्न लिखित योजनाओंका होना अत्यन्त आवश्यक है—

(अ) धूँएदान अथवा धूँआकश (ब) मोरी (क) दो कपाट अर्थात् अल्मारियाँ (ड) एक चूल्हे पर प्रकाश फैलानेवाली तथा एक अतिरिक्त ऐसी दो खिडकियां (ई) खानेदार आगा-रहित

अलमारियाँ (Open shelf) अथवा पल्ले रहित दीवालस्थ अलमारियाँ (Wall shelf)

(अ) धूँएदान अर्थात् धूआंकश—इसके लिये जो कमान बनायी जाय उसकी चौड़ाई ४ फुट गहराई १॥ फुट तथा ऊँचाई ३ फुट होनी चाहिये। उसके मध्यभागमें आदिसे अन्ततक ६ इंच से लेकर ८ इंचतकके व्यासका आर-पार छिद्र होना चाहिये। ताकि उसमें होकर धूँआं भलीभांति निकल सके। ज्यों-ज्यों धूंआकशकी बन्धाई ऊँची होती जाय त्यों-त्यों उक्त छिद्रके अन्तर्गत भागमें चूनेका लेप (पलस्तर) कर देना चाहिये। यदि यह अन्तर्गत भाग थोडीसी असावधानीके कारण ऊबड-खाबड़ रह गया तो अल्पकालमेंही भीतर धूँएकी कालिख जमा हो जाती और धूँएके सरलता पूर्वक निसृत होनेमें बाधा उपस्थित् होती है। इस प्रकारका पत्थर-चूने अथवा ईंट-चूनेकी सहायतासे धूआकश निर्म्माण करनेकी अपेक्षा यदि चीनी मिट्टीकी नलिकाएं एक पर एक खडी कर उन्हें जोड दिया जाय तो विशेष अच्छा और उपयुक्त होता है। धूआंकशकी नलिका घरके मुंडेरेके ऊपर कमसेकम १॥ फुट ऊँची तो अवश्य ही होनी चाहिये। अधिकांश रूपसे धूंए-दानकी कमान दीवाएके भीतर १ फुट और बाहर ६ इञ्चसे लेकर ९ इञ्च तक अर्थात् १॥-१॥। फुट गहराईकी रखी जाती है। कितनीही जगह प्रसङ्ग विशेषको देखते हुए एक कोनेमें भी धूएदानका सृजन होता है। उस प्रणाली में त्रिभुजाकृति कोणकी अन्तर्गतस्थ दो दीवालोंका कुछ भाग विशेष आगे बढाकर उस पर कमानका सृजन होता है। कोनेमें बने हुए धूंआंकश उस परिस्थितिमें लाभजनक होते हैं जब एक दूसरेके सन्निकट दो चूल्हे होते हैं। इसमें रहस्य यह होता है कि, दोनों ही चूल्हों का धूआं एकत्रित कर उसे एकही धूंएदानसे निकाल बाहर करनेमें गुञ्जाइश मिल जाती है। ऐसी परिस्थितिमें इतना अवश्य ध्यानमें रखना चाहिये कि, दोनों धूएदानों का मध्यवर्तीय पतला पटदा यथेष्ट ऊँचाई तक ऊपर की

ओर ले जाना चाहिये। यदि इसमें किञ्चित् भी असावधानी हुई तो एक चूल्हेके सुलगते ही उसका धूँआं दूसरे चूल्हे के धूँआंकश-से होता हुआ पुन रसोईघरमें वापिस लौटता और वहाँ का सम्पूर्ण वातावरण धूम्रमय बना देता है।

धूँआंकशका वह मार्ग जिसमें से होकर धूँआ निकल जाता-हो बाधारहित और सरल होना चाहिये। यह नहीं कि, वह स्थान-स्थान पर ऊबड-खाबड और कोने-कतरोसे परिपूरित हो। यदि उसमें किसी कारणवश घुमाव रहे भी तो भी उसमें क्रमिक झुकाव होना चाहिये। इसके साथही इस सम्बन्धमे एक बात और ध्यानमें रखने की यह है कि, धूँआंकशकी नलिका को नीचेसे ऊपर तक कहीं भी छिद्र अथवा सन्धि नहीं होनी चाहिये। धूँआकश के मार्गमें ठण्डी हवाका अंश मात्रभी घुस जाना धूएको ऊपर उठनेसे रोक देता है। उसके शीर्ष भाग अर्थात् नलिका के उर्ध्व अग्रपर लोहे की टोपी जडना बर्सोती जल तथा गगन-विहारी विहङ्ग-गणोंके मलमूत्रसे स्वयम्पाकगृहस्य चूल्हेके सरक्षणकी दृष्टिसे अत्युत्तम है।

चूल्हेमें यदि लकडियाँ जलानी हो तो उसके पेन्देमे एक लोहे की जाली जडकर उसके नीचे बाह्य भागकी ओर बारीक तारकी जाली बैठाया हुआ एक नलिका का टुकडा जोडसे हुए उसे दीवालके आर पार-कर देनेसे चूल्हेको नीचेसे यथेष्ट वायु मिलती तथा धूँआ न होकर ईंधनकी बचत हो जाती है।

(ब) मोरी—जहाँ पानीका नल रसोइघरमे ले जाना सम्भव है वहां मोरी का आकार थोडा बडा अर्थात् प्राय १॥'×१' पांच वर्गफुटका होना चाहिये। विशेषतया मोरी चूल्हेके सान्निध्यमें एक कोनेकी ओर होनी चाहिये। इसकी सतहमें यथेष्ट ढाल देते हुए ऐसी तदबीर करनी चाहिये जिसमें वहाँ गिरनेवाला सारा जल एक कोनेमें बहकर वहाँ बने हुए छिद्रमें चला जाय। इस छिद्रमे एक विशिष्ट प्रकारका जालीदार ' ट्रॅप '

(Nhanisrap) बैठाना चाहिये तथा मोरीकी सतह जहां तक हो पकी एवम् चिकनी बनानेका उपाय करना चाहिये। शहाबादी या कटनी की लादीका पलस्तर इस कार्यके लिये विशेष उपयुक्त है। मोरीके दोनों ओरके शिरोभाग पर ९ इञ्चसे लेकर १ फुट तकके चौड़ाईका मञ्च (चबूतरा) बनाकर उसके अन्तर्गत भागमें यथेष्ट ढाल देना चाहिये। ताकि उसपर जलसे भरा हुआ घड़ा इत्यादि पात्र रखा जा सके और उससे गिरा हुआ जल सरलता पूर्वक मोरीमें गिरकर बह जाय। मोरीके ऊपर प्राय २॥ फुटकी ऊँचाइमें दीवालकी अलमारी बना कर उसमें १।२ जालीदार ताखे बनानेसे मंजे या धोये हुए बर्तन औंधे रखने से उनमेंका सारा जलांश बहकर मोरीमें चला जाता है। जहां मोरीकी सीमा हो वहां भूमिकी सतह पर तथा दीवालमें प्राय २ फुटकी ऊँचाईतक सिमेण्टका पलस्तर कर देना चाहिये।

(क) दीवालस्थ अलमारियां (Wall cupboards) रसोंई घरमें इनका उपयोग अधिकतासे होता है। अत सौन्दर्य एवम् आवश्यकता को देखते हुए उन्हे यथेष्ट प्रमाणमें बनाना चाहिये। उनमेंसे एकमें जालीदार दरवाजे जड़नेसे दूध, दही इत्यादि पदार्थ रखनेमें विशेष सुविधा होती है। यह अलमारियाँ प्राय २॥'×४' तथा '३'×५ वर्ग फुट आकारकी होनी चाहियें।

(५) खिड़कियाँ—इनके सम्बन्धमें अधिक लिखना अनावश्यक है। केवल इस सम्बन्धमें ध्यान इतनाही रखना चाहिये कि, इनमेंसे एक खिड़कीमें क्रमश काँचकी चद्दरें तथा दूसरीमें जालीकी चद्दरें जड़ देनी चाहिये। ताकि सम्पूर्ण कमरेमें प्रकाश एवम् वायुकी यथेष्ट समृद्धि रहे। वायु और प्रकाशसे रसोंई घरमें मक्खियोंका प्रादुर्भाव कम होता और आरोग्यकी रक्षा होती है।

(६) दीवालस्थ ताखे (Wall shelf) दीवालोंकी रचना करते समय कमरेकी सतहसे प्रायः ५॥ फुटकी ऊंचाई पर खूंटियां अथवा अर्द्ध तोरण युक्त ताखे जड़कर उनपर पच (screw) के

सहारे १।१ तख्तिया जड़ देनेस गृह ललनाओंको अपना नित्योप- योगी सामान रखनेमें पर्य्याप्त सुविधा हो जाती है। इससे ऊपर अर्थात् ७ फुटकी ऊँचाई पर इसी प्रकारकी तख्तिया जड देनेसे पैरके नीचे कुछ सहारा लेकर उनपर भी कुछ सामान रखा जा सकता है। आगा पीछा रहित उठाऊ लकडीके ताखोंकी अपेक्षा इस प्रकारके दीवालस्थ ताखे बनाना विशेष अच्छा है। कारण उससे व्यय कम होता और स्थानकी बचत होती है।

चूल्हेका चबूतरा ऊँचा कर उसे मोरीकी दिशाकी ओर ढालुआँ बनाने तथा मोरीके कठघरे में नलिका बैठानेसे चूने अथवा सिमे ण्टसे बने हुए चूल्होंको गोबर इत्यादिसे लीपनेकी अपेक्षा उन पर घडाभर पानी डालनेसे वह साफ धुल सकते और उनपर गिरा हुआ सारा जल उक्त नलिकाके मार्गसे मोरीमें बहाया जा सकता है।

रसोईघरमें शास्त्रीय पद्धतिसे धूएदानोंका निर्माण होनेसे उनमें धूआ फैलनेका कोई भय नहीं रहता तथापि यदि रसोईघ गृहकी रचना पूर्व्व और उत्तर दिशाके कोणमें की जाय तो उनमें प्रातःकालीन धूपका प्रवेश होकर वहाकी वायु शुद्ध हो जाती तथा यदि कारणवशात् धूंआ उठा भी, तो वह मकान के अन्दर कमरों में नहीं घुसने पाता। इसके अतिरिक्त एक लाभ यह होता है कि, सायङ्कालके समय उक्त दिशामें बने हुए रसोई घर विशेषतया ग्रीष्मऋतुमें ठण्डे हो जाते हैं।

जिनमे कुछ अधिक व्यय करनेकी सामर्थ्य हो उन्हें चाहिये कि, वह अपने यहाके रसोईघरको मकानसे कुछ पृथक् बनावें। इस प्रकारके रचनाविशेषसे वे लाभ होते हैं। केवल असुविधा इतनी ही रह जाती है कि, गार्हस्थिक [illegible]ओंके स्वयम्पाककर्म संलग्न हो जाने के कारण उनकी दृष्टि मकानमें आने-जाने[illegible] आगन्तुकों पर नहीं रहने पाती।

(६) भोजनालय

यह कमरा स्वयम्पाक गृहके नितान्त सन्निकट होना चाहिये। छोटेछोटे भवनोंमें यदि रसोईघरके सन्मुख ६।७ फुटकी चौडाई का आँगन अथवा चबूतरा हो तथा उसके सीमान्तगत भागपर ३ फुट की ऊचाईकी दीवाल अथवा जाली लगी रहे तो उसकाभी व्यवहार, भोजनगृहकी तरह हो सकता है। इन कमरोंमें यथेष्ट प्रकाश होनेकी आवश्यकता है। साथ ही साथ इसके दृष्टिके समय यह भी ध्यान रखना चाहिये कि, उसका निर्म्माण ऐसे स्थान पर हो कि, जिसमें दो पहरके समय वहाँ की वायु उष्ण (गरम) न होने पाये। पीताम्बर, अर्थात् रेशमी वस्त्र, धोती इत्यादि सुखाने के लिये इनम जस्ते की तार अथवा लम्बे बाँस इत्यादि बान्धे जा सकते हैं।

(७) कोठी अर्थात् सामग्री भाण्डार

इस कार्यविशेषके लिये एक स्वतन्त्र कमरा होना अत्यन्त आवश्यक है; तथापि गरीब परिवारके लिये स्वयम्पाकगृहमें अल मारियों तथा दीवालस्थ ताखोंके अधिक संख्यामें रहने तथा भोजन गृहमें आगा, पीछा रहित उठाऊ एवम् लकडीकी अलमारियों रहनेसे बहुत कुछ अंशोंमें उनकी इस विभाग विशेषकी पूर्ति हो जाती है। किन्तु यदि परिस्थितिको देखते हुए इस कार्यविशेष के निमित्त स्वतन्त्र कमरा बनवानेका विचार हो तो उसमें वायुका सञ्चार होनेके निमित्त एक खिडकीका बनाना तथा चूहें-छछून्दर आदिके बिलोंसे उसके सरक्षणकी व्यवस्था करना अत्यन्त आवश्यक और अनिवार्य कार्य है। कमरमें नित्यनैमित्तिक रूपसे समाहित होनेवाले कतवारकी निकासीका ध्यान रखते हुए उसमें

जमीनसे प्राय एक फुट ऊँचाई तक के साधार मञ्च (चौपाइयाँ) होने चाहिये। ताकि उनपर सग्रहित सामान रखा जा सके। अधिक सामान रखनेके लिये इस प्रकारके कमरेकी जमीनमें तहखानेके सदृश्य अलमारीनुमा विभागकी रचना करना सुविधाकी दृष्टिसे अत्यन्त लाभजनक होता है। किन्तु इस प्रकारकी योजना करते समय उसकी सतहमें तथा इर्द-गिर्द शहाबादी अथवा पत्थरकी फर्शबन्दी करना, उसके शिरोभाग पर लकडीकी दरवाजासे युक्त चौखटें जड देना तथा बाहरसे प्रकाश एवम् वायुके मिलते रहनेके लिये दीवालसे एकाध चीनी मिट्टीकी नलिका बाहर तक निकाल देना और उसमे जाली बैठा देना अत्यन्त आवश्यक है। इस विशेष प्रकारकी स्थान योजना (कपाट) से अधिकसे अधिक सामानमी व्यवस्थित रूपसे रह सकता है। इसकी सतह बाह्यगत् सतहसे थोडी ऊँचाईपर होनेसे उसके भीतर धान्यादि पदार्थ वैसे भी रखे जा सकते है। उससे उनके सडने इत्यादिका कोई भय नहीं रहता।

---

(८) देवालय

प्राचीन कालमे प्रत्येक भवनमें ठाकुरजीके लिये एक स्वतन्त्र कमरा बनाया जाता था। जिसे ठाकुरद्वार, देवालय प्रभृति- नामोंसे सम्बोधन करते थे। किन्तु आज देश काल और परि- स्थितिको देखते हुए सर्व्वत्र ऐसी व्यवस्था होना असम्भव हो गया है। अत इस असुविधाको दृष्टिकोणमें रखते हुए व्यावहारिक गृह अथवा भोजनालयहीमें कमरेके एक ओर दीवालमें मन्दिरनुमा दरवाजेदार ताखा बनाकर उन दरवाजोंमें कांचकी चद्दरके टुकडे जड देनेसे भी काम चल सकता है। यदि परिस्थिति अनुकूल हो तथा घरके लोग श्रद्धावान् और भावुक हों तो देवगृहका स्वतन्त्र-

रूपसे सृजन करनाही अच्छा है। इन कमरोंमें प्रकाश थोड़ा धीमा तथा यह विभाग भवनके नितान्त एकान्त स्थानमें होने चाहियें।

(९) स्नानालय

स्नानगृह नितान्त स्वतन्त्र होते हुए उसके बन्द करनेकी यथेष्ट व्यवस्था होनी चाहिये। प्रत्येक भवनमें एक अथवा दो स्नानगृह, कमसे कम एक स्नानगृह तथा एक पेशाबखाना (मूत्रगृह) तो अवश्यही हो। इनमसे मुख्य स्नानगृहका सृजन रसोई घरके सन्निकट तथा दूसरा प्रसङ्ग विशेषके समय स्नान करने तथा सर्व्व-साधारण रूपसे मोरीकी तरह व्यवहारमें लानेके लिये होना चाहिये। इस दूसरी श्रेणीके स्नानागारका सृजन भवनके सन्मुखस्थ भागमें होना उत्तम है। स्नानालयमें वायु सञ्चारके लिये उसकी दीवालके भीतरी भागमें जमीनकी सतहसे प्राय ५ फुटकी ऊंचाई पर एक चौड़ी खिड़की होना आवश्यक है। साथही एक दूसरी खिड़की प्रकाश प्राप्तिके लिये मँजे हुए कांचकी (Frosted) चद्दर जड़ी हुई होनी चाहियें। जल गरम करनेकी तथा ठण्डे जलका संग्रह करनेकी व्यवस्था यदि कमरेके भीतरही होना आवश्यक हो तो उसका आकार प्राय ६'×१०'=६० वर्ग फुट होना चाहिये। केवल स्नान करनेके लिये ५'×८" आकारका कमरा पर्याप्त है। केवल मोरीकी आवश्यकता होने पर ३×४"=१२ वर्ग फुट स्थान पर्याप्त हो जाता है। स्नानालयके भीतर उसके ऊपरी भागमें दीवालकी चौड़ाईका एक यड़ासा ताखा बनानेसे ईन्धनादि रखनेमें सुभीता होता है।

हमारी हिन्दू संस्कृतिके अनुसार स्नानगृहके एक कोनेमें कमरके अन्य भागकी अपेक्षा स्नानके लिये ३ इञ्च गहराई में ३×३ आकारकी एक मोरी होनी चाहिये तथा वहाँ बैठनेके लिये १॥'×१॥'×½' आकार का एक पत्थर जड़ देना चाहिये। उसके ठीक बगलमें

अँगौछा तथा कपडे लटकानेके लिये दीवालकी सतहसे प्राय ५ फुटकी ऊँचाई पर अर्द्ध-तोरण-युक्त ताखे जड कर उस पर एक ३ फुट लम्बाईकी लकडी अथवा तख्ती जड देना विशेष उपयोगी है। कमरेका सारा फर्श शहाबादी फर्शबन्दी किया हुआ अथवा सिमेण्ट का पलस्तर किया हुआ होना चाहिये। तथा उसे मोरीकी दिशाकी ओर एक फुटके पीछे चौथाई इञ्चका ढाल देना चाहिये। मोरीके कोनेमें स्नानागारोपयोगी गन्धोत्सर्जक (Trap) जड कर उसके आगे नलिका जोडनेसे मोरीका सारा जल दूर तक बाहर निकल जाता है। साबुन-लोटा इत्यादि रखने की व्यवस्था दीवाल-में अर्द्ध-तोरण (Bracket) जडकर उस पर तख्ती जडने से हो सकती है। गीले कपडे इत्यादि रखने के लिये कमरेके एक कोने में जमीनसे ६ इञ्चकी ऊँचाइ पर छिद्रयुक्त तिपाईका आयोजन करना चाहिये। यदि आवश्यकता हो तो ठण्ढा जल समहित करने के लिये इसी कमरेमें तन्निमित्त पत्थरका हौज भी बनाया जा सकता है। जहाँ पानी गरम किया जाता हो वहाँ किसी भी दशा में धूँएँदानका होना अनिवार्य है। नलकी व्यवस्था होनेसे उसमें छिद्रयुक्त ढिबरी बैठाकर फौव्वारेका काम लिया जा सकता है।

मुख्य स्नानागार जहाँतक हो स्वयम्पाक गृहके सन्निकट होना चाहिये। ताकि गृह ललनाओंको स्नानादिसे निपटकर स्वय-म्पाक गृह अथवा भोजनगृहमें जानेके लिये असुविधा न हो। स्नानालय तथा रसोई घर के मध्य में शौचकूप का निर्म्माण होना किसी भी दशा एवम् किसी भी परिस्थिति मे वर्ज्य है।

---

(१०) जीना

अधिकांश लोगोंकी यह धारणा नितान्त सत्य है कि, गृह रचना कार्यमें जीने तथा छप्पर के सम्यक्रूप से सृजन होनेसे भवन निर्म्माण का शेष कार्य सरलता पूर्वक सम्पन्न हो जाता है।

छतके सृजन में यदि किञ्चित् भी असावधानी हुई तो उससे जल के चूने का भय रहता तथा सम्पूर्ण भवनको धक्का बैठने तथा उस पर आघात पहुँचने की गुञ्जाइश रहती है। यही दशा जीनेके उत्तमतापूर्व्वक सृजन न होने के कारण देखने में आती है। उदाहरणार्थ सीढियोंके यथायोग्य न होनेसे मनुष्यके गिरने,आहत होने तथा प्रसङ्ग, विशेष पर मर जानेका भय रहता है। परिवारके बालकों को तो ,यह भय अत्यधिकरूपसे होता है। अत उसके सृजनके समय निम्न लिखित बातों की ओर ध्यान-देना नितान्त आवश्यक है:—

(१) सब सीढियों पर भरपूर प्रकाश एवम् वायु होनी चाहिये।

(२) चढाव (Rise) सरल एवम् सुखकर हो।

(३) सीढियोंपरके स्थानका कोई भी भाग कमसे कम ६॥ फीट ऊँचा,और खुला होना चाहिये।

(४) सरल भागमें जितनी चौड़ाई हो उतनीही पेचीदे (घुमाव) भागमें होनी चाहिये।

(५) जीनेकी चौड़ाई इतनी हो ताकि चढ़ने-उतरने वाले मनुष्योंको किञ्चित् भी दिक्कत न उठानी पड़े।

(६ जहाँतक सम्भव हो जीने चक्राकार अथवा घुमावदार न होने चाहियें। उसमें कुछ अंश तो सरल तथा उसके बीचमें एकाध चक्राकार घुमाव होना बुरा है। यदि यह अशक्य हो तो जीनेके अग्र एवम् अन्तिम भाग पर चक्राकार घुमाव रखे, ताकि बच्चोंके गिरने-पड़नेपर वह साँघातिक चोटसे बचे रहें।

(७ चौपड़ा—पायरी (Landing)का स्थान नितान्त चौकोर होना चाहिये। उसमें तिकोनी,सीढिया का होना वर्ज्य है।

(८) समस्त सीढियोंका,चढाव एकसा हो। कितनीही बार यह हो जाता है कि, जीनेकी प्रथम सीढी ७ इञ्ची चढावकी तथा ऊपरकी एकही सीढी ८ इञ्ची,अथवा उससे भी अधिक चढावकी, किम्वा समस्त सीढियाँ सम्यक् चढावकी किन्तु निचली सीढी केवल १।२ इञ्च चढावकी होती है। सीढियोंके चढाव के सम्बन्धमें

यदि आधे इञ्चका भी अन्तर रह गया तो मनुष्यके पैरको तत्काल उसकी सूचना मिल जाती है और पैर छूटा हुआ समझकर कमसे कम यह घबडा तो अवश्यही जाता है । अन्धकारमें इस तरहकी परिस्थितिका अनुभव उसे अधिकाँश रूपसे मिलता रहता है।

(९) पैताना,-जिसपर पैर रखा जाता है (Tread) कमसे कम ९ इञ्च चौडा तो अवश्यही होना चाहिये । ताकि उसपर मनुष्यका पैर पूरी तरह जम सके ।

(१०) त्रिभुजाकृति घुमाव होनेसे प्रत्येक घुमाव में तीनसे कम-सीढ़ियाँ न होनी चाहियें तथा जहाँतक सम्भव हो प्रत्येक घुमावमें इन सीढ़ियोंकी संख्या समान होनी चाहियें।

(११) भवनमें यदि एकही जीना हो तो जहाँतक सम्भव हो उसे Fire Proof अर्थात् अदाह्य बनाना चाहिये ।

(१२) यदि सम्भव हो सके तो प्रति आठ फुटके अन्तरपर एक-एक चौपढा-पायरी रहनी चाहिये। क्योंकि इससे अधिक ऊँचाई-तक जीना सरल रखनेसे नीचे देखनेपर मनुष्यको चक्कर आ सकता है।

जीनेकी चौडाई

एकही समय पर दो मनुष्य सरलता पूर्वक चढ-उतर सकें इतनी अर्थात् कमसे कम ३॥ फुट चौड़ाई तो जीनेकी अवश्यही होनी चाहिये । तीन फुटकी चौडाई रखनेसे पलङ्ग, अलमारियाँ इत्यादि सामान सरलतापूर्वक नीचेसे ऊपर और ऊपरसे नीचे चढायें एवम् उतारे जा सकते हैं। मध्यमश्रेणीके मनुष्योंके भवनमें जीनेकी चौडाई ३॥। फुटसे कम रहना अच्छा नहीं । सार्वजनिक भवनोंमें उदाहरणार्थ,-सभागृह, पाठशालाएं, धर्मशालाएं इत्यादि भवनविशेषोंमें जीनेकी चौड़ाई कमसे कम ४फुटकी होना तो अत्या-वश्यक एवम् अनिवार्य है।

जीनेका स्थान

हमारे यहाँ पहिले भवनकी मध्यवर्तीय दीवाल अत्यन्त चौड़ी (मोटी) होनेके कारण वहीं जीने के सृजनकी परिपाटी प्रचलित थी। इससे अर्थव्ययकी दृष्टिसे पर्याप्त बचत होती तथा जीनेके लिये अतिरिक्त स्थान देनेकी आवश्यकता भी नहीं पड़ती थी। किन्तु आधुनिक कालमें एक तो उतनी चौड़ी दीवालें कोई बनाताही नहीं; दूसरे यदि बना भी ली जाँय तो भी इस प्रकारकी व्यवस्था करनेसे जीना दीवालस्थ सङ्कुचित भागमें चला जाता एवम् चौड़ाई-चढ़ाव तथा प्रकाशकी दृष्टिसे अत्यन्त अनुपयुक्त सिद्ध होता है।

भवनके ऊपरी मञ्जिलके कमरे यदि परिवारके वैय्यक्तिक उपयोगके लिये बने हों तो जीनेका सृजन कहीं भी जहाँ सुविधाजनक प्रतीत हो,-हो सकता है। उस दशामें निचले खण्डके भोजनगृह अथवा व्यवहारोपयोगी गृहके भीतरसे जीनेका प्रवेश द्वार होनेसे भी कोई आपत्ति नहीं। तथापि यदि भवनके ऊपरी कमरे सार्वजनिकरूपसे व्यवहारमें लाने हों तो जीनेका सृजन सम्भवनीय प्रकारसे पृथक एवम् भवनके सन्मुखस्थ आँगन या बरामदेमेंही होना चाहिये। प्रसङ्गवशात् यदि मञ्जिलके ऊपरी कमरे किरायेपर देने हों तो उसके लिये जीनेका सृजन नितान्त स्वतन्त्र एवम् पृथक् होना आवश्यक है।

---

(११) विश्रामगृह

भवनमें, उक्त अन्तर्गत् विभागोंके अतिरिक्त एक विशेष विभाग विश्रामगृहका भी होना चाहिये। जिस भवनमें हम रहते हैं, उसमें जितने ही अधिक जीवनसुखके साधनोंका समावेश करना सम्भव हो उतने सब समावेशित करना भवनकी उपयुक्तता एवम् सुयो-

ग्यता बढ़ता है। साथहीसाथ उससे हमारी यश कीर्तिका विकाश होता तथा हमें और हमारे परिवारको सदाके लिये सुखका सामान बन जाता है। भवन यह एक ऐसी स्थूल द्रव्य, एवम् स्थायी सम्पत्ति है जो परम्पराके लिये कुलका नाम अजरामर कर देती है। उसमे नित्य नैमित्तिक व्यवहारोंके लिये प्रत्येक परिवारमात्रको जिन विभागोंकी निरन्तर एवम् अत्यधिक आवश्यकता होती है, उनका क्रमिक विवरण तो ऊपर दिया ही जा चुका है। उसके लिखते समय वर्त्तमान् कालकी ओर लक्ष्य दिया गया है, किन्तु भविष्य कालकी ओर देखते हुए अथवा यों कहिये कि, भवनके अत्याव श्यक एवम् निरन्तरोपयोगी विभागोंके अतिरिक्त प्रसङ्ग विशेषके समय काम आनेवाले विभागकी ओर किञ्चित्‌भी ध्यान नहीं दिया गया है। जो भवन निर्म्माण शास्त्र अथवा मनुष्यके भावी सुखकी दृष्टिसे अत्यावश्यक एवम् अनिवाय कार्य है । उसीकी पूर्ति हम इस अन्तिम स्तम्भमें करते हुए इस विषयको समाप्त करेंगे।

भवनमें अन्यान्य विभागोंके अतिरिक्त एक ऐसे विभाग अर्थात् कमरेकी आवश्यकता होती है, जो प्रसग विशेष पर काम आये, परिवारके बड़े-बूढ़ोंके लिये विश्रामका स्थान बने। उसमें विश्रा मके समस्त साधन एवम् सामुग्रियाँ सम्पृद्ध हो, उनके नित्य-नैमित्तिक व्यवहारोंके लिये उन्हें विशेष कष्ट न उठाने पड़े,- विशेषतया दौड़ धूप न करनी पड़े। साथही साथ स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी यह विभाग-विशेष उन्हे आरोग्यप्रद सिद्ध हो। अतिरिक्त इसके प्रसङ्गवशात् गृहस्वामी भी इसे इच्छित कायम ला सके यहाँ रहकर विश्राम कर सके तथा अतिथिगणोंका सेवा-सत्कार कर सके। इन सब बातोंको देखते हुए इस विभाग-विशेषको विश्राम गृह कहना कोई अत्युक्ति न होगी। इसका निर्म्माण करते समय निम्नलिखित बातोंपर प्रमुख रूपसे ध्यान देना चाहिये-

(१) जहाँ तक सम्भव हो विश्रामगृहका सृजन भवनके प्रारम्भिक खण्ड (मञ्जिल) में ही हो; ताकि वयोवृद्ध एवम् रुग्णोंको जीनेसे चढने उतरनेके कष्ट न उठाने पड़ें। यदि खुली-स्वच्छ

एवम् अधिक वायु मिलनेकी दृष्टिसे ऊपरी खण्डमें इस प्रकारका कमरा बनाना हो तो जीना कमसे कम पर्य्याप्त रूपसे चौड़ा, हवा दार, प्रकाशसे परिपूर्ण तथा सीढ़ियाँ-सम्यक् रूपसे चौड़ी और प्रमाणसे अधिक ऊँची न होनी चाहियें।

(२) इस प्रकार विशेष कमरेमें एक छोटेसे स्नानागार अथवा कमसे कम उसीमें दीवाल खड़ीकर एक-एक छोटेसे सहायक कमरेका आयोजन होना चाहिये।

(३) विश्रामगृहका निर्म्माण भवनके दक्षिण एवम् पश्चिम दिशाके मध्यवर्तीय कोणमें होना चाहिये। साथही उसमें इस प्रकार का आयोजन किया जाना चाहिये ताकि, प्रातःकालीन धूपका उसम यथेष्ट रूपसे समावेश हो एवम् सायङ्कालीन धूपसे उसकी दीवालें गरम न होने पायें।

(४) मध्यम श्रेणीके मनुष्योंको विश्रामगृहका सृजन स्वयम्पाक गृहसे दूर न करना चाहिये। ऐसा करनेसे आवश्यकताके समय गृहस्थ ललनाओंको सामानकी लेन-देनमें असुविधा होती है।

(५) प्रकाश एवम् वायु यथेष्ट रुपसे तो होनाही चाहिये। साथही साथ इस प्रकारका विशेष आयोजन होना चाहिये, जिसमें आव श्यकताके समय समुचितरूपसे अन्धकार करनेका प्रबन्ध किया जा सके।

(६) कमरेका आकार थोडा विस्तृत तथा फर्शकी जमीन धोनेके अनुकूल होनी चाहिये।

१२-अन्दाज (Estimate), पूर्व्यतैय्यारी, समय।

१—अन्दाज (Estimate)

भवन निर्म्माण करनेके पूर्व्व निर्धारित किये हुए योजना चित्र के अनुसार उसमें होनेवाले व्ययका अन्दाजी हिसाब निकालना पड़ता है। यह इसलिये कि, उससे यह जाना जा सकता है, कि,

उसके निमित्त होनेवाले व्ययका भार उठानेकी शक्ति हममें है या नहीं और यदि नहीं है तो हम अपने योजना चित्रको देखते हुए इष्ट भवनके किस भागमें परिवर्त्तन कर सकते या उसका सृजन काय एक काल विशेषतकके लिये रोककर प्राप्त पूजी मे शेषकार्यकी ही पूर्तिकर सकते हैं। इसके अतिरिक्त उस ब्यौरेको देखते हुए हमें तन्निमित्त आवश्यक पूजी एकत्र करनेमे सुविधा होती है। किस-किस श्रेणीका कौनसा माल किस समय हमें आवश्यक हो सकता है, इसका अन्दाज लग जाता है। इस आरम्भिक व्यवस्थासे ऐन समय पर छेड़े हुए काममें रोड़ा नहीं अँटकता। काममें रोड़ा पड़ते रहने एवम् उसकी पूर्तिमें विलम्ब होनेस लागत अधिक बैठ जाती है तथा उससे अत्यधिक मानसिक दुःख उठाना पड़ता है। पहिले ही लागतका अन्दाजी व्यौरा लगानेसे कौनसा काय हमें महँगा पड़ा और कौनसा सस्ता यह ज्ञात् हो जाता है। इससे लाभ यह होता है कि, किसी कार्य विशेषके महँगे पड़ने पर हम उसका कारण खोजने लगते और यदि उसमे कुछ भूल हो गयी हो तो उसका समय रहतेही सुधार कर सकते हैं। यदि किसी समय प्रसङ्ग एवम् परिस्थितिको देखते हुए पूर्व्यकृत सकल्पमें कुछ परिवर्तन करना आवश्यक बोध हुआ तो उससे व्ययमें कितना न्यूनाधिक होगा इसका अन्दाज लग सकता और भविश्यमें होनेवाले पश्चात्तापसे छुट्टी मिल जाती है। लागतका अन्दाज ज्ञात् हुए बिना कार्यारम्भ कर देनेसे कभी-कभी ऐसा अवसर आ जाता है कि, कार्य पूरा भी नहीं होने पाता और समहित पूजी समाप्त हो जाती है। कहीं-कहीं कार्यका 'श्रीगणेश' अत्यन्त उत्तमतासे होता; उसमें सम्भवनीय प्रकारके कलाकौशलका समावेश करना आरम्भ हो जाता किन्तु पश्चात् पूंजीके ऐन अवसर पर सम्पुटमें आते ही आशासे अधिक शेष रहा हुआ कार्य इतस्तत रूपसे किसीतरह समाप्त करनेकी बारी आ जाती है। किन्तु यही यदि आरम्भमें ही योजना चित्रका निर्धारण करते समय तथा उसके पश्चात् भवन निर्म्माण करनेके पूर्व्व, प्राप्त पूंजीको दृष्टिकोणके सन्मुख रखकर लागतका अन्दाजी

ब्यौरा तैय्यार करते हुए, अपनी सग्रहित शक्तिके भीतरही अपनी योजना,-अर्थात् महत्वाकाँक्षाको लाकर कार्यारम्भ कर दिया जाय-तो अन्तमें पश्चात्ताप करने एवम् रोनेकी नौबत नहीं आती।

२—पूर्व तैय्यारी (Prliminary Preparations)

भवनका योजना चित्र तैय्यार होनेपर उसे स्थानीय अधिकारियोंके पास स्वीकृतिके लिये भेजकर प्राप्त भूमिखण्ड (Plot) की नपाइ कर डालनी चाहिये और यह देखलेना चाहिये कि, उसके कबाले (खरीद पत्र) में उसकी जो नाप दी गयी है वह ठीक है या नहीं। पश्चात् हम किस आकार-प्रकारका और कैसा भवन निर्माण कर रहे हैं, इसकी अग्रिम सूचना अपने अड़ोसी-पड़ोसियों को दे देनी चाहिये। ताकि कार्यारम्भ होने पर, उनके कारण इष्ट योजनामें कोई झगडा न खडा हो तथा उनके सुखोंमें हमारे कारण कोई स्थायी बाधा न पड़ने पाये। यदि प्राप्त भूमिखण्डका आकार विस्तृत हो तो उसे एकबार सतहदर्शी दुर्बीन (Levelling Instrument) से नाप लेना उचित है। पश्चात् लागतके ब्यौरेको देखते हुए प्रत्येक कार्य विशेषके प्रमाणानुसार सम्पूर्ण कार्यका एक क्रमबद्ध नकशा तैय्यार करते हुए उसकी कुछ प्रतिलीपियाँ (नकलें) तैय्यारकर, यदि कार्य ठेकेपर देना हो तो उसका विज्ञापन स्थानीय समाचार पत्रोंमें देना चाहिये। यदि घरूतौरसे दैनिक वेतन चुकाकर कार्य करवाना हो तो कार्य्यारम्भ करनेके पूर्व कुछ बातोंकी स्थायी व्यवस्था कर रखनी पड़ती है। उदाहरणार्थ इष्ट कार्य्यके निमित्त आवश्यक अस्त्र-शस्त्र तथा साधन सामुग्री संग्रह करना एवम् (मजदूरों) श्रमिका, बढई, पेशराज, सन्तरास आदिके प्राप्तिकी व्यवस्था कर रखना। यह व्यवस्था आरम्भमेंही होनेसे ऐन समयपर काममें बाधा पड़ने अथवा उसके रुके रहनेका भय नहीं रहता। इष्ट कार्य्यके निमित्त जिन साधन सामुग्रियोंकी आवश्यकता हो वह भरपूर प्रमाणमें सस्ती एवम् उत्तम कहाँ मिल

सकती है और कहाँसे लेनी चाहिये इत्यादि बातोंका निर्धारण आरम्भमेंही करते हुए अपनी अनिवार्य्य आवश्यकताके अनुसार उन्हें यथास्थान एकत्रित कर रखना चाहिये। सयोगवशात् भवनके आस-पास यदि यथेष्ट स्थान न हो तो कार्यकी आवश्यकतानुसार अथवा उससे कुछ अधिक साधन-सामुग्री तो अवश्यही समहकर लेनी चाहिये। एकही बारमे सम्पूर्ण आवश्यकताको देखते हुए सामानको खरीदनेसे एक तो स्थानका आधिकांश भाग रुक जाता है; दूसरे इष्ट कार्यमे बाधा उपस्थित होकर व्यर्थही पूंजीका उल्लेखनीय भाग उसकी खरीदमें फस जाता है। व्यवस्था एवम् नियमसे रखनेपर माल कभी खराब नहीं होता और आर्थिक बचत भी पर्याप्त रूपसे होती है। उदाहरणार्थ ईंटे, पत्थर-लकड़ियाँ इन सब वस्तुओंको पृथक-पृथक थोक एवम् व्यवस्थित रूपसे एक-एक पर रखकर लगानेसे स्थान कम खर्च होता, देखनेमे सुन्दर मालूम होता, और उस पर जल-वायुका विशेष प्रभाव होनेकी गुँजाइश नहीं रहती। मजदूरों एवम् कारीगरोंके निकालने धरनेमें यदि माल इतस्तत फैल जाय अथवा एक दूसरेमें मिल जाय तो समय पर ही उसे पूर्ववत् रखवा देना चाहिये। इस प्रकारकी समयोचित सतकता न रखनेसे ईंटे, शहाबादी फर्श सरीखे सामान उठाने-धरने एवम् हटाने-बढानेमें टूट-फूट जाते और व्यर्थकी आर्थिक हानि नसीब होती है। मूल्यवान् अथवा जल-वायुका प्रभाव होनेवाली सामुग्रियोंको सुरक्षित रखनेके लिये आरम्भहीमें लोहेके चद्दरोकी एक झोपडी बना लेना विशेष आवश्यक है। इसमें दरवाजे लगाकर सिकडी-कोहडा जडनेसे ताला लगानेमे विशेष सुविधा हो जाती है। पेशराजोंके कामके लिये जलका सग्रह करनेके लिये ईंटोंका एक हौज बनाना भी एक आवश्यक विषय है। इसकी जुडाई चूनेकी, बाहर-भीतर चूनेका गिलाया तथा उसपर वज्रलेप (सिमेण्ट) का पलस्तर करना चाहिये। यह हौज प्राय तीन फुट गहरा तथा कार्यमानके अनुसार न्यूनाधिक प्रमाणमें लम्बा चौडा होना चाहिये।

वही फेब्रुअरीके महिनेमें निर्म्माण कार्य आरम्भ करनेसे सबेरे ७ बजेसे लेकर सायङ्कालके सात बजे तक कामका समय होता है। इसमेंसे दो पहरके दो घण्टे छुट्टीके छोड देनेपर भी शेष ९ घण्टे कामके मिलते हैं और उसी दैनिक वेतनमें प्राय सवाया काम प्राप्त होता है।

१३—ठेका या अमानी?

(Contract & Daily Labour)

भवन निर्म्माणका कार्य्य किस तरह करवाया जाय, यह प्रश्न प्रत्येक मनुष्यकी इच्छा पर निर्भर करता है। स्थूल रूपसे इसके करवानेके दो प्रकार हैं। एक तो (Contract) ठेका तथा दूसरा (Daily Labour) दैनिक वेतन। इन दोनोंही प्रकारोंमें गुण-दोष दोनों होते हैं। तथापि तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करनेपर ठेकेपर काम देना विशेष सयुक्तिक एवम् लाभप्रद-सिद्ध होता है। दैनिक वेतन पर स्वयम् ही कामका निरीक्षक एवम् व्यवस्थापक बननेसे बात-बात पर आँखमें तेल डाले चौकन्ना रहना पडता तथा छोटे-मोटे सभी कार्य व्यक्तिगत् रूपसे करने पडते हैं। कारीगरों और श्रमिकोंके साथ रातदिन सिर खपाना पडता, उन जैसे अशिक्षित एवम् आचार-विचार-व्यवहारशून्य पेटार्थियोंसे निरन्तर व्यवहार रखना पड़ता, उनपर विश्वास करना पडता और आशातीत रूपसे मगजमारी करनी पडती है। परिणाम यह होता है कि, इससे भयङ्कर हानि उठानी पड़ती और समय पर मानसिक सन्ताप भोगना पड़ता है। इष्ट कार्यके निमित्त आवश्यक साधन-सामुग्रीके प्राप्तिस्थान, उसके गुण दोषोंकी पहिचान-तथा प्रचलित भाव ह्याव न होने के कारण प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक मनुष्यसे धोखा उठानेकी नौबत आ पहुँचती है और व्यर्थ ही एकके चार-चार तक व्यय करना नसीब हो जाता है।

इसके विपरीत अर्थात् ठेकेपर काम करवाने से यह निश्चयात्मक रूपसे नहीं कहा जा सकता कि, उस दशामें हमारी इच्छानुसार उत्तम श्रेणीकी साधन सामुग्रीही उस कार्यमें व्यवहृत होगी। ठेके के कामोंमें प्राय शीघ्रता अधिक की जाती है। इसका कारण यह है कि, (whole & Soul Contractor) प्रमुख ठेकेदार अपने काम के विभिन्न विभाग कर देता है। जिन्हें पारिभाषिक प्रयोगमें क्रमश (Piece works) खण्ड विशेषका ठेका तथा (Petty Contractor) क्षुल्लक ठेका कहते हैं। प्रमुख ठेकेदार विभिन्न कार्योंके सरदारोंसे खण्ड विशेष ठेका करता है। उदाहरणार्थ,-पेशराजीके सम्पूर्ण कार्य्यका पेशराज मण्डलके सरदारसे, लकडीके कामका बढइयोंके नेतासे, सन्तरासीके कामका संत्रासोंके सूत्रधारसे इत्यादि० । क्षुल्लक ठेका वह होता है,-उदाहरणार्थ पत्थर, लोहा, चूना, लकडी इत्यादि की पूर्ति करना। यह ठेके उक्त श्रेणी विशेष सरदार अपनी आवश्यक साधन सामुग्री को देखते हुए प्रत्येक श्रेणी विशेष साधन-सामुग्रीके विक्रेताओं अथवा दलालों एवम् पूर्तिकर्ताओंसे करते हैं। इस तरह एकही कार्य कितनेही हाथोंमें बँट जाता है। प्रमुख ठेकेदारके अन्तर्गत ठेकेदारों पर कार्यकी प्रत्यक्ष जिम्मेदारी कोई नहीं रहती। फल यह होता है कि, मानवी प्रवृत्तिके सर्व्व साधारण नियमानुसार प्रत्येक ठेकेदार किसी तरह शीघ्रसे शीघ्र एवम् सस्तीसे सस्ती साधनसामुग्री लगाकर यथा शीघ्र काम समाप्त करने और रकम वसूल करने पर उतारू हो जाता है। यदि उसे अधिकसे अधिक ध्यान रखना होता है तो इसी बात पर कि, योजना चित्र और उल्लेखित वस्तुओंका पूर्तिकरण हुआ है या नहीं। फिर चाहे उनका अन्तर्गत कलेवर नितान्त जीर्ण-शीर्णही क्यों न हो! केवल बाह्यदृष्या 'मक्षिकास्याने माक्षिका' होने और उसीमें दो पैसे बचनेसे काम! अतिरिक्त इसके थोडी देरके लिये यह भी मान लिया जाय कि, ठेकेदार ईमानदार हुआ तो भी भवनका स्वामी उसकी ओरसे सर्व्वदा सशङ्कितसा रहता है और नित्यही अपने स्नेही साथियों एवम् परिचितोंसे मिलकर अपने कार्यके

सम्बन्धमें मताभिमत लिया करता है । इस दशामें प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने विचारानुसार कमी-बेशी कहा करता और अच्छे-बुरे विचार प्रकट करता है । इस परिस्थितिमें कभी-कभी तो ऐसा समय उपस्थित हो जाता है कि, साधारण सी भूले अत्यन्त महत्व प्राप्त कर जातीं तथा भवन निर्माता एवम् विधातामें परस्पर मनोमालिन्य आ जाता है ।

फिर भी हम अन्तमें उपरोक्त दोनों प्रकारोंपर विवेचनात्मक रूपसे विचार करते हुए अन्तमें यही कहेंगे कि, स्वयम् निरीक्षक एवम् व्यवस्थापक बनकर दैनिक वेतनकी पद्धतिसे काम करवानेकी अपेक्षा ठेकेपर काम करवाना अधिक श्रेयस्कर है । हाँ, ठेकेदारीके उपरोक्त दोषोंसे स्वतःको सुरक्षित रखनेके लिये ठेकेदारका नियुक्तिकरण करनेके पूर्व उसकी इज्जत, ईमानदारी एवम् उसने किये हुए कार्मोकी सम्पूर्ण जाँच कर लेनी चाहिये । प्रतिष्ठित और ईमानदार ठेकेदारको काम सौंप देनेसे बात-बात पर सन्मुख उपस्थित होनेवाली झञ्झटोंसे बहुत कुछ अँशोंमें छुट्टी मिल जाती है । दैनिक वेतन पर स्वयम् काम करवानेसे प्रत्येक कार्यमें थोडा-थोडा अतिरिक्त व्यय हो जाता है और इस तरह अन्तमें पूँजी का अधिकाँश भाग व्यर्थही व्यय हो जाता है । इसकी अपेक्षा यदि एक ही ठेकेदारको थोड़ासा लाभ करनेकी गुञ्जाइश दे दी जाय तो तुलनात्मक दृष्टिसे व्ययमें उतनी अधिकता नहीं होती। इसके अतिरिक्त आजकल ठेकेदारीके कामोंमें इतनी नोक-झोंक (Competition) चली है कि, उतनीही पूजीमें यदि कितनीही सतर्कतासे दैनिक वेतन पर निजी तौरसे काम करवाया जाय तो भी यह पूरा नहीं पड़ता । ऐसी परिस्थितिमें ठेकेदारोंको जो लाभ होता है, वह उनके घटे-चढे दरोंके कारण नहीं अपितु उनके व्यक्तिक परिश्रम एवम् अनुभवोंके कारण होता है । उनके प्रत्येक कार्य और उसमें लगनेवाले समय तथा लागतके सम्बन्धमें कुछ निश्चित दर नियुक्त होते हैं । जिसके कारण अल्पवही उनका कार्य अल्प-स्वल्प व्ययमें होता है ।

इसके अतिरिक्त ठेकेपर काम देनेसे एक लाभ यह होता है कि चकसका सामान, अस्त्र-शस्त्र, जलसंग्रह करनेके बर्त्तन, आधार-स्तम्भ (Centering) इत्यादि साधन-सामुग्री ठेकेदारके पास सदा तैय्यार रहती है। वह उसकी व्यक्तिगत् एवम् स्थायी सम्पत्ति होनेके कारण उसे नवीनरूपसे उसे खरीदना नहीं पड़ता और प्रत्येक ठेकेकी जगहपर वह उससे निरन्तर काम निकाल सकता है। परिणाम् यह होता है कि, इससे छिड़े हुए काममें किसी प्रकारकी रुकावट नहीं पडती। किन्तु वही यदि भवनका स्वामी निजीरूपसे कार्य करना चाहे तो उसे अथसे लेकर इतितक सारे उपकरणोका सग्रह करना पडता और उसके प्रीत्यर्थ यथेष्ट अर्थ व्यय करना पड़ता है। इतने पर भी कार्य समाप्त हो चुकने पर वह उपकरण बेकार पडे रह जाते हैं। उनका कोई मूल्य नहीं खडा होता।

यदि संयोगवशात् प्रतिष्ठित ठेकेदार न मिल सका तो साधन सामुग्रीकी पूर्ति निजीरूपसे कर, वेतन इत्यादि निश्चित करते हुए पेशराजी, बढ़ईगिरी इत्यादि कार्योंका विभक्तिकरण कर प्रत्येक कार्य नापके हिसाबसे ठेकेपर दे देना चाहिये और वह सम्यक् रूपसे होता है या नहीं इसकी देखभालके लिये एक विश्वसनीय कारीगर नियुक्त कर देना चाहिये। ऐसा करनेसे भवन निर्म्माण कार्यमे उत्कृष्ट साधन-सामुग्रीका व्यवहार होकर उसका अपव्यय न हो सकेगा। इस दशामें कार्यकी सम्पूर्ण जिम्मेदारी उक्त नियुक्ती कृत निरीक्षक,-कारीगर पर जा पडती है और कार्य सम्यक्रूपसे चलता रहता है। सारा कार्य ठेके पर देनेसे निरीक्षणके लिये अतिरिक्त कारीगरकी आवश्यकता होती है।

(अ) ठेका—(Contract)

ठेकेदारसे जो करार-मदार (शर्तें) करने हों वह स्पष्ट शब्दोंमे पक्के (Stamped) कागज पर कानूनी तौरसे कर लेने चाहियें। कोई भी बात गोल-मटोल रखना एवम् एक दूसरेके समझौतेपर छोड

रखना अच्छा नहीं। आरम्भमें ही सारा व्यवहार स्पष्ट रहनेसे भविष्य में परस्परके हृदयमें किसी प्रकारका मनोमालिन्य होनेको जगह नहीं रहती। एकबार कार्य्यारम्भ हो जाने पर ठेकेदार और भवन-स्वामीका इतना निकट सम्बन्ध हो जाता है कि, किसी भी पक्षको जरासी आशङ्का होनेसे भी मनोमालिन्यको जगह मिल जाती है। इतना ही नहीं, अपितु करारपत्र गोलमटोल शब्दोंमें रहनेसे उभयपक्षको ही उन गोल-मटोल शब्दोंसे अपना स्वार्थ साधन करनेका मोह उत्पन्न हो जाता है। अत' आरम्भमेंही सारी बातें स्पष्ट होनेसे किसीको कुछ कहने सुननेकी गुञ्जाइश नहीं रहती और उभयपक्षका त्रास एवम् विनाकारण होनेवाला अर्थ व्यय बच जाता है। यह करारनामा किस तरहका होना चाहिये, इसका एक नमूना नीचे दिया जाता है। किन्तु उसे देखनेके पूर्व कार्यके महत्व तथा स्थानीय परिस्थितिको देखते हुए वकीलोंकी योग्य सलाह लेकर उससे कानूनन् जायज कर लेना उचित है। इसकी दो नकलें तैयार करवाकर प्रत्येक पर एक दूसरेके हस्ताक्षर होने चाहिये तथा परस्परके पास एक-एक प्रति (नकल) होनी चाहिये।

भवन निर्म्माण सम्बन्धी किसीभी कार्य्यका ठेका देते समय प्राय' तीन बातोंकी प्रमुखरूपसे आवश्यकता होती है—

१ नकशा (Plan) २ अन्दाजपत्र और दर (Estimate & Rates) तथा ३ कामका विस्तृत वर्णन (Detailed Specification)

उक्त सत्र प्रश्नोंपर दृष्टिपात् करते हुए भवन स्वामीको चाहिये कि, वह भवन निर्म्माणका सकल्प होतेही सबसे पूर्व किसी अनुभवी एवम् सुयोग्य सलाह देनेवाले स्थपतिकी शरण लेकर उसे भवनकी अन्दाजो लागतपर प्रतिशतके हिसाबसे चेली-रुपयेका पुरस्कार (मेहन्ताना) देना तयकर उससे तत्सम्बन्धी नकशा तैय्यार करवाते हुए एक अन्दाज का ब्यौरा तैय्यार करवाये। तत्पश्चात् भविष्यमें यदि उसीको सम्पूर्ण कार्यका ठेका

देनेका निश्चय हुआ तो उसे उपरोक्त पुरस्कार देनेकी आवश्य कता नहीं। किन्तु यदि ठेका दूसरे को देना हो तो उसे तत्क्षण वह पुरस्कार दे देना चाहिये । इस सम्बन्धमें उससे आरम्भमें स्पष्ट शब्दोंमें बात कर लेना विशेष उत्तम है । कामके स्पष्ट विवरणके सम्बन्धमें जो कुछ हवाले देने हों, वह स्थानीय पी० डब्लू० डी.-समाज-कार्य-विभागकी नियमावली (Hand Book) को देखते हुए उसके अनुसार देने चाहियें। उसमें अपनी इच्छा और परिस्थितिके अनुसार जो कुछ रद्दोबदल करना हो,-उदाहरणार्थ केवल कूटी हुई गिट्टीपर चूनेकी लादी जमाना कहाँ किस प्रकारका नकाशीका काम करना इत्यादि निश्चित कर, ठेका देनेकी पद्धति निश्चित करते हुए उसके अनुसार (Tender) दर मागे।

(आ) ठेकेकी पद्धति

ठेकादेनेकी प्राय दो पद्धतियाँ समाजमें प्रचलित हैं —

१—ठेकेदारको प्रत्येक प्रकार विशेष कार्यका परिमाण बतलाते हुए वह किस प्रकारसे करना है, इसका सम्यक् विवरण तथा कामका नकशा देकर उससे दर (tender) मागे। पश्चात् ठेके-दारका यह कर्त्तव्य है कि, गृह स्वामीसे दर स्वीकार हो जाने पर भवनके प्रीत्यर्थ लगने वाली साधन-सामुग्रीको जुटाते हुए निश्चित दरों पर काम करे। ऐसी परिस्थितिमें गृह स्वामीको केवल इतना ही देखना रह जाता है कि, काम नकशेके अनुसार चला है या नहीं और उसमें उपयुक्त साधन-सामुग्रीका व्यवहार किया जा रहा है या नहीं । इस प्रकारके निरीक्षण कार्यके लिये गृहस्वामीकी ओरसे एक कार्यकुशल कारीगरकी वैतनिक रूपसे नियुक्ति होनी चाहिये। उसका वेतन सदा गृहस्वामीको अपने पाससे देना होगा ।।

२—दूसरी पद्धतिमें ठेकेदारको जिस साधनसामुग्रीकी जिस प्रमाणमें आवश्यकता हो, उसकी पूर्ति गृहस्वामीको करनी चाहिये।

ऐसी दशामें उस कामके लिये जितने मजदूरों और कारीगरोंकी आवश्यकता हो उनकी उपस्थिति लिखना तथा वेतना चुकाना भी गृहस्वामीका कर्त्तव्य हो जाता है। आय-व्ययका सम्पूर्ण व्यौरा गृहस्वामीकोही रखना पड़ता है। इस प्रकारके ठेकेमें ठेकेदारका काम केवल इतनाही रहता है कि, वह सम्पूर्ण कार्यका निरीक्षण करते हुए उसे निश्चित समयपर समाप्त करवाये एवम् समय-समय पर गृहस्वामीको उपयुक्त सूचनाएं देता रहे। इस कार्यके पुरस्कार स्वरूप ठेकेदारको सम्पूर्ण कार्यकी लागत पर कुछ प्रतिशत,-जो आरम्भमें ही शर्त्तमें निश्चित हुआ हो, गृहस्वामीको देना पड़ता है। दक्षिण भारतमें इस पुरस्कारका साधारण मान १० प्रतिशत तक होता है। यदि ठेकेदारको निजी तौरसे ११ घण्टे तक प्रतिदिन कार्यका निरीक्षण करनेका अवकाश न रहे तो वह अपनी ओरसे कुशल कारीगरकी नियुक्ति कर देता है।

इस पद्धतिमें एक और भेद यह रहता है कि, गृहस्वामी अपनी ओरसे एक विश्वसनीय एवम् कुशल कारीगर को वेतनिकरूपमें नियुक्तकर उसके आदेशानुसार ठेकेदार को इष्ट-साधन सामुग्री अपने व्ययसे देता रहता है। इस परिस्थितिमें ठेकेदारके जिम्मे कार्यकी नापके अनुसार केवल श्रमिकोंका वेतन चुकानेका भार रहता है। इसमें उसे पृथक पृथक रूपसे पृथक-पृथक कार्य विशेषों-को देखते हुए उनके परिमाणके अनुसार पृथक-पृथक वेतन देना पड़ता है।

उपरोक्त दोनोंही पद्धतियोंमें विभिन्न गुण दोषोंका सम्मिश्रण है। पहिली पद्धतिमें गृहस्वामीको किसीभी प्रकारके कष्ट नहीं उठाने पड़ते। किन्तु भय यही रहता है कि, यदि उसने नियुक्त किया हुआ निरीक्षक (कारीगर) वास्तवमें अनुभवी, स्वामीका हित देखने वाला और कार्यनिपुण न हुआ तो ठेकेदार को यह अवसर मिल जाता है कि वह किसी प्रकारकी भली-बुरी साधन-सामुग्रीका व्यवहार कर यथा शीघ्र सम्पूर्ण कार्य को समाप्त कर डाले।

इस दृष्टिसे दूसरी पद्धति अच्छी है। किन्तु उसमें गृहस्वामीको व्यय अधिक उठाना पड़ता है। ठेकेदारका पुरस्कार सम्पूर्ण लागत पर कुछही प्रतिशत निश्चित होनेके कारण अर्थात् ही वह जहाँ तक अधिक व्यय बढे वहाँ तक बढानेकी सोचता है। इसमें उसे लाभ यह होता है कि, ज्यों-ज्यों भवनकी लागत बढती जाती है त्यों-त्यों अधिकाधिक प्रमाणमें उसके टके सीधे होते जाते हैं। किन्तु इस प्रकार विशेष कामकी उत्कृष्टताके सम्बन्धमें यद्यपि कोई विश्वास नहीं दिलाया जा सकता तथापि उससे इतना तो अवश्यही विश्वसनीयरूपसे माना जा सकता है कि, उसके सृजनमें जो साधन-सामुग्री व्यवहृत हुई है, वह उत्कृष्ट प्रकारकी है। फिर भी कभी-कभी यह देखनेमे आता है कि, काम अत्यन्त स्थूल एवम्-अपेक्षासे बाहर मजबूत होकर उसमें आशासे अधिक खर्च बैठ जाता है। इस प्रकार विशेष ठेकेसे ठेकेदारपर उतनी जिम्मेदारी नहीं रहती और उसका कार्य विशेष सुगम हो जाता है। अत इस पद्धतिसे काम करवानेवाले गृहस्वामीको इतना तो अवश्यही ध्यान रखना चाहिये कि, वह कामका नकशा तथा उसका अन्दाजी ब्यौरा, विशेषत तद्‌नुषङ्गिक विषद, वणन (Specifications) किसी अनुभवी एवम् तज्ञ स्थपतिसे निर्धारित कर ले। उसमे किस नापकी कहाँ और कितनी धरनें, कडियाँ एवम् गर्डर व्यवहृत होनी चाहिये, मढाऊ घड़न कहाँ हो इत्यादि बातोंका केवल मजबूती की ही दृष्टिसे नहीं अपितु, किफायतकी दृष्टिसे भी विस्तृत एवम् सम्यक् उल्लेख होना आवश्यक एवम् अनिवार्य है। उसमें कोई भी प्रश्न ठेकेदार की इच्छा और रुचिपर रखना अच्छा नहीं। ऐसा करनेसे बहुत कुछ अँशोंमें ठेकेदारकी द्रव्योपार्जनकी आसुरी-लालसा बन्धनमे पड़ जाती है।

इन सब बातोंका विचार करते हुए दूसरे प्रकारमें हमने जो एक और भेद बतलाया है, उसकी शरण लेना विशेष अच्छा है। उसमें सारी साधन सामुग्री गृहस्वामीके द्वारा खरीदी जानेके कारण वह

विशेष रूपसे उत्कृष्ट प्रकारकी व्यवहृत होकर, सम्पूर्ण व्ययपर निरीक्षक का वेतन निर्भर न रहनेके कारण व्ययमें निष्कारण आधिकता नहीं होने पाती । इसके अतिरिक्त कारीगरोंको मजूरीके ठेकेके सम्बन्धमें सम्यक् सूचना देते हुए उनसे दर मगवानेसे स्पर्धाके कारण उपयुक्त एवम सकारण दरोंमेंही काम हो जाता है । ऐसी परिस्थितिमे मजुरीके प्रीत्यर्थ अधिक व्यय नहीं होने पाता । फिर भी उस दशामें १।२ बातों पर विशेषरूपसे ध्यान रखना चाहिये। (१) एक तो यह कि केवल गिट्टी सानकर उसे भरनेमरहीका कार्य ठेके पर देना चाहिये। उसे कूटने इत्यादि का काम दैनिक वेतन देकर करवाना उत्तम है। ताकि कुटाई कच्ची न रह सके। (२) चक्कसका काम यदि ठेके पर देना हो तो,–' साधन और सामुग्री' नामक भाग मे,– जैसा कि, आगे चलकर वर्णन किया गया है, उसी प्रकार चूने और बालूका गाला तथा उसपर निरीक्षक यन्त्र अवश्य बैठाना चाहिये। (३) ईंटे भिंगाकर प्रयोगान्वित करने, चूनेके काममे पत्थरजडने के पूर्व्व उन्हें जलसे तर करने, के कार्य यदि ठेकेदार से भी करवाये जाँय तोभी उनपर जल छिड़कने का काम निजीतौरसे दैनिक वेतन पर अपनें आदमी नियुक्त कर करवाना चाहिये।

इस विशिष्ट पद्धति मे जो बाधाएं अनुभूत होती है वह यह हैं कि, (१) यदि काम की देख भाल करनेवाला मनुष्य अत्यन्त कार्य-कुशल मेहनती, अनुभवी, सज्ञान और मिलनसार न हो तो काम सरलता पूर्व्वक नहीं चलने पाता (२) पेशराज बढ़ई चक्कसवाले प्रभृति हीन श्रेणीके मनुष्य ठेकेदार होने के कारण उनकी नाप और हिसाबके सम्बन्धमें दिलजमाई करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। (३) इस श्रेणीके लोगोंकी प्रवृत्ति सदैव बिन हिसाबी अग्रिम रकम लेने तथा उसे उड़ाकर मौज करनेकी होती है । परिणाम यह होता है कि अधीनस्थ मजदूरोंकी मजदूरी चुकानेके निमित्त उनके पास एक पैसा नहीं रहने पाता। अधीनस्थ मजदूरोंम और उनमें झगड़े हो

जाते हैं । जिसके परिणाम् स्वरूप वह काम छोडदेनेपर उतारु हो जाते हैं। अन्तमें लाचारी वर्जे गृहस्वामीको विनाकारण अपनी गाँठ खोलनी पडती और ठेकेदारके खातेमे एक बडीसी रकम लिखकर उन मजदूरोंका वेतन अपने पल्लेसे चुकाना पडता है। अतःउत्कृष्ट तो यही है कि, 'इस परिस्थितिसे बचनेके निमित्त गृहस्वामी कभी भूलकरभी कामकी नाप-जोख किये बिना हिसाबके प्रीत्यर्थ एक पैसाभी निकालकर न दे और यदि देनेका विचार भी करे तो सारा हिसाब पूरा न चुकाये। हिसाबका थोड़ासा भाग गृहस्वामीके हाथमें अवश्य रहना चाहिये।' ताकि ठेकेदारकी नाक सर्व्वदा हाथ मे बनी रहे। ' ४) सारांश यह कि, इन सब उपायोंकी शरण लेनेमें गृहस्वामीको अत्यन्त दिक्कत और तक्लीफ उठानी पडती है। यदि सौभाग्यसे निरीक्षक अच्छा मिला तो कष्टका कोई कारण नहीं रहता।

उक्त किसीभी प्रकार विशेषका आश्रय लेकरही क्यों न काम बाया जाय, उसमें इस बातका मुख्यत ध्यान रखना चाहिये कि, ठेकेदारोंने दिये हुए दरोंकी कमी देखनेकी अपेक्षा वह ईमान धर्म्म-संस्कृति-चातुर्य और अनुभवमें विशेष पक्के हों ये। इज्जतदार और ईमानदार मनुष्योंको द्रव्यकी अपेक्षा अपने गौरव एवम् प्रतिष्ठाका अधिक मूल्य रहता है।

(इ)–ठेकेका नमूना

एक रुपयेका टिकट

स्वस्ती श्रीमन्नृप शालीवाहन शके १८ नाम संवत्सरे सुदी–वदी तिथी, दिन वार तारीख महिना सन १९ ईस्वी

श्रीमान्————————————————} इकरारनामा
साकीन————पेशा————उम्र————} लिखानेवाले

श्रीमान्————————————————} इकरारनामा
साकीन————पेशा————उम्र————} लिखने वाले

लिख देते हैं कि, (शहर ग्राम) महल्ला सिटी सर्व्हे नम्बर की खुली जगहमें आपका खास मकान बनाना है। जिसकी निस्वतमें आपकी ओरसे नकशा, दर, अन्दाजी ब्यौरा और काम का पूरा ब्याला (Detailed specifi cations) आज दिन हासिल हुआ। हमने उसे खूब जाँच पड़ताल कर देखा,–सुना और समझ लिया। हमारी नजरसे वह बिल्कुल दुरुस्त है। जिसे देखते हुए आपका काम नीचे लिखी शर्तोंपर बहुक्म कानूनके हम पूरा करनेका इकरार करते हैं:—

(१) सारा काम पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंटके १९ सालके वें एडीशनमें छपेहुए स्पेसिफिकेशनके मुताबिक किया जायगा।

फिरहिस्तके बाहर अगर कोई ज्याद काम निकले तो उसके दर आपुस की सलाह से तय करना

(२) इस इकरारनामेके साथ नत्थी किये हुए काम के दरोंके मुताबिक मेहेन्ताना और मजदूरी लेकर हम आपका काम पूरा करना है। फिरहिस्तके बाहर यदि कोई काम निकला तो उसके निस्वतम जो दर आपुसमें तय हो जाँय उन्हें लेकर और उस कामको फिरहिस्तमें दर्जकर उसके मुताबिक काम किया जायगा।

गोलमटोल अलफाजों या जबानी जमाखर्च पर कोई बात मुनहस्सर न रहेगी।

(३) अगर किसी वजहसे फिरहिस्तके बाहरके कामके निस्बतमें हम दोनोंमें दरोंका समझौता न हो सका तो वह काम कच्चे खर्चसे रोजाना हिसाव चुकाकर पूरा किया जायगा और उसका सारा जमा खर्च खातेमें दर्ज हुआ करेगा। इस हालतमें हमारा मेहन्ताना फीसदीके हिसाबसे चुकाना होगा। हमारी जिम्मेदारी उस वख्त यही होगी कि, उस कामके निस्बतमें जो कुछ खर्च हुआ हो उसकी सारी रसीदें और हिसाव हमें रखना और पेश करना होगा।

फिरहिस्तके बाहरके ज्याद' कामके निस्बतमें अगर आपुसमें दरोंका सम झौता न होता हो तो?

(४) अन्दाजी ब्यौरेके कागजमें दिया हुआ हरएक किस्मके कामका जोड़ महज अन्दाजिया समझना चाहिये और बिल बनाते वख्त उसपर मुअस्सर न रह कर हरएक काम शुरूसे ठीक-ठीक नाप कर लेना चाहिये। अगर कोई काम किसी वख्त बढ जाय तो उसकी जिम्मेदारी हम पर नहीं होगी। मगर हम इस बातका ख्याल रखेंगे कि, वह नकशेके मुताबिक पूरा किया जाय।

फिरहिस्तमें दिये हुए कामोंका जोड अन्दाजिया समझना चाहिये।

(५) अगर आपने खरीद किया हुआ कुछ नया-पुराना माल काम मे लाना हो तो खरीदकी रकम पर हमें , फी सदी मुनाफा देना होगा। सिवाय इसके वह माल काममे लाते वक्त, छिलाई, रन्धाई, गढाई, रद्दाई, चढाई, ढोआई वगैरके लिये जो सर्फा हो वह आपकी ओरसे अलहदा मिलना चाहिये।

मालिकने खरीदे हुए नये पुराने मालके निस्बतमें

(६) आज इस इकरारनामेके साथ नत्थी किये हुए अन्दाजी ब्यौरेमें से अगर कोई काम कम करने या आगे चलकर किन्हीं कामोंमें रद्दोबदल करने की आपकी ख्वाहिश हो जाय तो उसमें हमें कोई एतराज न रहेगा। मगर ऐसी हालतमें दूसरा काम करवानेके लिये कलम नम्बर दो और तीन में दी हुई शर्तों के मुताबिक सारी कार्रवाई की जायगी।

अन्दाजी ब्यौरेके कागज में लिखे हुए किसी कामको कम करनेमें मकान मालिक मुख्तार है

(७) जितना काम होता जाय उसकी नाप लेकर हम हर महिने की २५ वीं तारीख के दिन आपके पास बिल पेश करेंगे। जिसे देखते हुए आपको आइन्दा महिनेकी ५ वीं तारीखतक ९० फी सदी चकाया हिसाब साफ कर देना होगा। बाकी १० फी सदी रुपया आप हमारे नामसे बैङ्कमें खाता खोलकर उसमें बतौर अमानत के रख सकते है। ऐसी हालतमें शर्त यह रहेगी कि, हम बगैर आपकी लिखी इजाजत के उस रकम को निकालनेके हकदार न रहेंगे। हाँ, काम खत्म होकर आपके पसन्द हो जाने पर उस रकम पर हमारा ही पूरा अख्तियार रहेगा।

कामके बिल भेजने और रकम-वसूली के निस्वतमें

(८) कामको शुरु करते वख्त हमें अपनी खासी रकम लगाकर किस्म-किस्मका माल खरीदना होगा। जिसके लिये आपको मालका अन्दाजिया दाम कूतकर उसके मुताबिक आधी रकम बतौर अमानत (advance) के देनी होगी। यह माल ज्यों-ज्यों काममें लगता जायगा त्यों-त्यों आपको यह हक है कि, आप उसका दाम भेजे हुए बिलमेंसे मुजरा करते जाँय।

मालके दामपर रकमकी मांग

(९) आपकी ओरसे लिखा हुआ हुक्मनामा मिलतेही हम काम शुरु कर देंगे और उसे बे रोक-टोक जारी रखते हुए ठीक वख्त पर पूरा कर देंगे। इसमें अन्दाजसे ज्याद देर भी नहीं लगेगी

कामकी वख्त मियाद

और न यह होगा कि, किसी तरह ऊटपटाङ्ग काम कर कामको जल्दसे जल्द किनारे लगा दिया जाय। आपका काम हम अन्दाजन आजसे शुरुकर महिनेमें पूरा कर देंगे। अगर इस दर्म्मियानमें ऐसेही किन्हीं वजूहातोंसे, जो पहिले किसी तरह ख्यालके सामने दरपेश नहीं हो सकते, कामको पूरा करनेमें देर लग गयी तो आप जो मियाद तयकर देंगे उसके भीतर काम पूरा कर दिया जायगा। अगर इतने पर भी हमारी सुस्ती या कसूरसे काम पूरा होनेमें देर हुई तो आप हमसे फी हफ्ते वतौर हर्जानेके जुर्म्माना लेनेके हकदार है जो हमारी बंकमें रखी हुई अमानतमेंसे वसूल किया जा सकता है।

(१०) काम चलानेके लिये जितने भी हर्बे-हथियार या सामान की जरूरत होगी वह सब हम अपने खर्चसे हाजिर करेंगे। चक्रस वगैर अपने खर्चसे तैय्यार करवाएंगे।

हर्बे-हथियार वगैर सामान कौन देगा?

(११) आपको पूरा हक है कि, आप जब चाहें तब कामम तबदीली करा सकते है। मगर साथही उस हालतमें जब कि, एकवार किये हुए कामका कुछ हिस्सा गिराना पड़े उस वक्त उसकी जो नाप होगी उसके मुताबिक उसका सारा दाम हम आपसे वसूल करनेके हकदार होंगे।

नक्शेमें रद्दोबदल करने की गुआइश

(१२) अगर काम ठीक न हुआ और आपकी पसन्द न हुआ तो ऐसी हालतमें उसका फैसला (फलाने-फलाने) लोग देंगे। मगर किसी वजह से अगर उनका आना न हुआ तो हम लोगोंकी आपुसकी सलाहसे जो फैसला देनेवाले लोग मञ्जूर हों उन्हें काम दिखलाकर अगर वह कामको खराब बत-

काम पसन्द न हुआ तो?

लायेंगे तो उसे हम अपने खर्चसे गिराकर उसके ऐवजमें अपनेही खर्चेंमें नया और अच्छा काम कर देंगे।

(१३) आप या आपके किसी भी आदमीको काम देखने या जांच करनेकी हमारी ओरसे कोई मुमानियत नहीं हो सकती।

(१४) काम पर एक 'आर्डरबुक' रखा जायगा। जिसके सफे गिनकर आखिरी सफेपर हमारा और आपका दस्तखत रहेगा। यह 'आर्डरबुक' हमेशा हमारेही मातहत और कामपर रहेगा। इसकी एक नकल हमारे दस्तखतकी आपके पास होनी चाहिये। आप जो कुछ भी हुक्म orders) देंगे वह इन दोनों आर्डरबुकोंमें आपको दर्ज करना होगा। जबानी हुक्म किसी भी हालतमें जायज नहीं माना जा सकता। काम पर हम या हमारा कोई जाती आदमी हमेशा हाजिर रहेगा।

काम पर आर्डरबुक रखना और जबाबदार आदमी हाजिर रहना

(१५) काम जारी होते हुए कामकी वजहसे अगर किसी कारीगर या मजदूरको चोट-चपेट लग जाय, किसी भी मालका नुकसान हो जाय तो उसकी सारी जिम्मेवारी हम पर रहेगी।

चोट-चपेट लगने पर

(१६) जो माल हम काममें लायेंगे यह जबतक आप या आपका कोई आदमी उसे आपने बतलाये हुए 'स्पेसिफिकेशन' के मुताबिक करार नहीं देगा तब तक हम उसे हाथ नहीं लगाएंगे। अगर किसी तरह ऐसा माल काममें लाया जाया तो उसे दिखलानेपर हम उसे २४ घण्टेके भीतर हटा देंगे। मगर अगर हमने उस मालको अच्छा समझा और आपके पसन्द न हुआ तो ऐसी हालतमें उसका फैसला कलम नम्बर ११ के मुताबिक किया जायगा और हमारी हार होनेपर हम उसे अपने खर्चसे हटानेके हकदार होंगे। उसके निस्बतमें होनेवाला सारा खर्च हम पर रहेगा।

खराब मालको हटानेके निस्बतमें

(१७) नींवकी खुदाई होनेके बाद वह आपको दिखलाकर, आपके सामने हम दोनोंकी रायसे एक गवाह रखते हुए उसकी नापली जायगी। 'जब आप बुनियाद ठीक गहरी और मजबूत हुई है, ऐसा लिख देंगे तभी आगे काम जारी किया जायगा।' इसी तरह और-और कामभी जो आगे चलकर दीवाल या जमीनके नीचे ढँकनेकी गुंजाइश हो आपको दिखलाकर और आपसे मञ्जूरीके दस्तखत लेकर ही आगे जारी किये जायंगे। अगर इसमें हमारी ओरसे बेपर्वाही हो गयी तो हम अपने खर्चसे उसे दिखलानेके लिए गड्ढे खोदेंगे और आपको बजरिये आर्डरबुकके इत्तला कर देंगे। इस हालतमें आपका यह फर्ज होगा कि, आप तीन-दिनके भीतर उनका मुलाहिजा फर्म्मावें। वर्ना ज्याद दिन होनेसे रोजानाके हिसाबसे आप हमारा हर्जाना चुकानेके हकदार होंगे।

नींव या और-और काम जो याद में ढँका जाने वाला हो पहिले दिखला कर लेना

(१८) अगर हम कामका कुछ हिस्सा मजूरीके दर पर किसीको अपनी ओरसे ठेके पर दे दें तो उसमें आपको कुछ कहना सुनना न होगा। उसे बखूबी करनेकी सारी जिम्मेदारी हमही पर है।

माहहत ठेका

(१९) इस काममें आज मेरा कोई हिस्सेदार नहीं है। तो भी आगे चलकर अगर मुझे वैसीही कोई जरूरत मालूम हुइ तो उसकी इत्तला पहिलेही आपको देकर बादमें आपकी सलाहसे हिस्सेदार शरीक करते हुए उसके निस्वतमें एकरार नामेमें जो कुछ रद्दोबदल करने पड़ेंगे, वह कर दिये जायंगे और वैसी हालतमें उस मदमें होनेवाला सारा खर्च हमारे जिम्मे रहेगा।

हिस्सेदार लेना।

(२०) हमें किसी भी वजहसे या इससे भी ज्याद बड़ा और मुनाफेका काम मिलने पर भी यह हक न रहेगा कि, आपके हुक्मके बिना हम इस कामको किसी दूसरे पर सौंप (Transfer)

ठेकेको दूसरेके सुपुर्द करना

दें। मगर जब आपसे वैसा हुक्म हासिल हो जायगा तब उस मदके सारे करार और शर्तें आपकी तबियतके मुताबिक करवा कर हमारे जिम्मेका सारा हिसाब आपको समझानेके बादही हम वैसा करनेके हकदार हैं।

(११) अगर कोई काम ऐसा निकल आये कि जिसके निस्बत में पब्लिक वर्क्स हैण्डबुकमें कोई स्पेसिफिकेशन न हो तो हम दोनोंकी नजरसे जो तजुर्बेकार आला शख्स करार हो उसकी रायके मुताबिक काम किया जायगा।

अगर स्पेसिफिकेशनसे बाहरका काम निकला तो!

(१२) कामकी मियाद महिनोंकी तय हुई है। इस मियादमें सारे कामको जहाँतक हो सकेगा पूरा कर देंगे और इस दर्मियानमें यह भी ख्याल रखेंगे कि, उसमें ज्यादः जल्दी भी न हो। कोई भी दीवाल एक दिनमें ढाई फुट से ज्याद: ऊँची नहीं उठायी जायगी और न कामको पूरा किये बगैर उसे छोड़करही जायगे। अगर गये भी तो पन्द्रह दिन तक हमारा इन्तजार कर आप काम का ठेका किसी दूसरेको देख सकते हैं। इस निस्बतमें आपका जो कुछ भी नुक्सान हो यह आप हमारी अमानत रकम में से वसूल कर सकते है। अगर वह रकम आपके नुक्सान के लिये पूरी न पड़ी तो आपको यह हक है कि, आप हम पर जाती कार्रवाई कर अपना हक वसूल कर सकते हैं। ऐसी हालतमें अगर हमनें आपकी रकम न दी तो आपको पूरा अख्तियार है कि, आप हम पर मुनासिब कानूनी कार्रवाई कर हमारी जायदाद से उसे वसूल कर सकते है।

काम छोड़देना या काममें जल्दबाजी करना

(१३) अगर हम दोनोंमें किसी कामके निस्बतमें बहसका मामला आपहुँचे तो ऐसी हालतम हम दोनो को अपनी-अपनी ओर से एक-एक शख्स खड़ा करना होगा। जिनके फैसले पर सारी बातें मुनहस्सर होंगी। अगर उनके भी फैसलोंमें फर्क पड़ जाय तो

दोनोंमें झगड़ा होने पर

वह लोग जिस किसी एक आलम-फाजिल शख्सको फैसला देनेवाला करार देवें उसके फैसले को आखिरी फैसला समझकर उसीके मुताबिक कार्यवाई की जायगी।

(२४) काम पूरा होनेके बाद एक बर्सातके आखीरतक अगर किसी तरह छत चूने लगे, गिलावा पलस्तर की पपड़ियां गिरने लगें या मोरी-नाली वगैर मे पानी रुक जाय तो ऐसी हालतमें हम इस तरहके सारे काम अपने खर्चेसे करवा देंगे।

गेरन्टी

(२५) बे मौसिमकी बारिश या ऐसी ही ऐसी और-और किस्मकी आस्मानी आफतें आने पर अगर किसी तरह काम का नुक्सान हो जाय तो आपका यह फर्ज होगा कि, आप हम पर मेहर-नजर कर उसे खुद भुगतेंगें।

(२६) ऊपरवी हुई शर्तोंके मुताबिक यह एकरारनामा हमने खुद खूब सोच समझकर अपनी पूरी रजामन्दीके साथ लिख दिया है। अगर इसके मुताबिक हमसे कोई कार्यवाई न हुई तो आपको यह हक होगा कि, आप हमसे और हमारी जायदादके तमाम दावेदारोंसे बजरिये मुवासित्र और कानूनी कार्रवाईके अपना हक वसूल करेंगे।

जो लिख दिया सो दुरुस्त महिना सन १९ ईस्वी

गवाह दस्तखत

तारीख ठेकेदार

सामने पेश हुआए करारनामा हमने बखूबी पढ़ा और समझा। हमे इसमे लिखी तमाम शर्तें मन्जूर है।

गवाह दस्तखत

तारीख मालिक

इसके उपरान्त यदि सर्व्वसाधारण पद्धतिके अतिरिक्त किसी विशेष प्रकारका काम करवानेकी इच्छा हो तो उसका स्पष्टीकरण करना चाहिये। उदाहरणार्थ १-कोणकी लम्बाई सर्व्वसाधारणसे

अधिक रखना हो तो उसका, कोई विशिष्ट प्रकारका पत्थर लगाना हो तो उसका, यदि एकही प्रकारकी सारी लकड़ी व्यवहारमें लानी हो तो उसका उल्लेख स्पष्ट शब्दोंमें होना चाहिये। यदि दूसरी पद्धतिके अनुसार ठेका हुआ हो तो उसे उक्त एकरारनामेकी जो-जो शर्ते लागू हो सकें, उन्हें लिखकर उनके नीचे निम्न लिखित शर्ते जोड़ देनी चाहियें।

(१) आपके काममें लगानेके लिये जो सामान हम खरीदेंगे वह खूब जाँच पड़ताल कर अच्छा और किफायत भावसे खरीदेंगे। उसमे जितने सामानकी जरूरत होगी उतनाही सामान खरीदा जायगा,–ज्याद' नहीं! अगर काम पूरा हो जानेपर सामान बचा रहा तो वह हम अपनी जिम्मेदारीपर दूसरी जगह लगा देंगे या उठाकर ले जायेंगे। उस निस्वतमें सारा खर्च हम पर रहेगा।

(२) अगर हमारी भूलकी वजहसे जरूरतके खिलाफ सामान खरीदा गया तो उसे वापिस करने या बेंचनेकी तमाम जिम्मेदारी हम पर रहेगी। मगर इस शर्त्तपर कि, उसे खरीदनेके बाद आपकी ओरसे नकशेमें कोई रद्दोबदल न होना चाहिये। सामानकी खरीदके बाद नकशेम रद्दोबदल होनेसे उसके कुल देनदार आप रहेंगे।

अपनी निजी साधन-सामुग्री देकर यदि मजदूरीकाही ठेका देना हो तो नीचे लिखी बातोंका स्पष्टीकरण उसमें होना आवश्यक है।

(१) कोण मठाऊ, सरल अथवा जिस तरहकी गढ़ाईके चाहिये हों उनके सम्बन्धमें यह स्पष्टीकरण कर लेना चाहिये कि, वह पेशराजीके काममें हो जायंगे या उनके लिये अतिरिक्त व्यय करना होगा?

(२) कपाटकी पोलाई दीवालकी नापसे घटाई जायगी या नहीं?

(३) खिड़किया-दरवाजे वगैर' बैठाते समय जो मचान बनाये जायेंगे उनका खर्च पेशराजीके कामसे दिया जायगा या अलग?

इसीतरह गर्डर उतारने चढ़ाने स्पष्टीकरणभी कर लेना चाहिये।

(४) वज्रलेपमय गिट्टीके कोण यदि गृहस्वामीके द्वारा दिये गये हों तो उसकी गढ़ाई पृथक नहीं लगती। केवल जुड़ाइ भर दी जाती है। इस सम्बन्धमें स्पष्टीकरण लेना तथा कोणकी नाप बन्धाईके कामसे घटाई जा सकेगी कि, नहीं;-इसेभी स्पष्ट कर लेना चाहिये।

(५) पहाडका सामान गृहस्वामी देगा। किन्तु उसकेलिये जो मजबूरीका खर्च लगे उसे ठेकेदारको देना होगा।

इन सब बातोंका स्पष्टीकरण होनेसे गृहविधाता और निर्म्माता दोनोंमें मनोमालिन्य होनेकी गुञ्जाइश नहीं रह जाती और काम-शान्ति पूर्व्वक,सकुशल सम्पन्न हो जाता है।

१४—नींव या बुनियाद

दीवाल-खम्भे तथा भवनके आधार स्तम्भोंकी सतहके निचले भूभागको पारिभाषिक प्रयोगमें बुनियाद या नींव कहते हैं।

भवन निर्म्माण कार्यमें नींव ही एक ऐसा महत्व पूर्ण भाग है जो नितान्त सुदृढ और व्यवस्थित होना चाहिये। इसी पर सारे भवनका विशालकाय शरीर स्थित रहता है और इसीकी सुदृढता-पर भवनकी आयु मर्य्यादा स्थिर रहती है। यदि इस महत्वपूर्ण भागके निर्म्माणमें दुर्लक्ष्य होकर वह कच्चा रह गया तो उसका दुष्प्रभाव सम्पूर्ण भवनपर होता है और इसके एकबार अशक्त रह जानेपर भविष्यमें कितनेही परिश्रम क्यों न किये जाँय तथा कितनाही द्रव्यनिधि क्यों न व्यय किया जाय, उसमें सुदृढता

नहीं आती। अतः इस महत्वपूर्ण भागका सृजन करते समय आरम्भमेंही विशेष दक्षता रखकर उसे सम्यक् रूपसे सुदृढ बनाना चाहिये। फिर चाहे हमारा भवन एक मञ्जिला ही क्यों न हो। उसकी नींव इतनी सुदृढ होनी चाहिये कि, प्रसङ्गवशात् यदि उस पर १।२ मञ्जिल और भी चढा दिये जांय तो भी वह उन्हें सरलता पूर्वक सम्हाल सके। इसमें सन्देह नहीं कि, इस प्रकार की नींवमें साधारण प्रमाणसे प्रायः १००।२०० रुपये अधिक व्यय हो जायंगे। किन्तु उससे भवनका सदाका सङ्कट दूर हो जायगा। एकबार आरम्भमें ही यह भूल हो जानेसे हजारों रुपये खर्च करने पर भी उसका सुधार नहीं होता, यह सदा ध्यानमें रखना चाहिये।

भवनके पृष्ठभाग पर प्रत्येक स्थान विशेष पर न्यूनाधिक प्रमाण मे भार पड़ा करता है। अतः जहाँ-जहाँ उसकी अधिकता हो वहाँ-वहाँ उसके प्रमाणको देखते हुए नींव विशेष सुदृढ होनी चाहिये। यदि इसके विपरीत बात हुई तो निश्चयही उन भारभूत स्थानोंका भाग नीचे धँस जाता और उससे सम्पूर्ण भवनमें बडी-बडी दरारें उत्पन्न होकर कभी कभी तो मकानके गिरनेकी सम्भावना हो जाती है। इसलिये आवश्यकता इस बातकी है कि बन्धाऊ कामके छोरों (off sets) को छोडकर दीवालके तलेमें नींवके जुडाईका काम अधिक चौडा कर दिया जाय। ऐसा करनेसे यदि बोझ अधिक होगा तो वह अधिक क्षेत्रमें विभक्त होकर नींवकी निचली भूमिकी भारवाहक शक्तिसे बढ़ने नहीं पायेगा। नींवकी चौडाई बढ़ानेसे दूसरा एक लाभ यह होता है कि यदि दीवाल थोडीसी झुक भी जाय तो उसके अनुसार गुरुत्व मध्यबिन्दु मध्यरेषाके उतना ही सन्निकट हो जाता है।

अब देखना यह है कि, अधिकांश रूपसे किन-किन कारणोंसे भवनमें दरारें पडा करती हैं। उपरोक्त विवरणसे यह तो स्पष्ट ही हो चुका है कि, इसका स्थूल कारण नींव अर्थात् बुनियादकी

विकृति है। किन्तु वह किन-किन कारणोंसे होती है यही देखना है और उन्हींका दिग्दर्शन नीचे किया गया है—

१ विभिन्न स्थानोंपर बुनियादके नीचे की भूमि न्यूनाधिक प्रमाण में धँस जाना।

२ काली मिट्टीके स्थान जलसे संयोग पाकर फूल जाते और दीवालको तीव्रताके साथ ढकेल देते हैं। ऊष्णता पानेसे यह मिट्टी सूखकर दीवालको खींच कर पकड़ लेती है। इस प्रकार विशेष-प्रसङ्ग पर एक दूसरेके विपरीत क्रियाएं होनेके कारण उसका परिणाम भवन और नींव दोनोंपर होता है।

३ नींवके नीचेकी बालू अथवा तदानुषङ्गिक अन्य पदार्थ ऊपरी दबावके कारण प्रवाही पदार्थके (Fluid Pressure) गुणधर्मानुसार एक किनारे खसक जाना।

४ भूमिगत् क्षार अथवा वायुगत् आम्ल पदार्थोंका नींवस्थ पदार्थोंपर रासायनिक परिणाम् होकर उसका सड़ जाना।

५. प्रबल वातायनके धक्के से दीवालों का हट जाना।

६ किञ्चिद्गोल (segmental) कमान पर अधिक बोझा पड़नेके कारण उससे सन्निकटस्थ दीवालों का खसक जाना।

७ ग-घाऊ काम के अन्तर्गतस्थ चूने अथवा गिलावेका जल सूख जाने के कारण उसका सकुंचित हो जाना।

८ नींव के नीचे की भूमि का स्तर (चट्टान सहित) बगलकी ओर खसक जाना।

उपरोक्त सब कारणोंमेंसे सर्याक्रम एक में दिग्दर्शित कारण ही भवन में दरारें उत्पन्न करता है। चट्टान अथवा कठोर मरुस्तरको छोड़कर शेष सब प्रकारकी सतहें न्यूनाधिक प्रमाणमें धँस जाती

हैं। भूमिका धँसनाही भयका कारण नहीं कहा जा सकता। किन्तु शर्त यह की वह प्रत्येक स्थान पर सम्यक् रूपसे धँसी हो।

नीवकी चौडाई और गहराई

नींव की चौड़ाई और गहराईका परिमाण भूगत प्रकार विशेष स्तरोंपर निर्भर रहता है। उसकी चौड़ाई बढ़ानेसे भवन का बोझ सम्यक्‌रूपसे अधिक क्षेत्रपर बँटकर बुनियादके नीचेकी जमीन विशेष रूपसे नहीं धँसती। किन्तु गहराई बढ़ानेसे वैसा कोई लाभ नहीं होता। हम भूमिमें ज्यों-ज्यों अधिकाधिक नीचे पहुँचते हैं त्यों-त्यों वहाकी सतह पृथगत् मृत्तिका भारसे घनरूप अर्थात् ठोस मिलती जाती है। जन साधारणरूपसे १ फुट तककी गहराई तक बुनियाद पहुंचानेसे एक विशेष लाभ यह होता है कि, जमीनके पृष्ठ भागपर बहनेवाला पानी, वायु तथा तदानुषङ्गिक अम्ल-पदार्थ एवम् क्षारोंका परिणाम उस गहराई तक भूमिगत सतहपर होता रहता है। कभी-कभी इस परिणामके कारण जमीन धुलकर नींव खुली पडजाती है और कभी पृष्ठभागके जलसे मिट्टी फूलकर अथवा ग्रीष्म तापके कारण सूखकर जमीनके ऊपरी भाग के १॥१ फूट मोटाईके स्तर पर उसका प्रभाव हो जाता है।

कठोर बालू अथवा चट्टान पर दीवालकी मोटाई की अपेक्षा बुनियादकी चौड़ाई अधिकसे अधिक ६ इञ्चसे एक फुट तक बढ़ाकर रखनेसे ही काम बन जाता है। यदि भवन तीन मंजिल से अधिक बड़ा न हो तथा उसमें यथेष्ट मोटाईकी पत्थर की दीवालें न हों तो नरम बालू पर भी उतनी ही चौड़ाई की बुनियाद डालने में कोई आपत्ति नहीं है। अन्य प्रकारकी जमीनोंमें भारवाहक शक्ति न्यूनाधिक प्रमाण में रहती है। अत उस मान के अनुसार बुनियाद की चौड़ाई न्यूनाधिक प्रमाण में रखनी होती है। यह इस लिये कि, प्रतिवर्ग फुट बुनियाद पर पड़नेवाला सम्पूर्ण भार उस जमीन की भारवाहक शक्ति की मर्यादा के भीतर रहे। अब आवश्यकता इस बातकी है कि हमें साधारण रूपसे यह ज्ञात हो

जाय कि, प्रत्येक जातिकी जमीन मे कितनी भारवाहक शक्ति होती है। उसीका दिग्दर्शन निम्न लिखित सारिणी मे किया गया है —

जमीनके प्रकार भेद	प्रतिवर्ग फुट टन
(१) काली मिट्टी	१।२ से ३।४
(२) वालुकामय-रेतीली मिट्टी	३।४ से १
(३) कीचड (नदीका काई युक्त कीचड) मिट्टी	० ३५ से ० ५०
(४) रवेदार कङ्कड और बालू मिश्रित मिट्टी	१ ५० से २
(५) नम साधारणरूपसे कसी हुई मिट्टी	१ से १ २५
(६) सूखी चिकनी मिट्टी	३ से ४
(७) रूक्ष सूखी मिट्टी	२ से ३
(८) बारीक बालुका मिश्रित मिट्टी ३।४ फुटके नीचे	३ से ४
(९) दृढीभूत होकर बैठी हुई बालू	२ से ३
(१०) कठोर गाढ़ मिट्टी	१॥ से २
(११) नरम बालू (मोरम)	१ से २
(१२) कठोर बालू ,,	४
(१४) चट्टान	६ से ३०

उपरिनिर्दिष्ट सारिणीमें भारवाहक शक्तिका परिमाण दिया गया है। प्रति वर्ग फुटके हिसाबसे भवनकी नींवपर पडनेवाले बोझका अन्दाज निकालनेके लिये भवनके काममें व्यवहृत होनेवाले सामानका वजन निम्नलिखित सारिणीमे उद्धृत कर दिया गया है। प्रत्येक दीवालकी गहराईके अतिरिक्त फर्श तथा छतके वस्तुत बोझका आधा भाग हिसाबमें पकडते हुए मञ्जिलकी दीवालका वजन निकालकर दीवालपर पडनेवाले सम्पूर्ण भारका परिमाण निकालनेके पश्चात् उसे जमीनकी भारवाहक शक्तिसे विभाजित करनेसे सटजहीमें बुनियादका क्षेत्रफल निकल आता है।

नाम	प्रति घनफुटका वजन पौण्डमें
१ पत्थर जम्बूरी (Laterite)	११० से १३०
२ „ कुरुन्द (Sand stone)	१५० से १६०
३ „ काला (Trap)	१६० से १९०
४ „ पोरबन्दर	१४०
५ ईंटे पक्के पकाये हुए ९"×४॥"×२॥"	७० से ८५
६ मिट्टी (गड्ढे की नाप)	११० से ११५
७ मिट्टी (खोदी हुई)	८० से ९०
८. शहाबादी फर्श १" मोटा प्रति वर्ग फुट	१२
९ पत्थर एवम् चूनेका जुडाऊ काम प्रति घ० फु०	१५०
१० „ „ मिट्टीका , „ „	१४५
११ ईंट „ चूनेका , „ „	११०
१२ „ „ मिट्टीका „ „ „	११२
१३ कच्चे ईंटका मिट्टीमें , „ „	१०५
१४ सर्व्व साधारण लकड़ी	४५
१५ कांक्रीट, चूना और पत्थरकी मिट्टीका	१४०
१६ „ , , ईंटके रोडोंका	१२०
१७ „ वज्रलेप और मिट्टी अथवा सलोह	१५०
१८ , गिलावा चूनेका	१०० से १०५.
१९ , „ मिट्टीका	९२ से ९५
२० छप्पर नलीदार कवेलुओंका प्रति घ० फु०	१५
२१. छप्पर दोहरी नलीदार कवेलुओंका प्र० घ० फु०	२५
२२ „ मङ्गरोली खपड़ोंका „ , „	१२
२३ „ चद्दरका „ „ „	२
२४ „ मालवरी , „ ,	९० से १००
२५ , चूनेका छत „ , „	९० से १००

इसके अतिरिक्त भवनपर जो बोझा पड़ता है वह साधारणतया उसमें रखे जानेवाले वजनी सामान, यन्त्रादिक सामुग्री, जनसमूह तथा वायुके प्रबल धक्के और दबाव का होता है। साधारणतया वायुके इस दाबका प्रमाण प्रतिवर्ग फुटके हिसाबसे १० से लेकर २५ पौण्ड तक होता है। इन सब विशेष प्रकारके भारोंकी भी गणना

वस्तुत हिसाब में कर लेना आवश्यक है । यों तो सरसरी दृष्टिसे देखनेपर जनसमूहका भार हल्का प्रतीत होता है। किन्तु उसका आवागमन आकस्मिक ढगसे होनेके कारण उसका परिणाम् जड और अचेतन वस्तुओंके भारसे कहीं अधिक होता है। अतःउसका वजन उसके वस्तुत वजन से ड्यौढा समझना चाहिये।

हम आरम्भ में एक जगह लिखही चुके है कि, बुनियाद का बलाबल उसके धँसने या न धँसने पर ही निर्भर नहीं है। अपितु तात्विक दृष्टिसे विचार करनेपर एक चट्टान को छोड़कर नींव की जमीन चाहे वह किसी भी प्रकारकी हो, थोड़े बहुत अंशोंम धँसती ही रहती है । उसपर किया हुआ बन्धाईका काम भी उसके उपर पडनेवाले भारके कारण थोडे बहुत प्रमाण में धँसता रहता है। किन्तु इस विषयमें मुख्य आवश्यकता इस बातकी है कि, वह धँसनेकी क्रिया सम्यक् प्रकारसे हो। अर्थात् कोई भी स्थाने न्यूनाधिक प्रमाणमें न धँसने पाये। बुनियादके बन्धाऊ कामकी चौडाई बढानेका मूल उद्देश्य यही रहता है। इस क्रियासे उसके प्रतिवर्ग फुटके भागका भार कम हो जाता है और उससे उसके नीचेकी जमीन धँसने नहीं पाती यह सत्य और अक्षरश सत्य है। किन्तु उसके मूलमें मुख्य उद्देश्य नींवकी सतह को समान् बनाये रखना है। इसकी सिद्धिके लिये एक उपाय और रूढ है और वह यह बुनियाद कि, सतह मे कांक्रीट दिया जाता है। इसका महत्व समझानेके लिये हमे निम्न लिखित उदाहरणकी शरीर लेनी पडती है —

यह तो प्राय सभी जानते हैं कि, जलकी सतह पर मनुष्य कभी खडा नहीं हो सकता। यदि वह वैसी चेष्टा करे तो निःसन्देह डूब जायगा। किन्तु यदि उसपर एक तख्ता डाल दिया जायतो-अवश्यही

चित्र न ८

वह उसपर खडा होकर तैरने लगना । चित्र सख्या ८ म वही

बात दिखलायी गयी है। इस उदाहरणमें जो कार्य तख्तेके कारण सिद्ध होता है वही नींवके नीचेके कांक्रीटके कारण होता है। जलकी सतह पर तैरनेवाले तख्ते पर यदि कोई मनुष्य खड़ा हो जाय तो निश्चयही तख्तेका कुछ भाग जलमें डूब जायगा। किन्तु फिर भी वह अपने वक्षस्थलपर चढे हुए मनुष्य का भार सहनेमें जरा भी कोर-कसर न रखेगा। इसी प्रकार भवन सम्बन्धी दशा है। इसके अतिरिक्त जलमें छोडे हुए तख्तेके उदाहरणसे एक बात और स्पष्ट हो जाती है। वह यह कि, यदि तख्तेके एक सिरे पर कोई मनुष्य खड़ा हो जाय तो तख्तेका वह सिरा जलमें अधिक डूबकर उसका दूसरा सिरा ऊपर उठ जायगा और मनुष्य सहज ही में जलके गर्भमें समा जायेगा। (देखिये चित्र सख्या ८) यदि मनुष्यको तख्तेके सहारे तैरते रहना हो तो जलकी सतह पर तैरनेवाले उस तख्तेके वर्ग फलका मध्यबिन्दु तथा मनुष्यके गुरुत्वका मध्यबिन्दु परस्परमें एक खड़ी (Vertical) रेखामें होना चाहिये। इसके किञ्चित् मात्र भी विपरीत स्थिति रहनेसे मनुष्य डूब जायगा। ठीक यही सिद्धान्त भवनकी नींवके सम्बन्धमें लागू होता है। बुनियादकी जमीन यही उपरोक्त उदाहरणका तख्ता एवम् भवनका भार यही उसपर खड़ा होनेवाला काल्पनिक मनुष्य है। अत: ऐसी स्थितिमें यह स्पष्ट हो जाता है कि, बुनियादकी सतहके क्षेत्रफलका मध्यबिन्दु एवम् उपरोक्त भारके गुरुत्वका मध्यबिन्दु एक खड़ी (Vertical) रेखामें होना अत्यन्त आवश्यक एवम् अनिवार्य है। यदि यह न होगा तो उसके जिस ओर अधिक भार पड़ा हो उसके नीचेकी जमीन विशेष रूपसे धँस जायगी और उस दशामें उक्त उदाहरणके तख्तेके अनुसार वह टेढ़ी होकर उसके साथही साथ भवनका भी उतनाही भाग तिछा हो जायगा और उसके कारण उसमें बडी-बडी दरारें उत्पन्न हो जायँगीं। अस्तु।

भूपृष्ठभागके नीचे मृत्तिकाके जो विभिन्न स्तर मिलते हैं उनके स्थापत्य विज्ञानकी दृष्टिसे निम्नलिखित विभाग किये गये हैं —

१ मिट्टी—काली रवेदार, काली चिकनी, पीली, सिल्ट, बजरी, रेतीली तथा सूखी

२ नरम मोरम—जो कुदालीसे खोदकर फावडेसे सरलतापूर्वक भरा जा सके। इसमें पीठी और पपडी नामके दो भेद होते हैं।

३ कठोर मोरम—कुदाली अथवा फावडेकी सहायतासे बडे प्रयास के बाद निकले किन्तु उसमें सुरङ्ग न लगाना पडे।

४ कठोर मोरम और गिट्टी—कठोर मोरम के गर्भ मे बडी-बडी गिट्टी अथवा मोटे पत्थर हों वैसे स्तर।

५ नरम चट्टान—कुदाल अथवा रम्भे की सहायता से तोड़कर जो छोटे-छोटे खण्डोंमें निकाला जा सके।

६ कठोर चट्टान—जो एकरूप तथा बडे-बडे शिला खण्डोंसे बना हो एवम् सुरङ्ग लगाये बिना निकल न सकता हो।

मिट्टी पर की बुनियाद

मिट्टीमें ऊष्णतावाहक शक्ति नहीं है। अत उसके कारण वायु शीतल रहती है। किन्तु यदि बुनियादवाली जमीनके पृष्ठभाग के नीचे प्राय: ३।४ फुट तक मिट्टी का स्तर हो और उसके नीचे मोरमका स्तर निकले तो ऐसी परिस्थितिमें वह बुनियाद की उत्तमताका लक्षण है। ऐसी दशा में नींवमें कम लागत लगती है। इससे ज्यों-ज्यों नीचे उतरा जाय त्यों-त्यों नींवमे अधिकाधिक व्यय होता जाता है। यदि छ: फुट तक मोरम न मिले तो उससे गहरी खुदाई करना व्यर्थ है। ऐसी परिस्थितिमें आर्थिक व्ययकी दृष्टिसे उसमें किसी अन्य उपायसे मजबूती लाना विशेष हितावह है। पृष्ठ भागके नीचे नितान्त चिकनी मिट्टीका होना अत्यन्त भयानक है। इससे उसमे पानी सूखकर वह फूल जाती है और परिणाम यह होता है कि, उससे नींवका जो भाग संलग्न होता है उसपर दबाव पड़ता तथा आगे चलकर धूपके कारण सूखने पर वह सङ्कुचित होकर उसमें दूर तक गहराईमें

दरारें पड़ जाती हैं। उस समय नींवमें तनाव पैदा होकर उसके साथ-साथ भवनके बन्धाऊ काममें दरारें पड़ जाती हैं।

यदि किसी कारण नींवमें पर्याप्त गहराई तक चिकनी मिट्टी होनेकी आशङ्का हो तो चारों कोनेमें ६।७ फुट गहरे गड्ढे खोद लेने चाहियें। यदि उसके आगे भी नितान्त चिकनी मिट्टी दिख लायी दे तो सारे भवनकी नींव उससे अधिक खोदनेमें कोई लाभ नहीं। कारण इतने गहरे गड्ढे खोदनेके लिये उसकी चौड़ाई बढ़ानी पड़ती तथा ऐसा करनेसे उसमें क्रांक्रीट (गिट्टी) भरनेमें आशासे अधिक व्यय हो जाता है। ऐसी परिस्थितिमें नीचे लिखे उपायोंमेंसे किसी उपायका अवलम्ब लेना चाहिये।

१ प्राय: छ फुट गहरा गड्ढा खोदकर उसके सतहगत् १॥ से २ फूट तकके भागमें बालू भरकर जल छिड़कते हुए खूब कुटाई करें। पश्चात् उसपर सर्व्व साधारण रूपसे चूने अथवा गिट्टीका कांक्रीट बिछाकर उसे इतना कूटें कि, वह-प्राय: एक फुटतक भूतलके नीचे जम जाय। बालूमें यह एक खास विशेषता है कि, उसपर कितना भी दबाव क्यों न पड़े वह धँसती नहीं। तथापि यदि इधर-उधर खसकनेको अवकाश मिल जाय तो वह खसकती अवश्य है। अतः न ले अथवा ऐसेही किसी जलप्रवाहके सन्निकट या किसी ऐसे स्थानपर जहाँ गहरा करारा हो वहाँ नींवका सृजन करना विशेष हानिकर है। जलकी फटकारसे अथवा अगर चूहोंने गहराईमें घुसकर जमीनमें समानान्तर रूपसे बिल बनाये हों तो बालू खसक कर दीवालोंके नीचे पोलापन आ जाता और ऊपरके बोझसे नींव धँसकर सम्पूर्ण भवनको हानि पहुँचना सम्भव हो जाता है। यदि नींवमें बालू बिछाना हो तो वह-जमीनके पृष्ठभागके नीचे कमसे कम तीन फुटके भीतर तो कभी न बिछावे। चिकनी मिट्टीके अतिरिक्त अन्य प्रकारकी मिट्टियोंमें यह उपाय विशेष उपयोगी है।

२ सर्व्व साधारणकी अपेक्षा प्राय ५ फुट तक अर्थात् १से४ फुट चौड़ाईका गड्ढा खोदकर उसके मध्यभागमें कांक्रीट तथा दोनों ओर कांक्रीट ही के बराबर बालू अथवा मोरमके स्तर बिछाकर

उसकी कुटाई करे। पश्चात् उस बुनियाद पर बन्धाईका काम आरम्भ करे। ऐसा करने का कारण यह है कि, जल-वायु के कारण यदि मिट्टी फूली या सूखी हो तो बीचमें वालू या मोरम के स्तर होनेके कारण उससे उत्पन्न होनेवाले दबाव या तनाव का प्रत्यक्ष परिणाम नींव पर नहीं होने पाता। इससे अधिकसे अधिक यह होता है कि, जितनी गहराई तक दरारें जायगी उसके नीचे तक यदि गड्ढों की सतह न हो तो कांक्रीटके नीचेतक दरार होकर उसके अगल-बगलकी वालूको खसकने की गुंजाइश हो जाती है। अत इस हानिको बचानेके लिये सर्वोत्कृष्ट उपाय यह है कि, जितनी दूर तक दरारों की पहुँच होना सम्भव हो, उतना ही गहरा गडढा खोदकर उसका सतहगत भाग पत्थर और गालेसे भर दे तथा ऊपर ३।४ फूट तक कांक्रीट कूटे।

३ तीसरा उपाय यह है कि, भवनके चारो कोनोंमें नींवकी रेखाओंके मध्यभागमें प्राय ८।१० फुटके अन्तरसे, चार अथवा अधिक फुट लम्बाई चौडाईके ८।१० फुट गहरे, चौडे गडढे खोदने चाहिये। उनमेंसे दो गड्ढोंकी अन्तर्गत खुदाईमें इस प्रकारकी विशेषता लानी चाहिये कि, उनके अन्तर्गत भागमें ३।४ फुटकी गहराई तक उनकी सतहोंका आकार कमानके सदृश हो जाय। (देखिये चित्र संख्या ९) भूतलके नीचे १ अथवा १॥ फुटतक कोण बनानेकी आवश्यकता नहीं। कोणस्थ अथवा मध्यवर्तीय गड्ढे मे कांक्रीट कूटते समय उसके साथ कमानदार सतह वाले गड्ढोंमें भी
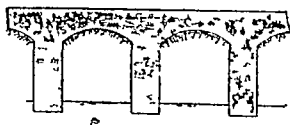
आकृति न ९

उसी प्रकारसे कांक्रीटकी कुटाई होनी चाहिये। ऐसा करनेसे भवन का सारा बोझ कमान परसे होता हुआ कांक्रीट अथवा बन्धाऊ

-कामके जो गहरे स्तम्भ होते हैं, उनपर जाकर गिरता है और वह गहराई तक पहुँचाये जानेके कारण तथा लम्बाई-चौडाईमें विशेष सम्पृक्त होनेके कारण उनके बैठनेका भय नहीं रहता। कमान खोदनेका काम अत्यंत सरल होता है। उसके भीत्यर्थ सतह अथवा अगल-बगलके लिये आधार देनेकी आवश्यकता नहीं होती तथा वह जमीनके नीचे होने के कारण उसे सरल रेखामें करनेके लिये भी विशेष प्रयत्न नहीं करना पडता। इस दृष्टिसे यह कार्य साधारण मजदूरों द्वारा अल्प व्ययमें हो जाता है।

४ उपरोक्त कांक्रीट अथवा पत्थरके बन्धाऊ कामके खम्भोंकी जगह आजकल फौलादी अथवा सलोह कांक्रीटके ९।१० या इससे भी अधिक लम्बाइके खूँटे (Piles) बाजारमें तैय्यार मिलते हैं। जिन्हें घनकी सहायतासे ठोंककर भीतर गाडा जाता और उनके शीर्ष भागपर गड्ढेमें स्थान-स्थानपर सलोह सिमेण्ट कांक्रीटके छावन बिछाकर उनके सकुचित होनेपर उनपर बन्धाऊ काम आरम्भ कर दिया जाता है। जहाँ साधनोंकी समृद्धि होती है वहाँ घन अर्थात् हथोडेकी अपेक्षा खूँटोंके शिरोभागपर तिपाई खडी कर उसके गर्भ-(मध्यवर्तीय भाग) में टँगी हुई चर्री (Pulley) परसे मानवी अथवा यान्त्रिक शक्तिकी सहायता लेकर लोहेका एक वजनी गोला उठा-बैठाकर उसके प्रबल प्रहारकी सहायतासे खूँटोंकी गडाई होती है। इस पद्धतिसे काम अत्यन्त शीघ्र होता है। कलकत्ता-बम्बई इत्यादि समुद्रके निकटस्थ स्थानोंमें समुद्रसे छीनी हुई बालुकामय भूमिमें उक्त प्रकारसे ही खूँटोंकी गडाई की गयी है और उनपर २।३ मंजिलके भवन निर्माण किये गये हैं।

५ इस प्रकार विदेशमें जन साधारण प्रकारके १॥ फुट चौडे और ४ फुट गहरे गड्ढे खोदकर उन्हें कांक्रीट से भर दिया जाता है। पश्चात् उस पर चौकीका बन्धाऊ कार्य आरम्भ होता है। चौकीके लिये जो एक पटियाओंका ४ से ६ इञ्च तक की मोटाईका स्तर देते हैं उसकी जगह उसकी सतहमें आधे इञ्च मोटाईके लोह-छड छः छः इञ्च के अन्तर से दीवालकी लम्बाईके समानान्तर

बिछा दिये जाते हैं और उनके ऊपर ४।५ इञ्च मोटाईका सिमेण्ट कांक्रीट का स्तर ढाल दिया जाता है। ऐसी परिस्थितिमें गड्ढे के दोनो तरफकी दीवालोंको रोक रखने के लिये लकड़ीके तख्तोंका आधार देना पडता है।

इसी प्रकार एक और ४ से ६ इञ्च तककी मोटाईका स्तर खिडकियों और दरवाजोंके शिरोभाग तक सारी दीवालोंपर छाजनकी तरह बैठानेसे भवनके कितनेही ऊँचे रहनेपर भी किसी प्रकारका भय नहीं रहता। इसमें विशेषता यह है कि, नींवकी कच्ची सतहके कारण यदि बुनियाद बैठ भी जाय तो भी सलोह कांक्रीटकी धरनोंका उपयोग छाजनकी तरह होकर वह ऊपरका सब बोझ सम्हालनेमें समर्थ होती हैं।

६ छठवें प्रकारमे जमीनके नीचे बुनियादकी जगहपर थोडासा खोदकर उसमें चित्रसख्या १० में दिग्दर्शित प्रकारानुसार उल्टी कमानोंकी रचना होती है। इन कमानोंका सृजनकार्य अत्यन्त सरल है। क्योंकि सतहमें उसी आकारके गड्ढे खोदनेसे उन्हें और अधिक आधार देनेकी आवश्यकता नहीं होती। इससे कमानके तत्वके अनुसार भवन का ऊपरी भार कमानपर पडकर विभक्त हो जाता है।
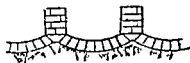
आकृति नं १०

यदि काली चिकनी मिट्टीपर बुनियाद रखनी हो तो उक्त व्यवस्थाके अतिरिक्त निम्नलिखित प्रतिबधक उपायोंकी योजना विशेष फल- प्रद सिद्ध होती है —

१ भवनके आसपास किसी प्रकारका जल एकत्रित न होने पाये इस प्रकारकी व्यवस्था आरम्भसे ही कर रखनी चाहिये। इसलिये भवन की चतुर्दिगस्थ भूमिको सम्यक्‌रूपसे ढाल दे देना चाहिये ताकि जलके आते ही वह उसी क्षण बहकर दूर निकल जाय।

१ जिन वृक्षोंकी जड़ें अत्यन्त फैलने वाली एवम् गहराई तक आनेवाली हों उन्हें भवनसे प्राय: ५० फुट तक के हातेमें रहने देना अच्छा नहीं। भारतवर्षमें वड-पीपल, गूलर इत्यादिके पेड विशेष रूपसे दीर्घ मूलवाले होते हैं।

२ कठोर पीली मिट्टी होनेसे चार फुट गहरा गड्ढा खोदकर उसमें कांक्रीट भर देनेसे प्राय: बुनियादके बैठनेका भय नहीं रहता। बुनियादमें पिष्ट बालूको छोडकर यदि नरम मोरम मिले और उसका स्तर कमसे कम दो फुट मोटाईका हो तो उसपर कांक्रीट का स्तर कूटकर जमाने से भवनके लिये सामान्यत: बुनियादमें उपयुक्त मजबूती आ जाती है। यदि नरम मोरमके नीचे फुट दो फुटके भीतर कठोर मोरम हो तो २।१ मंझिलका भवन बैठनेका भय नहीं रहता। ऐसी परिस्थितिमें मोरममें एक फुट गहराईका गड्ढा खोदकर उसमें कांक्रीट कूटनेके पश्चात् बन्धाऊ काम किया जाता है। पिष्ट मोरम पर कभी बुनियाद नहीं डाली जाती।

४ 'माण' नामकी एक तेलही-चिकनी और चीमड मिट्टी होती है। कुदालीके प्रहारसे इसका अत्यन्त थोडा भाग छूटकर निकलता है किन्तु यदि उसका जलसे संयोग हो जाय तो वह उसमें द्रवीभूत हो जाती है। इसलिये इस प्रकारकी मिट्टीके स्थान पर भूतलके नीचे प्राय: ४ फुट गहराईका गड्ढा खोदकर उसमें कांक्रीट कूटनेके पश्चात् बुनियाद डालनेमें कोई आपत्ति नहीं।

५ जमीनके पृष्ट भागके नीचे यदि बालू हो तो वह बुनियादके लिये बुरी नहीं होती। वरन् उसके कारण वायु विशुद्ध बनी रहती है। किन्तु बालूका गुण-धर्म उष्णताग्राही होनेके कारण शीत और ग्रीष्मसे अत्यन्त कष्ट उठाने पडते हैं।

६ जमीनमें यदि अत्यन्त ढाल हो तो उस ढालपर गड्ढे न खोदते हुए स्थान-स्थानपर सीढियाँ या चबूतरे रखकर सतहके विभिन्न भागोंको एक एक समस्थलीमें लाया जाता है।

७ गढ्ढोंकी सतहमे मट्टी-मोरम-चट्टान कुछ भी हो, कांक्रीट भरनेके पूर्व उस स्थानको सम्पूर्णरूपसे मूसल अथवा रम्मेसे ठोक-पीट कर देख लेना चाहिये। यदि किसी स्थानसे बैठी या फूटी हुई, 'बद्-बद्' ध्वनि निकले तो समझ लेना चाहिये कि, वहाँकी जमीन भीतरसे पोली है। ऐसी परिस्थितिमे वहाँ और खोदकर जब झनझनाती हुई ध्वनि निकले तब कांक्रीट भरनेकी क्रिया आरम्भ कर देनी चाहिये।

८ सतहगत् पोलापनको जाननेका एक उपाय यह है कि, बुनियादकी सतहमें पर्य्याप्तरूपसे जल छोड दे। ऐसा करनेसे यदि वहाँ चींटी-दीमकके कारण अथवा चूहे छछून्दर इत्यादिके कारण पोलापन आगया हो तो वहाँ एक क्षण भी जल विश्राम न लेगा और इन जीव-जन्तुओंके घरोंमे प्रवेश कर जाएगा। उस समय भूपृष्ठभाग पर केवल-वायुके बुलबुलोंके चिन्ह प्रतीत होंगे। यदि पोलापन मालूम हो तो उस स्थानको खोदकर नीचे कांक्रीट कूटते हुए सतहको समथल-बना लेना चाहिये।

९ यदि मिश्रित प्रकारकी मिट्टीके स्थानपर निरुपायवश भवन बनवाना हो तो जबतक सतहम अच्छी मिट्टीका स्तर न मिले तब तक नींवकी खुदाई होनी चाहिये। किन्तु इसमे व्यय अधिक होता है। इसलिये ऐसी परिस्थितिमे स्थान-स्थानपर सतहसे लेकर ऊपर तक बन्धाऊ कामके खम्भे लाकर उनके ऊपर कमानोंकी रचना करते हुए उनपर दीवाल खड़ी करे। यदि इसपर भी व्ययकी अधिकता मालूम होती हो तो ८।१० फुटके गहरे गड्ढे खोदकर उनमें पत्थरके बन्धाऊ खम्भे खड़े करते हुए उनपर चौकी की पटियाओंकी अपेक्षा सलोह कॉंक्रीट की धरनें जमा दे तथा उनपर दीवाले खडीकर जहाँ तक हो अल्प वजनी भवनको जन्म दे।

नींवकी जमीनको कृत्रिम उपायोंसे कठोर बनानेके भी अनेक मार्ग हैं। जिनमसे किसी भी मार्गका अवलम्ब लेते समय प्रमुखतया भवनके भार तथा उसके महत्वको सदैव दृष्टिकोणमें रखते हुए उसीके अनुसार आवश्यक एवम् सुलभ उपायका निर्धारण करना चाहिये। इनमें सबसे सुलभ और उत्कृष्ट मार्ग यह है कि, बुनियादकी गहराईमें पत्थरकी चिप्पियोंको खड़ी गाड़कर अथवा नदी आदि जल प्रवाहमें पाये जानेवाले शिला खण्डों या रोड़ोको सम्यक्रूपसे एक दूसरेसे सटाकर बैठाते हुए उनपर यथेष्ट जल देकर वजनी घनसे खूब कूटना चाहिये। पश्चात् उसका सम्यक् स्तर बन जानेपर उसपर मोरम बिछाते हुए जलसे सींच कर उसकी पुनः कुटाई करनी चाहिये और अन्तमें कांक्रीटका स्तर फैलाना चाहिये।

कृत्रिम उपायोंसे बुनियादमें मजबूती लाना

दूसरे प्रकारमें गड्ढेके स्थान पर १०।१२ फुट गहरे तथा ६ से लेकर ७ इञ्च तकके व्यासके छिद्र बनाकर उनमें गीली बालू कूट कूट कर भरी जाती है। यह छिद्र दो-दो फुटके अन्तरसे गिरमिटकी सहायता से बनाये जाते हैं। इन छिद्रोंमें बालूके बजाय कहीं-कहीं फुट दो फुटके अन्तरसे लकड़ीके खूँटे गाड़े जाते हैं और उनके शिरोभाग प्रमाणबद्ध रूपसे काटकर सम्पूर्ण सतह समयल बना ली जाती है। उनपर एक लकड़ी अथवा सलोह सिमेण्ट कांक्रीटकी धरन बिछाकर उसपर दिवालोंकी रचना होती है।

तीसरी श्रेणीमें २०।२५ फुट ऊँचाईकी मजबूत तिपाई खड़ी कर उसके मध्यभागमें चर्खी (Pulley) बैठाते हुए उसके ऊपर मानवी या यान्त्रिक शक्तिकी शरण लेकर २।३ टन वजनका लोहेका घन भरपूर ऊँचाईतक ऊपर ले जाते और नीचे छोड़ते हैं। यह क्रिया तबतक होती रहती है, जबतक नीचेकी जमीन सम्यक्रूपसे दबकर समयल और भवनका भार सहन करनेमें समर्थ नहीं हो जाती।

इसके अतिरिक्त एक और उपाय यह है कि, पहिले चिम्मड लकडीके भरपूर लम्बाई और मोटाईके खूँटे तैय्यार कर उनकी नोकमें फौलाद की अनी चढायी जाती तथा शिरोभागपर लोहेकी एक मोटी एवम् चिपटी शलाका (Collar) जड दी जाती है। इन खूँटोंका जन साधारण व्यास ६।७ इञ्च होता है तथा लम्बाई प्राय: ६।७ फूट होती है। इस प्रकारके खूँटे बुनियादकी जगहपर स्थान-स्थानपर खडे कर उनपर यान्त्रिक सहायतासे ७।८ सौ पौंड वजनके वजनी घनका आश्रय लेकर ५।६ फूट ऊंचाईपरसे अनवरत प्रहार किये जाते है। कहीं-कहीं लकडीके खूटेकी जगह पर सलोह सिमेण्ट काक्रीटका व्यवहार होता है। इनके प्रयोगसे किसी प्रकारकी सडन-गलनका भय नहीं रहता।

नींवमें विभिन्न स्थानोंपर विभिन्न प्रकारके स्तर निकलना भी सम्भव है। उदाहरणार्थ उसके कुछ भागमे २।३ फुटके ऊपर मोरम तो उसके सन्निकटही मोरमसे सादृश्य रखनेवाली नितान्त नरम पीली मिट्टी भी निकल सकती है। अत ऐसी परिस्थितिमें जिस स्थान पर नरम अथवा पीली मिट्टी लगे वहाँ जबतक कठोर भाग न निकल आये तबतक बराबर खोदते रहना चाहिये और जब वह निकल आये तब उसमें गिट्टी-काक्रीट भर देना चाहिये। यदि अत्यन्त थोडे भागमें नरम मिट्टी तथा उसके दोनों तरफ कठोर मोरम हो तो उस दुतर्फा मोरम पर एक कमान बान्धकर मध्यवर्तीय नरम भाग वैसाही छोड रखना चाहिये।

मिट्टीके भीतर यदि बुनियादके गड्ढे गहरे हो गये हों ,तो उनमें तत्काल कांक्रीट भर देना चाहिये। नहीं तो गड्ढोंके किनारे निरावलम्ब रूपसे ज्योंकेत्यों खडे नहीं रह सकते और उनके निवर के भीतर ढा जानेका भय रहता है। ऐसा होनेसे एक तो भीतर गिरी हुई मिट्टीको निकाल बाहर करनेमें व्यर्थ परिश्रम करने पड़ते और उसके भीत्यर्थ थोडी बहुत आर्थिक हानि उठाती है दूसरे गड्ढोंकी चौडाई बढ जानेके कारण उनमे कांक्रीट अधिक लगता

और व्यर्थही व्ययकी तिगुनी चपत बैठती है। ऐसी परिस्थिति
गड्ढोंके भीतर दुतर्फा लकडीके तख्ते आडे देकर उनके मध्
मजबूत डण्डे ठोककर बैठा देने चाहियें। काली अथवा अन्य दरा
पडनेवाली मिट्टीकी जमीनमे यदि गहरे गड्ढे खोदने हों तो इ
उपायका अवलम्ब लेना चाहिये।

बुनियाद की स्थापना

बुनियाद की स्थापनामें निम्न लिखित साहित्यका व्यवहार होत
है--(१) ५० फुटी टेप एक (२) दो फुटी फुटरूल एक (३
पेशराजोंके लोहेके गुनिये (४) सतह-मापक यन्त्र (५) फरस
(६) रम्भा- कुदाली (७) लकडीके खूँटे या यदि जमीन मोरम
युक्त अथवा कङ्करीली हो तो ४ इञ्ची चिपटे काँटे-कील नग २५
(८) सुतलीका बण्डल प्राय ५०० फुट लम्बाईका (९) खिरय
चूना या राख।

बुनियादकी जो न पाई होती है वह नींयके सतहगत् भागके
नापको देखकर की जाती है, ऊपरी भागको देखकर नहीं। इसकी
गहराई और चौडाईका प्रमाण सतहगत् स्तर पर निर्भर रहता है।
साधारणरूपसे इसका औसत प्रमाण यह है कि, चौकीपर बनने
वाली दीवालकी मोटाईकी अपेक्षा यह ६ इञ्च अधिक चौडी होनी
चाहिये। नींवकी किस प्रकार विशेष श्रेणीकी सतहमें कितनी
चौडी बुनियाद होनी चाहिये इसका सम्यक् विवेचन हम ऊपर
कर ही चुके हैं। अत उस सम्बन्धमें यहाँ पर अधिक लिखना
व्यर्थ है।

जमीनपर बुनियादका चित्र अङ्कित करनेके पूर्व उसका एक
प्रतिचित्र कागजपर अङ्कित कर प्रत्येक दृष्टिसे विचार करते हुए
पहिले अपनी दिलजमाई कर लेनी चाहिये। पश्चात् उसको याम

रेखाओंके बाहर प्रायः २।३ फुटके अन्तरसे लकडी की खूँटियाँ अथवा लोहेके काँटे गाड देने चाहिये। तदुपरान्त पहिले दो खूटियों को डोरी बान्धकर बाहरकी एक रेखा स्थिर कर ले। यही 'सिद्ध' रेखा कहलाती है। पश्चात् डोरी अर्थात् सुतलीको न तोडते हुए बगलकी एक खूँटीसे लपेटकर सिद्ध रेखाको काटकोण देते हुए निकटस्थ बाह्य रेखापरसे लाकर तान दे। काटकोण बनानेके लिये गुनिया भरनेकी अपेक्षा उत्कृष्ट साधन यह है कि, टेपकी तीन फुट लम्बाई,-कोणमे 'सिद्ध' रेखाके समानान्तर लेकर दूसरी ओर अर्थात् काटकोणमें ४ फुट लम्बाई और इस ३।४ फुट अन्तरके अग्र भागको टेपकी पाँच फुट लम्बाईके अन्तरसे कर्णरेखामें जोड दे। 'टेप' का वह भाग जो सिद्धरेखाके समानान्तर हो अचल रखना चाहिये तथा उससे काटकोणमें पकड़ी हुई ४ फुट लम्बाई का भाग आवश्यकतानुसार आगे-पीछे कर कर्णरेखाकी पाँच फुटकी टेपके अग्रभागसे जोड दे। इस पद्धतिसे काटकोण बनानेका कार्य सरलता पूर्वक और थोड़े समयमें हो जाता है। तीन, चार और पाँचकी जगहपर छ', आठ और दसका हिसाब भी अन्तरमें चल सकता है। अधिक तो क्या, अन्तर जितना ही अधिक लम्बा हो उतना ही सधा काम निकलता है।

प्रथमत बाहरके चारो नाप गुनियामें पक्के करते समय नक्शेमे दिखलाये हुए नापके बराबर काटकोणके किन्हीं भी दो नापोंको रख देना चाहिये तथा चारों कोने काटकोणमे पक्के कर लेनेके उपरान्त शेष दोनों भाग सन्मुखस्थ दूनके बराबर है या नहीं, इसका निश्चय कर लेना चाहिये। यदि वह हैं तो आपका हिसाब ठीक है। नहीं तो पुन टेपकी सहायतासे ३-४-और ५ अन्तरोंको देखते हुए सब काटकोणोंका परीक्षण कर लेना चाहिये। यह परीक्षण इस तरह होता है कि, किन्हीं भी दो तिर्छे कोणोंके अन्तर शेष रहे हुए दो कोणोंके अन्तरके बराबर होने चाहिये। यदि यह नहीं होता तो तत्क्षण उसम कुछ न कुछ भूल समझनी चाहिये। इस अन्तर को पारिभाषिक भाषामें 'विकम' कहते हैं।

बाह्यगत चारों नाप निश्चित हो जानेपर बुनियादकी चौड़ाईके अनुरूप स्थान नापते हुए भीतरी रेखाओंको उनके समानान्तर खींचना चाहिये। इस समय गुनिया भरने अथवा अन्य प्रकारसे काटकोण करनेकी आवश्यकता नहीं होती। यह होजानेके पश्चात् भीतरी कमरोंके परत्रेवार दीवालोंकी नपाई उल्लेखित करनी चाहिये। इस प्रकार सम्पूर्ण नपाई और अंकाई होजानेपर जहाँ जहाँसे डोरी गयी हो वहाँ-वहाँ चूना अथवा राख डालकर लकीरें बना लेनी चाहियें तथा सारी डोरीको खोल देनेपर कुदालीकी नोकसे पक्की रेखाएं मार लेनी चाहिये। ताकि वायु अथवा जान वरोंके पदचिन्होंके कारण चूने इत्यादिकी लकीरें मिट न जाँय। मान प्रमुख चार कोनोंकी आठ खूँटियाँ तबतक न उखाड़नी चाहियें जबतक सम्पूर्ण बुनियादकी खुदाई होकर उसमें सम्पूर्ण रूपसे कांक्रीट न भरा जाय। ऐसा करनेसे चिन्होंके अस्पष्ट होने पर पुनः उनकी नपाई नहीं करनी पड़ती।

यदि जमीनमें उतार हो तो खूँटोंसे बन्धी हुई डोरियोंको सतह मापकयन्त्रका आश्रय लेकर एक सतहमें लाते हुए उनके नाप ले लेने चाहिय। ढालुआँ जमीनपर नाप लेनेसे भूल होजाती है। जिस समय नाप लिये जाँय उससमय टेपको सम्यक्रूपसे तान लेना चाहिये तथा इस बातकी ओर ध्यान रखना चाहिये कि, प्रत्येक भागकी नपाई के समय 'टेप' में एकसा तनाव रहे।

भूपृष्ठपर बुनियादकी चौड़ाई आँकनेके पूर्व यह ध्यान रखना चाहिये कि, यह नितान्त नींवके गड्ढोंकी सतहमें हो। नींवकी गहराईको देखते हुए गढ्ढोंके किनारे उसीके अनुसार उसी प्रमाणमें उतरते हुए अर्थात् ढलाऊ (Slope) होने चाहिए। ऐसा करनेमें ज्यों-ज्यों गहरी खुदाई होती है त्यों-त्यों गढ्ढोंकी सतहगत चौड़ाई न्यून होती जाती है। गढ्ढे खुद जानेपर पहिली अंकाई करनेके समय जो खूटे गाढे गये हों, उनमें पुनः सुतलीको खूब तानकर बान्ध दें और उसके एक छोरसे एक पतली ईंटखण्ड बान्धकर उसे गढ्ढे में छोड़ते हुए देखलें कि, वह सतह तक

जानेपर उसके किसी किनारेसे छूता तो नहीं है। यदि कहीं स्पर्श करता हुआ दिखलायी दे तो तत्क्षण उसका उतना भाग खुरच देना चाहिये। यद्यपि सरसरी दृष्टिसे देखनेपर यह कार्य सामान्य मालूम होता है तथापि वास्तविकरूपसे यह है अत्यन्त महत्वपूर्ण। यदि इसमें समय रहते दुर्लक्ष कर दिया जाय और कांक्रीटके भरे जाने पर बन्धाऊ कामके समय उसकी पूर्ति की जाय तो कितनेही स्थानोंपर कॉंक्रीट डोरीकी मर्य्यादाके बाहर निकला हुआ तथा कितनीही जगहोंमें उस मर्य्यादाके भीतर रहा हुआ दृगोचर होता है। ऐसी परिस्थितिमें उक्त मर्य्यादाके बाहर गया हुआ कांक्रीट तो किसी तरह आपत्ति रहित हो सकता है और यही समझा जा सकता है कि, उतना कांक्रीटका भाग निष्प्रयोजन व्यय हुआ किन्तु मर्य्यादाके भीतर रहे हुए कांक्रीट पर बन्धाऊ काम होनेसे वह निराधार रह जाता और पीछेसे नींवका बढाना असम्भव हो जाता है।

यदि किसी कारणवश ऐसी परिस्थिति प्राप्त हो भी जाय तो उसे दूर करनेका उपाय यह है कि, ऐसे स्थानपर बन्धाऊ काममें लम्बा देकर बैठाते हुए आवश्यक चौडाई बढा लेनी चाहिये।

नींवकी खुदाईमें निकली हुई मिट्टी जहाँ तक सम्भव हो वहीं के वहीं कमरोके स्थानपर डालना उचित नहीं। यदि नींवकी खुदाईका काम ठेकेपर दिया हो तो ठेकेदारकी यह प्रवृत्ति रहती है कि, वह परिश्रम और व्यय बचानेकी गरजसे उसे वहीं के वहीं ढलवाता है। किन्तु इससे भयानक आपत्ति उपस्थित होती और कॉंक्रीटकी भराई करते समय गढ्ढोंमें मिट्टीके गिरनेका भय रहता है। इस प्रकारकी ढुलाइसे गढ्ढोंके किनारे टूटकर खुदे हुए स्थानपर मिट्टी भर जानेका निरन्तर भय बना रहता है।

कांक्रीट की भराई

कांक्रीट की भराई आरम्भ करनेके पूर्व गड्ढे की सतहमें भरपूर पानी देकर उसे पूरी तरह तर कर देना चाहिये। इसके पूर्व यदि उसमें अगल-बगलकी मिट्टी गिर गयी हो तो उसे पूरी तरह निकाल बाहर कर दे। कांक्रीट गिराते समय यह एकदम गिराना अच्छा नहीं। ऐसा करनेसे स्तर समथलरूपसे नहीं बैठता। प्रत्येक बार कांक्रीटके गिरा चुकनेपर उसका वाहक पात्र (तसला-खचिया) औंधा गिराकर ठाक लेना चाहिये ताकि उसके भीतर लगा हुआ चूना इत्यादि झड़कर जमीन पर गिर जाता है। पश्चात् कसी चलाकर भीतरी कोने-कतरेमें कांक्रीटको भली भाँति फैला देना चाहिये। कांक्रीटकी भराईमें मुख्य उल्लेखनीय बात यह है कि, उसकी पहुँच नीचेके कोने-कतरे तक हो तथा उसका स्तर सम्यक् रूपसे एकसा मोटा हो। यह स्तर कमसे कम ९ इञ्च मोटे होने चाहिये। एकबार सम्पूर्ण स्तरको जमानेके पश्चात् उसकी यथेष्ट कुटाई कर उसे दो-तीन घण्टे वैसाही रख छोड़े और सूखने दे। पश्चात् पुन यथेष्ट कुटाई करे। अच्छी कुटाई होनेका लक्षण यह है कि, कांक्रीटके साथ सना हुआ चूना ऊपर आकर जम जाता और अपने गभम गिट्टी अर्थात् कांक्रीटको छिपा देता है। इस गिट्टीको छिपानेके लिये ऊपरसे गिलावे अर्थात् चूनेका स्तर देना अच्छा नहीं। दूसरे दिन पुन एकबार पानी छिड़कर कुटाईकर लेनी चाहिये। पश्चात् उसपर कांक्रीटका दूसरा स्तर चढ़ाये। इसप्रकार स्तरपर स्तर चढाते हुए भूतलके नीचे ६ इञ्चसे १॥ फुट तक कांक्रीटकी भराई होना आवश्यक है। यह भराई होते समय तथा बाद भी कई दिन तक उसम बराबर पानी देते रहना चाहिये ताकि, यह सूखने न पाये।

कुटाईकी क्रियामें कोने-कतरोंमें नियमित कांक्रीटकी कुटाईपर ध्यान रखना विशेष आवश्यक है। इस कार्यके सौत्यर्थ लोहेका

'कुटना' विशेष उपयोगी होता है। इसका कारण यह है, कि वह पतला अधिक होनेके कारण उसकी पहुँच सब जगह एकसी होती है। हाँ, यदि इसके अभावमें लकड़ीके 'पिटने'से काम निकाला जाय तो भी कार्य हो सकता है। किन्तु उस परिस्थितिमें हाथसे काम करना पडता और परिश्रम अधिक होते हैं। काँक्रीट छोडनेपर पहिले कुटाई धीरे-धीरे कर पश्चात् जोरोंसे 'कुटना' चलाये। एक बार उसका संकोचन काय आरम्भ हो जाने पर पुन उसपर 'कुटना' चलाकर उसे हिला देना योग्य नहीं। काँक्रीटकी उत्कृष्ट कुटाई होनेका प्रमुख लक्षण यह है कि २४ घण्टेके उपरान्त उसमेंसे एक भी गिट्टी सहजही मे हाथसे निकाली नहीं जा सकती।

किसी कारणवश काँक्रीटकी भराईका काम बीच ही मे ३।४ दिन तक रुक जाने पर कुदालीसे उसके पृष्ठभागको खुरच कर उसे जलसे सींचते हुए उसकी उक्त प्रकारसे पूर्ति करनी चाहिये।

बुनियादका भीतरी बन्धाऊ काम

छोटे-छोटे ग्रामों और शहरोंके न्यून महत्वके भवनोंकी बुनियादोंमें कांक्रीटकी जगहपर मिट्टीके गालेसे भी पत्थरका बन्धाऊ काम करनेकी रूढी है। इस रूढी विशेषकी शरण लेनेवाले बड़े-बडे पत्थरोंको एक साथ बैठाकर उनकी सन्धियामें मिट्टीका गाला देते हुए उसमें पत्थरकी चिप्पियाँ ठोककर जमा देते हैं। इस मिट्टीके गालेको थोड़ा गाढाकर उसमें थोडीसी बालू भी मिलायी जाती है ताकि वह सूखनेपर फटे या सकुचित न होने पाये। सरसरी दृष्टिसे देखनेपर चूने या मिट्टीके बन्धाऊ अर्थात् जुडाऊ काममे विशेष भेद नहीं है। इस कार्यमे पोलापन न रहने देना चाहिये। पत्थरको नैसर्गिक आसन पर समयलरूपसे बैठाना

तथा यथेष्ट हैदरका प्रयोग करना यही बातें विशेषरूपसे ध्यानमें रखने योग्य हैं।

बुनियादके बन्धाऊ काममें बड़े और अनगढ़ पत्थरोंका उपयोग बहुतायतसे होता है। इस कामके कोने-फतरे ठीकही हों सो भी बात नहीं है। केवल पोलापन न रहे तथा उस पोलाईमें यदि चूना भरा जाय तो उसमें चिप्पियाँ अत्यन्त सावधानीसे भरी जाँय इस बातकी ओर विशेष ध्यान देना पड़ता है। साथही यह भी कोई आवश्यक बात नहीं है कि, सारे स्तर एकही मोटाईके जमाये जाँय। पत्थरोंको सदा भिगाकर बैठाना चाहिये। जलप्रवाहमें मिलनेवाले चिकने पाषाण खण्डोंका उपयोग इस कार्यके लिये उपयुक्त नहीं। क्योंकि इनमें चूना चिपकने नहीं पाता। जमीनके नीचे प्राय: ६ इञ्चसे कोने जमाने चाहिये तथा उनके ऊपरका बन्धाऊ काम भी एकही समानान्तर रेखामें हो।

बन्धाऊ काम करते समय कांक्रीटपर दोनों ओर जगह (offset) छोड़नेकी रूढी है। जो प्रत्येक ओर एक सी हो। इस के सम्पादनके समय प्रति पांच-पांच फुटके अन्तरसे बन्धाऊ कामकी चौड़ाईका दुमुँहा 'हेदर' बढ़ाना चाहिये। यदि किसी कारणवश इतने बड़े हेदर' प्राप्त होना असम्भव हो तो जो प्राप्त हो उन्हें हरएक मुहपर शेके हिसाबसे इस प्रकार बैठाना चाहिये कि, उनके पिछले छोर प्राय: ६।६ फुट एकके आगे एक बटे रहें इसे छ: इञ्चोंका 'त्रिगुणित जोड़' (over lapping) कहते हैं।

ठेकेके कामोंमें बुनियादके गड्ढोंकी सतहमें थोड़ासा चूना डालकर उसपर एकही पंक्तिमें सूखे पत्थर बैठाये जाते तथा उन पर पतले गिलाबेके तसले उँडेलकर फर्शीकी सहायतासे कूटा जाता है। किन्तु इस क्रियामें यद्यपि सरसरी दृष्टिसे देखनेपर गिलाबा अधिक लगा हुआ मालूम होता है और उसे भवन स्वामीको दिखलाते हुए ठेकेदार अपनी ईमानदारीकी बड़ाई भी

देते फिरते हैं तो भी इसमें उनकी चाल छिपीही रहती है। वह जुडाईके कामका बहुतसा खर्च बचा लेते है। इस पद्धतिसे चौडाईमे रहे हुए पोले पत्थरोंमे चूनेका प्रवेश होना असम्भव होता है। जुड़ाईका उपयुक्त नियम यह है कि, गिलावेपर एक-एक पत्थर रखकर उसे हथौडेसे ठोके। पश्चात् उसके चारों ओर चूना डालकर बगलमे उसी प्रकार दूसरा पत्थर रखे। पश्चात् उन दोनोंकी मध्यवर्तीय सन्धिमें गिलावा भरकर उसमें चिप्पियाँ ठूँसकर भर दे। अधिक गिलावेसे मजबूती नहीं आती वरन् वह आती है तभी जब वह इष्ट स्थानपर इष्ट प्रमाणहीमें व्यवहृत हो।

चौकी और उसपरकी रचना—१

बुनियाद डालते समय जिस प्रकार चारों कोनोंमे खूँटे गाडकर बाह्यरेखाए काटकोणमें पक्की करली जाती हैं उसी प्रकार चौकीके कोने बैठाते समय भी वैसी ही व्यवस्था करनी चाहिये।

चौकीके काममें व्यवहृत होनेवाले कोण एकसे लेकर १॥ फुट तक मोटे तथा उसी हिसाबसे लम्बी नोकके होने चाहिये। ताकि वह भवनका सब बोझा भलीभाँति उठा सके। चौकीका सृजन करते समय जिन बातोंकी ओर ध्यान देना आवश्यक है, वह यह हैं -

१ सारे कोणोंका शिरोभाग एक सतहमें हो।

२ आमने-सामने वाली दीवालोंके दोनों तरफ वाले हिस्से (लम्बाई) तथा काटकोण सब्व समान् हों। इनका निश्चय बुनियाद डालते समय 'विरुम' देखकर उसकी मिलानको देखते हुए किया जाता है।

३ पेशराजोंकी यह आदत सी रहती है कि, वह जुडाईके कामके समय दोनों ओरके पत्थरोंको पहिले बैठाकर बीचमें चूने

अर्थात् गालेके तसले उँडेल देते तथा उसमें पत्थर पथम् चिप्पियाँ जमा देते हैं। यह क्रिया अत्यन्त बुरी है। चाहिये तो यह कि, पहिले गाला डालकर उसपर जलमें भींगा हुआ पत्थर बैठाते हुए एक ओरसे दोनों किनारों तथा मध्यवर्त्तीय भागकी जुडाइ करते हुए उसे दूसरी ओर तक लेजाकर पूरी करे। इस कामर्मं व्यवहृत होनेवाला गाला न बहुत पतला हो और न गाढ़ा। पतला गाला होनेसे जलके सूख जानेपर जुडाऊ काममें पोलापन रह जाता है तथा गाढ़ा होनेसे वह दोनों पत्थरोंकी सन्धिमें प्रवेश नहीं करने पाता। गाला डाले बिना पत्थर बैठाना नितान्त वर्ज है। उसी तरह पत्थरको बिना उसपर पुन गाला डाले बैठाना भी उचित नहीं। पोलापन केवल गालेसे दूर करनेकी अपेक्षा उसमें छोटे-मोटे पत्थर तथा चिप्पियाँ बैठानी चाहियें। दराज और पोल छूट जाना भवनकी मज पूतीकी दृष्टिसे नितान्त भयानक है। अत यथाँतक सम्भव हो गाबने योग्य बड़ा पत्थरही गालेमें जड़ना चाहिये।

४ जुड़ाऊ कामकी पूर्ण चौड़ाईको देखते हुए प्रति छ फुटके अन्तरपर एक-एक बन्द (टेइर) अथवा कमसे कम दोनों छोरोंमें एक दूसरेके सन्निकट छ इञ्चका द्विगुणित जोड़ देकर दो छोटे बन्द (टेइर) बैठाने चाहिये।

५ जुड़ाईका काम सदा भरपूर पानीसे तर रहे। गिलावा या गाला कभी १५ दिनके पूर्व सूखना अच्छा नहीं।

६ कमरोंमें यदि फरशबन्दी करनी हो तो चौकीके भीतरी हिस्से वाली दीवालोंके छोर उनके शिरोभागके नीचे छ इञ्च तक हम छोड़ने चाहिये। ताकि भीतरका कॉंक्रीट और फर्श उन पर भली-भाँति जम सके। (देखिये चित्र ११) ऐसा करनेसे फरशबन्दी करते समय चौकीके अधिष्ठानके पत्थर तोड़ने नहीं पड़ते।

चौकीकी ऊँचाई सामान्यत १॥ से ४ फुट तक रखी जाती है। इसका ऊँचा रहना आरोग्यकी दृष्टिसे विशेष आवश्यक है साथही इसके ऐसा करनेसे भवनकी शोभा द्विगुणित हो जाती है। चौकीका ४ से ६ इञ्च तककी मोटाईका अन्तिम स्तर,-गढाऊ पत्थर, पटिया, कँगूरा, गोलची किये हुए शहाबादी मोटे पत्थर अथवा सिमेण्ट कांक्रीटकी कढ्ढनी (Cornice) देकर जडा जाता है। इसका उपयोग--(१) शोभा बढती है (२) दीवालकी पूर्ण चाडाईका एक स्तर जमानेसे ऊपरका सम्पूर्ण भाग बुनियादपर सम्यक् प्रमाणमें विभक्त हो जाता है। (३) दीवालके बाहाङ्गपर गिरा हुआ जल कढ्ढनीके कारण सतह तक न जाकर कुछ दूर जा गिरता है। कहीं-कहीं सिल्लियाँ दीवालकी पूर्ण चौडाई मे जडी जाती हैं। (आ ११ देखिए)
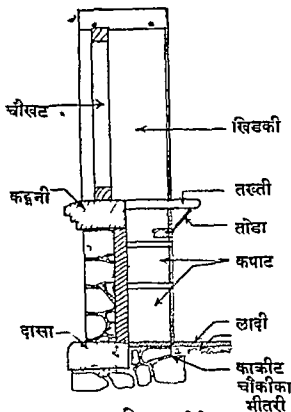
आकृति नवर ११

तहखाना

जिस स्थानपर बुनियाद गहरी लेजानी होती है, उस स्थानपर चौकीकी ऊँचाई बढा देनेसे अनायासही भवनमें तहखानेकी व्यवस्था की जा सकती है। तहखानेकी उपयुक्तता इसी बातमें है कि, उसमें न तो नमी हो और न बर्साती जलका अंश मात्र भी उसमें सोखने पाये। इसका प्रतिबन्ध उसकी सतह तथा दीवालमें सिमेण्टके गिलावेका पलस्तर करनेसे होता है। कभी-कभी सतहमें केवल गिलावा देनेसेही काम नहीं चलता अपितु वहाँ सिमेण्ट कांक्रीट कर उसके ऊपर सिमेण्टका गिलावा करना पड़ता है। तहखानेकी ऊँचाई कमसेकम ६ फुट होना आवश्यक है। छप्परके लिये ' पाटन ' शीर्षक लेखमे उल्लेखित पद्धतियोंके अनुसार किसी एक पद्धतिकी शरण ली जाती तथा नीचे उतरनेके लिये जीनेका सृजन होता है। प्रकाश आदिके लिये बाह्यगत् जमीनकी सतहपर प्राय एक फुटपर चौडी एवम् लम्बे आकारकी खिडकियाँ जडी जातीं तथा उनमें बारीक जाली बैठायी जाती है। इससे लाभ यह होता है कि, उन खिडकियोंके मार्गसे बिच्छू-सर्प इत्यादिका प्रवेश नहीं होने पाता।

तहखानेकी दीवालके लिये भवनकी बुनियाद खोदते समयही गड्ढे खोद लिये जाते हैं। यदि बाह्यगत् जमीनका जल तहखानेम सोखजानेकी सम्भावना हो तो गड्ढेके भीतरी हिस्सेमें अनगढ पत्थरोंका चूनेके गिलावेमें ९ इञ्च चौडा जुडाऊ काम होता है तथा बाहरी भागमें सिमेण्ट १, बालू २॥, गिट्टी ५ तथा स्निग्ध चूना आधा भाग लेकर उसका सम्मिश्रण अर्थात् कांक्रीट गड्ढेमें कूटकर प्राय ६ से ९ इञ्चतक मोटाईकी वृद्धि की जाती और दीवाल तक पहुँचनेपर तहखानेके सतहकी मिट्टी खोदकर अनगड पत्थरोंके जुडाऊ कामका भीतरी पृष्ठभाग स्वच्छ धोते हुए उसपर सिमेण्टका गिलावा किया जाता

है । इससे बाहरकी नमी किसी तरह भीतर नहीं पहुँचने पाती। भवनकी लागतकी दृष्टिसे आधे खर्चमें तहखाना तैयार होता है । इसका प्रमुख उपयोग यह है कि, भवनमें अधिक बन्दोवस्त एवम् ग्रीष्म ऋतुमे विश्राम करने लायक ठँढी जगह होती है ।

नोना और उसका प्रतिवन्ध

भवनमें नोना लगनेके कई कारण होते हैं । (१) यदि भवनकी सन्निकटस्थ जमीनमें अधिक उतार हो और उस मानसे भवनकी चौकी जमीनके सबसे उँचे भागकी अपेक्षा ऊँचाईपर न हो तो भवनका जो भाग बाह्यगत् जमीनकी सतहके बराबर अथवा उससे नीचा रहता है, उसमें जल अधिकांश रूपसे भरता है । (२) भवनमें स्थित् मोरियाँ अधिक दिन तक भरी रहने तथा उनकी सफाईके साधन नष्ट होने अथवा उस ओर दुर्लक्ष करनेसे, सञ्चित-जल केवल चौकी तक ही नहीं पहुँचता अपितु दीवालोंमें भी समाकर उनमें नोना पैदा कर देता है। (३) चौकी तक डाली हुई मिट्टी यदि जलशोषक हो तो भी उससे चौकी और दीवालोंको हानि उठानी पडती है। (४) दीवालोंके बाह्यगत् पृष्ठभाग पर पड़ा हुआ बर्साती जल दीवालोंमे भरता रहता है। (५) छप्परका जल दीवालोंपर ' चू ' कर दीवालोंमे भरने लगता है।

इन पाँच कारणोंमेंसे पहिले कारणको दूर करनेका उपाय यह है कि, जमीनके सबसे ऊँचे भागसे भी प्राय १॥ से २ फूट अधिक चौकीकी ऊँचाई रखी जाय तथा उसी को देखते हुए भवनकी सारी जमीन एक सतहमें लानेके लिये उसके ढालकी ओर जो ऊँचाई हो उसीके बराबर सम्पूर्ण जमीन कर दी जाय अथवा जिस प्रमाणमें बाह्यगत् जमीन चढी हो उसी प्रमाणमें भवनकी

सीढियाँ रखकर भवनस्थ भिन्न-भिन्न कमरोंकी जमीनें भिन्न-भिन्न ऊँचाई पर रख दी जाँय।

दूसरे कारणसे जो नोना लगता है, वह विशेष महत्वपूर्ण है। क्योंकि इसमें केवल पानीही नहीं भरता अपितु उसके साथ-साथ *मोरियोंके मार्गसे बाहर निसृत होनेवाली सम्पूर्ण गन्दगी जहाँकी* तहाँ रुक जाती और अस्वास्थ्यप्रद जलवायु उत्पन्न करती है। ऐसे स्थानोंपर मलेरियाके मच्छड़ अधिकांशरूपसे पैदा होते हैं। इसके निवारणका उपाय यह है कि, पहिले जमीनको भलीभाँति खोदकर पुरानी मोरियोंको साफ कर डाले तथा उनके स्थानपर खपड़े अथवा चीनीकी जिलोंकी हुई (Glazed) नलिकाएं बैठा कर उनके जोड़ सिमेण्टसे भलीभाँति बन्द कर दे। तीसरे कारणसे उत्पन्न हुए नोनेका प्रतिबन्धक उपाय यह है कि, (अ) पहिले भवनके चारों ओर एकत्रित होनेवाले बर्साती जलकी निकासीके लिये जमीनको चारों ओरसे ढाल दे दे। (ब) इससे यदि काम न निकलता हो तो भवनसे प्राय १०।१५ फूटके अन्तरपर चारों ओर १।१ फुट गहरे गड्ढे खोदसे हुए उनकी सतहमें ऐसा ढाल दे कि, जिसमें उनमें एकत्रित हुआ सम्पूर्ण जल एकही स्थानपर एकत्रित हो जाय। इन गड्ढोंमें कुछ पोला रखते हुए उन्हें पत्थरोंसे भर दे तथा यदि आसपास कोई नाला हो तो वहाँ तक जलका बहाव ले जाकर उसमें मिला दे। *यदि सयोगवशात् वैसी कोई सुविधा न हो तो जहाँ सब जल* एकत्रित हो वहाँ एक चूनेका हौज बान्धकर उसके भीतर एक त्रित हुआ सारा जल बार-बार निकाल बाह कर दिया करे तथा (क) जमीनका संशोधन करते समय भारमके नीचे *प्राय* अनगढ पत्थरोंका ९ इञ्च मोटा स्तर जमादे एवम् उसपर छ इञ्चकी मोटाईका पुन-कांक्रीट करे। कुछ लोग दीवाल बनाते समय दीवालमेंही चौकीके नीचे प्राय ३ इञ्च मोटा सिमेण्ट कांकीटका या अस्फाल्टका स्तर जमाते और उसे सन्निकटस्थ कमरोंकी जमीनके नीचे तक बढा ले जाते हैं।

चौथे कारणवश लगनेवाला नोना;-चौकी तक ईटकी जगह पत्थरका प्रयोग करने, सिमेण्टमें जुडाई करने या और भी साव धानी रखनी हुई तो चौकीके नीचेके जुडाऊ कामके बाह्य भागमें सिमेण्टके गिलावेका पलस्तर करनेसे भी रोका जा सकता है। अन्तिम कारणमें दिग्दर्शित चूने वाले छप्परको दुरुस्त करना सरल है।

लकडीका ढचर (Framed structure) या चूनेकी दीवाले

अधिकाँश जगहोंमे चौकी तक पक्का जुडाऊ काम करनेके उपरान्त ऊपर जितने मञ्जिल चढाने हों उतनी ही ऊँचाईका ढचर लकडीके आधारस्तम्म देकर खड़ा किया जाता तथा खम्भेका मध्यवर्तीय स्थान कच्चे जुडाऊ कामसे भर दिया जाता है। ऐसी दशामें भवनका सम्पूर्ण भार मुख्यत उन खम्भोंपर ही जा गिरता है। अत दीवालोंकी जुडाई यदि कच्ची भी हो तो भी उसमें कोई आपात्ति नहीं रहती। इस रचना प्रणालीमे कुछ दोप और गुण दोनों ही हैं। किसी एक विशेप परिस्थितिमें इस प्रकारकी रचना विशेप लाभजनक भलेही सिद्ध हो। किन्तु, इसका अर्थ यह नहीं कि यह उपाय सर्व्व समान् रूपसे एकसा उपयोगी होता है। अब देखना यह है कि यह किस दशामें और क्योंकर लाभजनक होता है:—

(१) उक्त आयोजनसे भवन हल्का होता है। इसका कारण यह है कि, उसका सारा भार लकड़ीके खम्भोंपर पडनेके कारण दीवालकी मोटाई बहुत कुछ अँशोंमें कम की जा सकती है तथा उससे नीवँमें मजबूती लानेकी आवश्यकता नहीं होती। किन्तु खेदकी बात है कि, कहीं कहीं इसके विपरीत दशा देखी

जाती है। अर्थात् व्यर्थही दीवालें अपेक्षासे अधिक मोटी बनायी जाती है"।

(२) काम अत्यन्त शीघ्र खडा होता है। इसमें अधिक महत्व पूर्ण कार्य वढईका है। एक बार सब आधारस्तम्भ जोडकर खड़े कर मेंसे पाटन और छप्परकी रचना करनेमे कोई आपत्ति नहीं रहती। इसके लिये यही आवश्यक नहीं है कि, दीवालें ऊपरतक उठीही हों। यह काम अपनी सुविधा और समयको देखते हुए भी पूरा किया जासकता है।

(३) व्ययकी दृष्टिसे भी यह पद्धति परिस्थिति विशेषमें विशेष लाभजनक सिद्ध होती है।

(४) इस पद्धतिमें भवनस्थ कमरोंकी नियुक्ति, रद्दो-बदल, दुरुस्ती तथा वृद्धि (Additions & Alterations) इत्यादि चाहे जिस भागमें इच्छानुसार करनेका अवसर मिल जाता है। इसका कारण यह है कि, भवनकी दीवालोंपर उसका प्रत्यक्ष भार कुछ भी न पडनेके कारण उसके अन्य किसी भी भागमें धक्का न लगाते हुए चाहे जो भाग गिराया एवम् उठाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त नीचेकी धरनको देखते हुए उसपर चाहे जहाँ खाने अर्थात् पट्टीकी रचना कर एक कमरेको दो कम रोंमे विभक्त किया जा सकता है। इसी प्रकार लग्गी अर्थात आधार-शलाकाके ऊपर दीवालमें छेद करते हुए बिना दीवालके गिराये पुरानी लग्गीपर दूसरी धरन रखी जा सकती एवम् आव श्यकतानुसार किसी भी भागको बढाया जा सकता है।

(५) इस पद्धति में भवन की बुनियाद यदि किसी स्थान पर थोडी बहुत धँस भी जाय तो भी उसका परिणाम भवन पर विशेष रूपसे नहीं होता। उदाहरणार्थ,-टेबुल। उसके पाँच-छ पायोंमेंसे यदि कोई पाया कुछ छोटाभी हो जाय तो उससे वह किसी ओर झुकता नहीं। अस्तु।

यह तो हुए इस पद्धति के गुण। अब दोष देखना है। जो इस प्रकार हैं —

(१) सारा भवन लकडीके खम्भोंपर खडा रहता है। ऐसी परिस्थितिमें जिस स्थानपर यथेष्ट वायु नहीं पहुचती वहां दीमक-घुन (Dryrots) आदि लगनेका विशेष भय रहता है। सामान्यत यह मानी हुई बात है कि, पत्थर चूनेकी अपेक्षा लकडीकी आयु नितान्त न्यून होती और इसीलिये तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करनेपर लकडीके ढच्चरपर खडा हुआ भवन विशेष टिकाऊ नहीं होता।

(२) किसी जबरदस्त आघातके प्रभावसे अथवा नित्यनैमित्तिक कुटाई-पिसाइके कार्योंके कारण सम्पूर्ण भवनको एक प्रकारका धक्का बैठता है। यहा दशा तोपके गगन-गम्भीर आवाजके कारण होती है।

(३) इस पद्धतिसे जो भवन बनाये जाते हैं उनमें और कहां पर किस प्रकार अर्थ व्ययमें कमी अर्थात् किफायत करना योग्य है, यह सर्व साधारण की समझके बाहरकी बात होनेके कारण कभी-कभी उनके सृजनमें एक की चार लागत बैठ जाती है।

(४) लकडीके ढच्चर पर भवनका सम्पूर्ण भार होनेके कारण दीवालोंके चौडे होनेकी कोई गुंजाइश नहीं होती। जिसका परिणाम यह होता है कि ऐसे भवनोंमे दीवालकी अलमारियाँ, ताखे इत्यादि बनाना असम्भव हो जाता है और उनके प्रीत्यर्थ जान बूझकर अधिक व्यय कर मोटी दीवालें बनानी पडती है।

(५) ऐसे भवनोंको अग्निका भय विशेष रहता है। लकडीके ढच्चर वाली पद्धतिसे यदि वास्तवमें लाभ उठाना हो तो आवश्यक यही है कि भवन निर्म्माणके 'श्रीगणेश' अर्थात् बुनियादकी खुदाईसेही किफायतकी ओर ध्यान दे। यदि बुनियादका स्थान चट्टानवाला अथवा " मोरमयुक्त " हो तो ऐसी परिस्थितिमें खम्भेके नीचे उतनेही स्थान के लिये न्यूनाधिक लम्बाई-चौडाईके गड्ढे खोदकर उगमें कांक्रीट भरते हुए यह भाग पक्का कर लम्बे गड्ढेही खोदनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

यद्यपि इधरकी पद्धतिमें दीवालोंका उपयोग खानों अर्थात् पडदियोंकी तरह होता है तथापि उसके बाहरकी दीवालें जलवायु एवम् चोर-चाँइयोंके प्रतिकारकी दृष्टिसे तो अवश्यही पर्याप्तरूपसे मोटी बनानी चाहियें। ग्रीष्म तापसे बचनेके लिये ऐसी दीवालों की मोटाईका प्रमाण कमसे कम ९ इंच तो अवश्यही होना चाहिये। चोर लुटेरोंसे बचनेके लिये १४ इञ्चसे कम मोटाइ तो किसी भी हालतमें अच्छी नहीं। इतनी मोटी दीवालें बाहरकी ओर झुकने न पायें इस विचारसे उनके नीचे आवश्यकतानुरूप बुनियादका होना अत्यावश्यक है। किन्तु मध्यवर्त्तीय दीवालोंकी जगह छ' इञ्ची पडदियाँ भी चल सकती हैं। उनके लिये किसी प्रकार गहरी और चौडी बुनियादकी भी आवश्यकता नहीं होती। यदि कोने और मध्यमें ८।१० फुटके अन्तर पर गड्ढे खोदकर उन्हें धुन कांक्रीट तथा जुडाऊ कामसे चोकी तक लाते हुए उन पर पुनर्हढीभूत सिमेण्ट कांक्रीट (Re-inforced Concrete) की घरन रख दी जाय और उनपर मध्यवर्त्तीय पडदियोंकी रचना की जाय तो बुनियादकी कोई आवश्यकता ही नहीं रह जाती। ऐसी दशामें बुनियादकी खुदाई कांक्रीटकी भराई-कुटाई तथा चोकी तक के जुडाऊ काम के प्रीत्यर्थ होनेवाले व्ययकी बचत होकर उसके बदले केवल चौकीके शीर्ष भागके बराबरी की एक-एक पुनर्हढीभूत सिमेण्ट कांक्रीट की घरन रखनी पडती है।

आधुनिक पद्धतिमें अर्थात् पेटेमें डुबावतक खम्भेका आधार देकर मोटी दीवालोंका भवन बनवाना हो तो उसका खर्च चूनेके पलस्तरकी पक्की दीवालवाले भवनोंकी अपेक्षा बहुत कुछ अधिक पड जाता है। यदि किसी तरह लकडीके ढचरसे सम्पूर्ण लाभ उठाते हुए किफायत करनेकी अभिलाषा हो तो बाह्यगत दीवालों को लेते हुए ९ इञ्च मोटाईकी चूनेकी पडदियाँ निर्माण करे। इस सम्बन्धमें विस्तृत विवेचन आगे चलकर 'पडदियाँ या खाने' शीर्षक लेखमें किया गया है।

दीवाले

जिस स्थानपर पत्थरोंकी प्राप्तिमें कोई असुविधा नहीं होती वहाँ चौकीके शिरोभागतककी सम्पूर्ण जुडाईका काम पत्थरकाही होना चाहिये। तदुपरान्त उसपर किस कामका आरम्भ किया जाय और किसका नहीं, यह निर्णय आकस्मिक रूपसे भवन स्वामी नहीं कर सकता। अत उसीको दृष्टिकोणमें रखते हुए निम्न सूचनाएँ दी गयी है।

दीवालें—(१) पत्थरकी, (२) ईटोंकी (३) कांक्रीटकी, (४) लकड़ीकी, (५) ईंटे और लकडीके सम्मिश्रणकी तथा (६) लोह-गर्भ ईटो की। इनमें से पत्थर और ईंटे की दीवाले जनसामान्यरूपसे देखनेमें आती है।

पत्थर या ईंटें ?

यदि पत्थर या ईटकी दीवालोंका सृजन करना हो तो इन दोनों स्थूल पदार्थोंमें कौनसा पदार्थ विशेष उपयुक्त है, इसकी जाँच करनेके लिये निम्नलिखित सूचनाओं पर ध्यान देना आवश्यक है—

१ इस सम्बन्धमें विचार करते हुए पहिला प्रश्न उपस्थित होता है,-मजबूतीका। यह बात निर्विवाद है कि, ईटकी अपेक्षा पत्थर कहीं अधिक मजबूत होता है। तथापि भवनके टिकाऊपन एवम् आयुमर्यादा की दृष्टिसे विचार करनेपर दोनोंही पदार्थोंके आधार से बने हुए भवन एकसे सिद्ध होते हैं।

चोर और सेन्धबाजोंके भयकी दृष्टिसे विचार करनेपर पत्थरके कामकी अपेक्षा ईटका कामही विशेष सुदृढ होता है।

क्यो!-इसीलिये कि, यदि पत्थरकी बनी दीवालमें चोरको छेद करना हो तो वह उनके जोड़ो (सन्धियों) को ढीले

कर उनमें से सरलता पूर्वक पत्थर निकाल सकता और भीतर प्रवेश करनेके लिये मार्ग बना सकता है। किन्तु ईंटकी दीवालोंमें वह इस प्रकार छेद करनेमें समर्थ नहीं होता। इसका कारण यह है कि, ईंटोंके साथ बढ़िया चूने (गिलावे) की जुड़ाई होनेसे ईंटे और चूना एक साथ तद्रूप होकर बैठ जाता है और अविरल परिश्रमों तथा निरन्तरके प्रहारोंके पश्चात् कहीं उस दीवालमेंसे एकाध छोटासा ईंटका टुकड़ा अलग होने पाता है।

गिलावे तथा नकाशीके कामके लिये भी ईंटे विशेष उपयोगी होते है। जिस प्रकार ईंटोंमें चूना दृढीभूत होकर चिपक जाता है उस प्रकार पत्थरोंमें नहीं। नकाशीके काममें ईंटको चाहे जिस तरह तोड़-फोड़ कर इच्छानुसार आकार-प्रकार दिया जा सकता तथा अन्तमे गिलावेकी सहायतासे उसमें सफाई-लायी जा सकती है। गिलावा ईंटोंका एकमात्र पूरक द्रव्य है। जिसके संयोगके कारण ईंटोकी दृढीकरण शक्ति बढ जाती है। खिडकियाँ-ताखे-दरवाजे इत्यादिके कार्योमे पत्थर निर्मित-कोण शिलाओंकी अपेक्षा ईंटके कोण कम खर्चमें-सुन्दर और सुलभता पूर्वक बैठते हैं।

ईंटोंका काम अत्यन्त शीघ्र समाप्त भी होता है। इसका कारण यह है कि, वे निसर्गत: ही चौकोर आकारके होते हैं। पत्थरोंकी तरह इन्हें गढना नहीं पडता। दरवाजों-खिडकियोके इतर्फा जुड़ाऊ काम तथा कमान इत्यादिका निर्माण ईंटोंका होनेसे विशेष सुन्दर-सुलभ और मजबूत होता हैं।

इनकी जुड़ाई पोली रहनेकी सम्भावना नहीं रहती तथा गिलावा भी परिमित प्रमाणमें प्रयोगान्वित होता है। पत्थरके काममें पूरक स्थानपर यदि भरपूर गिलावा न दिया जाय तो पोलापन रह जाता तथा पेशराजोंकी बेपरवाईसे अत्यधिक गिलावा खर्च होता है।

इसके अतिरिक्त ईंटके काम से एक और लाभ यह होता है कि दीवालों की चौड़ाई ४॥ इञ्च से लेकर चाहे जितनी मोटी रखी जा सकती है। किन्तु पत्थरों की दीवालें १५ इञ्च चौड़ी बनानेमे अत्यधिक कष्ट होते तथा दूसरा मञ्जिल चढाना हो तो उसके प्रीत्यर्थ १८ इञ्च से कम चौडी दीवाल आवश्यकतानुरूप मजबूत नहीं होती। इसके ठीक विपरीत ईंटों की दीवालकी दशा होती है। उनकी १४ इञ्ची चौडी दीवालपर दूसरा मँजिल बखूबी चढाया जा सकता है। साराश यह कि पत्थर की १८ इञ्ची चौड़ी दीवाल से जो कार्य होता है वह ईंटोंकी १४ इञ्ची दीवाल में ही पूरा होकर दीवालमें जानेवाली जगह (चार-चार इञ्च लम्बाई चौडाईका टुकडा) कमरेके व्यवहारोपयोगी स्थान से सयुक्त हो जाती और कमरेके आकार की वृद्धि कर देती है।

किन्तु इन सब लाभोंके अतिरिक्त ईंटके काम में कुछ दोष भी हैं। उदाहरणार्थ ईंटमें जलशोषक गुण रहनेके कारण जहाँ धुँआधार पानी बरसता है वहाँकी दीवालके ईंटे अत्यधिक जल शोषणकर गीले हो जाते हैं। परिणाम यह होता है कि, ऐसे स्थान की वायु सर्द हो जाती है। सिमेण्ट का छर्रा देनेसे उसका कुछ प्रतिकार हो जाता है अवश्य। किन्तु वह सतोपजनक रूपमें नहीं।

उक्त विवेचनको देखते हुए चौकीपर जुडाऊ काममें पत्थर या ईंटका प्रयोग करना, जिसकी-उसकी इच्छापर निर्भर है। किन्तु सामान्यत आर्थिक व्ययकी दृष्टिसे यह समझलेना चाहिये कि, जहाँ सौ नम्बरी पक्के ईंटोंका दर प्रति हजारके पीछे उस स्थानमें प्राप्त होनेवाले अनगढ पत्थरोंके १०० घन फुटके दरसे १॥ गुना अधिक होता है वहाँ दोनोंही योजनाओंमें एकसी लागत बैठती है। ईंटोंका दर इससे कम होनेसे उसमें लागत कम बैठती और कार्य सुदृढ होता है।

स्थपति वर्ग पत्थर और ईंटका सम्मेलन कर एक और प्रकारकी उत्पत्ति करता है। उसमें सारे कामकी जुड़ाई पत्थरकी

कर उसके बाह्यगत दृश्य भागके सब कोण(तोड़े) पत्थरके जड़े जाते तथा अन्तर्गत भागके कोण तोड़े ईंटके बनाये जाते हैं। ताखे,-खुली अलमारियों इत्यादि कार्य्योंमें जो कोण तोड़े व्यवहृत होते हैं, वे अधिकाँशरूपसे भीतरी भागमें ही निर्म्माण होते हैं। अत ऐसी परिस्थितिमें उक्त प्रकार की शरण लेनेसे पर्य्याप्त आर्थिक बचत हो जाती है।

बहुतसे लोग बाहरसे पत्थर तथा भीतर ईंटका प्रयोग करते हैं। किन्तु उनका वैसा करना ठीक नहीं। क्योंकि, पत्थर सदा टेढा-मेढा, ऊबड-खावड़ तथा मोटा होता है। किन्तु ईंटे ठीक इसके विपरीत अर्थात् चौकोर आकारके होते हैं। ऐसी परिस्थितिमें दोनोंका जोड बैठना सम्भव नहीं होता और काम कमजोर हो जाता है।

पेशराजी

(चौंकी और उसपरकी रचना-२)

पेशराजीके काममें दो भेद हैं। एक गढाऊ और दूसरा जुड़ाऊ। यदि यह काम ठेकेपर देना हो तो दोनोंही काम एक मनुष्य को देने चाहियें। दो मनुष्योंको पृथक-पृथक् काम देने से उनमें झगड़ा-झञ्झट होने किम्बहुना एक दूसरेका दोष एक दूसरेपर लादनेकी गुञ्जाइश रहती है। गोल और घडनदार कामकी गढाई करनेवाले को लोहेकी चद्दर के इष्ट आकार-प्रकारके साँचे-उर्फ फर्मे (Form, Templates) तैय्यार कर देने पडते हैं।

गढाऊ काममें मुख्यत तीन भेद हैं। १—घुटाऊ अर्थात अत्यन्त चिकना,-जिसमे प्रतिबिम्ब दिखलायी दे। २—मठाऊ-यानें अत्यन्त बारीक तथा ३—पिटाऊ अर्थात् कड्डूड इत्यादि निकाल कर समथल सतहम जमीनको लाना। इसके अतिरिक्त मठाऊ

कामके दो विभाग और होते हैं। जिनमेंसे एकको उत्तम (Super) मठाई तथा दूसरेको गौण मठाई कहा जाता है। पाहिली श्रेणीका कार्य विशेषतया राजा-रजवाडोंके भवन आदि तथा मन्दिरोंमें होता तथा दूसरे श्रेणीका सीढियाँ, चबूतरे, चौकी यान्त्रिक सामान की बैठक इत्यादिके निर्म्माणमें होता है।

इस सम्बन्धमें सर्व्व समान रूपसे देखने पर जुडाईका काम मजबूतीकी दृष्टिसे तथा गढाऊ काम कौशल्यकी दृष्टिसे विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध होता है।

गढाऊ और मठाऊ कामको छोडकर अन्य कामोंमें व्यवहृत हुए पत्थरोंमें थोडे बहुत अंशोंमें तो अवश्यही कुछ न कुछ ऊबड़-खाबड़पन रह जाता है। अतः उनका उभार (Vertical) जाँचनेके लिये कमसे कम उनके कोणके (तोडों) दोनों ओर बारीक गढाऊ कामकी सतह तैय्यार करना आवश्यक और अनिवार्य है।

पत्थरका जुडाऊ काम और उसके प्रकार।

पत्थरके जुडाऊ कामकी योजना उनके अन्तर्गत आड़े-टेढे जोडोंको देखते हुए उनके प्रीत्यर्थ होनेवाले न्यूनाधिक परिश्रमके गढाऊ कामको देख कर विभिन्न प्रकारोंसे की गयी हैं।

१—संगीन काम (Ashlar Masonary)

(अ) सब स्तर प्रायः एकही मोटाईके होते हैं। उसका जन साधारण प्रमाण एक फुटसे अधिक रहता है। यदि किसी कारण-वश वैसा न हो तो निचले स्तर मोटे तथा ऊपरके उत्तरोत्तर पतले होते जाते हैं। पत्थर जितने मोटे हों उतनेही अच्छे होते हैं।

(व) दर्शनीभागका पृष्टभाग नितान्त चिकना एवम् घुटाऊ बनानेसे लेकर सपूर्ण कार्यके अन्ततक वाढियाँ गढाई की जाती है। यह गढाई चतुर्दिगस्थ किनारोंमें इञ्च-डेढ इञ्च चौड़ाईकी पट्टी छोडते हुए मध्यमे २-२॥ इञ्चके छुटे हुए 'काग' तक होती है।

(क) खडे एवम् चौडे जोडोंकी सतह (विछाव Bedding) कमसे कम स्तरकी मोटाईके बराबर चौड़ी तथा नितान्त बारीक गढाईकी होती है।

सतहगत् शीर्षभाग तथा अगल-बगलकी गढाईमें जोड बैठनेके लिये अधिकसे-अधिक एक सूत जगह छोड दी जाती है। क्योंकि अत्यन्त बारीक गढाई करनेसे चूनेका गिलावा पत्थरको नहीं चिपकता। जोड़ों-सन्धियों या दराजोंको भरनेके प्रीत्यर्थ चूनेके गिलावेकी जगह बजरी और सीमेण्टको सम प्रमाणमें मिलाकर उस सम्मिश्रणका व्यवहार होता है।

जोड़का दूवा स्तरकी मोटाईके आधे हिस्सेसे कम तो किसी हालतमें नहीं होना चाहिये।

---

२ ढोकोंके स्तरका काम (Block in course)

इस कार्यमें स्तरकी मोटाई किसी हालतमें ७ इञ्चसे कम नहीं रहती। इसके निर्म्माणके समय यह ध्यान रखना चाहिये कि, ढोको अर्थात् पत्थरोंकी चौवाई (दर्शनी पट्टी) मोटाईकी अपेक्षा तथा लम्बाई अथवा दुमाला ऊँचाईकी अपेक्षा किसी हालतमें कम न हो। इस कार्यमें जो पत्थर व्यवहृत होते हैं उनका दर्शनी पृष्ठ भाग नितान्त मठाऊ-पिटाऊ और घुटाऊ रहता है। यदि इनका मध्यवर्तीय भाग ऊबड़-खाबड़ ही रखा गया हो तो भी कोनोंके किनारोंके धानों ओर तो अवश्य ही इञ्च सवा इञ्च तक मठाऊ गढाईकर एक पट्टी निकाल ली

जाती है। पत्थरोंका सतहगत शिरोभाग साधनमें तथा खड़े जोड़ ऊर्ध्व भागमें रखते हुए स्तरकी मोटाईके बराबर चौड़ी पिटाऊ-गढाऊ कलासी (Bedding) की जाती है। इस प्रकारके काममें जोड़ोंकी मोटाई चौथाई इञ्चसे अधिक होना अच्छा नहीं। इस प्रकारके कार्यमें अधिक जोर बडे-बडे सन्दूकनुमा पत्थरों तथा चौड़ी कलासियों पर होता है।

३—खण्ड-कार्य (चिराऊ काम) प्रथम वर्ग

इस कार्यमें खडे जोड ऊर्ध्वगत् होते तथा चौड़े स्तर उनके काटकोण अथात् तवानुपङ्क्ति साधनमे होते हैं। स्तरोंकी मोटाई साधारणतया ६ इञ्चसे लेकर ९।१० इञ्च तक होती है। जोडोंकी मोटाई प्राय दो सूतसे तीन सूत तक रखी जाती है। प्रत्येक स्तर विशेषमे दो फुट या उससे कम मोटाईकी दीवालोंमें प्रति पाँच फुटके पीछे मोटाईके बराबर लम्बाईके अखण्ड 'हेवर' उर्फ वन्द जोड़े जाते हैं। कलासीके लिये ३।२ इञ्च तक सतहगत् शीर्ष भाग एवम् अगल-बगलकी फुटाऊ गढाई की जाती है। इसी प्रकार दर्शनी भागमें मठाऊ गढाई करनेसे लेकर डेढ़ इञ्च मोटाइके उभरे हुए वाँले (Bush) रखने तक यही सब प्रकार कार्यपरिणत होते हैं।

दर्शनी भागकी ओर चिप्पियाँ रहना बुरा है। जोड़ोंकी मोटाइ तीन सूतसे अधिक किसी भी तरह नहीं होनी चाहिये। दर्शनी पत्थर (Face Stone) की पट्टी तथा दुमाला स्तरकी मोटाईकी अपेक्षा कम न हो। दुमाले अर्थात् दीवालके दर्शनी भागकी चौड़ाई के बराबर ऊँचाईमें प्रतिशतके पीछे २० तथा ५० प्रतिशत पत्थर १। से १॥ गुनी ऊँचाईके दुमालेमें होने चाहिये।

चिराऊ काम-द्वितीय वर्ग

इसमें तथा प्रथम श्रेणीके चिराऊ काममें भेद इतनाही होता है कि, इस प्रकारमें व्यवहृत हुए पत्थरोंकी मोटाई सम प्रमाण होनेकी ही कोई आवश्यकता नहीं होती । इसमें एक स्तरकी मोटाईमें एक पर एक दो पत्थर भी बैठाये जा सकते हैं। जोड़ोंकी मोटाई आधे इञ्च तक होनेमें कोई आपत्ति नहीं। कलासीके लिये मठाऊ गढ़ाई करनेका कोई नियम नहीं है। शिलाखण्डके समस्त कोर एक सरल रेखामें गढ़कर, सतहगत् शीर्षभागके जोड़ साधनमें तथा खडे-ऊर्ध्वगत् रखे जाते है। इनमें प्रति पांच फुटके अन्तरसे एक एक दुमुँहा बन्द अथवा ६।६ इञ्चका गलजोड देकर दो नाटे बन्द जड़े जाते हैं। पत्थरोंमे हथौडेकी गढाई करनेसे काम चल जाता है। उसमें टाकी करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। इस प्रकार विशेषमें कमसे कम ३० प्रतिशत् पत्थर १। फुटसे १॥ फुट तक दुमालेके होने चाहिये।

चिराऊ काम,-तृतीय वर्ग

इस श्रेणीमे प्रायः पाषाण खण्ड केवल हथौडेसे तोड़े जाते हैं। कलासीके प्रीत्यर्थ टांकी चलाकर गढाई करनेका प्रयत्न नहीं किया जाता। प्रति पांच फुटके पीछे दीवालकी मोटाईके बराबर एक फुट या ६ इञ्चका गलजोड जड कर वहां दो नाटेबन्द जोड़ दिये जाते हैं । एक स्तरकी मोटाई में दो या कहीं-कहीं तीन पत्थर जड़नेमे भी कोई आपत्ति नहीं! किन्तु कोई भी पत्थर दो इञ्चसे कम मोटा नहीं होना चाहिये। साथही उसका सतहगत् शीर्ष भाग नितान्त समथल होना चाहिये। खड़े जोड ऊर्ध्वगत् न होनेसे भी काम चल सकता है तथापि पत्थरके सतहगत् शिरो-

भागमें उनका कोई भी कोण किसी भी परिस्थितिमें ६० से कम न हो। पत्थरकी पटिया (दीवालके दर्शनी भागकी चौडाई) तथा दुमाला कमसे कम मोटाईके बराबर तो अवश्यही होना चाहिये। जोडोंकी भराई उत्तमतासे हो तथा उनकी मोटाई पांच सूत तक रहे। इस प्रकारका कार्य (Out house) बाह्यगत भवन, ग्रामीण भवन, हातेकी दीवालें (Compound) इत्यादिमें होता है।

खण्ड कार्य सम्बन्धी ध्यानमें रखने योग्य बातें-

१ प्रथमत् पाँच-पाँच फुटपर बन्दों के स्थान निर्धारित कर वहां बन्द लाकर रख देने चाहिये। २-तद्उपरान्त दीवालोंके दोनों ओर दो पेशराज कामपर लगा कर दोनों ओर का जुडाऊ तथा मध्यवर्त्तीय पूरक काम एक साथही निपटाते जाना चाहिये। एक ही ओरसे सम्पूर्ण लम्बाई तक शिलाखण्ड जडना तथा पश्चात् दूसरी ओरसे शिलाखण्ड की जडाई करते हुए मध्यवर्तीय पूरक कार्य की पूर्ति करना अथवा दोनों ही ओरसे शिलाखण्ड की जडाई का काम समाप्त करते हुए अन्तमें मध्यवर्त्तीय पूरक कार्यमें हाथ लगाना और उसे पूरा करना अच्छा नहीं। ३-सन्धियाँ और जोडोंकी भराई सम्यक् रूपसे होनी चाहिये। जिसमें उसका अन्तर शिलाखण्डकी ऊँचाई के हिसाबसे आधेसे न्यून तो कदापि न हो। ४- गिलावा डाले बिना पत्थर बैठाना तो किसी भी दशामें ठीक नहीं है। पत्थरके रखने पर उसपर हथौडेका एक आघात करना अत्यावश्यक है। ग्रीष्म ऋतुमें ४।५ बार तथा जाडेमें कमसे कम तीन बार तो अवश्यही जुडाऊ उर्फ बन्धाऊ काम पर जल सिञ्चन करना चाहिये। खण्डकार्यके निमित्त जो शिलाखण्ड व्यवहृत हों वे नितान्त उत्तम श्रेणीके होने चाहिये। सन्तरास लोग ढोनेके परिश्रमको

हल्का करनेके विचारसे दर्शनी भागकी नाप यथायोग्य रखकर पत्थरका शेष भाग काटकर पृथक् कर देते हैं। जिसके कारण उसका वजन अपेक्षितरूपसे कम हो जाता है। किन्तु साथही उससे परिणाम यह होता है की, मूल पत्थर निरुपयोगी और कमजोर हो जाता है। चित्रसंख्या १२ और १३ में दिग्दर्शित आकृति के अनुसार उत्तम शिलाखण्डकी मोटाइ कमसे कम उतनी ही लम्बी, मोटाईसे ड्योढी दीवालके दर्शनी भागके चौडाईकी, सतहगत शीर्ष भाग कमसे कम १ इञ्च समथल तथा अगल-बगलके भाग कमसे कम डेढ इञ्च समथल होते हैं। इस प्रकारके शिला खण्डका पिछला हिस्सा १ ६ प्रमाणमें उतार दार होना चाहिये। इससे अधिक उतार होना आपत्ति जनक है। अग्रभाग चौडा किन्तु पीछे सङ्कुचित हो तो उसे पारिभाषिक प्रयोगमें 'कोल' कहते हैं। (देखिये चित्र संख्या १५) ऐसा होना हानिकर है। चित्र संख्या १४ में १५ इञ्च लम्बाई, ६ इञ्च मोटाई और ६ ही इञ्च दुमालेका एक प्रति चित्र दिखलाया गया है।
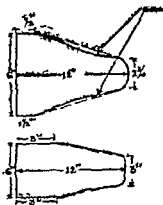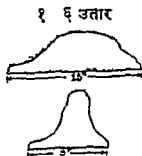
आकृति नं १२ व १३ आकृति नं १४ व १५

अनगढ टोडोंका काम (Random rubble)

यदि यह काम सम्यक् रूपसे किया जाय तो इसमें सन्देह नहीं कि, यह नितान्त सुन्दर और दृढताकी दृष्टिसे शिला-खण्डके कार्यसे कहीं अधिक श्रेष्ट होता है। असली टोडेके काममें दर्शनी भागके स्थानपर छोटी चिप्पियाँ निरुपयोगी होती है। मुँदकी ओरसे सम्पूर्ण पत्थर एकही आकारका होना चाहिये। इस कार्यमें प्रति पाँच फुटके अन्तरसे अखण्ड दुमुँहे बन्द जड़े जाते है। जोडोंकी चौड़ाई तीन सूतसे अधिक अच्छी नहीं होती तथा वह होना भी चाहिये। दर्शनी भागकी गढाई साधारणतया पिटाऊ हो। पत्थरोंका दुमाला चौडाई अथवा ऊँचाईकी अपेक्षा कम होना अच्छा नहीं। दीवालकी चौडाई यदि दो फुटके भीतर हो तो अखण्ड बन्द जडने चाहियें। उससे अधिक होनेसे दोना ओर छ इञ्च का गल-जोड देकर दोवन्द जड दे।

अनगढ टोडोंका काम (Uncoursed rubble Masonary)

इसमें जोड पाँच सूत तकके चलते है। दो अथवा तीन पत्थरोंके बीचमें यदि दर्शनी भागमे थोडासा स्थान छूट जाय तो उसमें छोटीसी चिप्पी बैठानेसे भी काम चल सकता है। इस काममें जितनेही बड़े शिलाखण्ड व्यवहारमें लाये जाँय, मजबूतीकी दृष्टिसे उतनाही अच्छा होता है। इसकी जुडाई प्रति पाँच फुटके अन्तर पर एक-एक दुमुँहा बन्द देकर गढाऊ टोडोंके कामकी तरह करनी चाहिये। पत्थरकी खदानोंसे जिस स्थितिमें टोडे आते हैं उन्हींको थोडासा हथौडोंसे ठोक-पीटकर व्यवहारमें लाया जाता है। इनका जो समथल भागहो वह सतह की ओर किया जाता तथा लम्बाईका भाग दुमाले की तरह दीवालकी मोटाईमें समावेशित हो जाता है।

पत्थरकी लम्बाई-चौडाइ हर हालतमें मोटाईकी अपेक्षा अधिक होनी चाहिये। तथा कमसे कम २५ फीसदी पत्थर १५ इञ्ची दुमालेके होना आवश्यक है।

गढे हुए या अनगढ टोडोंके काममें ध्यानमें रखने योग्य बातें—

१ इस कार्य को करते समय अधिकांश रूपसे पेशराजों की यह प्रवृत्ति रहती है कि वह मोटाईमें न्यून अथवा चिपटे पत्थरको सदा दर्शनी भागकी ओर खड़ा जड़ते है। इससे कार्य शीघ्र समाप्त होता और सुन्दर जँचता है। किन्तु तात्विक दृष्टिसे विचार करनेपर ऐसा करना अच्छा नहीं। कारण उससे कार्यमें कमजोरी आजाती है। इस प्रकारके पत्थर ऐसी पद्धतिसे जड़े जाने चाहिये ताकि वस्तुत: उनका बड़ा मुँह सतहमें समथल रहे। इस सम्बन्धमें स्थूलमानसे यह ध्यान रखना चाहिये कि कोई भी पत्थर सदा अपने नैसर्गिक रूपमेंही भूमिपर पड़ा मिलता है। अत: उसकी जड़ाई भी उसी नैसर्गिक रूपको सन्मुख रखते हुए होनी चाहिये। इसके विपरीत मार्गका अवलम्बन करनेसे उसका परिणाम यह होता है कि, उस पत्थरपर ऊपरी भार पडनेसे, उसका बाहरकी ओर घसक जाना सम्भवनीय हो जाता है। पत्थरकी ऊँचाईको देखते हुए उसीके हिसाबसे कमसे कम उसका सवाया हिस्सा दीवालकी मोटाईमें अन्तर्भूत होना चाहिये।

२ अन्तर्गत पेटा भरते समय भी बड़े एवम् लम्बाकृति पत्थर भीतर देकर आगे और पीछेके पत्थरोंकी श्रेणीमे गुत्थीसी बन्ध जाय इस प्रकारकी व्यवस्था करनी चाहिये।

३ इस प्रकारके कार्यमें पेटेमें पोलापन रह जानेकी अत्यधिक सम्भावना होती है। अत: उसपर ध्यान रखते हुए पेटेमें दिया

जानेवाला गिलावा थोडा पतला घना लेना चाहिये। पोलको बचानेके लिये जिस आकारका गड्डा (घर) हो उसी आकारका पत्थर जड देना विशेष उपयुक्त है।

४ प्रति ५ फुटके अन्तर पर एक-एक बन्द (Header) होना चाहिये। बन्धाऊ काम यदि २॥ फुटसे अधिक चौडा हो तो दोनों ओर मुह किये हुए दो बन्द इस तरह एक दूसरेके सन्निकट जड़ देने चाहिये ताकि उनका गलजोड कमसे कम ६ इञ्चका हो सके। यदि कार्य की देख भाल करनेका अच्छा सुभीता न हो तो बन्दों की सख्या बढा देनी चाहिये।

५ इस प्रकारके कार्यमें जितनेही बडे आकारके पत्थर हों उतनाही अधिक सुभीता रहता है।

किफायतके लिये सूचना।

१ जिस भाग पर गिलावा करना हो उसपर जुडाऊ काम करनेके समयही आधेसे पौन इञ्च तकसे अधिक उभार न रहने दे। क्योंकि इससे बिना कारणही गिलावेका स्तर अधिक मोटा देना पड़ता और व्यर्थही गिलावेका खर्च बढकर द्रव्यहानि उठानी पडती है।

२ गिलावेके स्थानपर स्थित सम्पूर्ण शिकञ्जे (सन्धियाँ) बन्धाऊ काम होतेही खोद लेने चाहिये ताकि गिलावेकी बचतके साथ-साथ कार्यमें भी सुभीता हो। यह बात अन्तमें करनेसे सूखा हुआ गिलावा व्यर्थ चला जाता और उसके खोदनेमें निष्प्रयोजन परिश्रम करने पडते हैं।

कोण (तोडे)

दीवालोंके काममें कोणोंका महत्व अत्यधिक है। अत: उनके निर्म्माणके लिये जितनाही वजनी, मजबूत और मोटा पत्थर हो उतनाही अच्छा होता है। कोणोंके सम्बन्धमें यह एक स्थूल नियम है कि, उनकी नाटी नोकके बगलकी लम्बाई कमसे कम मोटाईके बराबर तो अवश्यही होनी चाहिये तथा लम्बी नोक मोटाईकी अपेक्षा ड्यौढीसे किसी प्रकार न्यून न हो। अर्थात् १२ इञ्ची मोटाईके कोणोंके नाप १२" × १८" × १०" होना अवश्यम्भावी है। इसके अतिरिक्त उनका पेटा जहाँ तक सम्भव हो (सन्दूकनुमा) भरपूर होना चाहिये। (देखिये चित्र संख्या १६) सामान्यत: जो कोण व्यवहृत होते हैं, वह ९" × १२" × १२" आकारके, सङ्कुचित पेटेके एवम् त्रिकोणाकृति होते हैं। इस प्रकारका एक कोण चित्र संख्या १७ में दिखलाया गया है।
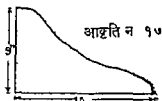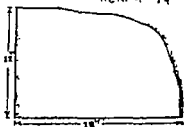
आकृति नं १७

आकृति नं १६

पत्थरके कोण सतहगत् शीर्षभागकी ओर भली भाँति गढ़े हुए हों। उनके बीचमें पोलापन रह जानेसे चित्र संख्या १८ में दिग्दर्शित प्रकारानुसार उनके एक छोर पर सम्पूर्ण भार पड़कर कोणोंके टूट-फूट जानेकी सम्भावना रहती है। ईंटोंके धन्धाऊ काममें कोणोंके प्रीत्यर्थ विशेष रूपसे अच्छी ईंटोंका व्यवहार करना चाहिये। अथवा यदि उसमें सुविधा न हो तो पत्थरके

चित्र-१८

कोणोंकी नियुक्ति करनी चाहिये । पत्थरोंकी कतरन दो भाग, बालूकी छाजन दो भाग तथा सिमेण्ट १ भाग लेकर उसके सम्मिश्रणसे बने हुए कांक्रीटके कोण व्यवहारान्वित करनेसे वे पत्थर की अपेक्षा ३० प्रतिशत् सस्ते पडते एवम् पत्थरके कोणोंसे कुछ ही न्यून मजबूत सिद्ध होते है। विशेषतया गोल अथवा लम्बाकृति कोण तो अत्यन्तही उपयुक्त और सस्ते समझे जाते है।

ईटोंका काम

(१) बन्धाईके काममें ईटोंको व्यवहारमें लानेके पूर्व उन्हें कमसे कम, ३ घण्टे तक जलमें डुबा रखना चाहिये । इनमें जलशोषक गुण विशेष रहता है । अत यदि वह जुडाईके कार्यमें व्यवहृत होनेके पूर्व भलीभांति जलमें तर न की जाँय तो गिलावेपर बैठतेही वे उसका जल शोषण कर चूनेको शुष्क कर देती है। परिणाम् यह होता है कि, गिलावा ईटसे भली भांति चिपकता नहीं। अत ईटोकी जुडाईके कार्यमे यह एक आवश्यक और आरम्भिक कर्त्तव्य है कि, इस कामके निमित्त व्यवहारमें लायी जानेवाली सम्पूर्ण ईटोंको उक्त अवधि तक अवश्यही जलमें डुबा रखे। जुडाई हो जानेपर भी उस कामकी सम्यक् तराई होती रहनी चाहिये।

(२) गिलावा डालकर ईट बैठानेके पश्चात् उसपर कन्नीकी मूठका एक आघात देकर मजबूत बैठाना चाहिये।

(३) जुडाऊ कामके लिये जहाँ तक सम्भव हो एक ही आकार प्रकारकी ईटोंका व्यवहार करना अच्छा होता है । विशेष तया नौ इञ्ची पटियोंके जुडाऊ काममें तो इस बातपर विशेष ध्यान रखना चाहिये । छोटी-बडी विभिन्न आकार-प्रकारके ईटे व्यवहारमें लानेसे,उस जुडाऊ कामका पृष्ठभाग सरल रूपसे ऊर्ध्व

गामी नहीं होता। जिससे गिलावेका स्तर मोटा देना पडता और विनाकारण आर्थिक व्ययकी भयङ्कर ठेस सहन करनी पडती है।

(४) जोडोंकी जुडाई अच्छी होनी चाहिये तथा सन्धियां आधे इञ्चसे अधिक मोटी न होनी चाहियें।

(५) पड़विया अथवा समानान्तर दीवालें उठानी हों तो यह एक साथही उठानी चाहियें। उनके लिये आधी ईंटोंके दांते छोड़ कर उन्हें अन्तमें उठाना अच्छा नहीं।

(६) गिलावेमें यदि ईंटोंके गोल खम्भे खड़े करने हों तो चौकोर ईंटोंके कोण तोड़कर उन्हें एक ओरसे गोल आकार दिया जाता है। इस कार्यमें ५ या ६ फूटकी ऊँचाईपर खम्भेके व्यासके बराबर तथा प्राय: तीन इञ्च मोटाईका वर्तुलाकृति गढा हुआ पत्थर जड़ दे अथवा उतनाही सिमेण्ट कांक्रीटका स्तर दे दे। उस आकारकी ईंट-जातिकी मृणमय सिल्लिया बनाकर जड़नेसे भी काम चल जाता है।

ऊँचाईके अनुसार ईंटकी दीवालकी चौडाई

म्युनिसिपैलिटीकी धाराके अनुसार साधारण तथा ईंटोंकी दीवालकी मोटाई इस प्रकार होनी चाहिये—

ऊँचाई	दो पडवोंके बीचमें दीवालकी ऊँचाई	दीवालकी मोटाई
१० फुटतक	चाहे जितनीभी हो तो भी	९ इञ्च
१० से १५ फुटतक	„ „ „	८ फुटतक १४ इञ्च तथा उससे ऊपर ९ इञ्च
२५ से २५ फुटतक	२० फुट तक ३० फुटके उपर	अन्त तक १४ इञ्च दोसे अधिक मञ्जिल हों तो अन्तिम अथात् ऊपरी मञ्जिलकी सहततक १८॥ इञ्च तथा अन्तिम मञ्जिल के लिये १४ इञ्च

ऊँचाई	दो पडदोंके बीचमें दीवालकी ऊँचाई	दीवालकी मोटाई
२५ से ३० फुटतक	३५ फुट तक	दोसे अधिक मञ्जिलके लिये उक्त प्रमाणके अनुसार तथा यदि दोही मञ्जिल हों तो अन्तिम मञ्जिलके लिये १४ इञ्च तथा उसके नीचेकी दीवालें १८॥ इञ्च
	३५ फुट तक	अन्तिम मञ्जिलके लिये१४ तथा यहाँतक१८॥इञ्चतक
३० से ४० फुटतक	३५ फुट तक	अन्तिम दो मञ्जिल छोडकर नीचे १८॥ इञ्च तथा नितान्त ऊपरी दो माञ्जिलके लिये १४ इञ्च सतहगत दीवालें २३॥ इञ्च। ऊपर अन्तिम मञ्जिलकी सतहतक १८॥ इञ्च तथा उससे ऊपर १४ इञ्च
४० से ५० फुटतक	३५ फुट तक	नितान्त ऊपरी मञ्जिलकी सतहतक १८। इञ्च तथा ऊपरी मञ्जिलके लिये १४ इञ्च।
	३५ फुटके ऊपर	सतहगत मञ्जिलकी २४ इञ्च। नितान्त ऊपरी मञ्जिलकी सतहतक १८॥ इञ्च।उससेऊपर१४इञ्च।

चन्धाऊ काम गिलावेका हो या मिट्टीके गालेका?

अधिकाँश लोगोंकी यह धारणा होती है कि गिलावेका चन्धाऊ काम अत्यधिक महँगा पडता है। याने यहाँ तक कि, वह उस व्ययभारको सहनेमें अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं। ऐसी

परिस्थितिमें काष्ट निर्मित खम्भे-लघी इत्यादिका ढाँचा खड़ाकर उसके बीचमें मिट्टीके गालेके साथ ईंटे अथवा पत्थरोंकी जुडाई की जा सकती है। किन्तु इसके ठीक विपरीत कुछ लोगोंकी यह भी धारणा होती है कि, मिट्टीका जुडाऊ काम मजबूत तथा दीर्घ जीवी नहीं होता। परन्तु तात्विक दृष्टिसे विचार करनेपर उभय पक्षकी ही धारणाए निर्मूल सिद्ध होती हैं। यदि मिट्टी मोल लेकर गालेसे काम लेना हो तो उसकी अपेक्षा चूनेके गिलावेसे काम लेना विशेष श्रेयस्कर है। क्योंकि गिलावेका काम गाले और लकडीके छप्परकी सहायतासे किये जाने वाले कार्यकी अपेक्षा कहीं अच्छा और सुलभ होता है। जहाँ चूना सस्ता हो वहाँ यदि कुछ अधिक मूल्य भी देना पडे तो भी चूनेका गिलावाही इष्ट कार्यमें प्रयोगान्वित होना चाहिये। इससे जुडाऊ काममें छप्परके ऊपरसे बहने वाला जल पडवेके भीतर भरने की गुञ्जाइश नहीं रहती तथा चूहे-छछुन्दर इत्यादिसे भी सन्तोष-जनक बचाव होता रहता है। किन्तु जहाँ स्वच्छ एवम् सुफेद मिट्टी थोडे मूल्यमें अथवा मुफ्त मिल सकती है वहाँ जान बूझकर कामकी कमजोरीकी दृष्टिसे पैसा खचकर चूनेके गिलावेका आयोजन करना अच्छा नहीं। पानीके बचावके लिये छप्परमें पर्याप्त ढाल देनेसेही काम चल सकता है और यदि इससे भी अधिक साव धानी रखनी हो तो उसपर पनालिदार चद्दरोंका आच्छादन किया जा सकता है। इस आच्छादनको ग्रीष्मतापसे बचानेके लिये क्या योजना हो सकती है, इसका सम्यक् विवेचन 'चद्दरके आच्छा-दन' शीर्षक प्रकरणमें देखिये।

दरवाजे

दरवाजोंके काममें चौकट खड़ी करनेके पूर्व देहली (Sill) जडी जाती है। पश्चात् उनके बीचमें पक्की फर्शबन्दी अथवा

कमसे कम दो इञ्च मोटाईका सिमेण्ट कांक्रीटका स्तर दिया जाता है। खाली जमीन रख छोडनेसे, फिर चाहे वह कितनीही अच्छी,-उदाहरणार्थ मोरमकीही क्यों न हो, निशिदिनके आवा-गमन (आमदरफ्त) से ऊबड-खाबड हो जाती अथवा खुदकर गड्ढे पड जाते हैं। यदि फर्शबन्दीके स्थानपर दरवाजोंके मध्य-वर्त्तीय भूगत्-भागमें सिमेण्ट कांक्रीटका पलस्तर किया जाय तो वह अत्यन्त चिकना हो जाता और सूखनेपर पैर फिसलनेका भय रहता है। इस आपत्तिको दूर करनेके लिये उस स्थानपर उक्त विशिष्ट प्रकारके कांक्रीटकी अर्द्धगीली अवस्थामेंही धातुकी एक जालीदार चद्दर (Expanded Metal) बिछाकर उसपर ऊपरसे दाब देते हैं। परिणाम् यह होता है कि, भूगत् स्तर पर उसका प्रतिचित्र अङ्कित हो जाता और उसके निकाल लेनेपर कांक्रीटके सूखनेके पश्चात् उक्त भयकी आशङ्का नहीं रह जाती। इस विशिष्ट प्रकारकी जालीके बजाय कहीं-कहीं डोरी से भी यही क्रिया की जाती है।

दरवाजोंकी चौखटोंके लकडियोंकी नाप ३×४" से कम होनी अच्छी नहीं। कितनेही दरवाजोंमें एक ओर काँच तथा दूसरी ओर लकडीके पल्ले होते हैं। किन्तु उस दशामें भी ३×५ अथवा ४×६ नापकी लकडियाँ प्रयोगान्वित करनी पडती हैं। ऐसी परिस्थितिमें ३ इञ्च वाला भाग दीवालकी लम्बाईके समाना न्तर रखकर उसके गुनिये (काटकोण) मे अर्थात् दीवालकी मोटाई की ओर ४ या ५ इञ्ची भाग रखा जाता है। चौखटका कपाल प्रदेश और ड्योढीके कान (आगे निकले हुए दोनों छोर) दोनों ओरसे बाहोंके बाहर कमसे कम ६ इञ्च निकालकर दीवालमें धसा देने चाहिये। साथही यह ध्यान रखना चाहिये कि, जुडाई करने और थोडा बहुत चिप्पी इत्यादिका साधन भरनेके पूर्व उसकी सब सन्धियाँ तथा फलासी (दराजें) भलीभाति सट कर बैठ जांय। प्रत्येक चौखट खडी करनेके पूर्व गुनिया लगाकर उसकी सम्यक् जाँच कर लेना आवश्यक है। ताकि उसमें कहींसे टेढ-मेढ न रह जाय।
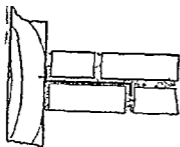
आजकल अनेक जगह ड्योढीके विनाही चौखटें खड़ी करनेकी परिपाटी चालू हो गयी है। इसका कारण यह है कि, यदि सारे कमर की सतह पर पलस्तर करना हो तो उसके धोने तथा कूड़ा-कर्कट आदि निकालनेमें विशेष सुविधा हो जाती है। चौखट जमनेके पूर्व एक बार गुनिया लगाकर देख लेना चाहिये। पश्चात् दोनों ओरसे प्राय १॥ दो फूट तक जुडाई हो जानेपर

आकृति नं १९

पुन एक बार गुनियेकी सहायतासे परीक्षा कर लेनी चाहिये कि वह समुचित रूपसे बैठी है या नहीं। चौखटकी मजबूतीके लिये दीवालमें 'पकड' बैठानेकी भी परिपाटी है। तथापि यदि उसकी जगह १॥ सूत मोटी, एक इञ्च चौड़ी और नौ इञ्च लम्बी लोहेकी तख्ती लेकर आकृति संख्या १९ में निदर्शित प्रकारानुसार उस विपरीत दिशाकी ओर एक-एक इञ्च झुकाकर उसके एक छोरमें छिद्र करते हुए काँटेकी सहायतासे चौखटमें जड दिया जाय तो विशेष अच्छा-सुलभ-और मजबुत काम हो सकता है। चौखटकी प्रत्येक बाँहमें इस प्रकारकी दो-दो तख्तियाँ जड़ देनी चाहियें। विशेषतया ईटकी जुडाइके काममें ओढोंकी मोटाइ अत्यन्त न्यून होनेके कारण लकडीकी पकड' की अपेक्षा इस प्रकारकी व्यवस्था विशेष उपयोगी हो सकती है।

वायुकी दृष्टिसे दरवाजेके शिरोभाग पर कलमदान अर्थात् वात मार्ग (मुक्का=Ventilator) होना विशेष अच्छा है। दीवालमें दरवाजोंकी ओर ८१ से लेकर ६१ तक सन्धि (Jamb) होनी चाहिये।

सदर दीवानखानेके अतिरिक्त अन्य किसी भी कमरेमें दरवाजों का एक दूसरेके सामने होना विशेष सुविधा जनक है। यदि इसके विपरीत बात हुई तो एक दरवाजेसे निकल कर दूसरे दरवाजेसे

बाहर निकलनेमे सारा कमरा रौंदना पडता और वह सम्पूर्ण-रूपसे आवागमनका मार्गही बन जाता है।

दरवाजोंके पल्ले दीवालम टकराया करते हैं। उससे दीवालोंको बचानेके लिये उनमें लकडीके लट्ठे काटकर जड देने चाहिये।

यदि दरवाज अत्यधिक चौडे हों तो उनके खुले रहने पर वह पल्ले दीवालकी मोटाईके बाहर दूरतक चले जाते हैं। उस दशामें उनके मध्यमे बीजागरी जडकर उन्ह तहदार बना देना चाहिये।

खिडकियाँ

खिडकियोंसे दोहरा लाभ होता है। एक तो यह कि, उनसे हमें बाहरकी स्वच्छ वायु मिलती है; दूसरे सूर्यप्रकाश भरपूर मिला करता है। यह दोनोंही बातें हमारे जीवनके लिये आवश्यक और अनिवार्य है। हमारे कृषि प्रधान भारतवर्षमें पहिले अधिकांश लोग खेती करते और ग्रामीण अर्थात् देहाती जीवन व्यतीत करते थे। यही कारण है कि, उन्हें भरपूर वायु और प्रकाश मिला करता और उसके कारण उनका स्वास्थ्य सदैव उत्कृष्ट रहा करता था। किन्तु आजकलके इस नवीन युगमें सभी बातें निराली हो रही है। देश-काल और परिस्थितिका देखते हुए हममेंसे अधिकांश लोगोंका ग्रामीण जीवन छूट गया। अकाल और दरिद्रताके कारण लोग देहातोंको छोडकर शहरोंमें जाकर सकुचित जगहोंम बसने लगे। खेती तथा स्वतन्त्र पेशाकी जगह गुलामीकी शिक्षाने कितनेही लोगोंपर अपना प्रभाव जमाया और वे शहरोंमें घुसकर राजा-बाबू बन बैठे। किन्तु स्थान वही सकुचित रहा। शेष जो कुछ लोग रहे उनमेंसे भी कितनेही नोकरीकी आसुरी इच्छासे अपने पूर्वजोंके कर्मोंको तिलाञ्जुली देकर शहरोंकी ओर पील पडे। उद्योग-व्यवसाय, कला-कौशलकी अपेक्षा

उन्हें परावलम्बी बनकर दिन पूरे करते हुए रूपये गिनना विशेष अच्छा जान पडा । किन्तु परिणाम् क्या हुआ, इसे यहाँपर बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है । स्वातन्त्र्य और उद्योग कलाके नाशके साथ-साथ स्वास्थका भी नाश हो गया । अस्तु.

यह तो मानी हुई एवम् स्पष्ट बात है कि, शहरोंकी बस्ती नितान्त घनी होनेके कारण वहाँ रहनेके लिये भरपूर स्थान नहीं मिलता । पुरुषवर्ग तो किसी न किसी तरह किसी न किसी कार्य के निमित्त बाहर आया करता एवम् वहाँकी स्वच्छ वायुको अंशात्मक रूपसेही क्यो न हो ग्रहण कर लेता है । किन्तु बेचारी औरतें,-वे इस सुविधासे भी वञ्चित रहती और दिनभर घरके संकुचित स्थानमें पडी-पडी सड़ा करती हैं । परिणाम यह होता है कि उनका स्वास्थ्य अत्यन्त खराब होता और वे कतिपय भयङ्कर रोगोंका शिकार बन जाती हैं । उनकी भावी सन्तति अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण पैदा होती है । एक तो यों ही पुरुष वर्गका स्वास्थ सन्तोष जनक नहीं होता दूसरे उनकी भावी पीढी,-जिसपर उसकी माताओंके अस्वास्थ्यका परिणाम होता है अपने बाप दादोंकी अपेक्षा क्रमिकरूपसे निर्बलही होती चली जाती है ।

मनुष्य किसी तरह अन्नके बिना दो-तीन महिनों तक केवल जल पी कर रह भी सकता है । किन्तु वायुके बिना तो वह पाँच मिनिट भी नहीं रह सकता । इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मानवी जीवनके लिये वायुकी कितनी और कैसी आवश्यकता है । इसी बातको दृष्टिकोणमें रखते हुए भवन निर्म्माण करते समय भवनमें समुचित रूपसे वायुका आवागमन हो सके, इस पद्धतिसे उसकी रचना करनी चाहिये । अधिकाँश लोग अपने अज्ञानके कारण शयनागारकी खिडकियाँ बन्दकर सोते हैं । किन्तु यह उनकी सरासर भूल है । यदि उन्हें ऐसाही करना है तो कमसे कम उस कमरेमें उन्हें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि, जिसमें उन्हें खिडकियोंके बन्द करनेपर भी भरपूर वायु मिल सके । खिडकियोंकी अधिकतासे यदि अधिक

वायु मिले तो उसमे कोई आपत्ति नहीं रहती। किन्तु उसमें कमी होनेसे हानि उठानी पडती है। अत यह स्पष्ट हो जाता है कि, खिडकियोंकी अधिकताका होना भवनके लिये आवश्यक और अनिवार्य है। खिड़ कियोंके बन्द करनेसे उनके ऊपरके वातमार्ग (Ventilator) से भी अच्छा उपयोग होता है। किन्तु उसके कपाट पूरी तरह बन्द होना अच्छा नहीं। अत वैसी व्यवस्था आरम्भहीसे कर रखना उचित है।

एकही ओर अधिक खिडकियोंके होनेसे भी काम नहीं चलता। उसके सामनेकी दीवालमें भी खिडकिया होनी चाहियें। ताकि एक ओरसे विशुद्ध वायु भीतर प्रवेश पासके तथा दूसरी ओरसे अशुद्ध वायुको बाहर निकल जानेके लिये मार्ग मिलता रहे। कमरेकी पर्दानशीनी (Privacy) रखनेके लिये उसका सृजन ७।८ फुट की ऊचाई पर करने तथा उनमें लोहेके छड या जाली जडनेसे ही काम चल जाता है। प्रकाशकी दृष्टिसे नहीं तो वायुकी दृष्टिसे तो अवश्यही भवनकी अन्तर्गत दीवालोंमे भी खिड किया होनी चाहियें। भवनमें सम्पूर्ण खिडकियोंका सृजन इस प्रकार हो कि, उसकी एक दीवालकी खिडकीसे घुसी हुई स्वच्छ वायु भीतर आतेही वह क्रमिक रूपसे अन्यान्य कमरोंमें घुसकर अन्तिम दीवालसे भवनक पार हो जाय।

वायुके प्रति सहस्र भागमें ४ भाग कर्ब वायु (Carbonic acid gas) का सम्मिश्रण होता है। इसका प्रमाण छ तक होनेमे तो कोई विशेष आपत्ति नहीं। किन्तु इससे अधिक बढनेसे वायु दूषित हो जाती है। मनुष्य विश्रान्तिके समय साधारण तथा प्रति घण्टे ० ६ घन फुट 'कर्ब वायु' श्वासोच्छ्वासके साथ बाहर छोडा करता है। अतिरिक्त इसके सुल्गी हुई बीड़ी-सिगरेट अथवा जलते दीपकसे भी कर्ब वायु निकलती और स्वच्छ वायु दूषित कर देती है। इसका सामान्य प्रमाण यह है—

१	एक जलता कन्दील	=	१ मनुष्य
२	एक टेबुल लम्प	=	१॥ "
३	एक मोमबत्ती	=	आधा "
४	एक ग्यासकी बत्ती	=	३ "

बिजलीके दीपकसे वायू दूषित नहीं होती।

यदि स्वच्छवायु भीतर पहुँचने तथा अशुद्ध वायु बाहर निकलनेका कोई उपयुक्त साधन न हो तो कमरेकी वायु निरुपयोगी होनेमें देर नहीं लगती। इसके अतिरिक्त एक और भयङ्कर सङ्कट यह उपस्थित होता है कि, ऐसे स्थानों पर श्वासोश्वास के साथ क्षय जतुओंका प्रसार चपलताके साथ होता है। यदि किसी कमरेम इस सकामक रोगसे आक्रान्त मनुष्य सोया हो और वहाँ वायुको क्रीडा करनेके लिये पर्य्याप्त स्थान न हो तो श्वासोश्वासके साथ अन्य निरोगी मनुष्योंके पेटमें इस रोगके जन्तु प्रवेश करनेका भय रहता है। अत भवन निर्म्माताका पहिला ध्यान भवनमे भरपूर वायु मिलनेकी ओर रहना चाहिये। इस विषयपर सूक्ष्म रूपसे विचार करनेपर स्थूल मानसे हिसाब लगाते हुए यह निर्णय दिया जा सकता है कि, कमरेका जितना क्षेत्रफलहो उसका दसवाँ हिस्सा तो अवश्यही खिडकियोंके निर्म्माणमें व्यय कर देना चाहिये।

ऑफिस रूम या काम काजके कमरेमें १॥ फूटकी ऊँचाईपर खिडकियोंकी सतह रखनेसे टेबुलका शिरोभाग ठीक खिडकीके समान्तर होता एवम् उसपर यथेष्ट प्रकाश पडता है।

सरक्षणकी दृष्टिसे खिडकियोंकी चौखटोंम जो लोहेके छड जडे जाते हैं उनकी मोटाई प्राय ½ इञ्च होती है। खिडकी की लम्बाई अधिक होनेसे यदि उनके झुक जानेकी सम्भावना हो तो

खिडकीके मध्यवर्तीय भागमे एक—दो सूत मोटी तथा डेढ़ इञ्च चौडी लोहेकी तख्ती (पट्टी) जड दी जाती है। इस तख्तीके दोनों छोर चौखटके उत्तर-दक्षिणस्थ दोना डण्डोंमें खाँचे बनाकर जड दिये जाते हैं। उसमें स्थान-स्थान पर प्रमाणपूर्ण दूरी रखते हुए छडोंके आकारके छिद्र बने रहते हैं। ऊँची खिडकियोंमें लगनेवाले छडोंके झुकावको रोकनेके हेतु उनके मध्यमे भी इस प्रकारकी तख्ती जड देने तथा उसमें बने हुए छिद्रोंमेंसे एक-एक गजको निकालकर उनके दोनों छोर क्रमशः चौखटकी ऊपरी और निचली बाँहमें जड देनेसे पूरा मजबूत जङ्गला तैय्यार हो जाता है।

दीवालमें बनी हुई पुरानी एवम् जङ्गले रहित खिडकियोंमें यदि छड बैठानेका विचार हो तो ऐसी परिस्थितिमें चौखटकी सतहगत बाँहमें गहरे छेद बनाकर उन्हें उनमें बैठा दिया जाता है। बाँहमें सम्यक्रूपसे कसनेके हेतु छडोंको हाथसे ऊपर उठाकर उनके निचले छिद्रोंमें बारीक बालू ठूँस दी जाती आर उन्हें नीचे उतार कर मजबूतीसे बैठा दिया जाता है।

खिडकियोंकी सतह कितनीही ऊँची क्यों न हो,—उनके नीचे जमीनकी सतहसे लेकर उनकी चोडाई तक एक-एक अल्मारी (भण्डारिया) ताखा बनाते हुए उसमें एक या दो तख्ते जब दिये जाँय तो छोटा-मोटा सामान रखनेके लिये एक अच्छासा साधन उपलब्ध हो जाता है।

सतहमें शहाबादी फर्शी या लकडीका तख्ता जडनेसे सतह साफ-सुथरी रहती है। इसके स्थानपर कहीं-कहीं गिलावेकी मोटाई हिसाबमें लेते हुए दीवालके समानान्तर भीतरी कोरमें 'गोलची'का विधान होता है। यदि यह भी न किया जाय तो गिलावेकी कोरें नित्यशः टूटती-फूटती रहतीं और देखनेम बुरी मालूम होती है। उन्हें पुन दुरुस्त करना असम्भव हो जाता है।

आफिसरूम या काम काजके कमरेमें बनी हुई खिडकीके सतह गत भागमें यदि फर्शी के स्थान पर लकडीका तख्ता जडा हो तो उसके कमरेके भीतरी भागमें ९ से १२ इञ्च तक चौडे तख्तेका एक और जोड दे दिया जाय और उनकी सन्धियाँ थिजागरियोंसे कस दी जाय तो वह एक तहदार(Folding) टेबुलसा तैय्यार हो जाता है। खिडकीकी सतहके नीचे, कमरेकी दीवालके अन्दरुनी भागमें, खिडकीकी चौडाईके दोनों छोरों पर दो शलाका पकड' जड देने तथा मयुक्त तख्तेके पृष्ठ भागम उनके सन्धियोंको देखते हुए उतनीही दूरी पर दो कुण्डे लगा देनेसे तख्ता फैलाकर उसके पृष्ठ भागमे लगे हुए कुण्डोंम वह शलाकाए डाल दी जा सकतीं और उनके आधार पर तख्ता बखूबी रहकर टेबुलका काम दे सकता है। देखिये आकृति सख्या २०।
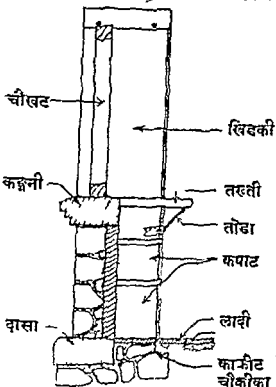
चौखट
खिडकी
कङ्गनी
तख्ती
तोडा
कपाट
दासा
लादी
कांक्रीट चौकीका भीतरी छोर

आकृति नंबर २०

खिडकियोंके आकारका विचार प्रत्येक मनुष्यकी रुचिपर निर्भर है। तथापि सर्व्व साधारण दृष्टिसे विचार करनेपर ९'×९', ११॥×४ आकारकी खिडकियाँ सन्तोषजनक कही जा सकती हैं।

जिनके ऊपर कलमदान उर्फ वातमार्ग हो उनका आकार २×३॥′ ३॥′५×३′×५॥′ उपयुक्त जँचता है। इस सम्बन्धमें एक बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि, यदि खिडकीकी चौडाई उसके भीतरी दीवालकी चौडाईकी अपेक्षा दुगुनी हो तो उसके पल्ले दीवालके बाहर निकलनेसे कोई बाधा उपस्थित नहीं होती। ३॥-३ या इससे अधिक फुट चौडाईकी खिडकियोंके पल्ले (१) बाहरकी ओर जडकर उनमें परदार बिजागरियाँ (Parliamentary hinges) जडना श्रेयस्कर होता है। (२) पल्ले यदि भीतर जडने हों तो वह तीन या चार ठीक होते हैं। तीन होनेसे एक मध्यमें तथा दो अगल-बगल रहने चाहिये। चार होनेसे चौखटके मध्यभागमें खडा डण्डा जड दे अथवा तहदार पल्ले बनाये।

जिस दिशाकी ओरसे पानी आता हो उस दिशाकी ओरकी खिडकियोंके पल्ले यदि बाहरकी ओरसे जडे हों तो पानी कमरेके भीतर पहुचनेकी गुञ्जाइश नहीं रहती।

खिडकियाँ, दरवाजोंकी चौखटें और पल्ले

दरवाजें तथा खिडकियोंमें लगनेवाले पल्लोंके निम्नलिखित प्रकार है —

(१) सादे (२) चद्दरदार (Panelled), (३) जिलोदार चद्दरके (Glazed), (४) झिलमिलीदार (Venetian), (५) नकली चद्दरके

(१) सादे पल्लोंके लिये दुमुँहे कँटिये अथवा जीभी युक्त खाँचों (Tongued & grooved) की सहायतासे खडी तख्तियोंको परस्परमें जोड लिया जाता तथा तीन आडी पुस्तियोंकी कोरोंमें चाँप देकर उन्हें पेंचकसी कांटोंसे जड दिया जाता है। एक पल्लेपर जो खडी तख्ती बैठती है उसे 'बिनी', ... । इस प्रकारके पल्ले

नर-मादियाँ अथवा लोहेकी ३ इञ्ची बिजागरियोंकी सहायतासे चौखटमें जड देते है। आधार, पकड, सिकडी, कोढ्डे, बोल्ट प्रभृति उपकरण लाह-निर्मित होते और तैय्यार मिलते है।

(२) पॅनेल अर्थात् हिस्सा-खण्ड। पॅनेलके दरवाजोंमें प्राय दो पल्ले होते है। प्रति पल्लेकी ऊंचाईमें दो अथवा तीन तथा चौडाईमें एक अथवा दो खण्ड होते हैं। पॅनिलके लिये १॥ इञ्च मोटी तथा ४ इञ्च चौडाईकी सागवानी लकडीकी चौखटें बनाकर उनके अन्तर्गत् भागमें खाँचे बनाते हुए उनमें पॅनेलकी तख्तिया जड देते हैं। यदि इन तख्तियोंकी चोडाइ अधिक हो तो खडा जोड देकर दो तख्तियोंकी सहायतासे उनका सृजन होता है। इनका मध्य भाग सम्यक् रूपसे मोटा रखा जाता तथा किनारे उतारदार बनाते हुए चौखटको कुछ उखाड कर उसकी बाटोंके खाँचोंमें उन्हें बैठाते हुए चौखटमें जड दिया जाता है। इस प्रकारके पल्ले प्राय पीतलकी बिजागरियोंकी सहायतासे चौखटमें जड दिये जाते हैं। तथा पकड-बोल्ट कील प्रभृति उपकरण भी अधिकतया पीतलहीके व्यवहृत होते हैं।

(३) काँचकी पॅनिलके पल्ले अधिकांश रूपसे काँचकी चद्दर जडकर अथवा ऊपरके अर्द्धभागमें काँचकी चद्दर तथा शेष निचले भागमें लकडीकी तख्तिया जडकर तैय्यार होते है। काँचकी चद्दर जडनेके लिये १। से १॥ इञ्च तक के चौकोर रिपोंके खडे डण्डे ४"×१॥" नापकी लकडीकी चौखटोंमें जडे जाते है। इन डण्डोंमे रङ्गबिरङ्गी काँच बैठानेके लिये भीतरकी ओर गुनियामें दाँते-खाँचे की जाती हैं। डण्डोंकी बाहरी कोरोंमें गोल चियोंका निर्म्माण होता है। काँच जडनेके पश्चात् भीतरकी ओर 'स्क्रू' से सागवान की बारीक पट्टी जड देते है अथवा पर्कट" (Tacks) देकर उन्हें घसकनेसे रोकनेक हेतु ऊपर 'पुटीन' लगा दिया जाता है।

(४) यदि झिलमिलीदार पल्लोंके दरवाजे हों तो नीचेके आधे भागमें पॅनेल तथा ऊपरके आधे भागमें झिलमिलीका खण्ड बनाते हैं। पॅनेलके पल्लोंको बनानेका जो विधान है, उसीके अनुसार लकडीकी ४"×१॥" आकारकी चौखट खडीकर डण्डोंमें भीतरकी ओरसे गोल छेदकर दिये जाते हैं। पश्चात् उसमें झिलमिलीके पत्तोंकी गोल नोकें बैठा दी जाती हैं। झिलमिलीके पत्ते साधारणतया ३॥ से ४ इञ्च चौडे तथा १ सूत मोटे होते हैं। इस स्थानमें वे इस प्रकार जडे जाते हैं ताकि उनकी आधी चौडाई एक दूसरे पर चढ़ बैठे। उनका मध्यवर्त्तीय भाग मोटा रखते हुए भीतरी और बाहरी किनारे उतारदार और पतले बनाये जाते हैं। मध्य भागमें भीतरी ओरसे पीतलकी बिजागरियाँ जड कर अथवा उनमें छिद्र बनाते हुए पीतलकी तार पिरोकर उससे एक खडे डण्डेको जड दिया जाता है। यह डण्डा नीचे खींचतेही झिलमिलीके पत्ते खुल जाते तथा ऊपर करनेसे बन्द हो जाते हैं। इस प्रकारके पल्ले रेलकी खिडकियोंमें विशेष रूपसे देखे जा सकते हैं।

(५) बनावटी पैनेलके पल्ले—यह ४ इञ्च चौडी तथा आधा इञ्च मोटी मलाबारी सागवान की तख्तियोंको खडी जोडकर उनपर 'स्क्रू' से जडे जाते है। तख्तियोंकी चौखटें, नोक और खाँचे बनाकर नहीं निर्माण होतीं अपितु वैसा करनेका आभास मात्र दिखलाया जाता है।

छावन

ऊपरी भार सम्हालनेके लिये दरवाजे अथवा खिड़कियोंकी चौखटोंपर कमान या छावन डाले जाते हैं। कमानोंमें प्रमुखतया ४ प्रकार हैं। जिनका विस्तृत विवरण आगे चलकर विस्तृत रूपसे दिया जायगा।

छावनके जो प्रकार निरन्तर व्यवहारमें आते हैं,—वे चार हैं। (१) पत्थरकी (२) लकड़ीकी (३) पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीटकी, तथा (४) पुनर्दृढीभूत ईंटोंकी।

(१) इनमेंसे पत्थरकी छावनें अधिकांश रूपसे पुराने भवनोंकी ऊपरी चौखटोंपर जडी हुई मिलती हैं। उनका भार, गढ़ाईका खर्च तथा इतने लम्बे पत्थरोंकी दुष्प्राप्तिको देखते हुए आजकल इनका प्रयोग बहुतही न्यून होता है। (२) लकड़ीकी छावनें व्यवहारान्वित करनेके लिये उनका कमसे कम ३।४ इञ्च मोटा होना आवश्यक है। कम मोटाईकी छावनें प्रयोगमें लानेसे व ऊपरी भारके कारण झुक जातीं तथा उनमें व्यय भी अधिक होता है। इसके अतिरिक्त इस प्रकारकी छावन दीवाल की मोटाईके बराबर चौडी न होनेके कारण उनके बीचमें दरारें रह जातीं तथा विशेषत: मिट्टीकी दीवालें होनेसे उन दराजोंसे मिट्टी निकलने लगती है और उनमें घुन-दीमक आदि लगने और अग्निसे जलनेका भय रहता है। आजकल अधिकाश रूपसे पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीटकाही अधिक व्यवहार हो रहा है। इस सम्बन्धमें आगे चलकर पुनर्दृढीभूत कांक्रीट शीर्षक प्रकरणमें विस्तृत उहापोह किया गया है। (देखिये आकृति ११,११,
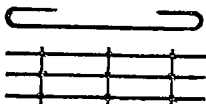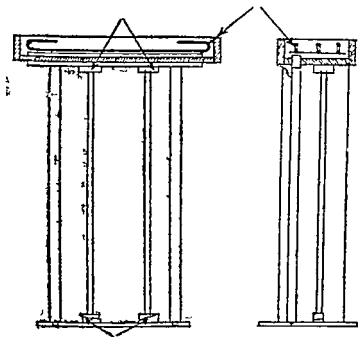
आकृति न २१, २२, २३, २४

१३ १४, पुनर्हटीभूत ईंट की छावने अभीतक विशेष रूपसे व्यवहारमें नहीं आयी है। तथापि स्थपतिवर्गने इस नवीन आविष्कृत साधनसे जो कुछ भी थोडा-बहुत काम निकाला है उसे देखते हुए यह कहा जा सकता है कि, उनकी निर्माण पद्धति अत्यन्त सरल

होते हुए वे चलनेमें अत्यन्त मजबूत और किफायत दामम पड़ती हैं। इनम सबसे भारी विशेषता यह है कि, इनके लिये पुनर्दृढीभूत कांक्रीटकी तरह फर्मेंका प्रयोग नहीं करना पड़ता वरन् केवल तलेकी तख्ती जड़ देनेसेही काम चल जाता है। इसके अतिरिक्त इनमें सबसे उल्लेखनीय बात यह रहती है कि इनके व्यवहार करने पर दृढीभूत सिमेण्ट कॉंक्रीटकी छावनकी तरह इनके सङ्कुचित होनेकी अवधितक काम रोककर नहीं बैठे रहना पड़ता। इनका विधान इस प्रकार है —

जिस प्रकार पुनर्दृढीभूत कांक्रीटके लिये पेन्देमें एक तख्ती जड़ी जाती है उसी प्रकार इस प्रकारकी छावनके नीचेभी एक तख्ती जड़कर अगल-बगल दीवाल उठाते हुए जहाँ छावनी करनीहो वहाँ दोनों ओरका काम मिलावेसे पूराकर लम्बाईका अन्तर खुला छोड़ दिया जाता है। पश्चात् तख्तीपर दोनों ओर आड़ी ईंटें रची जाती है। दो ईंटोंके बीचमें प्रायः पौन इञ्चका स्थान सन्धिके हेतु छोड़ दिया जाता है। इस कार्यके प्रीत्यर्थ व्यवहृत होनेवाले ईंटे,—चुनेके पानीसे भींगे हुए तथा गुनियेम रखने चाहिये। तदुपरान्त आरम्भ की तरह प्राय सवा इञ्चके अन्तरपर ईंटोंकी दूसरी पक्ति बैठाना आरम्भ कर दे। इस प्रकारकी पक्तियां प्राय डेढ फुटकी चौड़ी दीवालमें पांच होती है,तथा प्रत्येकमें प्राय १। इञ्चके प्रमाणमें ४,सन्धियां रहती हैं। सन्धियोंमें पहिले ४:१:१ प्रमाणमें एक इञ्चकी मोटाईका सिमेण्ट कांकीटका गाला भरकर ऊपरसे कच्ची ठोक दे। तदुपरान्त प्रत्येक आड़ी सन्धिमें उक्त वर्णित प्रकारसे अग्रभाग झुकाया हुआ लोहेका एक-एक छड़ देकर ऊपरसे कुछ और सिमेण्ट कांक्रीट डालते हुए उसे कोने-कतरे तक पहुँचावे और लकड़ीसे ठाकना आरम्भ करदे। ठोकते समय अगल-बगल की ईंटोंको हाथसे सम्हाल रखना चाहिये। ताकि वह पिटाईके समय घसक न जांय। इस प्रकार ऊपर तक जुड़ाइकर कांक्रीटकी गीली दशामेंही ऊपर ईंट और गिलावेका जुड़ाऊ काम करता रहे तथा १०।१२ दिनतक उसकी बराबर तराई

करता रहे। ५।६ दिनके उपरान्त सतहगत् तख्ती निकालनेमें कोई आपत्ति नहीं है।

इसीमें थोडा सुधारकर नीचेकी तख्तीपर एक इञ्च मोटाईका सिमेण्ट कांक्रीटका स्तर फैलाते हुए उसपर बन्दोंसे बन्धा हुआ छडोंका जङ्गला इस प्रकार रखदे कि, उसपर ईटोंकी जुडाई करनेसे उसके सारे छड तदनुपङ्क्तिक सन्धियोंमें समा जायें। जङ्गलेकी बन्धाई इस प्रकार करनी चाहिये कि, उसका प्रत्येक छड ईटोंकी जुडाई करते समय उनकी दो-दो पङ्क्तियोंके मध्यमें आसके। इस प्रकारकी छावन और सिमेण्ट कांक्रीटकी छावनमें भेद इतनाही है कि, इसमें कांक्रीटके स्थानपर ईटोंका व्यवहार होता है। किन्तु तुलनात्मक दृष्टिसे दोनोंके वैशिष्ट्यपर विचार करनेपर इसमें एक बात विशेष यह पायी जाती है कि इसकी छावनीमें फर्मोंकी आवश्यकता नहीं होती तथा छावनीके सूखने तक काम रोक कर भी नहीं रखना पडता। सिमेण्ट कांक्रीटका स्थान ईटोंसे पूर्ण हो जानेके कारण निसर्गतयाही उसमें अत्यधिक आर्थिक बचत होती है। सिमेण्ट कांक्रीट ईटोंसे अधिक महँगा पडता है।

छावनियोंके समस्त प्रकारोंमें समथल कमानें सबसे सस्ती और कार्यके लिये सुलभ होती हैं। तदुपरान्त दूसरा नम्बर आता है पुनर्दृढीभूत ईटोंकी छावनियोंका। तीसरा नम्बर पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीटका होता है और चौथे नम्बरमें किञ्चित् गोल अथवा अर्द्धगोल कमानोंकी छावन आती है। अन्तिम नम्बर लकडीकी छावनियोंका होता है।

छावनियोंकी लम्बाई इतनी होनी चाहिये कि, उन्हें दोनों ओर की दीवालोंपर कमसे कम ६ इञ्चका आधार तो अवश्यही मिल सके। नौ इञ्चका आधार मिलनेसे बहुतही बढिया बात होती है।

खिडकी-दरवाजे प्रभृतिके गालेकी लम्बाई देखते हुए छावन तथा छडोंकी मोटाई निर्धारित करनेके हेतु निम्न सारिणी दी गयी है —

अल्मारियाँ

दीवालोंमें अल्मारियाँ रखनेसे खर्चमें थोडी बहुत वृद्धि तो अवश्य होती है किन्तु इस थोडेसे अतिरिक्त व्ययसे आराम और सुभीता भी बहुत होता है। इनके निर्माणसे कितनाही गार्हस्थिक फुटकर सामान व्यवस्थित रूपसे रखा जाता और तन्निमित्त भवनका अधिकांश भाग खर्च होनेसे बच जाता है। इसके अतिरिक्त तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करने पर दीवालकी अल्मारियाँ स्वतन्त्र अल्मारियोंसे कहीं अधिक सस्ती पडतीं और सूक्ष्ममें भवनके इतर स्थानकी बचत हो जाती है। साधारणत दीवालकी अल्मारियोंकी जनसाधारण लागतका प्रमाण प्रति अल्मारीके पीछे १५।२० रुपये तक पडता है। किन्तु यदि वहाँ स्वतन्त्र अल्मारीकी व्यवस्था की जाय तो उसमे प्रति अल्मारीके पीछे ४०।५० रुपये लागत बैठती है। ऊपरसे भवनकी अतिरिक्त जगह खर्च होती है, वह अलग। सर क्षणकी दृष्टिसे विचार करनेपर बाहरी दीवालोंकी अपेक्षा मध्य-वर्त्तीय दीवालोंमें अल्मारियोंका सृजन करना विशेष श्रेयस्कर होता है। यदि ईंटोंकी दीवालें १४ इञ्चकी हों तो गिलावेकी मोटाइ-को लेते हुए पिछली ५॥ इञ्चकी पड्दी घटा देनेसे अल्मारीमे ८॥ इञ्च ही रह जाते है। सामान रखनेके निमित्त इतनी गहराई नितान्त न्यून है। अत ताखोंके प्रीत्यर्थ दीवालोंकी रचना करते समयही उनमें तख्तिया जडी जातीं तथा अन्तमें चौखटे बनाकर 'स्क्रूकी सहायतासे उन्हें अल्मारियोंमें जडने तथा पट्टे आदि लगा देनेसे अल्मारियोंके कोठेमें १ से १॥ इञ्च तककी वृद्धि की जा सकती है। किन्तु वैसी परिस्थितिमें गिलावेके महत्वको स्थिर रखनेके विचार से दीवालके बाहर उसकी मोटाईके बराबर तख्तियां निकालनी चाहिये। अथवा पहिले चौखट तय्यार करते समयही जिस स्थानपर

ताखे या दराज रखने हों उस अन्तरपर उसकी बाहोंमें वर्द्धित कोण लेते हुए उनमें डण्डे जड दे। यह डण्डे गिलावेके महत्वको स्थायी रखते हुए पौन इञ्चसे एक इञ्च तक बाहर निकले हुए होन चाहियें तथा उनकी जड़ाई भी दीवालके निर्म्माण कालमेंही होनी चाहिये । चौखट भी जडी जाय तो वह प्राय आधेसे पौन इञ्च तक दीवालमें घुसी हुई तथा शेष बाहर निकली हुई रहे। आगे दोनों डण्डोंके शिरो भागपर दराजोंके मापकी सन्तियों जड़ कर उनका शेष भाग काट डालना चाहिये। ताकि वह यथा समय बाहर निकालकर सम्यक् रूपसे साफ की जा सके। दीवालमें बन्धाऊ कामके समयही लकडीके लट्टे जड़कर उनमें लकड़ीके कङ्गूरों (Cornice) की चौखट जड़नेसे भी काम निकल सकता है।

मध्यवर्त्तीय पत्थरकी दीवालोंमे बनी हुई अल्मारियोंके पार्श्व वर्तीय भागमे ईटोंका जुड़ाऊ काम होनेसे एक फुटके ऊपर कोठा पाया जाता तथा ईटोंकी जुड़ाई गिलावेके भीतर ढँक जाती है। किन्तु वही यदि वह बाहरकी दीवाल हों तो ईटोंकी जुड़ाई करना असम्भव हो जाता है। ऐसा करनेसे एक तो वह बदसूरत मालूम होता है, दूसरे पत्थरकी पड़वी (तल्ली) डाल्नेसे वह ५ इञ्चसे अधिक मोटी नहीं डाली जा सकती और न वह मजबूत ही होती है। उसके लिये दीवालकी मोटाई कमसे कम ९ इञ्च होना अनिवार्य है । किन्तु तब कोठा अत्यन्त थोटा रह जाता है । अत ५-५॥ इञ्ची नाटे दुमालेके पत्थर की पड़्वी डालकर उसके पीछे प्राय १॥ इञ्च मोटाईकी अखण्ड शाहाबादी लाद्यी खडी जमा देनी चाहिये। ताकि पीछेकी दीवाल भयहीन एवम् मजबूत होते हुए उसे अधिक कोठा मिल सके। फरशीकी जगह (Expanded metal) वर्द्धित धातुकी जाली विछाकर उसपर सिमेण्टका गिलावा करनेसे भी काम चल जाता है। किन्तु उसमें लागत अधिक बैठती है।

कोयले अनाजके पात्र इत्यादि रखनेके लिये बने हुए गुदाम भण्डारा, भोजनगृह, रसोई घर प्रभृति कमरोंमें प्राय डेढ फुट गहराई की अल्मारी जमीनके नीचे निर्म्माण करनेसे विशेष सुविधा हो सकती है। इन अलमारियोके चौखट एवम् पल्ले जमीनके, समानान्तर रखनेसे जगहमें किञ्चित् भी सकुचित भाव नहीं आता। ऐसी अल्मारिया कोनेमें बनाकर, वायुके लिये दीवालके भीतरसे एकाध चीनी मिट्टी की ६ इञ्ची नालिका निकाल देने तथा उसके दोनों अग्र भागोंपर जाली जड़ देनेसे उसके भीतर मकडीका छत्ता-जाला आदि लगनेका भय नहीं रहता और अल्मारीमे निरन्तर वायु खेलती रहनेसे उसमें रखे हुए पदार्थ सडने नहीं पाते। इस प्रकारकी अल्मारियोंकी सतहपर चूनेका गिलावा या शाहाबादी फर्शबन्दी करनेसे गल्ला खुला भी रखा जा सकता है। इनका आकार अधिकसे अधिक तीन फुट चौड़ा होना चाहिये। अधिक चौडा होनेसे ऊपरकी तख्तियाँ झुक जाती हैं। अलमारियोंकी सतह बाहरकी जमीनपर कमसे ६ इञ्च तो अवश्यही हों।

खिडकी और दरवाजोकी छावनियाँ एकही ऊचाइपर रहनेसे विशेष सुन्दर दिखलायी देती है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि, वैसा करना अनिवार्यही है। तथापि जहाँ तक सम्भवनीय हो वहाँ तक बाह्यगत् दीवालके चौखटके ऊपरकी छावनियाँ,-विशेषतया एक दिशाकी सब;-एकही ऊँचाई पर लानेका प्रयत्न करना चाहिये। ताकि भवनका दर्शनी दृश्य नयनमनोहर प्रतीत हो। यदा कदाचित् खिडकियोंके छावनियोंका शिरोभाग दरवाजोके छावनियोंके ऊपर न भी पहुँच सके तो भी एक प्रकारसे चल सकता है।

सामान्य सुविधाएँ

तदुपरान्त यदि खूंटियोंकी आवश्यकता हो तो उन्हें तथा कर्णरेषाके भीतर कोणमें तिर्छी तख्तियाँ (Corner Shelf) या शाहाबादी फर्शियोंके टुकडे जड़ दे । खूंटीके शिरोभागपर पीछेकी ओर एक ९ इञ्च लम्बाईकी लकडीकी 'रीफ' को कांटे जड़ कर जड़ देनेसे खूंटीके उखडनेका भय नहीं रहता। खूटियाँ सदा दीवालमें थोडी ऊपर चढाकर जडनी चाहियें। ताकि उनकी धुण्डिया पेन्देसे प्राय आधे इञ्चकी ऊचाईपर रहें। कोणस्थ तख्तियोंका उपयोग दीपक-फूलदान (Flower Pots) इत्यादि रखनेमें होता हे। एक कमरेसे दूसरे कमरेमे वायुसँचार करानेके निमित्त जिन छोटी छोटी खिडकियोंका सृजन होता है, वह दीवालकी चौसरके नीचे होनी चाहियें । जिन कमरोंमें बिजली अथवा वस्त्रादि सुखानेके निमित्त तार जडने की आवश्यकता हो उन कमरोंमें दीवालकी चौसरके प्राय' ९ इञ्च नीचे लकडीके मोटे टुकड़े काट कर प्राय' ३।३ फुटके अन्तरपर जड़ दे। दीवालोंमेंसे बिजलीकी तारें ले जानेके लिये दीवालमे इसी ऊचाइपर लोहेकी आध इञ्ची नलिकाओंके दीवालकीही मोटाईके लम्बे टुकड़े जड दे। इस प्रकारकी व्यवस्था आरम्भहीमे न करनेसे आगे चलकर दरवाजोंकी चौखटोंमे छिद्र करने पडते तथा उनमेंसे उन्हें ले जाना पड़ता है। इस उल्टी कार्यवाहीसे बिजलीकी तार भी अधिक खर्च होती है। उक्त विवरणमें आये हुए लकडीके टुकडे कमाऊ लकड़ी या सागवानके अच्छे होते हैं। इनको प्राय गोलाकार काटकर दीवालमे जड़ा जाता है। किन्तु तात्विक दृष्टिसे विचार करनेपर ऐसा करना भारी भूल है । ये शीत वायुमें फूल उठते तथा ऊष्ण वायुमें अत्यधिक रूपसे सङ्कुचित होते रहते हैं। परिणाम यह होता है कि, उनके समीपवर्तीय गिलावेका भाग फटने लगता है। इसके अतिरिक्त लकडीके गोल टुकडे दीवालोंमे अच्छी तरह जमते भी नहीं। अत इस परिस्थिति

में घरुकाममे निरुपयोगी होकर पडे हुए कमाऊ और कटे हुए लकड़ीके टुकडोंका उपयोग इन कार्य्योंमें बखूबी हो सकता है। ईंटोंके जुड़ाऊ काममें ईंटकी ही मोटाईके बराबर मोटे टुकड़ोंका प्रयोग होना चाहिये। वे अपने स्थानसे खसकने न पायें इस विचार से उनपर आडी लकड़ीकी रीफ जडकर, गिलावेका दूसरा हाथ देतेही उन्हें दीवालके समथल काट दे। इनके लम्बाकार छूट जानेसे अत्यन्त भद्दापन मालूम होता है और बादमें काटे जानेपर गिलावेमे हानि पहुँचती है। किन्तु फिर भी इनका प्रमाण विरहित काटा जाना भी अत्यन्त बुरा होता है। क्योंकि उससे एक तो वे गिलावेमे छिप जाते हैं दूसरे उन्हें पुन खोजनेका प्रयत्न करने पर कतिपय स्थानोंके गिलावेमें काँटोंसे छिद्र बनाने पडते हैं।

चित्रादि टाँगनेके हेतु कड्डनियाँ जड़नेके लिये जो काष्ठखण्ड व्यवहारमें लाये है वे दरवाजोंकी छावनियोंपर प्राय ६ से ९ इञ्चके ऊपर तथा यदि कमानें हों तो ऐसी दशामें उन्हींके शिरो भागपर जड़ देने चाहिये।

दो मञ्जिला अथवा चौपाखेके छप्परका भवन हो तो दीवालकी चौसरके नीचे तथा नाटा भवन होनेसे चौसरके ऊपर त्रिकोणाकृति स्थितिमें खपडेकी नलिकाएं बाह्यगत दीवालमे जड देनी चाहिये।

पडदियाँ

पडदियोंके सृजनका मूल उद्देश्य बड़े-बड़े कमरोंको छोटे-छोटे कमरोंमें विभाजित कर देना है। उनपर भवनका वस्तुत भार कोई भी नहीं पडता। अत यह स्पष्ट है कि, वह जहाँतक सम्भव हो वहाँतक कम मोटाईकी और मजबूत होनी चाहियें। किन्तु पत्थर-ईंट-चूना प्रभृति सामान ध्वनिवाहक होनेके कारण उनकी पड़दियाँ नितान्त पतली होनेसे एक कमरेकी ध्वनि दूसरे कमरेमें गुञ्जारित हो जाती है।

पडदियोंके प्रकारः—

स्थापत्यशास्त्रमें पड़दियोंके निम्नलिखित प्रकार हैं —

(१) गिलावेमें पक्की ईटोंका ४॥ इञ्ची मोटा जुड़ाऊ काम कर दो खम्भोंके बीचमें लकड़ीके दासे जड़ते हुए उन्हें खडी करना। (Brick-nogging)

(२) ईंटोंके सिमेण्टम पुनर्दृढीभूत बन्धाऊ (Reinforced Brick work) काम करना।

(३) धातुकी जालीके (Expanded Metal) जालीके दोनों और सिमेण्टका गिलावा देकर अथवा पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीट (Reinforced cement concrete) से उन्हें तैयार करना।

(४) बाँसकी फाडियोंकी कमाली जाली, अथवा चिम्मड-और न गलनेवाली लकडीके फ़ुन्टोंपर गिलावा कर उनका सृजन करना।

(५) पनालीदार चद्दरें खड़ी करना।

(६) प्लायवुड नामक लकडीके तख्तोंको खड़े जड़ना।

(७) शलाकादी छाद्री की।

(८) सिमेण्ट तथा अस्बेस्टासके तख्तोंकी ।

आकृति २५।२६
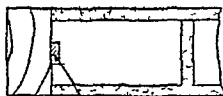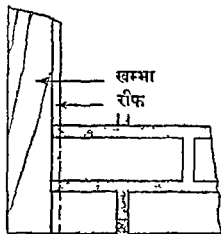
पडदियोंके काममें ईंटोंका उपयोग अत्यधिक होता है। क्योंकि उसमें ४॥ इञ्चसे लेकर चाहे जिस मोटाईकी पड दियोंका निर्म्माण किया जा सकता है। पत्थरकी पड़दि-योंमें यह सुविधा नहीं होती। ईंटोंकी ४॥ इञ्च मोटाईकी पडदी लकडीके खम्भे अथवा उसी प्रकारके अन्य-आधा रके बिना भली भाँति मजबूत नहीं होती। ये खम्भे अधि कसे अधिक ५ फुटके अन्तर पर ठीक रहते है। खम्भोंमें खाँचे बनाकर उनके बीचमें दो से तीन फुटके अन्तर पर उनमें काँटोंकी सहायतासे आडे वासे जड देने चाहिये। यदि पडदीकी मोटाई ३ इञ्च हो तो वह गिलावे सहित ४॥ इञ्च मोटी हो जाती है और ४॥ इञ्च मोटी रहनेसे गिलावे सहित उसकी मोटाई ६ इञ्च हो जाती है। इसका मूल कारण पहिली कियामें ईंटे आडे रखकर तथा दूसरीमें उन्हें समथल रखकर जुडाई की जाती है। इसी लिये इन पडदियोंके बीचमें५।६फुटके अन्तरपर खडे किये जानेवाले खम्भे अनुक्रमसे ४॥ × ३ तथा ६ × ४" के होने चाहिये। कभी कभी यह परिमाण ४॥" × २॥ तथा ६ × ३ भी चल सकता है। ५ कियामें विशेषत ध्यानमें रखने योग्य बात यह है कि,पडदीकी मोटाई

और यह नाप एक रखना चाहिये। फिर भी कभी-कभी इस कार्यमें सम्पूर्ण गालेको धक्का लगकर सारा बन्धाऊ काम बिखर जाता है। क्यों!—इसीलिये कि, उसके भीतर व्यवहृत होनेवाली लकड़ीमें गिलावा भलीभांति चिपकता नहीं। अतः ऐसी परिस्थितिमें इस आघात को रोकनेका उपाय यह है कि, उन लकड़ोंके खम्भोंके मध्यभागमें १ इञ्च चौड़ी तथा आधा इञ्च मोटी सागवानी रीपें दोनों ओर खड़ी जड़ दे तथा ईंटोंका स्तर जमाते समय उस ओरके प्रत्येक ईंटेमें कन्नीकी सहायतासे उसी आकारका खांचा बनाते हुए उसमें वे रीपें बैठा दे। (देखिये आकृति १५-२६)

कहीं-कहीं एक खम्भेके शिरोभागसे दूसरेके तले तक इस प्रकारकी तिर्छी 'रीपें' जड़ी जाती हैं। वैसी परिस्थितिमें मध्य वर्तीय पासेमें कीलें जड़कर उन्हें स्थान-स्थानपर तारकी सहायता से बान्ध दिया जाता है। गिलावेमें यह रीपें छिपती हैं अवश्य तथापि इस पद्धतिसे खड़ी की गयी पड़दी उक्त प्रकारसे पुख्ता नहीं होती।

(२) पुनर्दृढ़ीभूत ईंटोंकी पड़दियाँ (Reinforced Brick work) आजकल इस प्रकारकी पड़दियाँ लकड़ीके वासोंकी जगह कपड़ेकी गाठे बान्धे जानेवाले लौह बन्धनके सदृश चिपटी लौह चद्दरोंका सिमेण्टमें जमाकर गठित की जाती है। उनके लिये ८ से १० फुट तकका गाला पर्य्याप्त हो जाता है। इस प्रकारकी रचना करते समय उक्त प्रकारसे दोनों खम्भोंके भीतरी भागमें १"×॥" इञ्चकी लकड़ीकी रीपें जड़कर नियमित रूपसे किनारेकी ईंटोंमें खांचे बनाकर उनके तीन स्तर गिलावेमें बनाने चाहिये। चौथे स्तरके लिये चूनेकी जगह सिमेण्ट तथा बारीक बालू १ : ४ प्रमाणमें सुर्खी मिलाकर पश्चात् उसमें जल छोड़ते हुए उसका गिलावा तैय्यार कर लेना चाहिये। तदुपरान्त उक्त वर्णित लोहेकी चिपटी शलाका साधारण लम्बाईकी अपेक्षा दो इञ्च अधिक लेकर उसके एक अग्रमें छिद्र बनाते हुए अग्रभागकी ओर एक-एक इञ्च

गुनियेमें घुमा दे। पश्चात् उक्त वर्णित सिमेण्ट वालूका सम्मिश्रण स्तरपर देते हुए उसपर यह शलाका रख दे और झुकाये हुए अग्रभागके छिद्रमें खम्भेके भीतर एक-एक मजबूत कील जड़ते हुए उसपर ऊपरी ईंटोंका स्तर देना आरम्भ कर दे। इस प्रकार प्रति फुटपर एक-एक चिपटी शलाका सिमेण्टमें जड़कर पड़दीका सम्पूर्ण सृजन करना चाहिये। कोई-कोई चिपटी लौह-शलाका कोई कोई चिपटी लौह शलाका की जगह तीन इञ्चका अन्तर रखकर एक एक फुटके स्तरोंमें चौथाई इञ्च मोटाईके दो छड़ बीचमें देते और गिलावेकी जगह सिमेण्टका व्यवहार कर पड़दियोंकी रचना करते हैं। खम्भोंमें प्राय एक इञ्च गहरे तथा उसी मोटाईके छिद्र बनाकर उनमें वे जड़ दिये जाते हैं। ऐसी परिस्थितिमें इस प्रकारकी पड़दियाँ उक्त वर्णित प्रकारसे कहीं अधिक मजबूत होती हैं। लकड़ीके खम्भोंकी जगहपर यदि ईंटोंके रचे हुए खम्भोंसे काम लेना हो तो उनकी रचना तथा पड़दीका सृजन साथही साथ आरम्भ कर खम्भोंके जुड़ाऊ काममें कमसे कम ६ इञ्च गहराई लेते हुए लोहेकी शलाकाएं अथवा तार वझादेने उर्फ जड़ देने चाहियें।

उक्त पड़दियोंमें एक विशेषता यह है कि, उनके भीतर दी हुई शलाका अथवा तारोंके कारण पड़दीका सारा भाग ऊपरही ऊपर खम्भे अथवा अगल-बगल की दीवालोंको भली भाँति तौल लेता है। यही कारण है कि, इस विशिष्ट श्रेणीकी पड़दियोंको (Hanging walls) झूलती हुई दीवाल कहते हैं। इनका विशेष उपयोग यह है कि नीचे दीवालका आधार न होने पर भी दुमञ्जिले पर इस प्रकारकी अनेक पड़दियोंका सृजन बिना किसी भयके सरलतापूर्वक किया जा सकता है। उससे मञ्जिलके पेन्देपर किसी प्रकारका भार पड़नेकी सम्भावना नहीं रहती।

(३) सिमेण्ट काँक्रीटकी १ से २॥ इञ्च तककी मोटाईकी पड़दियोंका सृजन करना भी सरल है। किन्तु उसके स्थैर्यार्थ अधिक तरितयोंकी आवश्यकता होनेके कारण अल्प-स्वल्प कायमें उनसे लाभ नहीं होता। बीचमें तारकी जाली खड़ीकर

दोनों ओर सरल शुनियेमें तख्तियाँ जडते हुए बीचमें सिमेण्ट कॉंक्रीट बिछाया जाता है। केवल जाली तानकर उसे खडी जडते हुए स्थान-स्थान पर 'टी ऍंगल' अथवा 'टी आयर्न' नामक बोल्टसे कसते हुए पडदियोंका सृजन करने तथा दोनों ओर सिमेण्टका गिलावा करनेसे भी पडदियाँ उत्कृष्ट श्रेणीकी तैय्यार होती हैं। किन्तु इनम लागत अधिक बैठती है।

(४) जिस स्थानपर बाँस (Bamboos) सस्ते मिलते हैं वहाँ पडदियोंके स्थानपर लकडीकी चौखट तैय्यार कर उसके गालेम बाँसके लम्बाकार चीरे हुए खण्ड एकपर एक बैठाकर उन्हें कील काँटेसे जड़ते हुए लकड़ीकी जाली (Trellis work) नुमा जड देना चाहिये। किन्तु साथमें यह ध्यान रखना आवश्यक है कि, बाँस की बाह्य त्वचाका भाग पेटेकी ओर अर्थात् भीतर की ओर रहे। क्योंकि उस ओर मिट्टी या चूना भली भाँति चिपकता नहीं। इस प्रकार भलीभाति मजबूत जाली तैय्यार होनेपर उसके ऊपर दोनो ओरसे मिट्टीके गाले या चूनेके गिलायेका पलस्तर कर दे।

(५) केवल पार्थक्य अथवा पर्दा पोशीकी दृष्टिसेही यदि पड्दीका सृजन करना हो तो वह समथल या पनालीदार लोह चद्दरोंकी सहायतासे अत्यन्त स्वल्प व्ययमें हो जाता और उसम स्थान भी कम खर्च होजाता है। सौन्दर्यकी दृष्टिसे समथल चद्दरोंकी पड़दियाँ अच्छी होती हैं।

(६) प्लायवुडके बड़े तख्ते अत्यन्त किफायतदाममें मिलते हैं। सौन्दर्यकी दृष्टिसे उनकी पड़दियाँ भी विशेष सुशोभित दिखलायी देती हैं। ये तख्ते अत्यन्त चिम्मड़ और टिकाऊ होते हैं। किन्तु जलके प्रभावके कारण ये कागजकी तरह नरम हो जाते तथा सूखनेपर झुककर टूट जाते हैं। यही कारण है कि, इनका अल्प सन्निकटस्थ स्थानोंपर व्यवहार नहीं होता। इस श्रेणीकी पडदियाँ चद्दरी पडदियोंसे भी सस्ती पडती हैं तथा लकडीपर रङ्गकी जिल्दभी अच्छी आती है।

(७) लकडीकी चौखटकी बाँह निकालकर उसमें शाहाबादी फर्श जडते हुए चारों किनारोंमें सागवानकी अर्द्धगोल रीपें बैठा कर एक प्रकारकी पडदीका सृजन होता है। इसका उपयोग जलके सन्निकटस्थ स्थानोंपर विशेष रूपसे होता है। इसके प्रीत्यर्थ स्थान कम खर्च होता तथा मजबूती रहते हुए तैल रङ्गमें रङ्गनेसे विशेष सौन्दर्यपूर्ण मालूम होता है। लकडीकी चौखट लगानेकी अपेक्षा एंगल या टी आयर्नकी चौखटें बनाकर तैल रङ्ग देते हुए उन्हें प्रयोगान्वित करनेसे प्रत्येक बातमें अधिकता आ जाती है। ऐसी पडदियोंके लिये गिलावेकी कोइ आवश्यकता न होनेके कारण व्ययभी कम होता है।

(९) उक्त प्रकारसेही किन्तु शाहाबादी फर्शकी जगह ॲस्बेस्टास और सिमेण्ट मिलाकर तख्ते बने बनाये मिलते हैं। उन्हें जडकर एक प्रकार की पडदीका निर्म्माण होता है। ये तख्तें भिन्न भिन्न रङ्गके मिलते हैं। इनसे बनी हुई पडदियाँ (प्लाइवुडकी पडदियोंको छोडकर) बहुत कुछ प्रमाणमें हल्की होती हैं। यही कारण है कि, वे खुली तथा चाहे जहाँ खसकाकर रखी जाने योग्य होती हैं। किसी बडे कमरेमें तात्कालिक कारण विशेषको देखते हुए इन्हें रखा एवम् हटाया जा सकता है।

जीना

'भवनका अन्तरङ्ग' शीर्षक लेखमें हम जीनेके सम्बन्धमें सरसरी दृष्टिसे विचार करते हुए बहुत कुछ लिख चुके हैं। अत उस सम्बन्धमें यहाँ अधिक न लिखकर हम उसकी रचना एवम् प्रकारके सम्बन्धमें ही चर्चा करेंगे।

हमने उक्त प्रकरणमें एक जगह लिखही दिया है कि, जीनेमें पैर बखूबी रखनेके लिये उसके सीढ़ियोंकी (Treads) चौडाई

कमसे कम ९ इञ्च रखना तो अत्यन्तही अनिवार्य है। तथापि साथही साथ यह भी ध्यान रखना चाहिये कि, सीढियोंकी चौडाई तथा चढाव या, उर्ध्व भागके उभार (Riser) में भी कुछ न कुछ पारस्परिक सम्बन्ध रहता है। मुख्यत: उस सम्बन्धके दो नियम है। एक तो यह कि मनुष्य यदि निसर्गत: पैर बढाये तो उसके दोनों पैरोंके बीचमें २१ इञ्चका अन्तर रहता है। दूसरे यह कि, समथल जमीनपर चलनेमें मनुष्यको जितने परिश्रम पडते हैं, उतनेही परिश्रम उसका आधा चढाव चढनेमें करने पडते हैं। इन्हीं दोनों नियमोंको देखते हुए उक्त पारस्परिक सम्बन्धकी उत्पत्ति हुई है।

नियम—१

दूना चढाव+सीढीकी चौड़ाई=२३" से २४" तक इसके अनुसार—

	चढाव इञ्च	सीढ़ी इञ्च
(१)	५	१३
(२)	५॥	१२
(३)	६	११
(४)	६॥	१०

दूसरा नियम—

सीढी × चढाव = ६६ इञ्च

इस नियमके अनुसार—

	चढाव इञ्च	सीढ़ी इञ्च
(१)	५	१३
(२)	५॥	१२
(३)	६	११
(४)	६॥	१०
(५)	७	९॥

जीनेका हिसाव

उपरोक्त दो नियमोंमें जीनेका चढ़ाव तथा सीढियोंकी चौडाई के सम्बन्धमें जो पारस्परिक सम्बन्ध बतलाया गया है, उनमेंसे किसी भी एक नियमके अनुसार अपनी इच्छानुकूल सीढियोंकी चौडाई निर्धारित करते हुए तदानुपाह्निक चढावकी योजना करे तथा देखे कि, उसमें इष्ट जीना सम्यक् रूपसे बैठता है या नहीं। इस सम्बन्धमें विशेष रूपसे समझानेके लिये नीचे दो उदाहरण दिये जाते है —

उदाहरण—१

माझिलकी ऊँचाई १० फुट=१२० इञ्च

मान लिया जाय कि, पहिले नियममें दिया हुआ तीसरा प्रमाण हमारे पसन्द है। तो ऐसी परिस्थितिमें सीढियोंकी संख्या १२०-६=२०आती हैं। किन्तु हिसाव करते समय एक सीढी कम गिनी जाती है। वह इस लिये कि, चढाईके समय हम जिस अन्तिम सीढी पर पैर रखते हैं, वही उस माझिलकी जमीन तथा उतरने पर जो अन्तिम-सीढी पडती है, वही सतह गत् जमीन कह लाती है। इस दृष्टिसे एक सीढीकी चौडाई हमेशा बच जाती है। अर्थात् कुल सीढियोंकी गणना १९
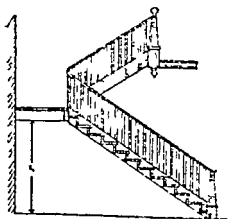
आकृति न १७, १८

हुई। जिनमेसे प्रत्येक सीढीमें ११ इञ्च चौड़ा स्थान खर्च होता है और इसीलिये चौपड़े (Landing) के अतिरिक्त जीनेका सृजन करनेके लिये १९×११=२०९ इञ्च अथवा १७ फुट ५ इञ्च लम्बाईका स्थान आवश्यक होता है। यह अत्यधिक लम्बा होनेके कारण एक दूसरेके गुनियेमें अथवा बगलमें समानान्तररूपसे दो खण्डमें विभाजित कर बीचमें एक चौपड़ा रख छोटनेसे दोनोंका संयुक्त जोड़ १७' ५+ (चौपड़े की चौड़ाई ३, बाकी एक सीढीकी चौड़ाई ११)=२१' ६ होता है। इस लम्बाईके अब दो भाग करने होते हैं। जीनेके चौपडेकी सतह जमीनसे ६ फुट की ऊंचाईपर होनेसे नीचेसे आवागमन करनेवाले मनुष्यका सिर नहीं टकराता। ये छः फुट तथा उस स्थानके पाटन (Floor) की मोटाई (४×१॥ लोहे की कड़ियाके ऊपर १ कॉंक्रीट अथवा गिलावा) ६ इञ्च संयुक्त कर ६॥ फुट अथवा ७८ इञ्च होते हैं। इतनी ऊँचाई तक कुल १० सीढियाँ तथा ११ वीं सीढ़ी अर्थात चौपड़ा तैय्यार होता है। १९ सीढियोंमें से ११ सीढियाँ बाद देने से ६ सीढियोंका दूसरा एक टुकड़ा तैय्यार हो जाता है। इससे पहिले टुकडेमें, चौड़ी लम्बाई ११ सीढियाँ ×११"=११ फुट + चौपड़े की चौड़ाई ३ फुट = १४ फुट तथा दूसरे टुकडेमें ६ सीढियाँ ×११=५ ६ यह हिसाब आता है। इस प्रकारका जीना आकृति २७ और २८ में दिखलाया गया है।

उदाहरण—२

मान लीजिये किसी घरके सन्मुखस्थ भागमें ९ फुटके बरामदे में एक ओर जीना बनाना है। उस घरकी ऊंचाई चौकीसे लेकर मंजिलके शिरोभाग तक ९ फुट है। ऐसी परिस्थितिमें दूसरे नियममें वर्णित प्रमाण (५) के अनुसार यदि उसमें ७ इञ्चका चढ़ाव तथा ९ इञ्च सीढीकी चौड़ाई रखनी हो तो किस प्रकार जीना निर्माण होगा ?–इसमें ऊंचाई ९ फुट=१०८ इञ्च है। हमें अधिकसे अधिक ७ इञ्च चढ़ाव रखना है। अतः १०८ ÷ ७ = १५॥ सीढियाँ आती हैं।

आधी सीढी तो किसी प्रकार रखी ही नहीं जा सकती । अत पूरी १६ सीढियां रखनेसे १०८ – १६ = ६॥ इञ्च चढाव आता है। अन्तिम सीढ़ी छोड देनेसे सीढियोंकी गणना १५ होती है। अस्तु, यह ऊंचाईका व्यौरा हुआ । अब लम्बाई लीजिये। लम्बाईके लिये १५ × ९॥ = १४२॥ इञ्च अथवा ११ फुट १०॥ इञ्च हिसाब होना चाहिये। इतनी लम्बाईका जीना रखनेसे यदि उसकी आटमें खिडकी-दरवाजा इत्यादि न आते हों तो ठीक ही ठीक बात है। किन्तु यदि वह आ जाय तो जीनेको दो भागोंमें विभक्त कर देना चाहिये।

प्रस्तुत उदाहरणमें भी यदि चौपड़ेके नीचे ६ फुट की ऊँचाई तथा४" इञ्ची मोटाई की पाटन हो तथा (लकड़ीकी कड़ियो पर एक इञ्ची रीफ) और उस पर ४ इञ्ची पेन कुल मिलाकर ९ इञ्च मोटाई हो तो ६ × १२ = ७२ + ९ (चौपड़ेकी मोटाई) = ९१ इञ्चके ऊपर चोपड़ेका शिरोभाग होना चाहिये। ऐसा होनेसे ८१–६॥ (चढाव) = १२ सीढियां होती है। अत पहिला भाग १२ सीढियोका समझ कर १२ हवीं सीढी चौपडी समझी जाती है। १५ सीढियोंम से १२ सीढियां चौपडे तक चढ़ा चुकने पर जीनेके दूसरे भागमें और ३ सीढियां होनी चाहिय। चौथी सीढी जा होगी वही पाटनका शिरोभाग होगी। आंगन ६ फूट चौड़ा है। जीनेके चार तरकसों (Stringer) के लिये ४ × ४॥ = १० इञ्च स्थान छोड देनेसे ५ फुट २ इञ्च शेष रह जाते हैं। इसकी आधी
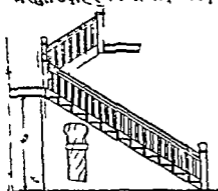
आकृति न १९ व २०

याने ? फुट ७ इञ्च जीनेकी चौड़ाई हुई। (देखिये आकृति १९ और २०) कभी-कभी जीनेका हिसाब करते समय चौपटे की मोटाई अधिक रखनेसे नीचे ५॥ फुटसे कम अन्तर रहनेके कारण मनुष्यका सिर टकरा जानेकी सम्भावना रहती है। वैसी जगह ? इञ्ची एङ्गल अथवा टी आयर्न व्यवहारमें लाकर उसपर उतनी ही मोटाईकी लकड़ीकी तख्तियां जड़ते हुए चौपट्टे की योजना करने पर उसके लिये ? इञ्च मोटाई पर्याप्त हो जाती तथा नीचे ५॥ की जगह ५॥। फुट तक ऊँचाइ प्राप्त होती है।

कितनेही बार,-जैसा कि उक्त उदाहरणमें दिखलाया गया है, जीनेके दोनों भाग समानान्तर या एक दूसरेके गुनियेमें रखनेसे अधिकांश स्थान व्यर्थ चला जाता है। अतः जहाँ तक सम्भव हो एकही सरल जीनेका सृजन जगहकी बचतकी दृष्टिसे विशेष उपयुक्त है। मांजिलकी ऊँचाई यदि ९ फुट हो तो कमसे कम ११ फुट तथा यदि १० फुट ऊँचाई हो तो १४ फुट लम्बाईका स्थान सरल जीनेके लिये पर्याप्त हो जाता है।

जीनोंके प्रकार

१—लकड़ीके, २-पत्थरके, ३-ईंटोंके ४-लोहेके, ५-पुनर्घटीभूत कांक्रीटके, ६-लोहेके गर्डर अथवा एङ्गल या 'टी' आर्यनके गलुये और बीचमें कॉंक्रीट या ईंटोंका जुगाऊ काम, ७-पुरानी भागम लकड़ी तथा पेटेमें कॉंक्रीट देकर।

१—लकड़ीके जीने

१—लकड़ीके जीनाके लिये, विशेषतः यदि वे चक्राकार हों तो मजदूरी अधिक देनी पड़ती है। इनको आगसे विशेष भय रहता है तथा चढ़ने-उतरनेमें प्रतिध्वनि प्रस्फुरित होती है।

सौन्दर्य और हल्केपनकी दृष्टिसे ये अन्य जीनोंकी अपेक्षा विशेष सरस होते हैं। इन जीनाके दोनों गलयोंके नीचे प्रथम मध्यभाग तथा शीर्षभागके पास जीनेकी चौडाईके बोल्ट जडकर उन्हें कस लिया जाता है। आकृति सख्या १७ से ३० तक इस प्रकारके जीने दिखलाये गये हैं।

२—पत्थरके जीने

१—पत्थरके जीनोंमें चौकोर या तिकोने छेदोंके पत्थरोंको भली भांति गढकर व्यवहारमें लाया जाता है। इसके दो भेद होते हैं। पहिले प्रकारमें नीचेसे सीढिया दिखलायी देती है तथा दूसरे में निचली सतह समथल दृग्गोचर होती है। (देखिये आकृति ३१ और ३२) पत्थरका जीना मजबूत तो अवश्य होता है। किन्तु भारी भी अपेक्षासे बाहर होता है। इन जीनोंपर जलवायुका विशेष परिणाम न होनेके कारण वे खुले भी रह सकते हैं। समथल जीनोंकी सीढ़ियां तिकोने छेदवाली होनेके कारण नीचे बाइसिकल इत्यादि रखनेके लिये पर्याप्त स्थान मिल जाता है। साथही साथ वे उतने वजनी भी नहीं होते। लेकिन शिर्ष भागके पत्थरोंको गढनेमें मेहनत बड़ी करारी करनी पड़ती है। तिकोने छेदकी सीढियोंके शिरोभागकी पिछली कोरोंको थोडा छाँटकर उनमें खांचे किय जाते हैं। जीनेका एक छोर दीवालमें जड़कर दूसरेके लिये अधरमें स्वतन्त्र रूपसे रखी हुई सीढियोंके पत्थरनिर्मित जीनेमें ऊपरकी सीढीके नीचे अवलम्बित कोर छांट कर उस चिपटे भागको थोडा गोल अथवा तिकोना आकार दे दिया जाता है तथा निचली सीढीके ऊपरी कोरको ठीक उसके विपरीत अर्थात् बहिर्गोल अथवा तिकोने आकारमें चापकी सहायतासे जड दिया जाता है। (देखिये आकृति ३१)
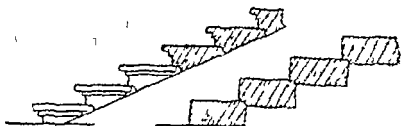
आकृति ३१ आकृति ३२

इसके कारण वे दोनों पत्थर एक दूसरेपर मजबूतीसे जम जाते हैं। परिणाम यह होता है कि, ऊपरी पत्थरका भार निचली सीढीपर तथा इसी अनुक्रमसे सारे जीनेका भार अन्तमें सतहगत सीढीपर जा गिरता है । दीवालको सम्पूर्ण जीनेका भार सहन नहीं करना पड़ता । इस परिस्थितिमें प्राय तिकोने छेदवाली सीढ़ियोंका जीना निर्माण किया जाता है।

पत्थरके जीनेकी सीढियाँ यदि दो दीवालोंमें बढानी हों तो उन्हें दीवालके सृजन कालमें ही बढाया जाता है। यदि किसी कारणवश एकही दीवालमें उन्हें बढाते हुए दूसरा भाग अधर रखना हो तो दीवालकी रचनाके समयही सीढियोंका निम्माण होता है अथवा सीढ़ियोंके मीत्यर्थ दीवालमें छेद छोडकर या उस जगह खुले ईंटे बैठाकर पश्चात् सीढियाँ जड दी जाती हैं। मजबूतीकी दृष्टिसे यदि विचार किया जाय तो दीवालके रचना कालमें ही सीढियोंका निर्माण होना चाहिये। सीढीका कोना चौकोर होते हुए कमसे कम ९ इंच दीवालमें गड़ा हो। जीनेके निर्माणमें पलस्तर की जगह पर सिमेण्ट मिश्रित गिलावेका प्रयोग करना विशेष श्रेयस्कर है। झूलते हुए छोरके नीचे पहिले एक हाथीरका आधार देकर सीढ़ियाँ समयलम हैं या नहीं, इसकी जाँच करते हुए गिलावेके सूखनेके पश्चात् उसे निकाल देना चाहिये।

३—ईंटोंके जीने

ईंटके जीनेके लिये यदि नीचे कमान बान्धनी हो तो ईंटोंका

आकृति न ३३

जुड़ाऊ काम गिलावेसे करना पडता है और यदि पुख्ता जीना बनाना हो तो मिट्टीके गालेसे जुड़ाऊ काम कर उस पर सीढ़िया तथा चढ़ावके दशनी भागकी रचना कर उसके ऊपर लकड़ीकी तख्तियाँ या शहाबादी फर्शी जड़ी जाती है। गालेकी जुड़ाई करनेसे जीनेके नीचे कमान खडीकर सम्पूर्ण दीवालका उठाना बच जाता है। साथही उस पोले भागमें बहुतसा कौटुम्बिक जीवनोपयोगी सामान रखा जा सकता है। इस प्रकारके जीनेके नीचे १।२ छोटी-छोटी कमाने अथवा एकही ऊँची चौथाई कमान खड़ी की जाती है। (देखिये आकृति ३३) कमान खड़ी करनी हो तो जिस दीवाल पर वह अवलम्बित रहे वह नितान्त मजबूत एवम् पुख्ती रहनी चाहिये। यदि मिट्टीके गालेसे ईंटोंकी जुड़ाई की हो तो बर्सातसे जीनेकी रक्षाके निमित्त कोई न कोई विशेष योजना करनी पड़ती है। दो दीवालोंके बीचमें यदि इस प्रकारके जीनेका सृजन करना हो तो दो दीवालोंके बीचमें नीचे १॥ इञ्च
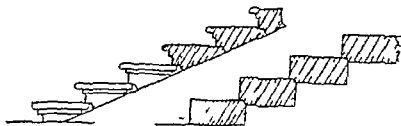
आकृति ३१ आकृति ३२

इसके कारण वे दोना पत्थर एक दूसरेपर मजबूतीसे जम जाते हैं। परिणाम यह होता है कि, ऊपरी पत्थरका भार निचली सीढ़ीपर तथा इसी अनुक्रमसे सारे जीनेका भार अन्तमें सतहगत सीढीपर जा गिरता है । दीवालको सम्पूर्ण जीनेका भार सहन नहीं करना पड़ता । इस परिस्थितिमें प्राय तिकोने च्छेदाकी सीढ़ियोंका जीना निर्माण किया जाता है।

पत्थरके जीनेकी सीढियां यदि दो दीवालोंमें बझानी हों तो उन्हें दीवालके सृजन कालमें ही बझाया जाता है। यदि किसी कारणवश एकही दीवालमें उन्हे बझाते हुए दूसरा भाग अधर रखना हो तो दीवालकी रचनाके समयही सीढियोंका निर्माण होता है अथवा सीढ़ियोंके प्रीत्यर्थ दीवालम छेद छोड़कर या उस जगह खुले ईंटे बैठाकर पश्चात् सीढियां जड दी जाती हैं। मजबूतीकी दृष्टिसे यदि विचार किया जाय तो दीवालके रचना कालमें ही सीढियोंका निर्माण होना चाहिये। सीढीका कोना चौकोर होते हुए कमसे कम ९ इञ्च दीवालमें गड़ा हो। जीनेके निर्माणमें पलस्तर की जगह पर सिमेण्ट मिश्रित गिलावेका प्रयोग करना विशेष श्रेयस्कर है। झूलते हुए छोरके नीचे पहिले एक शहतीरका आधार देकर सीढियाँ समयलम हैं या नहीं, इसकी जाँच करते हुए गिलावेके सूखनेके पश्चात् उसे निकाल लेना चाहिये।

३—ईंटोंके जीने

ईंटके जीनेके लिये यदि नीचे कमान बान्धनी हो तो ईंटोका

आकृति न २३

जुडाऊ काम गिलावेसे करना पडता है ओर यदि पुस्ता जीना बनाना हो तो मिट्टीके गालेसे जुडाऊ काम कर उस पर सीढिया तथा चढावके दर्शनी भागकी रचना कर उसके ऊपर लकड़ीकी तख्तियाँ या शहाबादी फर्शी जडी जाती है। गालेकी जुड़ाई करनेसे जीनेके नीचे कमान खड़ीकर सम्पूर्ण दीवालका उठाना बच जाता है। साथही उस पोले भागमें बहुतसा कौटुम्बिक जीवनोपयोगी सामान रखा जा सकता है। इस प्रकारके जीनेके नीचे १।२ छोटी-छोटी कमाने अथवा एकही ऊँची चौथाई कमान खडी की जाती है। (देखिये आकृति २३) कमान खडी करनी हो तो जिस दीवाल पर वह अवलम्बित रहे वह नितान्त मजबूत एवम् पुख्ती रहनी चाहिये। यदि मिट्टीके गालेसे ईंटोकी जुड़ाई की हो तो वर्सातसे जीनेकी रक्षाके निमित्त कोई न कोई विशेष योजना करनी पड़ती है। दो दीवालोंके बीचमें यदि इस प्रकारके जीनेका सृजन करना हो तो दो दीवालोंके बीचमें नीचे १॥ इञ्च

मोटाईकी सागवानी लकड़ीकी तख्तियां देकर उन पर ईंटोंकी गिलावेमें जुडाई की जाती है तथा ऊपर लिखे अनुसार शिरोभाग पर चढावके दर्शनी भाग की ओर लकड़ीकी तख्तियां या शहाबादी फर्शी जडी जाती है।

४—लोहेके जीने

४—ये प्राय ढलाऊ लोहेके एवम् चक्राकार होते हैं। जहां स्थान अत्यन्त सकुचित होता है, वहींपर इनका अधिकांश रूपसे व्यवहार किया जाता है। इनके पृथक् पृथक् फुटकर भाग मिलते हैं। जिनको यथास्थान जोडनेहीसे काम बन जाता है। इनसे जो लाभ होते हैं वे इस प्रकार है—

उन्हें पानी या धूपमें रखने पर भी कोई आपत्ति नहीं। उनके लिये स्थान अत्यन्तही न्यून अर्थात् प्राय ४ फुट भी पर्याप्त होता है। सौन्दर्यकी दृष्टिसे वे अत्यन्त मनोहर होते हैं। किन्तु बडा सामान ऊपर नहीं चढाया जा सकता। बाल-बच्चोंके गिरनेका अत्यन्त भय रहता है। साधारणतया इनका मूल्य प्रति सीढ़ीके हिसाबसे ८ रुपयेसे लेकर १५ रुपये तक पड़ता है। यह जीने प्राय नौकरपेशा लोगों अथवा भङ्गियोंके व्यवहारमें विशेष रूपसे आते हैं।

५—पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कान्क्रीटके जीने
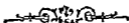
५—पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कान्क्रीट (Reinforced Concrete) के जीनोंके सम्बन्धमें विस्तृत वर्णन "सिमेण्ट कॉन्क्रीट सादा और पुनर्दृढीभूत" शीर्षक लेखमें दिया गया है।

६—लोहेके गलथोंमे ईंटोंका काम

इस पद्धतिसे बने हुए जीने भी मोटाईमे कम तथा मजबूत होते है। इन्हें न अग्निसे ही भय होता है ओर न ध्वनि ही गुज़ारित होने पाती है। पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीटकी तरह इनका निःशङ्क चित्तसे प्रयोग किया जा सकता है।

आकृति संख्या १४ में इस पद्धतिका एक जीना दिखलाया गया
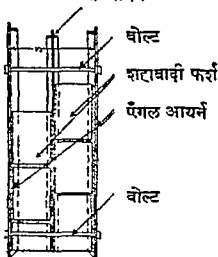
आकृति न १४

है। उसमें, जीनेकी जितनी चौड़ाई रखनी हो उतनी ही उसके पेटेमें रखकर, जीनेके दोनो ओर दो ३×३ आकारके ऍंगल आयर्नके टुकडे तिर्छे जड़ दिये जाते हैं। उसी तरह गर्भ भागमें सन्निकटस्थ एङ्गल आयर्नके समानान्तर ३×३×३×½ आकारका 'टी' आयर्नका टुकड़ा जड़ते हुए उसम शटाबादी फर्शके गढाऊ टुकडे

जड़ दिये जाते हैं। जहाँ इसप्रकारके टुकडे मढ़ेंगे पड़ते है वहाँ लकडीकी रीफाकी एक ओरसे रन्धकर चिकना बनाते हुए उनका वह दर्शनी भाग जड़ाईके समय इस तरह रखा जाता है ताकि, वह नीचेसे दिखलायी दे। इसकी जगह कहीं-कहीं (Expanded Metal) वर्धित जालीके खण्ड जड़कर उसकी सिमेण्टके गिलावेसे जुडाई करते हुए यथा प्रमाण उस नापका ईंटोंका बन्धाऊ काम किया जाता और सीढीयाँ बनायी जाती है। सीढियों तथा चढावके दर्शनी भाग पर कहीं-कहीं इच्छानुसार एक इञ्च मोटाईके सिमेण्ट पेटेण्ट स्टोनकी अथवा शाहाबादी फर्शीकी जडाई होती है। इसकी जगह कहीं कहीं ईंटोंके बन्धाऊ काम और फर्शियोंके स्थान पर उनमें चूनेका गाला अथवा सिमेण्ट कौंक्रीट डाला जाता है। इस प्रकारका जीना अत्यन्त उत्कृष्ट और अल्पव्ययमें तैय्यार होता है।

आकृति सख्या ३४ में एक ३"×३"×½"×¾" आकारका टी आयर्न मध्यभागके सन्निकटस्थ पट्टलआर्यनके समान्तर देकर उन दोनोंके मध्यमें शाहाबादी लादी देते हुए उसपर ईंटोंका बन्धाऊ काम किया गया है। अगल बगलके दोनों गर्ल्याँ तथा मध्यवर्तीय 'टी आयर्नको' सम्यक् अन्तरमें स्थिर रखनेके लिये तीन स्थाना पर ⅝ इञ्ची बोल्टोंसे कस दिया है। देखिये आकृतिमें निचला बोल्ट।

७—ऊपरसे लकडीके किन्तु पेटेमें चूनेका काङ्कीट भरे हुए जीने

इस प्रकारके जीनोका सृजन करनेके पूर्व एक २॥ इञ्च मोटा तथा १०-११ इञ्च चौडाईका,-ठीक जीनेकी लम्बाईके आकारका एक सागवानी तख्ता लेकर उसपर पेन्सिलसे मापक-तख्ती की सहायता लेते हुए जीनेकी आकृति चित्रित की जाती है। इससे जीनेके यथास्थान खडे किये जानेपर उसका खड़ा च्छेद लेनेमे जैसे सीढियाँ इत्यादि भाग दिखलायी देते हैं, उनकी समुचित कल्पना हो जाती है। इस आकृतिकी ऊपरी रेषाओंके बराबर तख्ती काटकर बीचमें आवश्यक चौड़ाई रखी जाती और उसके पोगलये बनाते हुए जीनेके निर्धारित स्थान पर उन्हें तिर्छा काटा जाता जमीन पर सतहमे सम्यक् रूपसे बैठ सकें इसका ध्यान रखते हुए जड़ा जाता है। पश्चात् जीनेकी चौड़ाई और लम्बाईके बराबर लोहेके बोल्ट जडकर वह टुकडे १।१ स्थानोंपर समान्तर और योग्य अन्तर पर रह सकें, इस प्रकारकी व्यवस्था की जाती है। तदुपरान्त नीचे पार्श्ववर्त्तीय भागमें आधार तख्तिया जड़कर पेन्देमे इञ्च मोटाईका चुन कांक्रीट कूट-कूट कर भरा जाता और ज्यों-ज्यों वह ऊपर उठता जाता है त्यों-त्यों सीढियोंके लिये रन्धकर गोलचीकी हुई तथा खाँचेकी हुई तख्तियाँ (अन्धेरियाँ) जड़कर सन्निकटस्थ गलयोंके सीढ़ियोंपर चढावके दर्शनी भागमे स्क्रू की सहायतासे जड़ते हुए ऊपर तक चले जाते एवम् जीनेका सृजन कार्य सम्पूर्ण कर देते हैं। यह जीने लकड़ीके होनेपर भी उनसे आवागमनकी प्रतिध्वनि प्रस्फुटित नहीं होती तथा उतना अग्निका भय भी नहीं रहता। दैववशात् आग लग भी जाय और लकडीकी सीढियाँ तथा अन्धेरियाँ कुछ जलें भी तो नीचे अदाह्य (Fire proof) कांक्रीट होनेके कारण सम्पूर्ण जीना नष्ट-भ्रष्ट नहीं होने पाता।

आकृति संख्या ३७ में दो गलथे एकही अखण्ड तख्ती फाडकर यथास्थान रखे हुए हैं। आकृति संख्या ३५, ३६ में उसी जीनेका छेद दिखलाया गया है। उससे चुनकांक्रीट के भरने तथा निचले पेन्देमें लकडीकी तख्तियां या शहाबादी फर्शियोंके जडनेके सम्बन्धमें सम्यक् ज्ञान हो सकता है। मध्यवर्त्तीय भागम एक 'टी' आर्यन जडनेसे उसका उपयोग शहाबादी
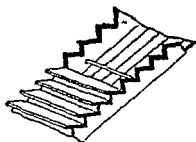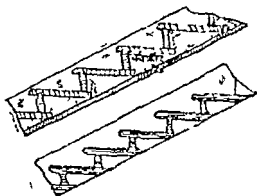
आकृति नं ३५, ३६, ३७

फर्शियोंकी जडाईके मीत्यर्थ अच्छा होता है। यदि इनकी जगह लकडीकी तख्तियां जड़नी हों तो मध्यवर्त्तीय भागम 'टी' आयर्नकी जगह एक 'काष्ट खण्ड' जड़ना विशेष उपयुक्त होता है।

धूआँकश

भवनके चूल्हों-मोरसियों, धमचूल्हों, इत्यादिके कारण धरम उत्पन्न होनेवाले धूएँ की ऊपर ही ऊपर निकासी करनेके लिये जो लौह-निर्मित या खपड़ेकी अथवा ईंटोंकी जुड़ाईकर निर्माण की

हुई नलिकाओंकी स्थापना होती है, उन्हें सर्व्व साधारण भाषामें धूँआकश या धूँएदानी कहते हैं। इनका सृजन विशेषत (१) धूएंकी निकासी अथवा (२) जनसमुदायकी भीडके कारण तप्त एवम् दूषित हुई वायुकी निकासी करनेके उद्देशसे होता है।

धुँआकशकी उपयुक्तताके लिये निम्नलिखित बातोंपर ध्यान देना पडता है—

१ धूँआकशकी नलिका अत्यन्त बड़ी न हो। ऐसा होनेसे तप्त एवम् हलकी वायु ऊपर जानेके पूर्व्वही ठण्ढी होकर नीचे रह जाती है।

२ नलिका सदा भीतरसे चिकनी हो। ऐसी न होनेसे भीतर कालिख जमजाती तथा धूँएका मार्ग बन्द हो जाता है।

३ धूआकश यदि जुडाऊ कामका हो तो उसके अगल-बगल का ऊपरी भाग मिलता हुआ एवम् उतार धार होना चाहिये। ताकि घरमें उत्पन्न होनेवाला धूआ नलिकाके मार्गसे ऊपर जा सके।

४ नलिकाके मार्गमें कहीं भी शीत वायुका समावेश न होने दे। इसके प्रीत्यर्थ नलिकाए सर्व्वदा अछिद्र और सन्धियोंसे विहीन हों।

५. नलिकाओंमें जहा तक सम्भव हो घुमाव या पेंचीदापन न होना चाहिये। यदि थोड़ा बहुत घुमाव हो भी तो वह प्रमाण-प्रमाणसे न्यूनाधिक होता चला जाय। इनमें कमसे कम १३० अशोंका कोण रहना अत्यावश्यक है।

६ सन्निकटस्थ २।३ चूल्होंका धूआ यदि एकही धूआकशसे निकालना हो तो प्रत्येक धूआकश की मध्यवर्तीय पद्दी कमसे कम ४॥ इञ्च मोटाईकी होनी चाहिये तथा उसके सम्पूर्ण जोड नितान्त मजबूत होने चाहिये।

७ जहाँतक हो धूँआकशका सृजन छप्परके अवलम्ब भागपरही प्राय १॥ फूट ऊँचा होता है ।
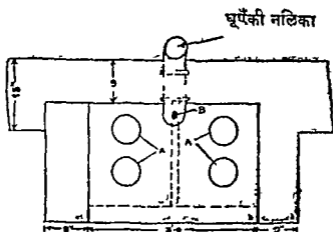
आकृति न ३८

आकृति सख्या३८ और३९,४०मे एक शास्त्रीय पद्धतिसे निर्माण किया हुआ चूल्हा तथा धूँआकश दिखलाया गया है। इस चूल्हेके लिये बीचमें ३ फुट का अन्तर रखकर ईंटोंके ९ इञ्च चौड़ाईके दो खम्भे १॥ फुट तक दीवालके सामने लाये गये हैं। चूल्हेकी पार्श्ववर्त्तीय दीवाल ९ इञ्चकी रखनेसे दीवालके भीतरका थोड़ा बहुत स्थान अलमारीके सदृश मिलनेपर उतना लम्बा जुड़ाऊ काम करनेकी कोई आवश्यकता नहीं होती। किन्तु साथही साथ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि प्रत्येक चूल्हेके लिये ३ फुट लम्बा तथा १॥ फुट चौड़ा स्थान अवश्य लगता है । चित्रमें निर्दशित चूल्हा लकडीके ईन्धन का है । यदि कोयला जलाना हो तो जालीके ऊपर लकड़ी रखनेके लिये जो ७ इञ्च ऊँचा पोला स्थान रखा गया है, उसे घटाकर ४ इञ्च कर लिया जाता है । अथवा नीचे लोहेके तीन ऊँचे पाये जड़कर एक लोहेकी चलनी जड़ी जाती और उसमें कोयले सुल्गाकर उसे समीपवर्त्तीय कपाट खालते

हुए लकडीके लिये निर्म्माण की हुई जालीपर भीतर घसकायी जाती है । चित्रमें दिखलाये हुए चूल्हेके लिये पेन्देमें जालीके नीचे राख झड़ती रहनेके विचारसे तीन इञ्चका पोलास्थान छोड़ दिया गया है । इसके भीतरसे लोहेका कपाट (आकृति ३९,४०)ऊपर उठाकर हाथसे राख निकाल ली जाती है। ईन्धनके लिये D नामक कपाट खोलकर जालीपर लकडी या कोयला डाला जा सकता है । उसके जलते समय यथेष्ट वायु मिलते रहनेके विचारसे 'K' नामक कपाटमें बहुतेरे छिद्र रखे गये हैं। दो खम्भोंके नीचे ईन्धन देने तथा राख निकाल नेके लिये चूल्हेमें दोनों तरफ मुँह रखे गये हैं । सर्व्व साधारण चूल्होंमें लकडिया
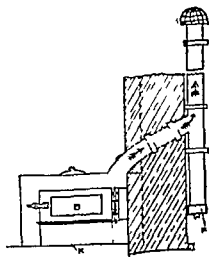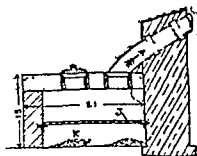
आकृति नं ३९, ४०

देनेपर उनमें नीचेसे वायु नहीं जाती। इसके अतिरिक्त लकडियोंके एक दूसरी पर ठूस-ठूस कर भरी जानेके कारण वह भली भांति सुलगती भी नहीं। साथही धूआ-धक्कड होता और ईन्धन अत्यधिक व्यय होता है। चूल्हे पर एकदम चार बर्तन रखनेके विचारसे ऊपर की पुनर्दृढ़ी-भूत सिमेण्ट कांक्रीट की छावनमें आठ-आठ इञ्च व्यासके 'A A' नामक चार छिद्र रखे गये हैं। बीचमें पड़दीकी योजना होनेके कारण आवश्यकतानुसार एकही समय पर दो चूल्हे सुलगाये जा

सकते हैं। यदि सुलगे हुए चूल्हेमें से एकाध चूल्हा बन्द रखना हो तो छिद्र की नापका एक लोहेका ढक्कन बैठानेसे ही काम हो जाता है। तप्तवायु तथा धूँएकी निकासीके लिये मध्यभागमें एक चार इञ्ची नलिका जडी गयी है। जिसके भीतरसे तप्त वायु ऊपर उठकर लोहेकी नलिकाके मार्गसे ऊपर निकल जाती है। इसके ऊपर जानेके पूर्व यदि कोई ऐसी व्यवस्था की जाय कि जिसमें यह ठण्डे जलसे भरे हुए वर्त्तनोंके चारों ओर घूमकर पश्चात् ऊपर जा सके तो एक बड़ा लाभ यह हो सकता है कि, उन वर्त्तनोंका जल गरम होकर स्नान करनेके अनुकूल हो जाय। चूल्हेके मध्यवर्त्तीय भागमें यदि पद्दरीका सृजन हुआ हो तो उसमें मध्यगत् नलिकाके नीचे एक छिद्र रखा गया है। जिसके कारण किसीभी ओरके चूल्हे सुलगने पर मध्यवर्त्तीय नलिकाके मार्गसे तप्त वायु भलीभाँति बाहर निकल जा सकती है। मध्यवर्त्तीय नलिकामें थोड़ासा झुकाव है। उसमें यदा कदाचित् कालिख जमती जाय तो उसे निकालनेके हेतु उक्त झुकावके शिरोभाग पर ' B ' नामक बोल्टोंसे कसा हुआ ढक्कन जडा गया है। ' J ' नामक जाली बाहर निकाल कर स्वच्छ करनेके विचारसे यह 'टी' आयर्नके टुकडेपर खुली रखी गयी है। तप्तवायु तथा धूँआ बहानेवाली प्रमुख नलिका दीवालके बाहर होनेके कारण दूसरे-तीसरे मंजिलके चूल्हे भी इसी प्रकार निर्म्माणकर उनकी नलिकाओंको मुख्य नलिकासे संयुक्त करना अत्यन्त सरल है। इसके अतिरिक्त मुख्य नलिकाके पेन्देमें एक पेंचदार लोहेका ढक्कन जड़ा गया है। उसे निकालकर नीचेसे डण्डेकी सहायतासे अथवा ऊपरसे एक लम्बी डोरीमें कुछ वजनी पदार्थ बान्धकर भीतर छोडनसे मुख्य नलिका जब चाहे तब झाड़-पोंछकर साफ की जा सकती है। इस प्रकारकी सम्पूर्ण योजना होनेसे ईन्धनका अपव्यय नहीं होने पाता। उलटे सर्व्व साधारण व्यवस्थाकी अपेक्षा आधे ईन्धनकी बचत होती है।

इस धूआकशसे कुछ विशेष लाभ ये होते हैं—

१—भीतर की ओर कहीं भी चूल्हा खुला न होने के कारण मकानके भीतर धूएके फैलनेकी सम्भावना नहीं रहती।

२—ईन्धन छोडनेके दरवाजे वगलमें रहनेके कारण शरीरमें तीव्र आचकी बाधा नहीं होती।

३—मिट्टीके तेलसे तर किया चिथडा जलानेसे भी चूल्हे तथा नालिका में स्थित वायु तप्त ओर हल्की होकर धूएकी क्रिया जारी हो जाती है।

४—नलिका लौह निर्म्मित होने कारण धूएका ठण्डा होना असम्भव है।

५—रचना अत्यन्त सरल और अल्पव्यय की है।

६—दोन-तीन अथवा इससे भी अधिक मञ्जिलके चूल्होंका धूंआ एकही धूआकशसे सरलता पूर्व्वक निकाला जा सकता है।

फुटकर बातें

१ कहीं-कहीं दीवालके सन्निकट कुर्सियाँ रखने से उनका तकिया दीवालोसे टकरा जाता और उससे दीवालके रङ्ग अथवा गिलावेके नष्ट भ्रष्ट होनेका भय रहता है। विशेषकर यह बातें सदर दीवानखानोंमें अधिकांशरूपसे होती रहती है। अत उसे बचानेके निमित्त यदि दीवानखानेम ३ फुटकी ऊंचाईपर मजबूत काष्ट खण्ड जड कर उनपर गिलावा चढानेके समय उनमें ६ इञ्च चौड़ी तथा एक इञ्च मोटी लकडीकी तख्तियाँ जड दी जाँय तो यह विपदा सहजहीमे दूर हो जाती है।

२ पाटनके लिये यदि ६ इञ्चसे अधिक मोटाईके गर्डर दीवाल पर रखे गये हों तो उनमेंसे एकम झूला वान्धनेके निमित्त कडियाँ जडी जा सकती है। किन्तु यदि इससे पतले गर्डर हो तो ऐसी

परिस्थितिमें एक दो इञ्ची जस्तेकी नलिकामें सिमेण्ट कॉंक्रीट ठूँस-ठूँसकर भरते हुए सिमेण्ट कांक्रीटके चबूतरे पर उसके छोर दीवालमें कमसे कम ६।६ इञ्च भीतर घुसाकर जड़ने उपरान्त उसपर झूला लटकाया जा सकता है।

३ जिस स्थानपर ऊपरी मञ्जिलका सृजन कार्य आरम्भ होत है उस जगह बाह्य भागकी ओर गलथा निकालनेकी रूढ़ी है उसीको पारिभाषिक प्रयोगमें (String Course) कङ्गनी कहत हैं। इस कङ्गनीके प्रमुखतया दो उपयोग हैं। एक तो इससे भव नकी शोभा बढ जाती है। दूसरे दीवालोंपर गिरा हुआ बर्साती जल निचले मञ्जिलकी दीवालसे दूर जा गिरता है। इसके प्रीत्यर्थ उसके शीर्षभागके अग्र भागमें थोड़ा ढाल देना पड़ता है

४ ऊपरी मञ्जिलकी दीवालें प्रायः सतहगत मञ्जिलकी दीवालोंकी अपेक्षा चौड़ाईमें न्यून होती हैं। यदि सतहगत मञ्जिलका पत्थरका काम डेढ फुट चौडा हो तो कहीं-कहीं दूसरी मञ्जिलके लिये १४ इञ्ची पक्के ईंटोंकी दीवालें खड़ी की जाती है तथा यदि दो मञ्जिलका भवन हो तो कहीं-कहीं ऊपरी मञ्जिलकी दीवालें १५ इञ्ची पत्थरकी अथवा क्वचित प्रसङ्ग पर ९ इञ्ची ईंटोंकी दीवालोंका सृजन होता है। यदि ९ इञ्ची ईंटोंकी दीवालें खड़ी करनी हों तो जिस स्थान पर उनकी कैंचीयाँ आये उस स्थान पर १४ इञ्ची खम्भोंका सृजन करना विशेष उपयुक्त होता है। ऐसी परिस्थितिमें ९ इञ्ची दीवालें उतनी मजबूत नहीं होतीं। निचली दीवालोंके दोनों ओर जगह (Offset) छोड़कर ऊपरी दीवालोंका सृजन करना मजबूतीकी दृष्टिसे विशेष उपयुक्त होता है। ऐसा करनेसे ऊपरी मँजिलके कमरोंकी लम्बाईमें २।३ इञ्च वृद्धि होती है, यह सत्य है। किन्तु फिरभी भवनोंके बाहरी भागमें जगह न छोडना भारी भूल है।

पाटन

आजकल पाटनके काममें लकड़ीकी धरनोकी जगह फौलादी गर्डरोंको व्यवहृत करनेकी परिपाटी चली है। इसमें सन्देह नहीं कि, यह परिवर्त्तन अपेक्षित रूपसे लाभ जनक है। अत उसके सम्बन्धमें नीचे कुछ आवश्यक सूचनाए लिखी जाती है—

गर्डर व्यवहृत करनेके सम्बन्धमे कुछ आवश्यक सूचनाए

गर्डरोंको दीवालपर चढानेके पूर्व उनमें स्थान-स्थानपर आवश्यकतानुसार छिद्र बनाये जाते है। इनके विधानके समय सामान्य गर्डरो को तपानेकी कोई आवश्यकता नहीं होती। उनको छेदनेके पश्चात् दिया-बत्ती-झाड-फानूस आदि लटकाने लिये उनके पेटेमे लोहारसे (Flange) पकड़दार लोहे की तख्तियाँ बनवा कर जड़ी जाती हैं। उन्हें जङ्ग तथा छिद्रादिसे बचानेके हेतु उन्हें दीवाल पर चढानेके पूर्व तैलरङ्ग या अलकतरेका पलस्तर किया जाता है। छ सात फुटसे अधिक अन्तर पर प्रस्थापित होनेवाले बडे गर्डरोंके नीचे मठाऊ पत्थर या कान्क्रीटके प्राय छ इञ्च मोटे एवम् सवा से डेढ फुट तक की लम्बाईके दीवालकी चौडाईके बराबर ढोके जडे जाते है। यदि गर्डर छोटे हों और उन्हें करीब करीब अर्थात फुट-डेढ फुट के अन्तर पर जड़ना हो तो दीवालके शिरोभाग पर गिलावेमें डेढ इञ्च मोटी शहाबादी लादी बिछानेके उपरान्त उनकी स्थापना करनेसे पाटनका सम्पूर्ण भार सम्यक्‌रूपसे बँट जाता है। कहीं-कहीं गर्डरोंको चूने से अलिप्त रखनेके विचारसे उनपर उशकी सरा-

यतासे सिमेण्टका हल्का स्तर देनेकी रूढ़ी है। किन्तु उससे विशेष लाभ नहीं होता।

दीवाल पर गर्डरका कमसे कम एक फुट हिस्सा रहना अनिवार्य है। यदि वह दीवालकी मोटाईके बराबर धरा रहे तो सबसे उत्कृष्ट बात होती है। छज्जेके लिये गर्डर चाहे बाहर निकालने हों या भीतरही भीतर दबे रहने देनेहों, दोनोंही दशाओंमें प्रत्येक कमरेके लिये अपेक्षित गर्डररखण्ड जडनेकी अपेक्षा बीचकी दीवाल परसे दो या तीन कमरोंपर अखण्ड गर्डर जड़देनेसे झुकावकी दृष्टिसे काममें सवाया मजबूती आजाती है। बाजार में सर्व्व साधारण रूपसे ४० फुट लम्बे गर्डर मिलते हैं।

पाटनके विभिन्न प्रकार

मञ्जिलगत् पाटनके विभिन्न प्रकार आजकल प्रचलित हैं। अत उनमेंसे प्रत्येकके गुणदोषका विवेचन करना हमारा आद्य कर्त्तव्य है—

१—कडीपाट अर्थात् लकडीकी धरन, कडी किलचियाँ या एक ओरसे रन्धी हुई रीफ, ऊपर मिट्टीका स्तर तथा मोरमकी जमीन।

२—सारी बाते उक्त क्रमके अनुसार। केवल धरनोंके स्थानपर एक-एक फुटके अन्तरपर काडियाँ।

३—लोहेकी धरन (Girder) ठीक उक्त क्रमके अनुसार। ऊपर लकडीकी कडियाँ।

४—लकडीकी कडियों पर या लोहेकी कडियों (Joists) के मध्यमें शहाबादी फर्शी, ऊपर चूनेका रोडाकांक्रीट या कोबा।

५—चार फुट या उससे कम अन्तर पर लोहेकी धरनें या लोहेकी कड़ियों (Joist) में २ से २। फुटपर, बीचमें ईंटे और गालेकी कमानियाँ, ऊपर रोड़ा कांक्रीट या कोबा।

६—लोहे या लकडीकी कड़ियोंमें कोबा।

७—छेदयुक्त लकडीकी कड़ियाँ, ऊपर और मध्यमें कोबा।

८—पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कॉंक्रीट।

९—लोहेकी धरन तथा ऊपर ह्यूम पाइपके किञ्चित् गोल तुकडोंपर कोबा।

उदाहरणार्थ —यदि १२ फुटके गाले पर लकडीकी धरन जडी जाय तो वह १४॥ फुट लम्बी तथा कमसे कम १०"×६" नापकी आवश्यक होती है। उसमें ६) रु० के दरसे तय करने पर प्राय ३६ रु० १ आ० लागत बैठती है। उसी गाले पर यदि उसी लम्बाईका गर्डर जडा जाय तो वह ७'×४'×१६ पोण्ड अर्थात् २३२ पोण्ड वजनका लगता है। इसका मूल्य प्रति हण्ड्रेडवेटके हिसाबसे ८) रु० पकडने पर उसकी लागत केवल १६ रु० १३ आने पड जाती है। अत इस तुलनात्मक विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि, लोहेके गर्डरोंमें लकडीकी धरनोंकी अपेक्षा आधेसे भी न्यून लागत बैठती है। अतिरिक्त इसके धरनोंकी अपेक्षा गर्डर कहीं अधिक निरापद और सुलभ होता है। उसे अग्नि ताप या दीमक इत्यादिका तो भयही नहीं होता न बढईकी आवश्यकता होती है।

१—उपरोक्त विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि, यद्यपि अभी भी बहुतसी जगहोंपर लकडीकी धरनोंका व्यवहार करनेकी परिपाटी है तथापि उसमें लागत अत्यधिक बैठती है। उनकी जगहपर लोहनिर्मित धरनोंका प्रयोग होनेसे हर प्रकारसे बचत एवम् आराम मिलता है। साधारण रूपसे धरन या गर्डरोंके बीचमें ६ से ८ फुटतकका अन्तर रहता है। ऐसा बहुतही कम होता है, जहाँ यह अन्तर १० फुटतक रखा गया हो। ऐसा करनेसे कड़ियाँ

अपेक्षासे बाहर मोटी लगानी पडती और उसके कारण अतिरिक्त खर्च बैठता है। तीसरी एक हानि उक्त पद्धतिकी धरनोंसे यह होती है कि मञ्जिलका सारा भार धरनोंके स्थानपर ही कुछ बिन्दुओंपर होता हुआ दीवालोंपर जा गिरता है। वह सम्यक्-रूपसे दीवालोंपर नहीं बँटता। इस श्रेणी विशेष पाटनकी लागतका स्थूल प्रमाण इस तरह है —

आकृति न ४१ अधोदर्शन
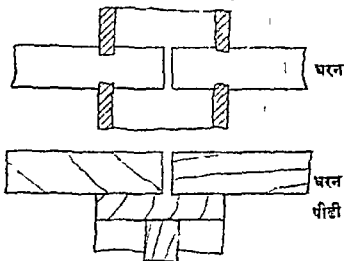
गोल खम्भा
आकृति न ४२ छेद

इसके अतिरिक्त इस श्रेणीकी पाटनमें भुजदण्ड प्रभृतिके लिये थोडी बहुत लकडी और खर्च करनी पडती है। जिसका औसत मूल्य ७०) रु० से कम नहीं होता।

यह पद्धति अभी कतिपय स्थानोंपर रूढ है। इसमें प्रथमत खानोंकी जगह पर चौकीकी शिलापर गढी हुई तथा उसकी सन्मुखस्थ दीवालमें जानेवाली अनगढ 'सिलियाँ' रखी जाती हैं। उनके शिरोभागपर टाँकीसे छेद किये रहते हैं और उन्हीं छेदोंमें पत्थर देकर खम्मे खडे किये जाते हैं। खम्भोंके शिरोभाग पर पीढी जडी जाती तथा उसपर धरन रखी जाती हैं। इ

खम्भोको 'डुबाव' खम्भे कहते है । देखिये आकृति ४१ ४२ दो धरनोके बीचमें दीवालके शिरोभागपर दर्शनी भागकी ओर भुज दण्ड जड़े जाते है। (आकृति ४१ ४२) अन्तमें खम्भोंको पेटेमें लेकर पत्थर या ईटोंकी जुडाई कर दीवाले खडी की जाती है। यदि तिमञ्जिला भवन हो तो सतहगत् मञ्जिलमें ६"×६" दूसरे मञ्जिलमें ५×५" तथा तीसरे मञ्जिलमे ४"×४ नापके खम्भे व्यवहारमें आते हैं। खम्भेके शिरोभागपर उतनीही चोडी किन्तु कुछ मोटी लग्धी जडी जाती है। खम्भेको उसकी पूर्ण चौडाई स्थिर रखते हुए कुछ छीलकर उसका एक तिहाई भाग कुछ नोकीला बनाया जाता तथा लग्धीमें छेद बनाते हुए उसमें जड दिया जाता है। लग्धीका सृजन अनेक खण्डोंको एक विशिष्ट प्रकारके जोडसे जोडकर किया जाता है। इसे जहाँतक हो खम्भेके बगलमें लाना विशेष श्रेयस्कर होता है। (आकृति ४३)

इस जोडके मध्य भागमें ॥। ×१' तथा प्राय' ६।७ इञ्च
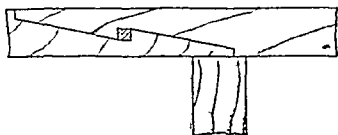
आकृति न ४३

लम्बी खूँटी जडकर उसे दोनो ओरसे किञ्चित् बढाया जाता और १।१ महिनेके उपरान्त लकड़ीके सूखकर जोड़ ढीला हो जानेपर उसे पुन' ठोककर लग्धीके बराबर काट दिया जाता है।

लोहेकी धरन व्यवहृत करते समय लग्धीमें याती उनके पेटे (Flange) की चौडाईको देखते हुए आध इञ्च गहरे खाँचे किये जाते या एक विशिष्ट प्रकारके काँटोंके दाबमें (Dogspikes)-

जिनका शिरोभाग गुनियेमें मुड़ा रहता है,–उन्हें जड़ दिया जाता है। इनकी नापका प्रमाण गाला या गादी की नापकी अपेक्षा आधे आध चौड़ा तथा पौन इञ्चसे कुछ अधिक मोटा है। मध्यम श्रेणीके भवनोंके लिये यह प्रमाण विशेष उपयुक्त होता है। चौड़ाई ३ इञ्च तथा मोटाई तीन इञ्चसे अधिक नहीं होती। इस हिसाबसे १० फुटके गालेमें ५'×८॥' नापकी धरन बैठती है।

निम्न सारिणीमें खानेकी चौड़ाईके अनुसार सागवान की धरनोंकी मोटाई-चौड़ाईका प्रमाण दिया गया है।

गाला	५ फु खा		६फु खा		७ फु खा		८फु खा		९फु खा		१०फु खाना	
फुट	चौ	मो	चौ	मो	चौ	मो	चौ	मो.	चौ	मो.	चौ	मो
८	५	७	५॥	७	५॥	७॥	५॥	८				
१०	५	८॥	५	९	५॥	९॥	५॥	९॥	५	१०	६	१०
१२	६	१०	६।	१०।	६।	१०॥	६॥	१०॥	६॥	११	६॥	११॥
१४	६॥	१२	६॥	१२	६॥	१२।	६॥	११॥	७	१३	७॥	१४
१६	७	१३	७॥	१४	७॥	१४	८	१४	८।	१४॥	९	१५

१ लकड़ीकी पाटनमें ५॥६ फुटके अन्तर पर धरन जड़ी जाती हैं। उनमें प्रथमतः किञ्चित् खाँचे कर पश्चात् उनमें ११ से १४ इञ्चके अन्तर पर कड़ियोंकी जड़ाई होती है। तदुपरान्त उन कड़ियोंमें लकड़ीकी तख्तियाँ या एक ओरसे रन्धे हुए रीफ काटकर उसकी किलचियाँ काँटोंकी सहायतासे बैठायी जाती हैं। इन किलचियोंके अन्तर्गतस्थ जोड़ोंको ढँकने तथा दराजसे मिट्टीका गिरना बचानेके लिये पहिले डेढ़-दो फुट चौड़ी एवम् पौन इञ्च मोटी तख्तियाँ जड़नेकी परिपाटी थी। किन्तु आजकल घट उठ गयी है।

दो कड़ियोंके मध्यमें धरनके शिरोभागपर जो पोला हिस्सा रह जाता है वहाँ उन्हींकी चौड़ाईके बराबर किन्तु मोटाईमें प्रायः १इञ्चकी अन्धेरियाँ जड़ी जाती हैं। किलचियोंके शिरोभागपर लकड़ीका चूरा चिप्पियाँ इत्यादि बिछाते हुए उनपर ४ से लेकर ८॥ इञ्चतककी मोटी मोरमकी तह जमायी जाती तथा उसपर पानी देते हुए ठाक-

पीटकर जमीनके रूपमें तैय्यार कर लिया जाता है। इस तरहकी जमीन अत्यन्त हलकी होती एवम् जनसमुदायके आवागमनसे थर्राती रहती है। इसके अतिरिक्त इस प्रकारमें चढ़ईका खर्च अधिक बैठता, अग्निका भय रहता एवम् भवनके पुराने होजानेपर किलचियोंकी दरजोंमेंसे मिट्टी गिरते हुए उसमें एकाध दो मृत्तिकाके ढोके रह जानेकी सम्भावना रहती है।

२ दूसरा प्रकार कड़ीदार सिल्लीका है। इसमें लकडीकी पकड Toist होनेसे उनके शिरोभागपर काँटे जडकर तथा लोहेकी कडियाँ होनेसे उनके पेटेमें एक एक फुटके अन्तरपर सिल्लियाँ जड दी जातीं तथा उनके शीर्षभागपर मोटी किलचियाँ अथवा रीफ जड़कर उनपर मिट्टीकी तह या काँक्रीट बिछाया जाता है। इस प्रक्रियामें पाटनकी मोटाई कम होकर ऊपरी बोझ दीवालोंपर सम्यक्‌रूपसे बँट जाता है। इस विधानमें भी साधारणतया लकडीकी पकड़ ८ फुट तक ठीक पडती है। गालेकी लम्बाई उससे अधिक बढ़नेसे इसमें पडती नहीं खाती। इस सम्बन्धके गुणदोष पहिले प्रकारके अनुसार होते हैं। निम्न सारिणीमें गालेकी पाटनका औसतप्रमाण विदर्शित किया गया है।

लकडीकी पकडपर किलचियाँ और तह

गाला फुट	१२ इंचपर पकड	लम्बाई फुट	चौड़ाई इंच	मोटाई इंच	घन फुट	दर मजूरी सहित	कीमत रुपये	ल्याधिकिलचियाँ फु	कीमत प्रति १०० फुट	रीपका दाम ८०	तह मजूरी सहित	कुल दाम प्रति ग्रासके हिसाबसे
६	१२	७	२॥	४	६ ३३	६	३७ ९८	७०	५१ ८०	१५	४	७१ ८०
८	१२	९	२॥	५	१० १५	६	६० ९०	९६	६३ ४४	१५	४	८२ ४४
१०	१२	११	२॥	६	१४·८९	६॥	९६·७८	१२०	८० ६०	१५	४	९९ ६०
१२	१२	१३	२॥	७	२० ६४	६॥	१३४ १६	१४४	९३ २५	१५	४	१११ २५
१४	१२	१५	२॥	८	२७ ०८	६॥	१७६ ०२	१६८	१०४ ०४	१५	४	१२३ ०४

उक्त सारिणी देखकर स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि, प्रायः लकडीकी पाटनकी सभी पद्धतियोंमें एक दीवालसे दूसरी दीवाल पर पकड़ें बिछाकर उनपर पाटनका सृजन करना विशेष सुलभ और कम खर्चका होता है। किन्तु साथही यह तब तक सुलभ पडता है जबतक घरकी या गालेकी चौड़ाई दस फुटसे अधिक न हो।

३ तीसरे और पहिले प्रकारमें विशेष भेद नहीं है। इसमें लकडीकी धरनोंकी जगह लोहेके गर्डरोंका व्यवहार होता है। खाने ६ से ८ फुट तक के रखते हुए निम्न सारिणीमें दिग्दर्शित विधानानुसार कडियाँ जडकर उनके शिरोभाग पर चीफ तथा उसपर तह अथवा रोडा कांक्रीट बिछाया जाता है। इस प्रकार में पाटनका वजन प्रतिवर्ग फुटके हिसाबसे ११० पौंड के ऊपर नहीं जाता अतः उसमें गर्डर मोटे रखनेकी आवश्यकता नहीं। निम्न सारिणीमें ८, १० तथा १२ फुट गालेके लिये खानेकी चौड़ाई ६, ७, या ८ फुट होनेसे जिस नापके गर्डर व्यवहृत होते हैं तथा जिस आकारकी लकडी की पकडें प्रयोगान्वित होती हैं, उनसे दिखलाया गया है —

गाला फुट	खानेकी चौडाई फुट	व्याप्तिस्थान वर्ग फुट	वजन टन प्र० व० फु०=११० पौंडके हिसाबसे	गर्डरकी नाप इंचमें	प्रतिफुटका वजन पौण्ड	लकडीकी पकड नाप इंच	विशेष
८	६	४८	२ ५०	५×३	११	२॥×४	
	७	५६	३ ००	६×३	१२	३×८	
	८	६४	३ ५०	६×३	१२	२॥×५	
१०	६	६०	३ २५	६×३	१२	२॥×४	
	७	७०	३·७०	७×४	१६	३×४	
	८	८०	४ ३०	७×४	१६	२॥×५	
१२	६	७०	३·७५	७×४	१६	२॥×४	
	७	८४	४ ५०	७×४	१६	३×४	
	८	९६	५ ००	७×४	१६	२॥×५	
३	—	—	२	०	२	०	४

लागतका प्रमाण

कमरेका नाप १५′×१०′, सवा छः-छः फुटके ४ खाने

मालका नाम	नग	मालका व्यौरा लम्बाई फुट	चौड़ाई	मोटाई	घ० फु०	वजन	दर रु०	प्रति	दाम रुपये	विशेष
गर्डर	३	१४॥	इं० ४	इं० ७	{	१४८ पौ १२६ वे	९	ह०वे०	३७·८	
पकड़ (साग)										
मजूरी सट	२६	६।	२	४	९		६	घ फू०	५४ ०	
,,	२६	६॥।	२	४	फु		६	घ फू०	५८ ५	
अन्धेरियाँ ,,	८	१०	१	४	२७		६		१६ १	
रीफें ,,						१५मण	१॥	मणास	३७ ५	
तहकी जमीन	१	१५	१२ फु	६	१५		८	वासा	१० ०	
फुटकर फील										
फाँटि इ०									१०	
२ वासके लिये						फुल			१०६ ० रु०	
१ वासके लिये									७५ रु०	

४ लोहेकी पकड़े (Joists) एक-एक फुटके अन्तरपर जड़कर उनके पेटेमें नीचे (Flange) की ओर एक ओरसे डेढ इञ्च मोटी शहाबादी फर्शी पिरोकर समथल रूपसे जड़ी जाती हैं। पश्चात् लोहेकी पकड़ोंको चूनेके रसगसे बचानेके हेतु आकृति न ४४ मे वर्णित प्रकारानुसार पकड़ोंके शिरोभागपर १ इञ्च तथा बगलमें प्रायः दो इञ्च मोटा सिमेण्ट काँक्रीट बिछाकर १।२ घण्टे पश्चात् उसके मध्यवर्तीय भागमें रोड़ेका काँक्रीट दिया जाता है। इस प्रकार में सिमेण्ट काँक्रीट प्रयोगान्वित करनेके लिये उसका प्रमाण साधारणतया ६:२ १ रखा जाता है। अधिकाँश स्थानोंमें इस महत्वपूर्ण प्रणालीकी ओर दुर्लक्ष्य किया जाता है। जिसके

कारण लोहपर चूनेके अल्कका (Alkalis) दारुण परिणाम होकर वह निरुपयोगी हो जाता है।
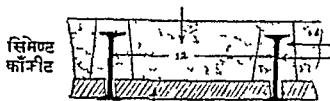
आकृति न ४४

इसके विपरीत सिमेण्टके व्यवहारसे लोहपर जग तो चढ़ताही नहीं साथही साथ पुनदृढ़ीभूत कॉंक्रीटके तत्त्वके अनुसार उसम विशेष मजबूती आजाती है। पकड़के शिरोभागतक कोवा करनेका उद्देश्य केवल पोलेपनको भरना है। अत यदि गबरों या पकड़ोंमे तैलरङ्ग (oil Paints) देकर फर्शीके शिरोभाग केवल मोरम भी भर दिया जाय तो भी काम चल सकता है। ऊपर इच्छानुसार पतली एक इञ्ची लादी चूनेमें जड़ी जाती अथवा पेटेण्ट स्टोन बैठाया जाता है। (इस सम्बन्धमें विस्तृत विवेचन आगे चलकर ' जमीन ' शीर्षक लेखमें किया गया है।

उपरोक्त प्रकारकी पाटनका सृजनकार्य नितान्त सुलभ है। उसम न कमाने हैं, न धोखा और न कुशलता। लागतकी जानकारीके लिये नीचे सारिणी दी गयी है। कमरे की नाप यथोक्त अर्थात् १५'×१२'—।

केवल मोरमका व्यवहार करनेसे सिमेण्ट कांक्रीट तथा चूनेके कोयेका खर्च,—प्राय ५०) रु बच जाते हैं और इस तरह १ प्रास पाटनमें प्राय ८१) रु लागत लगती है। इसमें ऊपर लगनवाली लादी तथा पेटन्ट स्टनका खर्च नहीं जोड़ा गया है।

मालका नाम	मालका ब्यौरा					द ब्यौ			दाम	विशेष
	नग	लं० फुट	चौ० इञ्च	मो० इञ्च	वजन मन	घ० फुट	रु	प्रति		
फौलादी पकड	१४	१४॥	४॥।	१॥।	२२५६ २०१ ह०वे०	फु क्रा	६	हु वे	रु आ ११०-१०	फुटके लिये ८॥ पौण्ड
१॥ इञ्ची शहावादी ला		१६	१॥	फ़ु १३		३३८	१२।	ग्रा०	४१-४	
लादीकी मजदुरी		१६	१॥	१३		३३८	३॥	"	११-१३	
सिमेण्ट क्रॉ	४८	१३॥	५	१		४१	७०	,	३१-८	
कोवा	२३	१३॥	५	८		८६	३०	,,	२५-१३	
दीवालकी ओरक	२	१३॥	५	१५		१४	,	,,	४-३	
नीचेसे सिमेण्टकी दराजें	१	२	१	१	१	०	१	२	१०-०	
फुटकर तथा ला तो जोट									१०-०	
कुल रैघास के लिये									२५६-३	
१ ,									८५-५	

उक्त प्रकारकी पाटन और भी सस्ती हो सकती है। साथ ही
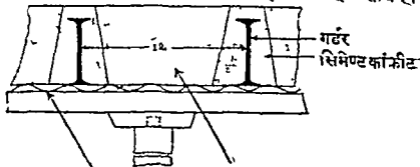
जस्तेकी चद्दर आकृति नं ४५ चूना-ईट की कोवा

ऐसा करनेसे उसकी मजबूती में भी कोई न्यूनता नहीं आती। उसके लिये उक्त प्रकारमें वर्णित विधानानुसार एक एक फुटके अन्तर पर पकड जडनेके पश्चात् नीचे खडे आधार और दण्डे देकर जस्ते की पनालीदार चद्दर का पूर्ण आधार (Centering) दिया जाता है। (आकृति ४५ देखिये) चद्दरकी नलिकाए मूदनेके लिये उनमें गीली मिट्टी कर कूटकर भर दीजाती तथा पकडका लोहा ढंकनेके लिये उतनी ही जगहपर सिमेण्ट कॉक्रीट कर दिया जाता है। इसका प्रमाण ४ २ १ होता तथा गालेके अन्तर्गत भागमें,-जैसा कि आकृतिमें दिखलाया गया है, ढालुआँ बिछाया जाता है। ५।६ घण्टेके पश्चात् उसके सूख जानेपर मध्यभागमें कोबा कूटा जाता है। सातवें दिन नीचे से सारे आधार और चद्दर निकाल लिये जाते और दूसरे स्थान पर जड दिये जाते हैं। इस प्रकारमें सतह गव् लादी बच जानेके कारण मति व्रासके पीछे १५।१६ रुपयेकी बचत होती है। गर्डरके सन्निकट ढलाऊ तौरसे सिमेण्ट कॉक्रीट होनेके कारण कमानके तत्वके अनुसार पाटन अत्यन्त सुदृढ हो जाती है।

५ पाटनकी इस सृजन प्रणालीमें लोहेकी धरन तीनसे लेकर अधिकसे अधिक ४ फुटके अन्तरपर जडी जाती तथा बीचमें ईटोंकी ४॥ इञ्ची मोटाइकी कमानें उठायी जाती है। इन कमानोंके उठानेमें नीचे आधार तख्ते अथवा इसी प्रकारके अन्य साधनों (Centering) का अवलम्ब लेनेसे लागत आशासे बाहर बैठ जाती है। अत उसे बचानेके अभिप्रायसे दो लोहेकी पकडोंके बीचमें जितना अन्तर हो उसी नापकी प्राय डेढ इञ्च मोटी तथा कमान के उभार (Rise) को देखते हुए उसकी चौडाईके बराबर एक तख्ती लेकर कमानके नीचे लगा दी जाती पश्चात् उसे इस प्रकार काट दिया जाता है ताकि कमानका अन्तगत् गोल भाग उसपर सुचारू रुपसे टिका रहे।

उदाहरणार्थ, देखिये आकृति न ४६। दो लोहेकी धरनोंके बीचमें जितना अन्तर हो उसी लम्बाईकी एक सरल रेखा 'A B' समथल जमीन देखकर उसपर निकाले। उसके मध्यगत 'G' बिन्दुसे उस रेखाके गुनियेम CD नामक एक खडी रेषा आडी रेषाके दोनोंओर खींचे। पश्चात् दोनों गर्डरोंके मध्यमें जितने फुटका अन्तर रखना हो उतने ही इञ्च (प्रति फुटके पीछे एक इञ्च) का GC नामक उभार रखे। CD नामक रेपापर एक ऐसा बिन्दु खोज निकाले ताकि, उसपर कांटा जड़कर डोरी अँटकाकर ताननेसे DA नामक त्रिज्या (Radiaus) म अङ्कित गोलकपर BC-AC नामक बिन्दु आ सकें। इतना करनेके पश्चात् प्राय १॥ इच मोटाईकी एक अ ब नामक लम्बी तरती लेकर उस AB नामक रेखापर रखते हुए ACB नामक गोलाकार पेन्सिलसे अङ्कित करे और उसीके अनुसार वह काट ले। उसके दोनों छोरोंपर समथल भागमें खांचे बनाते हुए उनमें दो लोहेकी पतली तख्तियाँ स्क्रूकी सहायतासे जड़दे। स्क्रूके समस्त अवयव तल्लीम छिपे रहने चाहिये।
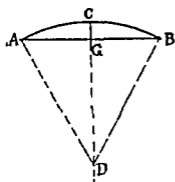
आकृति न ४६

उपरोक्त क्रिया होनेके पश्चात् पेशराज दोनों गर्डरोंपर एक आडी तख्ती रखकर उसपर बैठ जाता है। इसके पूर्व वह पासही सम्यक्-रूपसे तराई किये हुए ईंटे तथा चूनेका गिलावा तैय्यार कर रखता है। इस गिलावेमें चूनेका प्रमाण कुछ अधिक रहता

आ न ४७

तथा घिसाई भी विशेष रूपसे महीनकी रहती है। तदुपरान्त वह इस आवश्यक साधन सामुग्रीसे लैस होकर उक्त तख्ती पर बैठ जाता तथा उपरोक्त प्रकारसे गोल भाग ऊपर कर कटी हुई तख्ती दोनों गर्डरोंके निचले पेटे (Flange) पर दीवालसे प्राय ३ इञ्चकी दूरी पर रख देता है। पश्चात् एक ओरसे प्रथम ९ इञ्ची ईंटा बसुलेमें काटकर उसे गर्डरके पेटेमें बैठानेके अनुकूल बनाते हुए गर्डरके *अगल-बगलमें सिमेण्ट और बालू १ ३ प्रमाणमें सम्मिश्रित किया* हुआ मिश्रण दिया जाता और उसमें वह ईंटा जड़ा जाता है। पश्चात् सादा गिलावा डालकर दूसरा आधा ईंटा जड़ देते और पुन गिलावा देकर ९ इञ्ची अखण्ड ईंट जड़ देते हैं। इस प्रकार प्रथम एक छोरसे तथा तदुपरान्त दूसरे छोरसे जुड़ाई आरम्भकर तख्तीके शिरोभागपर मध्यवर्तीय भागके सन्निकट गिलावेका मोटा स्तर देते हैं। पश्चात् चाभीकी ईंट करनीकी मूठसे ठोकते हुए दृढ़ता पूर्वक जमा दी जाती है। इस जुड़ाईके कार्यमें सन्धियोंकी भराई पत्थरकी चिप्पियोंसे की जाती है। पश्चात् सम्पूर्ण जुड़ाई हो जानेपर नीचेकी तख्ती के एक अग्रभागमें धीरे-धीरे हथौड़ी चलाकर उसका अग्र अपनी ओर खसका लिया जाता है। इस क्रिया के समय कमानके ईंटों को आधार देनेके हेतु आवश्यकतानुरूप उसके आवश्यक भागको हाथ का आधार देते हैं। तख्ती तिर्छी रहनेसे कमान अखण्ड रहती और जब चाहे तब तदन्तर्गत तख्ती निकाल ली जा सकती है। नीचे एकाद लीद चद्दर रख देनेसे गिरनेवाला गिलावा इत्यादि सामान उसपर गिरकर वह पुन काममें लाया जा सकता है।

दूसरी पंक्तिके लिये पुन पहिले स्थानसे प्राय ९ इञ्ची दूरीपर उपरोक्त प्रकारसे तख्ती जड़कर क्रमश सम्पूर्ण जुड़ाई कर अन्तमें तख्ती निकाल ली जाती है। कमानके शिरोभागपर गिलावा डालकर उसे वहीं *जलके साथ सम्मिश्रत करते हुए* उसपर आध इञ्च मोटाईका स्तर देनेसे कमानमें विशेष मजबूती आजाती है। *गर्डरके शिरोभागपर सिमेण्ट कांक्रीट बिछाया जाता*

और पहिले दिन केवल जलकी तराई की जाती है। पश्चात् दूसरे दिन गिलावे की मेंढ बान्धकर उसमें पानी बान्ध रखते है। ऐसा करनेसे तीसरे और चौथे दिन इस कमानपर चला फिरा जा सकता और १०-११ दिनके पश्चात् उसपर आवश्यकतानुरूप भार लादा जा सकता है।

प्राय: १५ दिनके उपरान्त नीचेके पृष्टभागके ईंटे यदि नीचे ऊपर हो गये हो तो उन्हें उतने फोडकर चिकनी सतह बना ली जाती और अन्तमें सर्व्व साधारण रूपसे गिलावेका पलस्तर किया जाता है।

अधिकाँश रूपसे इस प्रकारकी कमानोका सृजन करते समय यह बात सम्भव रहती है कि, उसके भारसे अन्तिम गर्डर बाहरकी ओर घसक जाँय। परिणाम यह होता है कि समूची कमान अकस्मात् गिर पडती और नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है। इस भयको बचाने के लिये निम्न लिखित उपाय काममें लाये जाते है।

(१) गर्डरके समान्तर जो दीवालें हों उनके भीतरी ओर प्राय: दो इञ्च चौडी जगह छोडकर डेढ-दो फुटकी ऊँचाई तक बन्धाऊ काम कर लिया जाता तथा ५।६ दिनके पश्चात् उसके कुछ सूख जानेपर शेषकाम आरम्भ कर दिया जाता है।

(२) इससे अधिक उपयुक्त उपाय यह है कि, अन्तिम दो गर्डरोंके उभार (web) में, दो छोरमें दो तथा गर्भमें एक छेदकर उनमें (Bolt) पेंच कस दिये जाते है। इससे ये गर्डर निसर्गतयाही इष्ट स्यानपर जमे रहते है। आकृति सख्या ४६ में इस प्रकारका एक बोल्ट रेखामें दिखलाया गया है।

(३) इतना करनेपर भी सारे भागका काम एकसाथ आरम्भ करनेके लिये भरपूर पेशराज न होनेके कारण कमानका सृजन

करते समय अन्तिम गर्डरको खसकनेसे बचानेके हेतु उक्त सूचनाओंमेंसे किसी एकका अवलम्ब लिया जाता है। जिससे अन्तमें किसी प्रकारका भय नहीं रहता। (1) दीवालपर एक लकड़ीकी लम्बी रखकर उसके शीर्षभागको गर्डरके पेन्देका आकार देखते हुए प्राय: आध इञ्च गहरे खाँचे बनाकर उनमें गर्डर जड़ दिये जाते है। (ii) दीवालपर सिमेण्ट कांक्रीटका दो इञ्च मोटा स्तर देकर उसके सूखनेके पूर्व उसपर गर्डर रख दिये जाते तथा उनपर पुनः एक इञ्च मोटा स्तर दिया जाता है। ताकि यह कांक्रीटको मजबूतीसे पकडे तथा अपने स्थानसे हिलने न पावें। (iii) इससे उत्कृष्ट उपाय यह है कि, सब गर्डरोंके दोनों छोरों तथा मध्यभागमें छेद बनाकर उनमें पेंचकस (Bolt) कस देते हैं। (iv) सब कमान एकसाथ बनाते हैं। (v) यदि यह सम्भव न हो तो आरम्भित कमान दो-तीन फुट उठाकर गाळेका काम थोड़ी देरके लिये बन्द कर दिया जाता तथा सन्निकटस्थ कमाने उतनेही परिमाणमें उठायी जाती है। इस तरह उनके उस मर्यादा तक उठ जानेपर पुन: पहिली कमान उतनीही ऊँचाई तक तथा बादमें शेष कमान उसी ऊँचाईतक क्रमश: उठाते हुए कार्य पूरा कर दिया जाता है।

उपरोक्त किसी भी प्रतिबन्धक उपायका अवलम्ब लेनेपर भी अन्तिम दो गर्डरोंके मध्यमें तीना स्थान कस देनेसे दीवालकी ओर आडा दाब नहीं पड़ने पाता।

निम्न सारिणीमें उक्त उदाहरणके लिये माने गये ११×१५ नापके कमरेपर उक्त प्रकारकी कमानें खड़ी करनेसे जो लागत बैठ सकती है, उसका ब्यौरा दिया गया है। इसका गाळा ११ फुट लम्बा तथा १५ फुट चौड़ा समझना चाहिये। इसमें ३ फुट ७ इञ्चके अन्तरपर ६ गर्डर प्रयोगान्वित होते हैं।

मालका प्रकार	नग	ब्यौरा लम्बाई	मोटाई	चौड़ाई	घ फु०	वजन	दर	प्रत्येक	दाम
गर्डर	६	१४॥	इं० ६	इं० ३		१०४४ ९३१ ह०वे०	६	ह०वे०	५५-१४
कमानके लिये ईंटेका काम	७	१३॥	५	४।	१५८ व फु०		४१	प्रति ब्रास	७१—२
कमानकीमजदूरी	७	१३॥		४।	३७८		४।	,,	१५—०
नीचेसे गिलावा	७	१२	फुट	४।	३३६		१३	,	४३-११
रोड़ा कांक्रीट	१	१२	३	१५	घ फु०		३०	,,	११—८
गर्डरके पेटेमें सिमेण्ट गिलावा	२×६	१३॥	७	२	७५ १६		७०	,,	६१—३
फुटकर बोल्ट गोल तख्ती इत्यादि									५—०
२ ब्रासके लिये									२४३-१
१ ब्रासके लिये	कुल								८१६०
	११।	१॥	१	१	२	२	१	२	३

उक्त पद्धतिमें एक और प्रकार है । उसमे गर्डरकी जगह १० फुटके गाले तक ४"×१॥" नापकी तथा उससे आगे ११ फुट तक ४॥"×१॥" नापकी लोहेकी पकडे दो-सवा-दो फुटके अन्तर पर जड़ी जातीं तथा मध्यमें किसी प्रकारका आधार न देते हुए कमान उठायी जाती है। बेलदार इन पकडों पर तख्ती रखकर उस पर बैठ जाता है और दोनों ओर की पकड़ोंके पेटेमें कोने कटे हुए ९ इञ्ची ईंटे जड़कर उन्हे अपनी दोनों टाँगोंसे पकड रखता तथा हाथसे तीसरा ईंटा तोड़कर उन दोनों जडी हुई ईंटोंके ऊपर गिलावा डालते हुए उसे उनके छोरोंके प्छेदमे जड देता है। इस प्रकारसे उठी हुई प्रत्येक कमान ३ इञ्च मोटी और स्वतन्त्र

होती है। पेशराजोंद्वारा कमानोंके खुजा म जो ईटे काममे लाये जाते हैं वे अधिकांशरूपसे सूखे होते हैं, जलसे तर करने पर गिलावा उन्हें शीघ्रतापूर्व्वक पकड़ने नहीं पाता। अत जुड़ाई समाप्त कर चुकनेपर २।३ घण्टे पश्चात् उस काम पर नीचे-ऊपरसे पानी देते हैं। किन्तु ऐसा करना सर्व्वथा मूढ़ है और इससे काममें कमजोरी रहनेकी सम्भावना होती है। इसके अतिरिक्त इस पद्धतिमें नीचेकी ओर से कमानका सम्पूर्ण भाग सम्यक् प्रकारका नहीं होता और इसलिये १०।१५ दिनके पश्चात् बाहर निकले हुए सम्पूर्ण छोर छील-छीलकर निकाल डालने पड़ते और कमानका निचला भाग नितान्त चिकना-समथल बनाना पड़ता है। इसमें सन्देह नहीं कि, आजकल यह प्रक्रिया बड़ी लोकप्रिय हो रही है। किन्तु यह केवल इसलिये कि, इसमें लागत कम बैठती और कार्य्य सुगमता पूर्व्वक बिना किसी आधारके पूरा हो जाता है। हम मानते हैं कि, इस प्रकारका काम एकबार सूखकर भली भाँति बन्ध जानेपर अत्यन्त मजबूत प्रमाणित होता है। किन्तु फिर भी उसमें धोखा रह जानेकी अत्यधिक गुञ्जाइश रहती है। इसके अतिरिक्त २। फुटके अंतरपर १॥"x४॥" आकारके गर्डर १० फुटके गालेपर रखना भी ठीक नहीं। कमसे कम इतने गालेके लिये उनकी नाप १८इञ्चसे ऊपर रहनी चाहिये।

आकृति नं ९८-४०
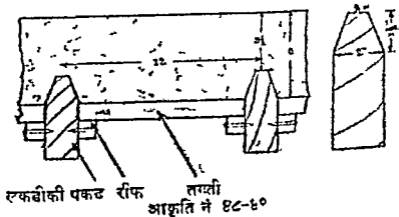
(६) लकडीकी पकडोंमें रोडा कॉक्रीट डालकर पाटन खडी करनेकी भी एक पद्धति है। इस पद्धतिमें लकडीकी पकडोंकी ऊपरी कोरोंमें चौडे चॉप जडे जाते हैं। देखिये आकृतिसंख्या ४८-४९

तदुपरान्त आकृतिमें दिग्दर्शित प्रकारानुसार भीतरकी ओर १"×१" नापके सागवानकी लकड़ीके रीफी ३।५ पेचकसोंसे जड देते हैं और उनपर दो पकडोंकी मध्यगत चौडाईके बराबर एक तख्ती रखकर उसपर रोडा कॉक्रीट बिछाया जाता है। ५।६ दिनके उपरान्त सम्यक्रूपसे कॉक्रीटके सूख जानेपर पेचकस निकालकर रीफ और तख्तियॉं पृथक् कर ली जातीं तथा नीचेसे सन्दला चढाया जाता है। इस पद्धतिसे कमानका तत्त्व अन्तर्भूत हो जाता है। पकडोंमें चॉंप देनेका उद्देश्य यही है। विशेषत: इस पद्धतिका अवलम्ब उन स्थानोंपर लिया जाता है जहॉं लकडियॉं सस्ती और सुलभता पूर्वक प्राप्त होती हैं।

कॉंक्रीटकी कुटाई भरपूर होने तथा उसमे गिलावे का सम्मिश्रण समुचितरूपसे होनेसे पाटन मजबूत और सुदृढ होती है। किन्तु फिर भी उसमें १।२ दोष रहही जाते हैं। पहिला दोष यह रहता है कि, गिलावा और लकडीका जोड कभी भी सम्यक्रूपसे नहीं बैठने पाता। परिणाम यह होता है कि, ऊपर गिरनेवाला पानी सन्धियोंमें घुसकर पाटन चूनेकी सम्भावना रहती है। दूसरा दोष लकडीके फूलनेका है। लकड़ी कितनीही पुरानी और कमाई हुई क्यों न हो वह जल-वायुकी नमीसे फूलती अवश्य है। इसके अतिरिक्त ऊष्ण और शीतल जल वायुके कारण उसमें आकुंचन और प्रसरण भी होता है। कॉंक्रीटमें यह बात नहीं पायी जाती। इन दो विजातीय पदार्थोंका आकुंचन या प्रसरण नितान्त विभिन्न प्रमाणमें होनेके कारण कॉक्रिटमें दरारें पड जानेकी सम्भावना रहती है। इसलिये यह पद्धति

छत या आँगनके लिये उपयोगमें लाना ठीक नहीं। अन्य स्थानोंपर यदि दरारें पड भी जाँय तो उसके लिये भयभीत होनेकी कोई आवश्यकता नहीं होती। क्योंकि उस दशामें सिमेण्ट या अस्फाल्टसे उन्हें भरा जा सकता है।

(७) उक्त प्रकारके सहश्यही किन्तु कमानके तत्वको विशेष रूपसे अनुसरण करते हुए एक और पद्धतिसे पाटनका सृजन किया जाता है। उसमें पधडोंकि आकारकी पकड काटते हैं। ताकि वह शिरोभागमें दो या डेढ इञ्च रहनेसे नीचेके भागमें चार इञ्च रह सके। अत उसी तरह लकडी काटनेसे वह व्यर्थ व्यय नहीं होती।

(देखिये आकृति ५०)
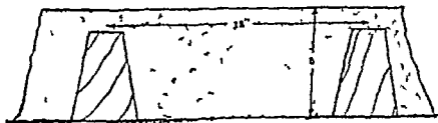
आ न ५०

एक लकडी काटकर ३।४ पकड निकाली जा सकती हैं। इनकी रन्धाई करनेसे ये नितान्त चिकनी होकर उनमें गिलावा चिपकने नहीं पाता। पकडोंमें अल्कतरा पोतकर उन्हें एक-एक फुटके अन्तरपर जडते हुए नीचे आधार तख्तियाँ देकर ऊपर कांक्रीट बिछाया जाता है। ५।६ दिनके उपरान्त कांक्रीटके सूख जानेपर तख्तियाँ निकाल ली जातीं और आवश्यकतानुसार गिलावेका पलस्तर कर दिया जाता है।

इस पद्धतिमे उक्त श्रेणीकी क्रियाके प्राय सभी दोष वर्तमान रहते है। अत गच इत्यादिके सृजनके लिये इसका अवलम्ब लेना अच्छा नहीं। इसमें कमानके तत्त्वपर विशेष जोर पडनेके कारण जन साधारणरूपसे यह विशेष सुदृढ होना चाहिये। किन्तु फिर भी इसमें व्यवहृत होनेवाली लकडी गिलावेमे सदाके लिये गडी रहनेके कारण उसमें घुन लगनेका भय रहता है।

(८) पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीट । इसका विस्तृत उहापोह एक स्वतन्त्र परिच्छेदमें किया गया है । अत उसकी यहाँपर पुनरावृत्ति करनेकी कोई आवश्यकता नहीं।

(९) आजकल इण्डियन ह्यूम पाइप कम्पनीकी पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट काक्रीटकी नलिकाए बाजारमें बहुत बिकती है। उनके सृजनके समयही उन्हें खड़ी चीरकर ६ से ८ फुटतककी लम्बाई तथा डेढसे ढाई फुटतककी चौडाईके टुकडे तैय्यार किये जाते हैं। जैसा कि, ऊपर पांचवें प्रकारमें वर्णन किया गया है, इस पद्धतिमें भी दीवालपर गर्डर जडकर दो गर्डरोके ऊपर कमानके सदृश उक्त टुकडे जडे जाते तथा उनके बीचमें सिमेण्ट कांक्रीट कूट-कूट कर भरा जाता है। कमानके शिरोभागपर इच्छानुसार शहाबादी या कटनी की लादी अथवा पेटेण्ट स्टोनकी सतह तैय्यार की जाती है। इसमें बड़ा भारी लाभ यह होता है कि, इसके प्रीत्यर्थ व्यवहारमें आने-वाली नलिकाएं तैय्यार मिलती हैं और उनके सृजनके लिये विनाकारण परिश्रम नहीं करने पडते। दूसरा लाभ यह होता है कि, इस प्रकारकी पाटनमें अग्निका भय बिल्कुल नहीं रहता। कमानकी मोटाई १ से १॥ इञ्च तक होनेके कारण पाटन अत्यन्त हल्की होकर कार्य शीघ्र समाप्त हो जाता है।

विभिन्न प्रकारकी पाटनोकी लागतका तुलनात्मक दिग्दर्शन करनेके हेतु निम्न सारिणी दी गयी है—

क्रम	प्रकार	प्रति घासका दाम
१	लकडीकी पकड़े, धरन, रीफ, बिछावन	१११
२	„ „ एक एक फुटपर „	७१ से १११
३	लोहेकी धरनोंपर लकड़ीकी पकड़े, रीफ बि	७१
४	लोहेकी पकड़ोंमें लादी और कोवा	८५
४अ	„ „ रोडा कॉंक्रीट	९८
५	लोहेकी धरनोंमें ईंटकी कमाने	७५
६।७	लकड़ीकी पकड़ोंमें कोवा	८१ से ९६
८	पुनर्दृढ़ीभूत सिमेण्ट कॉंक्रीट	८५

कितने गाले तथा कितने अन्तरपर किस नापका गर्डर जड़ा जाय इसका हिसाब लगानेके लिये सर्व साधारण नियम यह है कि, गर्डरका जितना अधिक उभाड़ (Web) हो उतनाही उसमें कम झुकाव (Deflection) होता है। सामान्यत (i) दस फुट तकके गालेमें प्रति फुटके हिसाबसे आधा इञ्च उभाड़ रखा जाता है। (ii) इससे बीस फुटतकके गालेमें प्रति फुटमें आधा अधिक एक इञ्च, यह प्रमाण है। अर्थात् १४ फुटके गालेमें ८ इञ्चके उभाड़का गर्डर व्यवहृत होता है। (iii) बीस फुटके आगे प्रति फुटके हिसाबसे आधा इञ्च अधिक १ इञ्च लिये जाते हैं।

प्रतिवर्ग फुटमें ८०से १०० [illegible] पौण्ड [illegible]
परिमाण निर्धारित किया ज[illegible]
अत्यन्त हल्के श्रेणीकी समस्त [illegible]
६० पौण्ड [illegible] किसीके [illegible]
भार १[illegible]
माधीन [illegible] कभी

मध्यम श्रेणीके लोगोंके भवनोंकी, १४ फुट तकके गालेमें किसी भी श्रेणीकी होती है। तथा १५० पौण्ड वजनकी पाटन पुनर्दृढीभूत काक्रीट अथवा अन्य किसी भी श्रेणीकी समझी जाती है। २०० पौण्ड वजनकी पाटन मिल, छापखाने, गोदाम, नाटकशाला प्रभृति सार्व्वजनिक भवनोंमें बनायी जाती है।

इस निर्धारित परिमाणकी तालिकाका प्रयोग करना अत्यन्त सरल है। उदाहरणार्थ—(१) ११ फुटका गाला, प्रतिवर्ग फुटके लिये ११५ पौण्ड वजन। उक्त तालिकाके अनुसार एक-एक फुट पर ४ ×१॥। नापके, १। फुट पर ४॥।×१॥। के, १॥ फुट पर ४ ×३' नापके, ३। फुटपर ६ ×३ के, ५॥ फुटपर ७×४ के गर्डर चल सकते हैं। ऐसी दशामें करीब-करीब बैठनेवाले गर्डर उत्तम समझे जाते हैं। क्योंकि उनसे दीवालपर गिरनेवाला भार सम्यक्‌रूपसे बँट जाता है। उक्त उदाहरणमें १ फुटपर ४×१॥। नापके या १। फुटपर ४॥।×१॥। नापके गर्डर उपयुक्त होते हैं। इनमेंसे दूसरेका उभार पौन इञ्च अधिक होनेके कारण वह झुकावके सम्बन्धमें विशेष मजबूत होता है।

उदाहरण—(२) गाला १८ फुट, सार्व्वजनिक लाइब्रेरीके दीवानखानेके मञ्जिलका, वजन प्रतिवर्ग फुटके हिसाबसे १५० पौण्ड। उपरोक्त धाराकी संख्या दो के अनुसार १८×½+१=१० इञ्ची गर्डर होना चाहिये। तालिका संख्या ९ के अनुसार १८ फुटके गालेके लिये १० ×५ का ३० पौण्डी गर्डर ५। फुटपर चल सकता है। अथवा तालिका संख्या १० के हिसाबसे १२×५ का ६॥। फुटपर चल सकेगा। दूसरे गर्डरका उभाड दो इञ्च बडा होनेके कारण वह झुकावके सम्बन्धमें विशेष अच्छा होता है। अब १२×५ के दो गर्डरोंमें ६॥। फुटके जो छोटे गर्डर व्यवहृत होते हैं वे प्रथम तालिकाके हिसाबसे १। फुटपर ७ फुटके लिये ३ ×१॥ नापके तथा दूसरी तालिकाके अनुसार १। फुटपर ४×१॥। नापके जडे जाते हैं।

पाटनके लिये व्यवहृत होनेवाले गर्डरोंकी तालिका

गर्डरका आकार और वजन	गाला फ़ुट	दो गर्डरोंका गर्भस्थ अंतर पाटनका वजन प्रति वर्ग फ़ुटका पौंड				
		८०	१००	१२५	१५०	२००
३ × १।। ४ पौंडी	१	फ़ु	फ़ु	फ़ु	फ़ु	फ़ु
	४	३	६।	५	४	३।
	५	४।।।	३।।।	३	२।।	२
	६	३।	३।।।	२	१।।।	१।
	७	३।।	२	१।।	१।	१
	८	२	१।।।	१।	१।	
	९	१।।	१।	१		
	१०	१।	१			
४ × १।।। ५ पौंडी		फ़ु	फ़ु	फ़ु	फ़ु	फ़ु
	५		६।।।	५।	४।।	३।
	६	५।।	४।।	३।।	३	२।
	७	४।	३।	२।।	२।	१।।
	८	३	२।।	२	१।।	१।
	९	२।।	२	१।।	१।	१
	१०	२	१।।	१।	१	
	१२	१।।	१।	१		
४।।। × १।। ६।। पौंडी	६		६।।	५।	४।।	३।
	७		५	४	३।	२।।
	८	४।।।	३।।।	३	२।।	१।।।
	९	३।।।	३	२।।	२	१।।
	१०	३	२।।	२	१।।	१।
	११	२।।	२	१।।	१।	१
	१२	२	१।।	१।	१	
	१४	१।।	१	१		

गर्डरका आकार और वजन	गाला फुट	दो गर्डरोंका गर्भस्थ अंतर पाटनका वजन प्रति वर्ग फुटका पौंड				
		८०	१००	१२५	१५०	२००
४×३ ९॥ पौंडी	७		६।।।	५।	४॥	३।
	८	६।	५	४	३।।।	२॥
	९	५	४	३।	३॥	२
	१०	४।	३।	२॥	३।	१॥-
	११	३।	२।।।	२।	१।।।	१।
	१२	२।।।	२।	१।।।	१॥	१
	१४	२	१॥	१।	१	
४×३ १२ पौंडी	८			७॥	६।	४।।।
	९		७।	५।।।	४।।।	३॥
	१०		६	४।।।	४	३
	११	७॥	४।।।	३।।।	३।	२॥
	१२	६	४	३।	२॥	२
	१३	५	३॥	२।।।	२।	१।।।
	१४	४।	३	२॥	२	१॥
	१५	३॥	२॥	२	१।।।	१।
	१६	२।	२।	१।।।	१॥	१
	१८	२।।।	१।।।	१	१।	
७×४ १५ पौंडी	१०		९।।।	७।।।	६॥	४।।।
	११		८	६॥	५॥	४
	१२	८॥	७	५॥	४॥	३॥
	१३	७।	५।।।	४।	३॥-	२॥-
	१४	६	४।।।	३।।।	३।	२॥
	१५	५॥	४॥	३॥	३	२।
	१६	४।।।	३।।।	३	२॥	१॥
	१७	४।	३।	२॥	२।	[illegible]
	१८	३॥	२।।।	२।	१।।।	[illegible]
	२०	३	२॥	२	१॥	[illegible]
	२२	२॥	२	१॥	१।	[illegible]

गर्डरका आकार और वजन	गाला फुट	दो गर्डरोंका गर्भस्थ अंतर पाटनका वजन प्रति वर्ग फुटका पौंड				
		८०	१००	१२५	१५०	२००
		फूट	फूट	फूट	फूट	फूट
८ × ४ १८ पौंडी	१०			९॥।	८।	६
	१२		८॥	६॥।	५॥	४।
	१३	९	७	५॥	४॥।	३॥
	१४	८	६॥	५	४।	३।
	१५	७	५॥	४॥	३॥।	२॥।
	१६	५॥।	४॥।	३॥।	३	२।
	१७	५।	४।	३।	२॥।	२
	१८	४॥।	३॥।	३	२॥	१॥।
	१९	३॥।	३	२॥	२	१॥
	२०	३॥	२॥।	२।	१॥।	१।
	२२	३	२॥	२	१॥	१।
९ × ४ २१ पौंडी	१२		११	९	७॥	५॥
	१३	१२	९॥	७॥	६।	४॥।
	१४	१०	८	६।	५।	४
	१५	९	७	५॥	४॥।	३॥
	१६	८॥	६॥।	५।	४॥	३।
	१७	६॥।	५।	४।	३॥	३॥
	१८	६	४॥।	३॥	३।	२॥
	१९	५॥	४॥	३॥	३	२।
	२०	५	४	३।	२॥	२
	२१	४।	३॥	२॥।	२।	१॥
	२२	३॥।	३	२॥	१॥।	१॥

गर्डरका आकार और वजन	गाळा फूट	दो गर्डरोका गर्भस्थ अतर पाटनका वजन प्रति वर्ग फुटका पौंड				
		८०	१००	१२५	१५०	२००
		फूट	फूट	फूट	फूट	फूट
१० × ५ ३० पौंडी	१४			१०।।।	९	६।।।
	१५		११।।	९।।	७।।।	५।।।
	१६	१२।।	१०	८	६।।।	५
	१७	११	९	७	६	४।।
	१८	९।।।	७।।।	६।	५।	३।।।
	१९	९	७	५।।।	४।।।	३।।
	२०	८	६।।	५	४।	३।
	२२	६।।।	५।	४।	३।।	२।।
	२४	५।।	४।।	३।।	३	२।
	२६	४।।।	३।।।	३	२।।	१।।।
१२ × ५ ३२ पौंडी	१५			११।।।	९।।।	७।
	१६		१२।।।	१०	८।।	६।
	१७		११	९	७।।	५।।
	१८	१२।।	१०	८	६।।।	५
	१९	११	०	७	६	४।।
	२०	१०	८	६।	५।	४
	२२	८।	६।।।	५।	४।।	३।
	२४	७	५।।	४।	३।।।	२।।।
	२६	५।।।	४।।।	३।।।	३	२।
	२८	५	४	३।	२।।	२
	३०	४।	३।।	२।।।	२।	१।।।
	३२	३।।।	३	२।।	०	१।।

गर्डरका आकार और वजन	गाला फुट	दो गर्डरोंका गर्भस्थ अंतर पाटनका वजन प्रतिवर्ग फुटका पौंड				
		८०	१००	१२५	१५०	२००
१५ x ५ ४२ पौंड	१८			१२॥	१०।	७॥
	१९			११।	९।	७
	२०		१२॥।	१०	८॥	६।
	२१		११।	९	७॥	५॥
	२०		१०॥	८।	७	५।
	२४	१०॥।	८॥।	७	५॥।	४।
	२६	९।	७।	५॥।	४॥।	३॥
	२८	८	६॥	५	४।	३।
	३०	७	५॥	४।	३॥।	२॥।
	३२	६	४॥।	३॥।	३।	२॥
	३४	५	४।	३।	२॥	२
	३६	४॥।	३॥	३	२॥	१॥।

गिलावा कफलात-जमीन

भवनका पृष्ठ भाग समथल, चिकना तथा दृढ़ देकर सुन्दर बनाने एवम् उसके अन्तर्गत आगम जलवायुका प्रभाव रोकनेके विचारसे भवनमें गिलावा किया जाता है। पत्थरके घन्धाऊ काम पर अधिकसे अधिक १। इञ्च मोटा तथा ईंटके कामपर पौन इञ्च मोटा गिलावा किया जाता है। कोरदार पत्थरपर गिलावा भली भांति जमता नहीं। मसालेको जमनेमें सुविधा करा देनेके विचारसे घन्धाऊ कामके जोड़ (दरारें) कील कांटसे प्रायः पौन इञ्च

गहरी खोद लिये जाते तथा उनमें भरपूर पानी दिया जाता है। पत्थरकी अपेक्षा ईंटके बन्धाऊ काममे कहीं अधिक पानी देना पडता है। क्योंकि, उनमें जल शोषण शक्ति रहती है।

गिलावा करते समय उसका बहुतसा अँश जमीनपर गिरता और वह मिट्टीमें मिलनेपर निरुपयोगी हो जाता है। अतः इसके पूर्वही जिस जमीनपर गिलावा करना होता है उसकी जलसे सींचाई कर ली जाती और उसे भलीभांति ठोक पीटकर समथल बना लिया जाता है। दीवालोंको छींटे-कतरोसे बचानेके लिये उनपर चारों ओरसे बोरे या पनालीदार चद्दरें फैला दी जाती है।

पहिला पलस्तर छर्राका दिया जाता है। उसके प्रीत्यर्थ स्निग्ध चूना तथा बालू १ १ प्रमाणमें सम्मिश्रित कर उस गिलावेमें थोडा सिमेण्ट मिलाते हुए उसका पलस्तर दीवालपर फैला फैलाकर किया जाता है। छर्रा करनेका मूल उद्देश दीवालके पृष्ट भागसे गिलावेका जोड बैठाना है। अतः छर्रा मजबूतीसे जमाकर उसका पृष्ट भाग खुरदरा बनाते हैं। यह स्तर प्राय पाव इञ्च मोटा होता है।

दूसरा पुट देनेके पूर्व स्निग्ध चूना तथा बजरी १:१ प्रमाणमे सम्मिश्रित कर घानी अर्थात् चक्कसमें पीसते है। पश्चात् उसे उसी-तरह ७।८ दिनतक रखकर पुन पिसाइ होती है। जलस्नेही चूनेका प्रयोग करना हो तो ऐसा करना नितान्त आवश्यक है। क्योंकि यदि ऐसा न किया जाय तो उसमें रह जानेवाले बुन कहूड छ छः मासतक ज्योंके त्यों रह जाते ह जिसके कारण हवामें शीत पैदा हो जानेसे कली खिलकर उसस्थानपर गिलावा फूट जाताहै और दीवाल फोड़ेके सदृश फूल उठती है। इस श्रेणीका गिलावा किस प्रकारतैय्यार किया जाता है, इसका विस्तृत विवेचन साधन सामुग्री भागके 'बालू-गिलावा' शीर्षक परिच्छेदमे किया गया है।

गिलावेके काममें शङ्ख-सीप या शङ्खवादी पत्थरकी खटियाका चूना विशेष उपयुक्त होता है।

छर्रेका चूना यदि तीक्ष्ण जातिका हो तो छर्रेकी क्रिया होनेपर एकबार जलकी तराई कर उसे ५।६ दिनतक सूखने दिया जाता है। जलस्नेही चूनेके गिलावेका छर्रा करनेसे ४।५ दिनतक दिनमें २।३ बार जलकी तराई करनी पड़ती है।

दूसरा स्तर देनेके पूर्व तेलका हाथ फेरकर दीवालमें स्थान-स्थानपर तारके कांटे जड़ दिये जाते तथा गुनिया लगाकर उनकी मध्यवर्तीय डोरीको आड़ी-टेढ़ी पकड़ते हुए समस्त कांटोंके शिरो भागको एक सतहमें लाते हुए करनीकी सहायतासे उन कांटोंके चारो तरफ उनके शीर्षभागके बराबर गिलावेके लम्बे-चौड़े दांते बनाते हैं। उनके किञ्चित् मात्र सूख जानेपर कांटे निकाल लिये जाते हैं। आरम्भमें तेलका लेप देनेके कारण इस समय उन्हें निकालनेमें गिलाया उखड़ आनेका भय नहीं रहता। ८।१० घण्टे पश्चात् अर्थात् दांतोंके सूख जानेपर उनके मध्य भागमें गिलावा देते हुए दो-दो दांतापरसे लकड़ीका रन्धा चलाकर ऊपरसे गिला वेका पलस्तर किया जाता है। दांतोंके गिलावेमें थोड़ासा सिमेण्ट मिला देनेसे वे १।१ घण्टेमें सूखकर मजबूत हो जाते हैं। दूसरे दिन इस पद्धतिसे तैय्यार किये हुए गिलावेपर लकड़ीके पीटनेसे भरपूर पिटाइ की जाती तथा बीच-बीचमें बड़े गुड़, बेलकी गुद्दी या गुड़के पानीकी सिंचाई की जाती है।

इस प्रकार १।० दिनतक यह क्रिया करनेके पश्चात् उसपर दूसरा पलस्तर नीरू सन्दलेका दिया जाता है। जिसकी निर्म्माण क्रिया साधनसामुग्री विभागके ' बालू-गिलावा ' शीर्षक प्रकरणमें दी गयी है।

जहाँ गिलावा अत्यन्त चिकना बनानेकी आवश्यकता होती है वहाँ कहीं-कहीं सङ्ग जराहत (Soap Stone) नामक पत्थरको महीन पीसकर उसका चूर्ण बना लिया जाता है। पश्चात् उसका घोलसी बनाकर सन्दला लगानेके प्राय १ घण्टे उपरान्त उसके थावसे सूख जानेपर इसे फेरते हुए करनीसे घुटाई होती है।

कहीं-कहीं सन्दलेमे अभ्रकका महीन चूण मिलानेकी भी परिपाटी है। इससे गिलावेमें चमक आ जाती है।

सन्दलेके स्तरकी सर्व्व साधारण मोटाई प्राय $\frac{1}{16}$ इञ्चसे $\frac{1}{8}$ इञ्च तकके भीतर होनी चाहिये। इससे अधिक मोटास्तर होनेसे उसमें बारीक दराजें हो जाती हैं। एकबार पलस्तर कर चुकनेपर उसे पानीसे बचाना चाहिये तथा शीघ्रही घुटाई कर देनेसे उसमे महीन दरारें नहीं उत्पन्न होने पातीं। यदि घुटाई देरसे करनी हो तो गुड या बडे हरेंके जलका एक हल्का हाथ सम्पूर्ण स्तरपर फेर दे।

गुनियेमें बनी हुई दो दीवालोंके कोणोमें कूडाकर्कट तथा मकडियोंके जाले पैदा हो जाते हैं। अत आजकल उनमें गोलाई देनेकी परिपाटी हो गयी है। नि सन्देह यह व्यवस्था उत्तम है। किन्तु गोलाईका व्यास १ इञ्चसे अधिक होना अच्छा नहीं।

गिलावेकी नयी पद्धति

उक्त पद्धतिसे गिलावा करनेमे बडी मेहनत पड़ती है। इसके अतिरिक्त उस पद्धतिमें दो बार गिलावेको सानना पडता तथा पृथक्-पृथक् तीन पुट देने पड़ते हैं। अत यह स्पष्ट है कि, इसमें मजदूरी अधिक लगकर समय भी बहुत नष्ट हो जाता है। साथही यदि चूना जलस्नेही जातिका हुआ तो दीवालमें फोड़ेके सदृश्य फुलाव होनेका भय रहता है। अत इन सब आपदाओंसे बचनेके लिये गिलावेकी निम्न लिखित पद्धतिकी शरण लेना विशेष उपयुक्त एवम् सरल सिद्ध होता है।

प्रथमत दराजे या सन्धियोंको भली भाँति खोद-खुरचकर दीवालम भरपूर पानी दे देना चाहिये। पश्चात् एक जगह ६ भाग स्वच्छ एवम् महीन बालूमे एक भाग सिमेण्ट और १ भाग तीक्ष्ण

(Fat) चूना मिलाकर रख दे। तदुपरान्त आवश्यकतानुसार उस सम्मिश्रणको पानीमें सानकर एक साथही उपरोक्त पद्धतिमें वर्णित गिलावेका दूसरा पुट दे दे। यह गिलावा प्रायः ३।४ घण्टेमें सूख जाता है। इसके बाद उसे एक दिन तक उसी तरह छोड़ते हुए कमसे कम ५।६ बार जलसे सींचे। तदुपरान्त दूसरे दिन एक ईटके टुकडेसे पृष्ठ भाग भली भांति रगड़कर उसे साफ सुथरा और समथल बनाये और अन्तमें सिमेण्ट १ भाग, चूना पिसा हुआ गिलावा १ भाग, शुभ्र एवम् महीन मोरम १ भाग जलमें सम्मिश्रितकर उसका अन्तिम पुट देते हुए सन्दला करे और करनीसे खूब घोटे।

इस नवीन क्रियामें सर्व्व साधारणकी अपेक्षा आधी मजदूरी बैठती है। चक्कसमें दुबारा पिसाई नहीं करनी पड़ती। छर्रा नहीं करना पड़ता तथा पिटाईके परिश्रम और मजदूरी बच जाती है।

सम्पूर्ण लागतकी दृष्टिसे तुलनात्मक रूपसे विचार करनेपर तीन चौथाई लागत पड़ती है। इसमें उक्त कारणोंके वश व्यय होनेवाला धन तो बच ही जाता है, साथही साथ, पाट, बेलकी गुद्दी, बडहेर या गुड़का पानी नहीं देना पड़ता। मजबूतीकी दृष्टिसे इस पद्धतिसे किया हुआ गिलावा कहीं अधिक मजबूत और वज्र बन जाता है। साथही उसमें सिमेण्ट होनेके कारण आरोग्यकी दृष्टिसे भी वह अत्यन्त हितावह होता और सौन्दर्यकी वृद्धि करता है।

सिमेण्टका गिलावा

कहीं-कहीं शरीरारोग्यकी दृष्टिसे चूनेकी जगह सिमेण्टका गिलावा किया जाता है। उदाहरणार्थ स्नान [illegible] मोरियाँ गटर प्रभृतिस्थानोंमें [illegible] अन्[illegible] दीवाल अथवा व्यव[illegible] निवार[illegible]। दीवालोंपर स्तर देने[illegible] आयो[illegible] लोंकी दराजो - -

लिया जाता है। इसकी निर्म्माण प्रणाली और व्यवहार प्रणाली साधन-सामुग्री प्रकरणमे विस्तार पूर्वक दी गयी है।

जलाभेद्य गिलावा

जलके कुण्ड अथवा ऐसेही किसी जलधारक स्थानको जल-स्पर्शसे बचानेके हेतु जिस गिलावेका पलस्तर किया जाता है, उसे जलाभेद्य गिलावा कहते है। इसमें बालू और सिमेण्टका प्रमाण १ १ रहता है। प्रयोगान्वित करते समय इसकी अधइञ्ची तह देते हैं तथा उसके सूखनेके पूर्व्वही महीन बालू तथा सिमेण्ट समप्रमाणमें मिलाकर उसका पुन' एक आध इञ्ची स्तर दिया जाता है और उसपर केवल सिमेण्टका पुट देते हुए घुटाई होती है। इस क्रियाके पश्चात् सिमेण्टके कुछ सूख जानेपर उस विले-पित भागपर फिटकिरीके पानीका हाथ फेरा जाता और उसके सूखनेके पूर्वही उसपर साबुनके पानीका हाथ फेरकर पुन घुटाई होती है। इस क्रियासे जलाशय जलाभेद्य होजाता है।

ईंटोंकी दीवालके लिये सस्ता गिलावा

यह गिलावा विशेषत बाह्यगत् भागकी ओर विशेष सस्ता और सुविधाजनक होता है। इसे काममें लानेके पूर्व्व दीवालको भली भाँति जलसे तर कर देते हैं। पश्चात् सन्दलेमें आधा भाग नरम मोरम मिलाकर करनीकी सहायतासे उसे दीवालमें स्थान-स्थान पर जमा देते है। तदुपरान्त एक घडेमें तीन सेर गुड डालकर उसमें पानी भर दिया जाता और उसी पानीमें एक नरम ईंट बार-बार डुबा-डुबाकर उसकी सहायतासे दीवालपर लगा हुआ सन्दला-फैलाकर समथलरूपमें स्तरीभूत करते हुए सम्यक् घुटाई होती है। सर्व साधारण रूपसे इस स्तरका प्रमाण एक इञ्च का आठवा हिस्सा होता है तथा इसमें लागत प्रति फीसदी, वर्ग फुटके हिसावसे केवल ८।१० आने तक पड़ती है। यह गिलावा अत्यन्त मजबूत होता है।

रफ कास्ट अथवा सिमेण्टका छर्रा

ईंटके काम की बाह्यगत शोभा वृद्धिङ्गत करने तथा पर्देमें बर्साती जल भरने न देनेके विचारसे जिस प्रकार कामके बाह्य पृष्टभाग पर गिलावा किया जाता है, उसी प्रकार उसके साथ-साथ छर्रा करनेकी भी परिपाटी है। केवल गिलावा करनसे उसके फफोले गिरनेका भय रहता है। किन्तु एकवार छर्रा किया जाने पर उस भयसे बहुत कुछ अंशोंमें छुट्टी मिल जाती है। दूसरी बात, छर्रेमें जो विशेष रहती है, वह यह होती है कि, छर्रेमें किसी भी रङ्ग का सम्मिश्रण होनेसे वह अनवरत-मूसलाधार वृष्टि होने पर भी नष्ट नहीं होनेपाता। खिडकियों और दरवाजोंके अगल बगलमें सादे गिलावेकी पट्टी तथा दीवाल पर छर्रा करने या ठीक इसके विपरीत किया करते हुए उसमें विभिन्न रङ्गोंका सम्मिश्रण कर देनेसे काममें अपूर्व शोभा उत्पन्न हो जाती है।

छर्रा करनेके स्थानोंपर स्थित दराजें प्रथमत भली भाँति खोदकर दीवालोंको सम्यक्रूपसे पानीसे तर कर लिया जाता है। पश्चात् सिमेण्ट १ भाग तथा गरगरेदार चौथाइञ्च मोटे दानेकी बालू एकमें मिलाकर उसे पानीमें सानते हुए आवश्यकतानुसार उसमें इच्छित रङ्ग मिलाया जाता है। तदुपरान्त करनीकी सहायतासे जोरसे फैला-फैलाकर वह मसाला दीवालपर पोत दिया जाता और घोटते-घोटते उसे समथलरूपमें आधा इञ्च मोटाईके प्रमाणमें स्तरीभूत किया जाता है। इसमें मिलाये जानेवाले रङ्ग अपने गीलेपनमें बडे भड़कीले मालूम होते हैं। किन्तु पलस्तरके सूख जानेपर उनकी वह तेजी निकल जाती और उनमें फीकापन आ जाता है। कहीं-कहीं दो बार करके इस प्रकारके गिलावेके पतले स्तर देकर उसकी मोटाई इष्ट प्रमाणमें मिला दी जाती है। वह इस उद्देश्यसे कि, जिसमें कोइ कोना-कतरा-गड्ढा पलस्तरसे छूटने न पाये। अतिरिक्त इसके कहीं-कहीं रङ्गीन गिलावेका एक

पलस्तर देकर अन्तमें उसी रङ्गके सिमेण्टके गिलावेका अन्तिम स्तर देनेकी परिपाटी है। विशेषतया छर्रेका सौन्दर्य बढानेके हेतु निम्नलिखित बातो पर ध्यान दिया जाता है—

१ पृष्ठभागपर कहीं भी ऊबड़-खाबड जगह या गड्ढा न छूटने पाये।

२ जहांतक सम्भव हो सम्पूर्ण दाने एक ही आकारके हों।

३ रङ्ग एकसा होना चाहिये।

४ ईटके काम पर कमसे कम इतना मोटा स्तर होना चाहिये ताकि, उसके जोड दिखलायी न दें।

छर्रेमें दोष इतनाही होता है कि, उस पर गर्दा-धूल अत्यन्त जमी रहती है।

स्मूथकास्ट अथवा बारीक छर्रा

इस प्रकारका गिलावा बाह्यगत अङ्गमें करते हैं। पहिले उक्त विधानानुसार प्राय आधेसे पौन इञ्च तक की मोटाईका सिमेण्टका गिलावा कर लगेहाथ महीन छनी हुई बालू ओर सिमेण्ट ३ १ प्रमाणमें मिलाकर उसी प्रकार छर्रा कर देते तथा रन्धोसे हल्के हाथसे रन्धाई कर देते हैं।

इसी प्रणालीके दूसरे एक प्रकारमें आरम्भिक स्तर देनेवाले सम्मिश्रणमें सिमेण्टका प्रमाण कुछ अधिक कर दिया जाता है। तथा लगेहाथ उस स्तरपर सूखा दानेदार मोरम फैलाकर हल्के हाथसे रन्धा चलाते हुए उसे जमाकर समथल बना दिया जाता है। यह क्रिया नलिका द्वारा बालूकी फुँकाई करते हुए भी पूर्ण की जाती है। नीचे गिरीहुई या सिमेण्ट मे मिलाई हुइ बालू पुन व्यवहार मे नहीं लायी जाती। इस प्रकारका छर्रा अत्यन्त सुन्दर होता है।

इसी प्रकार मोटे छर्रेकी भी प्रणाली है। उसम सेमके बीजके आकारके मोटे मोरमके दाने छानकर, सिमेण्टका गिलावा करने

के पश्चात्, उसके गीलेपनमें ही वे उसपर जड़ दिये जाते और एक दो फुट लम्बी तथा तीन-चार इञ्च चौड़ी लकड़ीकी तख्ती लेकर उसे उस जडाऊ कामपर रखते हुए हल्के हाथसे हथौडी चलाकर उसके निचले पृष्ठ भागको एक समान कर दिया जाता है। इस क्रियामें यदि विभिन्न रङ्गके मोरमके दाने व्यवहारमें लाये जाँय तो कार्यका सौन्दर्य द्विगुणित हो जाता है। कोण या चौकोर आकारके दाने जड़नेकी अपेक्षा गोलाकार दाने जड़नेमें विशेष सुविधा होती है।

कौंडी गिलावा (Mosaic Plaster)

दर्शनी भागकी शोभा वृद्धिङ्गत करनेके लिये बेल-बूटे इत्यादि निकालनेके काममे इस गिलावेका प्रयोग होता है। इसमें उत्तम श्रेणीका गिलावा आवश्यक भागपर काममें लाकर ऊपरसे थोडासा सिमेण्ट छिडक देते हैं। पश्चात् इच्छानुसार जिस आकार प्रकारका बेलबूटा निकालना हो उसका खाका (मानचित्र= Outline) प्लायवुड नामक लकड़ीके तख्ते, लौह निर्मित चद्दर अथवा मोटी दफ्तीपर निकालकर उसे उसी मानचित्रके आकारमें किनारे-किनारेसे काटकर गिलावेपर रखते और एक नोकदार कांटे अथवा करनीसे पृष्ठभागपर उसका प्रतिचित्र बनाते हुए अन्तमे वह चद्दर-तख्ता या दफ्ती निकालकर उन चिन्हित स्थानोंपर (Glazed Tiles) जिलो किये हुए कवेलुओंके रङ्ग-बिरङ्गी टुकड़े हाथसे बैठाकर उसपर पानी छिडकते हुए एक तख्ती रख देते और उसके पृष्ठभागपर हथौडी या करनीकी हल्की चोट दे देते हैं। ऐसा करनेसे वे टुकड़े सम्यक् रूपसे गिलावेमें जम जाते और सुन्दर मालूम होते हैं। उनपर पुनः एक बार सिमेण्ट छिडका जाता और त्वरित ही कपड़ेकी सहायतासे हल्के हाथसे पोंछ लिया जाता है। यह क्रिया अत्यन्त सरल और सौन्दर्यवर्धिनी है।

वेलबूटेका खुदाऊ काम

सिमेण्टके गिलावेमे रङ्गीन बेल-बूटोकी खुदाई करनेकी एक और सरल युक्ति है—

इसमें प्रथमतः सर्व्व साधारण प्रकारकी भांति बालू मिश्रित सिमेण्टका गिलावा कर पृष्ठ भागको कुछ खुरदरासा रखा जाता है। पश्चात् उसपर इच्छित (Back Ground) पार्श्वभागके लिये जिस रङ्गकी आवश्यकता हो उसे सिमेण्टके साथ समप्रमाणमें मिलाकर उस मिश्रित पदार्थको जलके साथ द्रवीभूत कर दिया जाता है। तदुपरान्त उस मिश्रित द्रव्यको हल्के हाथसे सारे पृष्ठ भागपर पोत देते हैं। यह पुट एक अष्टमांश इञ्चसे अधिक मोटा नहीं होता। पश्चात् उक्त विधानानुसार इच्छित बेल-बूटा पृथक् चित्रित कर उसे गिलावेपर रखते हुए उसी भाग विशेषपर हल्के हाथसे ब्रश या चियडेकी सहायतासे तेल पोत देते हैं। तदनन्तर दूसरे किसी रङ्गमें सिमेण्टको समप्रमाण मिलाकर उसका एक हाथ सम्पूर्ण पृष्ठ भागपर घुमाया जाता और उसकी स्थितिमेंही उक्त चित्रित स्थानपर पुनः खाका (out line) रखकर उसकी पुनरावृत्ती की जाती और अन्तमें हल्के हाथसे करनीकी सहायता लेकर वह महीन स्तर धीरेसे निकाल लिया जाता है। नीचे तेल लगा रहनेके कारण इस क्रियामें विशेष असुविधा नहीं होती। इस प्रकार किसी भी रङ्गके पार्श्वभाग पर (Back ground) विभिन्न रङ्गके फूल-फल एवम् बेलबूटे चित्रित किये जा सकते हैं। हां, रङ्गका मेल तथा उनकी सजावट का ज्ञान होना इस कार्यमें परमावश्यक है।

जमीन—फर्श

१—मोरमकी जमीन

यदि सम्यक् प्रकारसे मोरमकी जमीन की जाय तो वह नितान्त स्वच्छ और सुशोभित होती है। ऐसी जमीन पर पैर रखनेसे पैरोंको ठण्ढापन नहीं मालूम होता। इस प्रकारके फर्श अर्थात् जमीन पर थोड़ा बहुत जल गिरनेसे वह उसमें भलीभांति सूख जाता है। लादी अथवा पेटेण्ट स्टोनकी जमीन पर जल गिरनेसे वह ज्यों का त्यों रहकर पैर भींग जाते हैं। इसके अतिरिक्त हमारे भारतवर्षमें जूतेके बिनाही सारे घरभरमें घूमनेकी रूढी होनेके कारण तथा गोबरसे लीपनेकी प्रणाली प्रचलित होनेके कारण मोरमकी जमीन बनाना ही हमारे लिये विशेष उपयुक्त और सुविधोजनक है। हाँ, इसमें सन्देह नहीं कि, लादी अथवा सिमेण्टकी जमीनें जब चाहे तब धोयी जा सकती हैं। किन्तु उन्हें भसिसताह १ बार तो अवश्यही धोना पड़ता है। इसके अतिरिक्त यदि ऐसी जमीन पर बैठकर भोजन आदि करनेके पश्चात् उसे गोबरसे लीप दिया तो वह उल्टे आरोग्यकी दृष्टिसे अत्यन्त भयप्रद होता है। उस पर लगा हुआ गोबर भलीभाँति छूटता नहीं। अत: घरमें, कमसे कम रसोई घर तथा व्यवहार गृहकी जमीन तो अवश्य ही मोरमकी होनी चाहियें। व्यवहारगृहकी जमीन प्रसूत अबलाओंके लिये सुविधाजनक होती है। उससे उनके पैरोंमें ठण्ढ नहीं लगती। इस प्रकार विशेष जमीनके लिये महीन मोरम विशेष उपयुक्त होता है। इसका निर्म्माण करते समय जमीन की सतहके नीचे प्राय: ९ इञ्चकी गहराई तक की मिट्टी निकाल कर उसमें यथेष्ट पानी भर दिया जाता और ऊपर ६ इञ्चकी मोटाई तक मोरम भर देते हैं। यह मोरम यदि कुछ कठोर और मोटा हो तो भी कोई आपत्ति नहीं। पश्चात् उस पर भरपूर पानी देकर

आंटे या गाले की तरह पैरोंसे गूथते है और अन्तमें कुछ रुक्ष हो जाने पर कुटाई होती है। तदुपरान्त उस पर जिस सतहके बराबर जमीन बनानी हो उतनी मोटाईका प्राय आध इञ्च मोटा महीन मोरमका स्तर दिया जाता और पुन पूर्ववत् उसमें पानी देकर भरपूर गुथाई होती है। पश्चात् उसे एक सतहमें लाकर दिनभर योंही छोड देते और दूसरे दिन भरपूर कुटाई करते है। इस कुटाईके समय आवश्यकतानुसार बारीक मोरमका छर्रा डाला जाता और दूसरे दिन गोबर और उसकी सिट्टी डालकर पुनः कुटाई होती है। पश्चात् १।२ दिन तक उसे उसी तरह छोडते हुए प्रतिदिन एक बार उसकी कुटाई करते है। इस अवधिमें यदि उसमें कहीं छोटी-मोटी दराजे पैदा हो गयी हो तो वे कुटाईके समय मिटा दी जातीं और सारी सतहको एक समान बनाया जाता है। यदि अत्यन्त चिकनी जमीनकी आवश्यकता हो तो १ भाग गोबर और १ भाग सिमेण्टके सम्मिश्रणसे उसे लीप देते और करनीकी सहायतासे घुटाई करते है।

'कारवार' नामक जिलेमें मोरमकी जमीन अत्यन्त परिश्रमसे तैय्यार की जाती हैं। एक तो वहाँ निसगने योंही जम्बूरी—(Laterite) मिट्टी अत्यन्त चिकनी और तेलही पैदा की है। दूसरे वहाँके रहनेवाले इस कार्यके प्रीत्यर्थ अत्यन्त परिश्रम करते है। जमीनका रूप नितान्त काला दिखलायी देनेके लिये वहाँ गोबरमें दियेका काजल मिलाकर उसकी लिपाई होती है। पश्चात् एक चिकने पत्थरसे उसकी सम्यक् घुटाईकर अन्तमें "गाराय" नामक प्रान्तीय फलसे घोटा जाता है। इस फलका उपयोग इस कार्यमें वैसाही होता है जैसा कि, शङ्ख-पत्थरकी घोटाईसे होता है। दीमक आदिका भय बचानेके लिये प्रति शत वर्ग फुट जमीनमें दो सेर निमक और प्राय आध सेर हरताल या नीले थोथेका पानी पहिले दिन मोरमके ऊपरी स्तर में दे देते है।

पेटेण्ट स्टोनकी जमीन

पेटेण्ट स्टोनकी जमीन नीचे कांक्रीट तथा ऊपर सिमेण्टका गिलाया कर तैय्यार की जाती है। यह अत्यन्त हलकी होनेके कारण ऊपरी मञ्जिलपर शहाबाद अथवा इतर फर्श की अपेक्षा अत्यन्त न्यून भार पडता है। जहां सिमेण्ट अत्यधिक महँगा नहीं मिलता वहां यह-फर्शकी जमीनकी अपेक्षा आधी या पौनी लागतमें तैय्यार हो जाती है और जहां लाद्दीका मूल्य अत्यधिक होता है वहा तो इस प्रकारकी जमीनके सदृश दूसरा उपयुक्त और सुलभ साधन ही नहीं हैं।

पेटेण्ट स्टोनकी जमीनके लिये मुख्यत' नीचेकी जमीन अत्यन्त पुख्ती होनी चाहिये। इसके सृजनके समय सतहगत् मञ्जिल की जमीनमें १।२ फुटके अन्तर पर फुट-सवा फुट गहरे गड्ढे खोदकर वे पानीसे भर दिये जाते हैं। ऐसा करनेसे जमीन उस पानीको यथेष्ट रूपसे सोख लेती और उसका सम्मयनीय पोला भाग पूरी तरह धँस जाता है। उसके सम्यक्रूपसे धँस चुकने पर उसकी कुटाई होती है। पश्चात् गिट्टी-चूनेका प्राय: ४।६इञ्च मोटा काक्रीट किया जाता है। इस कांक्रीटमें आवश्यकतानुरूप ढाल दे देते हैं। पश्चात् उसे कूट कर १।३ दिनतक उसकी तराई होती है। इस तराईके उपरान्त तीन भाग बारीक और पृथक्-पृथक् रवेकी बालू लेकर उसम १ भाग ताजा सिमेण्ट मिलाया जाता और पानीमें उसका गाला तैय्यार कर उसपर प्राय' पौन इञ्च मोटा स्तर बिछाया जाता है। इस क्रियाके साथही साथ करनीसे उसकी पिटाई होती है। अन्तमें पुन' १ भाग सिमेण्ट और एक भाग बारीक बालू लेकर उसमें इच्छित रङ्ग मिलाते हुए जलमें सम्मिश्रित कर उस सम्मिश्रण अर्थात् सन्दलेका प्राय' चौथाई इञ्च मोटा स्तर दिया जाता और करनीकी सहायतासे उसकी भलीभाँति घोटाइ की जाती है। तदुपरान्त डोरी तानकर अगल-बगलकी पट्टियाँ और तदानुषङ्गिक रूमालीका चित्रचित्रण किया जाता और करनीकी नोकसे

उन्हें सम्यक्‌रूपसे और किञ्चित् गहरे भावमें अङ्कित किया जाता है। अगल-बगलकी पट्टियोंमें रङ्ग वैभिन्य उत्पन्न करनेके लिये इच्छानुसार उतने भागमें पृथक् रङ्ग मिलाकर पलस्तर कर दिया जाता अथवा पहिला खुरुचकर उस स्थानपर नवीन सम्मिश्रण विलेपित किया जाता है। यह क्रिया जमीनके निर्म्माण हो चुकनेपर तुरन्त की जाती है। कहीं-कहीं रङ्गको जलसयोगसे पृथक् रखते हुए उसे सिमेण्टमें मिलाकर उस सूखे सम्मिश्रणकोही चलनीमें डालकर इच्छित स्थानपर चालते और लगे हाथ करनीसे घोटाई करते हैं। इस प्रकारकी जमीन अत्यन्त शीघ्र सूखती है। अत: उसकी घोटाई अत्यन्त शीघ्र की जाती है।

अत्यन्त घोटाई करना भी हानिजनक है। कारण उससे जमीन अत्यन्त चिकनी (पैर फिसलानेवाली) हो जाती है। इसके अतिरिक्त सिमेण्टका एक हल्का स्तर भूपृष्ठभागपर जमजानेके कारण। जमीनमे दरारें हो जानेका भय रहता है।

कहीं-कहीं दो या तीन फुटके चौक बनानेकी परिपाटी है। उसमें कागजके टुकड़े खडे कर उनके दोनों ओर ऊपरवाला स्तर दिया जाता है। उद्देश यह है कि उससे वायुके प्रभावके कारण होनेवाले आकुञ्चन-प्रसरणको स्थान मिले। किन्तु उनके ज्यों-त्यों रहजानेके कारण जमीन भद्दी मालूम होती और पानी पड़नेपर उनके सड़ जानेका भय रहता है। ऐसी परिस्थितिमें यदि उन टुकड़ोंकी जगह लकड़ीकी तख्तियाँ तेलसे विलेपितकर खडी कर दी जाँय और जमीनके निर्म्माण हो चुकनेपर उन्हें निकालकर उनके स्थानपर आस्फाल्ट और वालू भर दी जाय तो विशेष उपयुक्त और अच्छा होता है।

इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं प्रत्येक चौक पृथक्-पृथक् रङ्गसे भरकर उनकी घोटाई होती है। इसमें सन्देह नहीं कि, इस प्रकारकी व्यवस्था कार्यमें विलक्षण सौन्दर्य उत्पन्न करती है। किन्तु परिश्रम अथक करने पडते हैं। यदि किसी चौककी

पपडी निकल जाय तो कितना ही प्रयत्न करने पर उसका पूर्व रङ्गसे मिलान नहीं हो सकता। उस दशामें जोड़ स्पष्ट मालूम होता है। कुछ लोग सिमेण्टमें अतिरिक्त रङ्ग नहीं देते और कहीं ऊपरी स्तरके सम्मिश्रणमें लोहेका चूरा मिलाया जाता है। लोहेका चूरा मिलानेसे सिमेण्ट शीघ्र आकुञ्चित हो जाता और जमीनकी मजबूती द्विगुणित हो जाती है। कुछ दिनके उपरान्त लोहेके चूरेमें जङ्ग लग जानेके कारण उसपर एक प्रकारका पीतवर्ण रङ्ग जम जाता और उसके कारण जमीनकी शोभा बढ जाती है। इन क्रियाओंके अतिरिक्त कहीं-कहीं खपडे सङ्गमरवर, कौडी, सीप, चीनी मिट्टीके सामान इत्यादिके टुकडे जोटकर तथा पीतल-ताम्बा आदिका चूरा देकर जमीन घोटी जाती है। तात्पर्य यह कि, ये सब सौन्दर्यको द्विगुणित करनेके साधन हैं।

उपरोक्त प्रकारसे रुमाल आँकनेके पश्चात् ५।६ घण्टेके उपरान्त जमीन पर थोडासा पानी डाल दिया जाता है। पश्चात् दूसरे दिन उस पर लकडीका भूसा या घास फैला कर ५।६ दिन तक उस पर बारबार यथेष्ट पानी छोडा जाता है। कहीं-कहीं इस क्रियाम बोरोंकी शरण लेते हैं। किन्तु उससे बोरे सब जाते और उनमें सिमेण्ट का रङ्ग जम जाता है। जो किसी भी प्रकार से निकलता नहीं।

पेटेण्ट स्टोनपर प्रमुखतया तीन कारणोंसे बालके सदृश महीन दरारे पडा करती ह। उनमेंसे पहिला कारण तो सिमेण्टको शीघ्र सूखने देना दूसरा कारण सिमेण्टमें बालू की कमी होना तथा तीसरा कारण जमीनकी अत्यन्त घोटाई करना है। गहरी और बडी दरारें सतहगत् जमीन धँस जानेके कारण, पुराना सिमेण्ट प्रयोगान्वित करनेके कारण तथा नीचे लकडीकी पकड़ या तख्तियाँ होनेके कारण पैदा होती है। इनमेंसे प्रथम कारणके निवारणार्थ कमसे कम ३।४ इञ्च मोटा चूनेका कांक्रीट बिछाकर उसकी सम्यक् कुटाई करनेसे उपरान्त उस पर पेटेण्ट स्टोन किया जाता है। दूसरे कारणसे जमीनके सूख जाने पर

पपडियाँ निकलनेका भी भय रहता है। अत जहाँतक होता है, इस कार्यमें ताजे सिमेण्टकाही व्यवहार करते है। नीचे लकडीकी पकड या तख्तियों होनेसे उनका जलसे सम्बन्ध होने अथवा नम हवामें रहजानेपर वे फूल उठतीं और ऊष्ण वायुमें सकुचित हो जातीं है। शीतका भी परिणाम उनपर इसी प्रकार होता रहता है। इस अव्याहत आकुचन एवम प्रसरणका परिणाम् तदुपरि जमीनपर होकर उसमे दरारें होजाती हैं। मञ्जिलके पाटन पर किये हुए पेटेण्ट स्टोनमें यदि दरारें हो भी जाँय तो उनसे विशेष आपत्ति नहीं होती। किन्तु छतकी जमीनमे ऐसा होनेसे वह चूने लगती है। अत जहाँतक होता है, छतके पेन्देमें काष्टका सयोग नहीं रहने दिया जाता। यदि किसी ऐसेही कारणवश उसके रखे बिना कोई चाराही न हो तो उस परिस्थितिमें लकडीके ऊपर इश्च डेढ इश्च मोटाईका विशुद्ध वालू अथवा वालू मिश्रित मिट्टीका स्तर देकर उसपर कांक्रीट तथा अन्तमें पेटेण्ट स्टोन करते हैं। इससे लकडीको सकुचित और विस्फारित होनेमे पर्य्याप्त गुञ्जाइश होजाती है।

जिन स्थानोपर शीतकालमे अत्यन्त सर्दी और ग्रीष्ममे भयानक गर्म्मी पड़ती है, वहाँ भी इस प्रकारकी क्रियाए निरन्तर होती रहती है। अत उस परिस्थितिमें वहाँ शिरोभागके स्तरके पेटेमे लोहेकी तारकी जाली जड़ दी जाती है।

शहाबाद तान्दूर या कटनी लादी

लादी प्राय कांक्रीटके ऊपर या व्ययमे किफायत करनेकी दृष्टिसे कभी-कभी मोरम पर भी जड़ी जाती है। यह ठीक गुनियेमे गढ़ी हुई होनी चाहिये। ढाल देनेका प्रमाण आरम्भमें ही निश्चित कर उसके अनुसार चढावके कोनेमें एक तथा उतार की ओरवाले कोणमें एक,-इस प्रकार दो फर्शियां प्रथमतया जडी जाती हैं। पश्चात् इन दोना पर एक डोरी तान कर मध्यवर्तीय

समस्त फर्शियोंको उसकी सतहके हिसाबसे जड़ा जाता है। आरम्भमें नीचे कङ्कड रखकर उसपर फर्शी रखते हुए मोटाईका अन्दाज लगा लेते हैं तथा उसी हिसाबसे कङ्कड़के स्थान पर गिलावा डालकर फर्शी जड दी जाती है। यदि चढाव अत्यधिक हो तो गिलावा निकाल लिया जाता और थोड़ा होनेसे लकड़ीके 'पिटनेसे' ठोक कर सतहमें लाया जाता है। उतारमें बैठनेसे थोड़ा गिलावा अधिक देकर पुनः उस पर फर्शी जड़ दी जाती है। इस जुडाईमें फर्शीको सतहमें लानेके हेतु उसके नीचे पत्थर इत्यादि की चिप्पी ठोकना बुरा है। इसी प्रकार गिलावेमें कङ्कड़ इत्यादि न होने चाहिये। उन्हें जुड़ाई करने पूर्वही निकाल दिया जाता है। दरवाजेमें पल्लोंके नीचे कमसे कम आध इञ्च लादीकी सतह रखी जाती है। यदि दरवाजेमें देहली न हो तो सतहका भाग थोड़ासा उठाकर दोनों ओर झुका देते हैं ताकि, पल्ले रुकने नहीं पाते। इन फर्शियोंके जोड़ आध इञ्च चोड़े विशेष उपयुक्त होते हैं। इससे कम चौड़ाई होनेसे भीतर गिलावा या सिमेण्ट नहीं भरा जा सकता। परिणाम यह होता है कि, बीचमे पोलापन रहकर उसमें चींटियाँ अपना निवासस्थान बना लेती है।

जहाँ रुमाली फर्शी करनी होती है वहाँ जिस मापके चौकोर पत्थर जड़ने होते हैं, उनमेंसे एक पत्थरको लेकर उसे चौकोर गढ लिया जाता तथा उसके कर्णकी नाप इञ्चमे लेते हुए उसमें आधा इञ्च जोड़के लिये मिला देते हैं। पश्चात् गहराईकी लम्बाई और चौड़ाईके इञ्च बनाकर उन्हें उनसे भाग देते हैं। जो भागफल निकलता है,-उतनी कलियाँ उस ओर बैठतीं तथा जो शेष बचता है उसकी आधी चौड़ाईकी तख्तियाँ दोनों ओरसे दो जड़ी जाती हैं।

जोड़-महीन बालू तथा सिमेण्टके समान सम्मिश्रणसे भर दिये जाते हैं। सलईके जोड़ोंमें कतवार रह जानेकी अत्यधिक गुञ्जा इश रहती है। अत समथल जोड़ही विशेष उपयुक्त होते हैं। ऐसी परिस्थितिमें चौड़ाई बराबर रखनेसे सौन्दर्य द्विगुणित हो जाता

है। सलईकी रेखा एकही पत्थरके लिये न खींचकर गहराईके एक ओरसे दूसरी ओरतक सीधी आँकी जाती है।

जिन्हें अपने भवनके प्रीत्यर्थ एकही बार गीट्टीमें पैसा न फँसाना हो तो वह लादीकी जुडाई यथावकाश भी करवा सकते हैं। ऐसी दशामें प्रथमत: मोरमकी जमीन बनवा कर आगे पीछे उसे थोडासा खुरचते हुए उसपर कांक्रीट बिछाया जाता और उसपर लादीकी जुडाई होती है। अथवा कांक्रीट बिछाकर उसकी गीली दशामेंही उसपर सूखा सिमेण्ट तथा महीन बालू सम प्रमाण और मिश्रित रूपमें फैला दी जाती और सम्यक् घोटाई की जाती है। इस प्रकारकी जमीन भी सरलता पूर्वक ५।१० बरस तक भलीभांति काम देती है।

पॉलिश फर्श अठकोणी तथा जिलोदार खपडोंकी जमीन

यह सब जड़नेके पूर्व सतहमें कांक्रीट बिछाया जाता है। पालिस फर्श न्यूनाधिक रूपसे मोटी हुआ करती है। अत इसके निमित्त गिलावा पतला तैयार किया जाता है। जिलोदार खपडे प्राय: एकही मोटाईके होते हैं। इसलिए उनके प्रीत्यर्थ कांक्रीटके शिरोभागपर गिलावा फैलाते हुए ऊपर प्राय: एक दशमांश इञ्च मोटी सतह सूखे सिमेण्टकी देकर उसपर एक ओरसे खपडे बिछाते चले जाते हैं। पहिली पांकि व्यवस्थित रूपसे बिछानेके उपरान्त उन बिछाये हुए खपडों तथा बिछाये जानेवाले खपडोंपर एक रन्धा रखते हुए उसपर सतह-मापक-यन्त्र रख देनेसे जमीनके उतार चढावका पूर्ण ज्ञान हो जाता है। खपडोंका कोई भी कोना चढ जाना अथवा धँस जाना अच्छा नहीं होता। बिछे हुए खपडों पर पानी देकर पश्चात् उनपर एक लम्बी एवम् समथल लकडीकी

तख्ती रखते हुए उसे हथौडीसे ठोका जाता और ऊपर आये हुए पतले सिमेण्टको लकडीका बारीक बुरादा डालकर उससे पोछ लिया जाता है। पश्चात् ५।६ दिनतक उस कामकी भरपूर जल-तराई होती है।

पॉलिश छावीकी जमीन पर शहाबादी अथवा तान्दूरकी फर्श की तरह सन्धि रखनेसे कार्य्यमें भद्दापन आजाता है। अत फर्श की जुडाई होतेही उसे रेतीसे रगडकर उसके चारों कोने साफ कर लिये जाते हैं। फर्शीकी जुडाई होनेके उपरान्त दोनो फर्शियोंका मध्यगत् जोड़ एक पोडशॉस इश्चसे अधिक न रहना चाहिये। पेशराज लोग मोटे जोडों अर्थात् सन्धियांको छिपानेके हेतु उनपर सिमेण्ट डाल देते हैं। इससे दोहरा घाटा होता है। एक तो यह कि सन्धियाँ अधिक विस्तृत होनेसे पुन फर्शी निकाल कर उनकी दुरुस्ती नहीं हो सकती तथा दूसरे यह कि, आवश्यकतासे अधिक सिमेण्टको निकाल बाहर करनेके हेतु पुन उसे पत्थरकी सहाय तासे घोटना पड़ता है। इसमें परिश्रम अत्यधिक होते तथा व्यर्थ ही मजदूरी देनी पड़ती है।

पॉलिश फर्शीकी जुडाई होनेके पश्चात् उसके जोड तथा पृष्ट भागको अन्य किसी नरम पत्थरसे घोटकर चिकना बनाया जाता है। इस प्रकारकी फर्शमें किसी प्रकारका मल नहीं चिपकता और यदाकदाचित् चिपकभी जाय तो जलमें तर किये हुए चिथडेसे उसे सरलता पूर्व्वक निकाल लिया जा सकता है।

ईंटेकी जमीन

सतहमे मिट्टी कूटकर चूनेका कांक्रीट बिछाते हुए उस पर चुनिन्दा ईंटे जलमें भिगा कर नीचे गिलावेकी गद्दी देकर जडे जाते है। ईंटोंके निर्व्वाचनके सम्बन्धमें "साधन-सामुग्री विभा गमें विस्तृत विवेचन कर दिया है। अत उसकी यहां पर पुनरा-वृत्ती करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। इन ईंटोंके किनारेकी सन्धियोंमें एक अष्टमांश इश्चकी मोटाई तक चूनेका गिलावा देकर

उनकी फर्शी तैय्यार होती है। इस पद्धतीमें भी बगलमें सरल पट्टी जड़कर शेष ईंटे तिर्छे (रुमाली पद्धतिसे) जड़नेसे फर्शीमें विशेष सौन्दर्य आ जाता है। कोडी पर जड़नेसे जमीनकी मजबूती कुछ अधिक हो जाती है। शिरोभाग पर गिलावेका पलस्तर नहीं किया जाता। इसका कारण यह है कि, वह ईंटोंसे चिपकता नहीं और उसके नीचे विस्तृत दराजें रखनेका पेशराजको बिना मागे अवसर मिल जाता है।

कवड़ी की फर्शी

इस प्रकार विशेष फर्शीके प्रीत्यर्थ विशेषत जिलेदार खपड़ोंके टुकड़ोंसे काम लिया जाता है। इन टुकड़ों का एक पेटा नितान्त खुरदरा होता है। बाजारमें ये टुकडे वजनके हिसाबसे बेंचते है। प्रमुखतया ये चार जगहके होते है। जापान, इग्लैण्ड बेल्जियम और जर्मनी। जापानी खपडोंका रङ्ग कुछ कालयाप होनेपर फीका पड जाता और सुफेद होनेपर उनमें पीलापन आ जाता है। इग्लैण्डके खपडे अच्छे होते है। किन्तु अत्यन्त मोटे और अत्यधिक मूल्यमें पाये जाते है। इस दृष्टिसे विचार करनेपर बेल्जियम और जर्मनीके खपडे रङ्ग-ढङ्ग तडक-भडक, टिकाऊपन और मूल्यमें विशेष सुलभ और अच्छे होते है। ये सुफेद और पचरङ्गी दोनो प्रकारके पाये जाते है। रङ्गीन खपडोंके लिये प्राय दूना दाम देना पड़ता है। ये टुकडे बाजारसे लाकर उन्हें कांटे जड़नेकी हथौडीसे तोड कर प्राय आधे इञ्चके टुकडे कर लिये जाते है। इन टुकडोंका चमकदार भाग चौटा तथा ऊबड-खाबड हिस्सा सकडा होना चाहिये। इसके विपरीत दपावाले टुकडे इस कायके निमित्त निरुपयोगी होते है।

इन टुकडोंका संग्रह कर चुकनेके पश्चात् फर्शियोंकी अन्य प्रणालीके अनुसार नीचे चूनेका कांक्रीट बिछाकर उसपर प्राय आध इञ्च मोटाईकी गिलावेके सदृश कफलात की जाती है। यह कफलात सब एकसाथ नहीं की जाती वरन् प्रति ४ घण्टेमें जितना काम हो सकता है, उसीके अनुसार उतनीही की जाती है। उसपर एकदशमांश इञ्च मोटा, सूखे सिमेण्टका स्तर चलनीसे चालकर बैठाया जाता तथा जिस आकार-प्रकार और रूप रंगके बेलबूटे जमीनपर अङ्कित करने हों उन्हे दफ्ती अथवा लोह चद्दरों पर अङ्कित कर, उनका मानचित्र गिलावेपर खुरुचकर बनाया जाता है। इस कार्यमें फूलोंकी पङ्खडियाँ छोटी रखना बुरा है। रेखाओंपर विभिन्न रङ्गके टुकडे बाह्यगत् कोरोंको जोडकर जडे जाते हैं। पश्चात् सायङ्कालको कार्यकी समाप्तिके समय कृत कार्यपर थोडासा जल छिडककर उसपर पुन सूखा सिमेण्ट छिडका जाता और ऊपर एक समथल लकडीकी तख्ती रखते हुए उसपर हथौडी चलाकर समस्त टुकडोंको एक सतहमें लाया जाता है। ऊपर शेष रहा हुआ सिमेण्ट लकडीके बुरादेसे साफकर ५।६ दिनतक कार्यकी जल तराई होती है।

इस प्रकारकी फर्शी तैय्यार होनेपर वह जितनी सुन्दर मालूम होती है, उतना उसके विधानमें कौशल्य और कलाका काम नहीं होता। हा, काममें देर अवश्य लगती है। कपटियाँ (जिलेदार खपडोंके टुकडोंको) को मिलाते समय उनकी सन्धियाँ अधिक चौडी रखनेसे कार्यमें भद्दापन आ जाता और स्थान-स्थानपर काले धब्बे उठे हुए मालूम होते हैं।

दीवानखाने उर्फ बैठकखानेमें इस तरहकी फर्शबन्दी अधिकांश रूपसे व्यवहृत होती है। अन्य कमरोंमें,-उदाहरणार्थ रसोईघर, भोजनगृह इत्यादि स्थानोंमें इसका सृजन आरोग्यकी दृष्टिसे हानिकर है। कारण, यहाँ एकत्रित होनेवाला कूडाकर्कट जडाऊ काममें जम जाता है।

सारी फर्शा घन जानेपर उसे धोनेके लिये गन्धकके तेजाब (Sulphuric acid) का प्रयोग किया जाता है । इस तेजाबको चौगुने पानीमें मिलाकर चिथड़ा डुबा-डुबाकर सारी फर्शा पोछ कर साफ कर लेते हैं। किसी स्थानपर यह मिश्रित जल अधिक गिरनेसे वहांका सिमेण्ट खौलने लगता और जोड अधिक गहरे हो जाते है । फल यह होता है कि, वहा क्रटाकर्कट जमनेकी गुञ्जाइश रह जाती है । चिथडा घुमानेपर पुन सादे पानीसे सम्पूर्ण फर्शीको धो लिया जाता है।

आस्फाल्ट अर्थात् अलकतरेकी जमीन

इस प्रकारकी जमीन अधिकाँश रूपसे छत या आगन की होती है । इसका रङ्ग घना काला होता है । अत्यधिक ऊष्णता पाकर यह नरम होजाती और पैर जलाती रहती है । इसकी नवीनावस्थामें इससे कई महिनातक अलकतरेकीसी दुर्गन्धि निकलती रहती है । गर्मी या शीतके कारण इसमें दरारे नहीं होतीं। जलके लिये यह अभेध्य है। इसके न दरारोंका भय है न बारबार दुरुस्ती करनेकी चिन्ता। आस्फाल्ट नामक पदार्थ बाजारमें बिकता है। यह अलकतरेहीका एक प्रकार है। इसकी प्रमुखतया दो जातियाँ होती है। एक घन और दूसरी प्रवाही। घन जातिके आस्फाल्टके टुकडेकर कढाईमें डाले जाते और उन्हे चूल्हेपर रखकर नीचे प्रबल अग्निताप दिया जाता है। उनका द्रवीकरण होना आरम्भ होतेही उन्हें एकबार चलादिया जाता और पूर्ण रूपसे द्रवीभूत होनेपर उस द्रव पदार्थमें १ भाग सिमेण्ट और दो भाग सूखी बालू मिला दी जाती है। पश्चात् उस सम्मिश्रणको एक बार चलाकर दूसरा ताव देनेके पश्चात् कढ़ाईसह नीचे उतार लिया जाता है। तदुपरान्त कांक्रीट की हुई जमीनको साफ झाडपोंछकर उसपर यह खोलती हुई दशामें उडेला जाता और करनीकी

सहायतासे फैलाकर एक सतहमें लाते हुए लकड़ीके 'पिटने' से तुरत पिटाई आरम्भ कर दी जाती है। इस काममें यह स्तर आधे इञ्चसे पौन इञ्च तककी मोटाईका पर्याप्त होता है।

छप्पर और खपड़ैल

बरसात और जलवायुसे घर तथा उसमें रहनेवालोंके संरक्षणार्थ भवनके ऊपर छप्परका छाना नितान्त आवश्यक है। इसमें निम्न लिखित विशेषताएं अवश्यमेव होनी चाहिये।

१—यह वर्षासे भी चुवे नहीं। २—ग्रीष्मतापके कारण बहुत गर्म न हो। ३—आँधी या प्रबल वायुसे उड़ न जाँय। ४—देखनेमें सुन्दर मालूम हो। छप्परकी अच्छाई-बुराई पर भी भवनका अधिकांश सौन्दर्य निर्भर करता है। पानीकी निकासी और चूनेका प्रतिकार करनेके लिये उसे यथोचित रूपसे ढालुआँ बनाया जाता और उसका ऊपरी आच्छादन जलाभेद्य (Water proof) रखा जाता है। यह विशेषतः नितान्त सादा बनाया जाता है। इसमें पानीकी निकासीके लिये जितनीही कम नालियाँ (valleys) हों उतनाही यह उपयोगी और उत्तम समझा जाता है। शोभा तथा अन्य किन्हीं कारणवश यदि नालियाँ रखनीही हों तो उन्हें दीवालपर लम्बी-लम्बी पंक्तियोंमें रखना योग्य नहीं। ऐसा करनेसे यदि दीवालें कच्ची हों तो उनके भीतर पानी भरनेका भय रहता तथा पक्की अर्थात् चूनेके गिलाइकी होनेसे उनमें दाग पड़ जाते हैं। इसके अतिरिक्त निरन्तर [illegible] वस्तु नष्ट हो जाती और आरोग्य [illegible] जाती है। अनुभवी स्थापत्य [illegible] करते समय [illegible] हिर कर [illegible] छप्पर [illegible]

अङ्ग दीवालके बाहर प्राय: १॥ फुट निकला रहता है। जहाँ मूसलाधार और फुलझडीकासा पानी बरसता हो वहाँ यह प्रमाण २ फुटतक भी कर देते हैं। किन्तु इससे घरमें किञ्चित् अन्धेरा हो जाता है।

छप्परके प्राय: १—एक-पाखी, २—दो-पाखी, ३-चौपाखी या चौकोर, ४-मालवदी (आधारयुक्त) और ५-छत, इस प्रकार पाँच प्रकार होते हैं।

एक पाखी छप्पर प्राय: आगन या जानवरोंके निवासस्थानपर व्यवहृत होता है। पहिले एक ओर दीवाल या दीवालोंमें लकडी अथवा पत्थरकी बाहें जड़कर उनपर एक लम्धी रख दी जाती और उसपरसे दूसरी ओर तातें के सहारे छप्पर रख दिया जाता है। यदि दीवालपर ही छप्पर रख दिया जाय तब तो कोई बात नहीं है। किन्तु यदि वह उक्त बाहोंपर रखा गया हो तब तो छप्परके ऊपरवाली दीवालोंके बाह्य पृष्ठभागपर बर्सातो जलकी मार पडनेसे दीवाल और छप्परके बीचकी दराजमेंसे पानीके घरमें प्रवेश पानेकी सम्भावना होती है। इसके प्रतिकारका उत्कृष्ट उपाय (जैसा कि आकृति सख्या ५१ में) यह है-कि, उसकी बनावटमें परिवर्त्तन कर दे और वह परिवर्त्तन छप्परके ऊपर ईंटे अथवा पत्थरकी कद्दनी दीवालके बाहर निकालनेके रूपमें किया जाता है। इस प्रकारकी व्यवस्था होनेसे सारा जल निसर्गतया बहकर छप्परपर जा गिरता है। आँगनका-छप्पर चद्दरदार होनेसे जिस स्थानपर वह चद्दर पडती हों उस स्थानकी दीवालाका
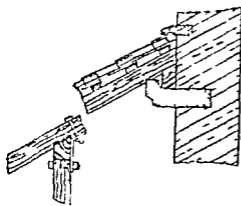
आकृति नबर ५१-५२

सृजन करते समय ईंटोंका एक स्तर प्राय १॥ इञ्च भीतर जाते हुए उसमें चद्दरें बैठायी जाती और ऊपर गिलावे और सिमेण्टका जोड-पलस्तर कर दिया जाता है।

आगनके छप्परके लिये प्रत्येक खम्भेके ऊपर एकएक प्रमुख तरका (*principal rafter*) जड़कर उसपर वत्ते (Purlines) बैठाते हुए उनपर छोटे-छोटे तरकोंकी जड़ाई होती है। किन्तु इस प्रकारकी व्यवस्थासे छप्परकी मोटाइ बढ़कर व्यय अधिक हो जाता है। इसके बदले प्रमुख तरके और वत्तोंको छोडकर केवल तरकों ही को थोडी-थोडी दूरी पर जडनेसे भी काम निकल जाता है। किन्तु इस दशामें इन छप्परोंकी स्थापना करनेके पूर्व एक बातका यह ध्यान रखना पडता है कि प्रति छ' या सात फुटके पीछे जो तरका जडा जाय वह अन्योंकी अपेक्षा कुछ अधिक मोटा हो तथा (जैसा कि आकृति सख्या ५१ में दिखलाया गया है) उनमें खांचे बनाकर लग्घियाँ जड दी जाँय। ऐसा न करनेसे छप्परके ऊपरी भारके कारण कुछ दिनमें खम्भे भीतरकी ओर झुक जाते हैं। उसके बजाय तीन सूत मोटाईकी लोहेकी तख्ती मोडकर उसमें छिद्र बनाते हुए खम्भे, लग्घी-तरके इत्यादिसे (Bolts) पेंचकस द्वारा कस देते हैं। आकृति सख्या ५१ में तरके के खाचेमें लग्घी जडकर उसके अतिरिक्त लोहेकी तख्ती भी पेंचकस द्वारा जड दी गयी है।

(२) दो-पाखेका नितान्त सादा छप्पर दोनों ओरके तरकोंका आधार देकर उनपर रीफ इत्यादि जड़कर तैय्यार किया जाता है। कहीं-कहीं दो तरकोंके ऊपरी अग्रभागके आधारपर कैंची जड़ते हैं। यह तरके डेढ-डेढ फुटपर होनेसे छप्पर ११ फुट तकके गालेतक सरलतापूर्वक तैय्यार हो सकता है। इससे बड़ा रखना हो तो उसमें किसी न किसी प्रकारकी कैंची देनी पड़ती है।

(३) चौपाखी छप्परके हेतु चारों दीवालें एक चौघरेमें लाकर उनके चारों कोनोंमेंसे चतुर्दिकस्थ सतह तथा दीवालसे ४५ अंशका

कोण बनाकर कोणयुक्त तरके मध्यवर्तीय 'चाणपर' जड दिये जाते है। कहीं-कहीं पारिभाषिक प्रयोगमे इन कोणयुक्त तरकोंको तीर भी कहा जाता है। इस प्रकारके छप्परोंकी योजना करनेसे चन्दहदार दीवालाका सृजन करना बच जाता तथा तीरोंके बीचमें तरकोंके छोटे-छोटे टुकडे भी व्यवहारमें आजाते है। किन्तु गाला बडा होनेसे तीरोंकी लम्बाई अत्यधिक बढ जाती और उसके अनुसार उनकी मोटाई भी बढानी पडती है। भवन चौकोर होनेसे चारों तीर एक जगह सम्मिलित होते हैं और उनके लिये मध्यवर्तीय चाणकी आवश्यकता नहीं रह जाती। ऐसे समय मध्यवर्तीय भागमे लकडीका एक मोटा कुन्दा जडकर उसके खाँचोमे चतुर्दिकस्थ तीर जड दिये जाते है। उनका सम्पर्क प्रत्यक्ष दीवालसे न कर उन्हें कोनेमें दीवालके ऊपर कर्णरेषामें एक लक्कड रखते हुए बगलकी दोनों दीवालस्थ तोटोंपर काँटोंसे जड दिया जाता है।

(४) आधारयुक्त या मालवदी छप्पर जहाँ बर्सातकी कमी तथा सर्दी-गर्मीकी अधिकता होती है, वहाँके लिये विशेप उपयोगी होता है। उसके प्रीत्यथ दीवालपर लग्धी रखकर उसपर धरन रखते है। छप्परके शिरोभागको जितना ढाल देना हो उसीके अनुसार धरनोंको ढाल दिया जाता है। उसका प्रमाण साधारणतया आधे इञ्चसे पौन इञ्चतक होता है। धरनोंमें कड़ियाँ और कडियोंमें किलचियाँ काँटोंके जरिये जड़ दीजाती हैं। किलचियोंका निचला भाग भलीभाँति रन्धकर उन्हें बेजोड़ रूपसे बैठा देते हैं। इनपर ६ से ८ इञ्चतककी मोटाईका शुभ्र एवम् चिकनी मिट्टीका स्तर देकर शिरोभागको आवश्यकतानुसार ढाल दे दिया जाता है। शोभा और संरक्षणकी दृष्टिसे उसके चारों तरफ कटघरा खड़ा कर देते तथा उसकी सतहमें स्थान-स्थान पर छिद्र रखते हुए बर्साती जलकी निकासीके हेतु उनमें चीनी मिट्टी या लोह चद्दरकी नलिकाएं जोड़कर उन्हें प्राय: एक फुटतक दीवालके बाहर निकाल देते है। मालवदी छप्परोंकी योजना

करनेसे गर्मीके दिनोंमें निवास स्थानमें ठण्ढक रहती तथा यदि उक्त मिट्टी अच्छी हो तो बर्सातमें जलका अँशमात्रभी भीतर चूने नहीं पाता। फिरभी इस प्रकारके छप्परके शिरोभागपर १।२ वर्षके अन्तरसे १।२ इञ्च मोटाईका मिट्टीका स्तर देना पड़ता है।

जहाँ बर्सात अधिक होती है वहाँ इस प्रकारका छप्पर काम नहीं दे सकता। वैसी जगहके लिये नियोजित स्थानमें योग्य ढाल देकर पनालीदार चद्दर जड़ते हुए उन्हें तैल रङ्गसे विलेपित कर उसपर ५।६ इञ्चकी मोटाईका मिट्टीका स्तर देना पड़ता है। इस प्रकारकी संशोधित व्यवस्था करनेसे लागतम किफायत होते हुए अन्य सभी बातोंका भय दूर हो जाता है।

(५) छतका उपयोग बर्सात और गर्मीका प्रतिकार करनेके प्रीत्यर्थ तो होताही है साथही साथ गर्मीके दिनोंमें रातको उसपर सोने तथा कपड़े इत्यादि सुखानेके प्रीत्यर्थ भी विशेषरूपसे होता है। भवनमें छोटा-मोटा छत होना अत्यन्त आवश्यक है। कारण इससे यथा प्रसंग बड़ा काम निकलता है। इससे उक्त प्रकारके छप्परके अनुसार घरमें ठण्ढक नहीं रहती यह सत्य है तथापि जिन्हें आज एकही मञ्जिलका भवन बनवाकर रुक जाना हो और आगे चलकर परिस्थिति और अवसरको देखते हुए दूसरा खड़ा करना हो, उनके लिये यह व्यवस्था विशेष लाभजनक होती है। चूना-ईंट और पत्थर ऊष्णतावाही होनेके कारण इस प्रकारके छप्परोंके नीचे गर्मी अधिक रहती और आर्थिक व्ययकी दृष्टिसे विचार करनेपर १५ प्रतिशत लागत भी अधिक बैठती है। किन्तु फिर भी ऊपरी मञ्जिलकी योजना करने पर इस छतका ही शिरोभाग मञ्जिलकी जमीन नियुक्त करनेके काम आजाता और कठघरा बढाकर दीवालोंका सृजन हो सकता है। इसकी विपरीत दशामें सारा छप्पर निकालकर दीवालें बढ़ानेसे एकबार लगी हुई लागत पानीमें चली जाती है। उसका १५ प्रति शत माल भी हाथ नहीं लगता।

छतके सृजनका विचार होनेसे लकडीके तख्तोंपर १।२ इञ्चका मोटी बालू या मिट्टीका स्तर देकर उसपर 'कोबा' करते हैं। इससे लकडीके सकोचन-प्रसरणका प्रत्यक्ष परिणाम छतके शिरोभाग तक नहीं होने पाता।

छतसे जल चूनेका प्रतिकार करनेके हेतु निम्नलिखित सतर्कता रखी जाती है—

१ कांक्रीटमें सम्मिश्रित होनेवाला गिलावा महीन पीसा हुआ और जनसाधारण कांक्रीटके मिश्रण प्रमाणसे कुछ अधिक होता है।

२ जहाँतक होता है एकही दिनमे कांक्रीटका कार्य पूरा कर दिया जाता है। उसमें जोड़ नहीं रहने देते।

३ कांक्रीटके बिल्कुल निचले स्थरमें थोडा मोटा माल व्यवहृत कर क्रम-क्रमसे ऊपरी स्तरमें महीन माल प्रयोगान्वित किया जाता और शिरोभागके अन्तिम स्तरमें सिमेण्ट तथा बारीक बालू सम प्रमाणमे सम्मिश्रित कर उसका नितान्त पतला स्तर दिया जाता है।

४ पेटेण्ट स्टोनके कार्यमें जैसा कि, पहिले एक जगह लिखा जा चुका है, सम्पूर्ण व्यवस्थाका अनुसरण किया जाता है।

५ कांक्रीटकी सकोचन क्रिया आरम्भ होनेके पूर्व्व उसकी यथेष्ट कुटाई होती है।

६ शिरोभागपर गिलावेमें शहाबादी लादी जडकर जोड़,—चैढे अर्थात् कमसे कम एक इञ्च चौडे रखनेसे विशेष सुविधा होती है। फर्शी की जुडाई होते ही उन्हें खुरुच कर साफ करते हुए उनमें सिमेण्ट और महीन बालूका सम सम्मिश्रण भर दिया जाता है। ऐसा करनेसे यदि छत चूने भी लगे तो लादी जड़ी हुई होनेके कारण, वह बहुत ही हुआ तो उसके सन्धियोंके मार्गसे चूने लगता है। वह भी सिमेण्टके भरे जानेके कारण अधिकाश रूपसे चूता

ही नहीं और यदि चूने भी लगे तो वहाँसे सिमेण्टको निकाल कर आस्फाल्ट भरनेमें विशेष तरद्दुद नहीं होती।

७ आजकल 'माल्थाइड' नामक कृत्रिम मसाला बाजारमें मिलने लगा है। इसमें जल जरा भी नहीं भरता। इसके प्रयोग एवम् उपयोगके सम्बधमें विशेष जानकारी विज्ञप्तिपत्र विक्रेताओं द्वारा प्राप्त होती है।

छतकी ओरके कठघरोंका स्थापन कार्य करते हुए भीतर ५॥ फुटके अन्तर पर १॥।–२ इञ्ची लोह नलिकाओंके १ फुट लम्बाईके टुकड़े ऊर्ध्वगत् रूपमें खड़ेकर उन्हें इस तरह जड़ा जाता है ताकि वह कठघरेके शिरोभाग पर प्राय: ६ इञ्च तक आ जांय। ऐसा करनेसे उनमें आवश्यकतानुसार तरके इत्यादि जड़ते हुए उठाऊ प्रकारका मण्डप खड़ा किया जा सकता है।

छतकी दरारें

छत पर यदि दरारें पड़ी हों तो उन्हें खुरचकर थोड़ी विस्तृत और स्वच्छ बनाली जाती हैं। पश्चात् निम्न लिखित सम्मिश्रणोंमेंसे किसी एक प्रकारका सम्मिश्रण लेकर उसे करनीकी सहायतासे उनमें कूट-कूट कर भरते हुए १।३ इञ्च तक इधर-उधर फैला दिया जाता है। ये सम्मिश्रण हवा और गर्मी पाकर आकुञ्चित होने लगते हैं।

१ आल्फाट, डोकेदार अलकतरा (Pitch) तथा महीन बालू सम प्रमाणमें सम्मिश्रित करनेके पश्चात् उसे पकाकर काममें लाया जाता है।

२ अलकतरा, राल या रजनकी महीन चूर्ण कर उसे आगपर पकानेके उपरान्त उसमें अलकतरा दिया जाता और पुनः एक आंच दी जाती है।

३ पका हुआ तीसीका तेल (Boiled Linseed Oil) ९ सेर, राल २ सेर, 'बाथ' ईंटा १ सेर। रालको पकाकर उसमें तीसीका तेल मिलाया जाता और अन्तमें ईंटेका चूर्ण देकर घोटा जाता है। ['बाथ' ईंटा (Bath Brick) अत्यन्त मुलायम ईंटा होता है। जिसका चूर्ण साधारणतया पीतलके बर्त्तन इत्यादि माँजने और उनमें चमक पैदा करनेके काममें आता है।]

४ कपास अर्थात् रुइ ५ तोले, ताजे कङ्कडी चूनेका चूर्ण १० सेर तथा पका हुआ तीसीका तेल ५ सेर। इन पदार्थोंको एकत्रित कर साधारण रूपसे तरल बना लिया जाता है। रुई तोडकर धुनकर पिष्टरूप बना ली जाती है।

छप्परका ढाल

जहाँ वर्सातका मान ४० से ५० इञ्चतक हो वहाँ ढालका प्रमाण छत और मालवद्दी छप्पर १४ फुटमें एकसे लेकर ३६ फुटमें एकतक—

१ मगरौली खपडेका छप्पर	प्रति फुटमें ७ इञ्च
२ चिपटे कवेलुओंका छप्पर	,, , ७ ,,
३ नलिकाकार ,, ,,	,, ,, ६ ,
४ एनालीदार चद्दरोंका ,,	,, ,, ९से ४,,

जहाँ आमतोरसे १५ इञ्चसे १५ इञ्चतक जल बरसता है वहाँ भी इसी प्रमाणमें ढाल देना विशेष श्रेयस्कर है। कारण यद्यपि वहाँ औसत कम रहती है तथापि बरसनेपर उसका प्रमाण अत्यधिक हो जाता है। जहाँ १०० इञ्च वर्सात होनेकी औसत हो वहाँ मंगरौली खपडेके छप्परोंमें ९ इञ्ची ढ़ाल देना चाहिये। जहाँ बरफ गिरती हो वहाँ ४५ अंशका अर्थात् १ फुटमें १ फुट या उससे भी अधिक ढाल दिया जाता है।

छप्परके लिये १—तरके (Rafters), २ कोणयुक्त तरके या तीर—(Hip rafters), ३—वत्ते (Purlins) ४—रीढ़ (Ridge) ५—कैंचियाँ (Trusses) इत्यादि साधन-सामुग्रीमें लकड़ी व्यय युत होती है।

१ तरके साधारणतया प्रति फुट लम्बाईमें एक पञ्चमाँश इञ्च चौडे तथा एक त्रितियाँश इञ्च मोटे होते हैं। चौड़ाईका प्रमाण १॥ इञ्च तथा मोटाईका प्रमाण तीन इञ्चसे कम होना किसी भी दशामें अच्छा नहीं होता।

१ कोणयुक्त तरके या तीरों (Hip rafters) पर अधिकाँश भार पडता है। अत उनके लिये उक्त नियम लागू नहीं होता। उनके लिये १ फुट लम्बाइके पीछे एक चतुर्थांश इञ्च चौडाई तथा आधा इञ्च मोटाई पकडी जाती है। यदि तीर अत्यन्त लम्बे होते हों तो उनके मध्य भागमें दीवाल या लकडीके तीरोंका सहारा देनेकी योजना की जाती है। किसी कारणवश यह सम्भव न होनेसे एक स्तम्भी कैंची (King Post Truss) का आधा हिस्सा काटकर उसका आधार तीरको दे देते हैं। इससे सुविधा जनक उपाय यह है कि, दीवालके कोनेमें कर्ण रेषाके बीचमें एक आडा तरका रख दे तथा उसके ऊपर एक तीर खडाकर उसके शिरोभागपर पीढा रखते हुए उसका आधार तीरको देवे।

३ वत्तोंको प्रमुख तरकों या कैंचियोंके ऊपर या दीवालें नजदीक नजदीक रहनेसे उनपर रखा जाता है। ये दीवालोंमें मजबूतीसे जडे जा सकते हैं। किन्तु तरकों या कैंचियोंपरसे उनका खसकना रोकनेके हेतु तरकोंमें सिटकिनियाँ ठोककर उन्हें सहारा दिया जाता है। वत्तोंकी मोटाई दोनों कैंचियोंके अथवा प्रमुख तरकेके मध्यवर्तीय अन्तरपर अवलम्बित रहती है। फिर भी उसका सर्व साधारण प्रमाण तीन इञ्चसे कम नहीं होता। सामान्यतः यह गालेके प्रति फुटके पीछे आधे इञ्चके प्रमाणमें रहती है। इसी प्रकार उसकी चौडाईका स्थूल मान गालेके प्रति फुटके पीछे एक सुतियाँश इञ्चतक रहता है।

४—रीढ दोनों ओरके तरकोंके मध्यमें बैठती है। अतः उसकी चौडाई कम होनेसे भी काम चल जाता है। किन्तु इससे उसपर छप्परका भार अत्यधिक हो जाता है। अतएव उसे मुडने या टूटनेसे बचानेके हेतु उसकी मोटाई यथेष्ट रखनी पडती है। इसकी मोटाईका प्रमाण सामान्यत दो दीवालों या कैंचियाके मध्यवर्तीय अन्तरके हिसाबसे प्रति फुटके पीछे पौन इञ्च होता है। चौडाइ प्राय २ इञ्चसे कम नहीं रखी जाती।

५ कैंचियोंमे (अ) साधन कैंची (collar beam truss) (आ) एक स्तम्भी कैंची (King post Truss) (इ) द्विस्तम्भी कैंची (Queen-post Truss) नामक तीन भेद हैं। सर्व साधारण कैंचियाँ साधारणतया ८ से १२ फुट तकके अन्तरपर जडी जाती है।

(अ) गाला अत्यन्त बडा होनेसे तरकोंका बीचमेंसे झुक जाना सम्भवनीय होनेके कारण उनके गर्भमें एक आडा डण्टा जड देते हैं। (आकृति ५३ देखिये) इस कैंची को पारिभाषिक प्रयोगमे साधन कैंची कहते हैं। आकारमे यह पेशराजोंके साधनींसे या गुनियासे सादृश्य रखती है। इसके तरफे बीचमे झुकते नहीं अपितु उनके पेन्देकी

आकृति न ५३

प्रवृत्ति दीवालोंको बाहरकी ओर ढकलेनेकी तरफ रहती है। उसका प्रतिकार करनेके निमित्त यह दोनों पेन्दे एक और आडे दण्डे से जकड देते है। जिसे पारिभाषिक प्रयोगमें कैंची की तान (Tie beam) कहा जाता है। साधारणतया १४ फुटके गाले तक केवल एक ही साधन तरकीका प्रयोग करनेमे कोई आपत्ति नहीं रहती। उससे एक और कैंचीकी तान सयुक्त कर देनेसे यह १८ फुटके गाले तकके लिये बरती जा सकती है। कैंची की तानका काय कैंचीके पेन्दोंको फटनेसे रोकते हुए उन्हें भीतरकी ओर

तानकर रखना है। इसलिये यदि लकड़ीके दण्डेकी जगह एकाध लोहेका छड भी जड दिया जाय तो भी काम बन सकता है। इस प्रकारकी लौह निर्मित कैंचीकी तान जटकर तैय्यार की हुई साधन कैंची आकृति संख्या ५४ में दिखलायी गयी है।

कहीं-कहीं साधन तख्तीकी जगहपर दोनों ओर दो बोल्टोंसे एक दूसरी पतली तख्तियाँ जड देते हैं। किन्तु ऐसा करना योग्य नहीं। कारण ऐसा करनेसे सारा जोर उन बोल्टों ही पर पडकर तख्तियोंके झुक जानेकी सम्भावना रहती है।

आकृति नं ५४

साधन कैंचीमें मुख्य सुविधा यह है कि उसका मध्यवर्तीय दण्डा अत्यन्त ऊंचाई पर होनेके कारण नीचे बहुत सा स्थान छूट जाता है। यह सुविधा एक स्तम्भी या द्विस्तम्भी कैंचीमें नहीं रहती। साधन कैंचीमें एक और सुधारकर गालेकी वृद्धि की जा सकती है। उसीका एक कल्पना चित्र आकृति संख्या ५५ में दिया गया है। दीवालके दोनों ओर टोडे निकालकर उनपर दीवालसे सटकर खम्भे खडेकर देते तथा लकडीके ४।५ टुकडे जोडकर एक अर्द्धगोल साधन तख्ती तैय्यार करते हुए यह स्थान-स्थान पर बोल्टोंके जरिये खम्भे और ऊपरके प्रमुख तरकेसे संयुक्त कर दी जाती है। प्रमुख तरकोंका अर्द्धगोल दण्डोंके मध्यवर्तीय भागमें लोहेकी चद्दर या लकडीकी तख्ती में खांचे बनाकर बोल्टकी सहायतासे जड देते हैं।

आकृति नंबर ५५

(आ) जहाँ गाला अधिक हो वहाँ एक स्तम्भी कैंचीका आयाजन किया जाता है। यह ३० फुटके गाले तकके लिये व्यवहृत

जाकृति न ५६

हो सकती है। इसमें और साधन कैंचीमें भेद इतनाही है कि, 'साधन कैंचीमें जो साधन तख्ती जोडी जाती है उसकी जगह इसमें दो तीर तिछे जड देते हैं और कैंचीकी तानको सरल रखनेके हेतु उसे उठा रखनके विचारसे रीढके नीचे एक खडा डण्डा जड देते हैं। इस डण्डेके नीचे दो खाँचे बनाकर दोनों ओर उक्त कथित तीर जड देते और कैंचीके प्रमुख तरके भी इसी डण्डेके ऊपरी भागमे जड देते है। सन्धियोंके स्थानपर विशेष मजबूती लानेके विचारसे प्राय दो से तीन सूत तक मोटी एवम् डेढ इञ्च चोडी लोहेकी तख्तियाँ आवश्यक रूपसे आकारान्वित कर बोल्टोंकी सहायतासे आकृतिमें दिग्दर्शित प्रकारानुसार जड दी जाती है।
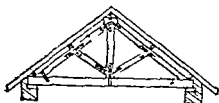
(इ) गाला यदि ३० फुटसे अधिक बडा हो तो प्रमुख तरकेकी लम्बाइ अत्यधिक बढ जानके कारण एक स्तम्भी केंचीकी जगह द्वि-

आकृति न ५७
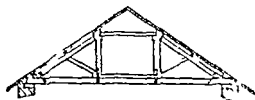
स्तम्भी कैंची देते हुए उनके मध्यवर्त्तीय भागमें आधार दिया जा सकता है। इस प्रकारकी कैंचीके हेतु गालेके बराबर लम्बाईकी बेजोड कैंचीकी तान मिलना असम्भव है। अत दो या तीन टुकडे जोडकर इसकी पूर्ति कर ली जाती है। (आकृति संख्या ५७) देखिये। उसको झुकनेसे रोकनेके हेतु उसे कैंचीके दोनों खम्भोंपर खींच रखते है। कहीं-कहीं दो खम्भोके

बीचम कैंचीकी तानके शिरोभागपर एक और लकडी जड दी जाती है। (आकृति संख्या ५७)

उक्त वर्णित, किसी भी प्रकारकी कैंचीकी लकड़ियोंमें तनाव तथा कुछमें दबाव आजाता है। दबाव सहनेके लिये लकडीका पर्याप्त रूपसे मोटी रहना आवश्यक है। किन्तु तनाव सहन करनेके हेतु लकडीके स्थानपर लोहेकी तली या छड जड़नेसे वजन और आर्थिक दृष्टिसे किफायत हो जाती है। इस प्रकारके आयोजनमें विभिन्न प्रकारकी कैंचियाँ किस प्रकार निर्म्माण हो सकती है, यह क्रमश: आकृतिसंख्या ५४, ५८ और ५९ म दिग्दर्शित किया गया है।
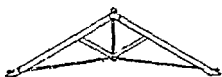
आकृति न ५८

जब गाला ३० फुटके ऊपर हो तब दो स्तम्भीय कैंचीका व्यवहार होता है तथा यह ४८ फुट तकके गालेमें प्रयोगान्वित हो सकती है। किन्तु आर्थिक दृष्टिसे विचार करनेपर ४० फुटसे ऊपरवाले गालेम लोह निर्मित कैंचीही अधिक सस्ती पडती है।

आकृति न ५९

समाज-समूहके श्वासोश्वासके कारण दूषित एवम् तप्त हुई वायु घरसे निकाल बाहर करनेके लिये रीढके दानो ओरसे छप्परको कुछ विस्तृत कर ऊपर नीचेके पालेम कुछ अन्तर रखदिया जाता और उसमेंसे पक्षियोंके आवागमनको रोकनेके विचारसे उसमें लोह निर्मित जाली जड दी जाती है। इस प्रकारके आयोजनके दिग्दर्शनार्थ आकृति संख्या ५८ दिखलायी गयी है।

उपरोक्त प्रकारके किसीभी छप्परके नीचे कैंचियाँ या प्रमुख तरके, उनपर पाखे, पाखोंपर पुन: तरके, तरकोंपर रीफ (Battens) तथा उनपर कवेलुओंकी रचना करनी पडती है। इससे लागत अधिक बैठती तथा छप्परकी मोटाई अत्यधिक बढ जाती है। उसकी अपेक्षा प्रमुख तरकों, कैंचियों या दीवालापर केवल रीढ या पाखे रखते हुए तरके न
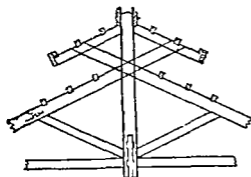
आकृति न ६०

जोडकर केवल पौन इञ्च मोटाईकी सागवानी तख्तियाँ ही जड दी जाँय या पनालीदार चद्दर जडकर उनपर काँटासे लकडीकी पतली-पतली रीफें जडते हुए मगरौली खपडे बिछा दिये जाँय तो लागतमें किफायत होत हुए तरकोंकी बचत हो जाती, नीचेसे तख्तपोशी होनेके कारण कार्यकी शोभा बढती तथा छप्पर नितान्त हलका हो जाता है।

छप्परके सम्बन्धमें सर्व्व साधारण सूचनाएं

१—वह जितना सादा हो उतनाही अच्छा होता है।

२—नालियाँ (Valleys) जितनी कम हो उतनाही अच्छा।

३—जहाँतक सम्भव हो नालियाँ दीवाल के उपर आडी न रखी जाँय। मूलयोजना में परिवर्तन करनेसे छप्परके काममें फरक पडनेकी सम्भावना होती है। नालियोंके पेन्देमें अखण्ड चद्दर जडकर उन्हे दोनों ओर कमसे कम ६ इञ्च झुकाते हुए बगलकी कैंचियोंके नीचे जड देना चाहिये तथा चूनेमें सिमेण्ट मिलाकर

उसकी दरजें भरनी चाहिये । नालियोंमें प्रति फुटके हिसाबसे कमसे कम १ इञ्च ढाल होना आवश्यक है।

किसीभी प्रकारकी कैंची दीवालपर रखनेके पूर्व उसके नीचे मठाऊ पत्थर या सिमेण्ट कांक्रीटका ६ इञ्च मोटा ठोका रखा जाता है। (आकृति ५३, ५४, ५५ और ५७ देखिये) इससे कैंची-पर पडा हुआ सम्पूर्ण भार दीवालोंपर बँट जाता है।

छप्परके ऊपरका आच्छादन

छप्परपर निम्नलिखित प्रकारोंमेंसे किसी एक प्रकारका आच्छादन दिया जाता है—

१—घास-फूस (दाभ, घास, सरई, गन्नेके पत्ते), २—नलीदार अथवा चिपटे कवेलू, ३—मङ्गरौली खपडे,—४ चद्दर (जस्ते अथवा इटरनिटके पनालीदार चद्दर), ५—स्लेट अर्थात् स्तरयुक्त पत्थर, ६ रुबेराईड ।

छप्परके प्रत्येक प्रकारका वजन एवम् आकार मान न्यूनाधिक होनेके कारण छप्परके भीतरी तरफों, पाखों तथा रीफोंमें थोडा बहुत फरक कर देना पडता है। इनमसे प्रत्येकमें क्या-क्या गुणदोष है तथा उसके प्रीत्यर्थ क्या-क्या फरक किये जाते हैं, इसका विस्तृत विवेचन नीचे किया गया है।

१–घास-फूस (Thatched) का छप्पर

इस श्रेणीका छप्पर धूप और बर्सातको बचानेकी दृष्टिसे अत्यन्त उत्तम होता है। इस आच्छादनसे वायुमें जो ठण्डक रहती है, वह छतसे भी नसीब नहीं हो सकती। इसे अग्निका भय विशेष रहता है। अधिक ढालकी आवश्यकता होनेसे अगल-बगलकी दीवालें ऊँची नहीं बनायी जा सकतीं। इस प्रकारका छप्पर बीयालोंपर चढानेसे आंधी चलनेके समय उसके उड जानेकी सम्भावना होती है। इसका कारण उसका हल्कापन है। दूसरा अवगुण जो इसमें होता है वह यह है कि, अनवरत वृष्टि होनेसे घास-फूस

सड जाता और उसमेंसे विपाक्त दुर्गन्धि निकलने लगती है। नालीदार कवेलुओंकी बिछाई होनेसे जो थोडी बहुत दराजें रह जाती हैं, उनमेंसे विपाक्त वायु बाहर निकलनेमें पर्य्याप्त सहायता मिलती है; किन्तु इस प्रकारके आच्छादनमे यह सुविधा नहीं मिलती। इसमें तरके अवश्य थोडे और पतले लगते है। इस श्रेणी विशेष प्रकारके छप्परकी ऊँचाई कमसे कम ४५ अश या गालेसे प्राय आधी होना अनिवार्य है।

१–नालीदार अथवा चिपटे खपडोंके निर्व्वाचन सम्बन्धी सारी व्यवस्था 'साधन–सामुमी' नामक विभागमे विस्तारपूर्व्वक दी जायगी अत यहापर उसकी पुनरावृत्ती करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। छप्पर सम्बन्धी व्यवस्थामें यह खपडे एक दूसरेसे सटकर बिछाये जाते तथा निचले खपडेपर ऊपरका खपडा कमसे कम १ इञ्च रह सके इस हिसाबसे एक सरल रेषामे सारी बिछाई होती है। रीढपर विशिष्ट आकारके खपडोंकी गिलावेसे जुडाई होती है। नालीदार खपडोंकी बिछाईमें जोडोंके स्थानपर गिलावेका पलस्तर करनेकी परिपाटी है। इससे वायुसञ्चारके कारण वह इधर–उधर हिलते या घसकते नहीं।

इस कार्यमे जहाँतक सम्भव हो नीचेके तरके सरल होने चाहियें। यदि वह कहींसे टेढे–मेढे हों तो उस स्थानपर काँटेसे लकडीके टुकडे जडकर सम्पूर्ण पृष्ठ भागको एक सतहमें लाया जाता है ताकि छतसे पानी चूनेका भय न रहे।

नालीदार या चिपटे खपडोंको बिछानेके हेतु सागवानी लकडीके गोल तरके एक एक फुटके अन्तरपर जडे जाते हैं। गाला अत्यधिक बडा होनेसे मध्यभागमें एक या दो पाखें (Purlins) देकर उनपर तरकोंकी जडाई होती है। इससे पाखोंपर छोटे–छोटे तरके ५।६ इञ्चके गलजोड देकर बैठानेमें सुविधा होती है। इन तरकोंपर बाँस या बेतकी फाडियाँ सुतली या खटिया की रस्सीसे बाँधकर अथवा सागवानकी रीफ कीलकाटोंसे जडकर उसपर खपडे

बिछाये जाते हैं। कहीं-कहीं खपड़ोंकी इस प्रकारकी दोहरी बिछाई होती है। ताकि ऊपरके खपडैलसे चुआ हुआ पानी नीचे के खपडैलसे होता हुआ साफ बह जाय और उसका अंशमात्र भी घरके भीतर न पहुच सके। किन्तु इससे छप्पर का बोझा अधिक होता और सभी लकड़ी मजबूत व्यवहृत करनी पड़ती है।

मगरौली खपडे

खपड़ैलमें मंगरौली खपड़ोंकी योजना करनेसे भवनकी शोभा वृद्धिङ्गत होती और खपडैलको बार-बार खोलना-बिछाना नहीं पड़ता। इस प्रकारका खपडैल नालीदार खपडोंसे छहे हुए खपड़ैलसे कहीं अधिक हल्का होता है। यही कारण है कि, इसके प्रीत्यर्थ उतनी अधिक मजबूत लकड़ी व्यवहृत नहीं करनी पड़ती। इसे अंशमात्र भी झुकाव बरदाश्त नहीं होता। आरम्भमें इसके सृजनमें थोडा अधिक व्यय हो जाता है। इस प्रकारके खपड़े वजनमें हल्के होते हैं। इनमें नालीदार खपड़ोंकीसी वायु निकल जानेकी गुञ्जाइश न रहनेके कारण अन्धड़में इनसे आच्छादित छप्परके उड़ जानेका भय रहता है। छोटे-छोटे ग्रामोंमें इन खपडोंकी निर्मिति न होनेके कारण इन्हें दूर देशोंसे मंगवाना पड़ता है। अन्धड़ के समय जोरसे बहनेवाली वायु प्रथमतया दीवाल्से टकराकर अपनी दिशा बदलती हुई ऊपरको उठती और रीढ़के ऊपरी भागके खपडे उड़ाकर नीचे फेंकनेका प्रयत्न करती है। सारे खपड़े एक दूसरेसे बन्धे होनेके कारण ऊपरके खपड़ोंका नीचे गिरना सम्भवनीय हो जाता है। इस भयको दूर करनेके निमित्त उनके नीचे तख्तपोशी करना उत्तम है। सारे छप्परपर तख्तपोशी करना तो अधिक व्ययका काम है, किन्तु कमसे कम दीवाल्के बाहरवाले छप्परके भागपर तख्तपोशी करनेसे भी काम बन जाता है।

मंगरौली खपडोंके लिये १॥ या दो फुटपर कटे हुए तरके जड़नेसे काम बन जाता है। दो फुटके अन्तरपर जड़नेसे उनपर १॥"×१" नापकी रीफें अवश्य होनी चाहियें। नीचे तरतपोशी होनेसे १×½ की रीफें चल सकतीं हैं। अन्तिम अर्थात् रीढके पासकी रीफ कुछ अधिक मोटी होनी चाहिये।

रीढके पासवाले खपडे सिमेण्ट तथा बालूके १ ४ प्रमाणके सम्मिश्रणसे अथवा कमसे कम चूना और सिमेण्ट ६ १ प्रमाणमें मिलाकर उसके सम्मिश्रणसे जोड देने चाहियें। केवल चूनेकी जुडाई होनेसे चूना अत्यन्त शीघ्र सूख जाता और खपडे भली-भाँति जुडने नहीं पाते। आगे चलकर वायुके कारण खपडोंके ढीले होनेपर उनसे पानी चूने लगता है। सिमेण्ट या सिमेण्ट मिश्रित चूना यथाशीघ्र सूख जानेके कारण खपडे मजबूतीसे जम जाते हैं।

चद्दरके छप्पर

पनालीदार चद्दरें ६ फुटसे लेकर १० फुट तकके लम्बाईकी तथा २६ से ३० तकके चौडाईकी पायी जाती हैं। यह प्राय: १८ से लेकर २४ गेजतक की होती हैं। १८ गेजकी भली भाँति मोटी होती है। भवनके कार्यमें अधिकांश रूपसे २२ गेजके चद्दरोंका व्यवहार करना उचित है। तथापि २४ के विशेषरूपसे व्यवहृत होते हैं। उनकी नापजोखका सम्पूर्ण विवरण 'साधन-सामुग्री' विभागके 'धातु-सामुग्री' शीर्षक प्रकरणमें किया गया है। चद्दरदार छप्परका बोझा नितान्तही न्यून अर्थात् प्रति वर्ग फुटके हिसावसे ३।२ पौण्डतक होता है तथा नालियोंके कारण उसमें विशेष मजबूती आजाती है। इसमें लकडियाँ भी विशेष मजबूत लगानेकी आवश्यकता नहीं होती। दीवालपर

कैंचियों तथा कैंचियोंपर बत्ते (Purlins) तथा उनपर चद्दरें जडी जाती हैं। बत्तोंका अन्तर साधारणतया ३।४ फुटतकका होता है। लम्बाई बढानेके हेतु एकपर एक कमसे कम ४ इञ्चका जोड देकर चौडाईके लिये एक नलीदार रूप दिया जाता है। चौडाईका जोड कम करनेसे धूँआधार वृष्टिके समय चद्दरोंपर पानी जमकर वह जोडासे भीतर चूने लगता है। चद्दरोंमें 'स्क्रू' जडनेके लिये जो छेद बनाये जाते हैं वह नालीके शिरोभागपर बनाये जाते हैं,-गड्ढेमें नहीं। इसके विपरीत करनेसे बर्साती जल भीतर घुसे विना नहीं रहता। बढई लोग चाद्दर जडते समय 'स्क्रू' को ठोक कर जडते हैं। किन्तु यह प्रथा बुरी है।

चद्दरोंको गिलावेकी सहायतासे दीवालोंके भीतर जडना अच्छा नहीं। इससे दो नुक्सान होते हैं। एक तो यह कि, चद्दरों पर बोझ पडनेसे वह झुक कर जोड खुल जाते हैं। चूनेका परिणाम् चद्दरों पर होकर उनमें छिद्रादि होनेका भय रहता है। अत: उनके किनारे ऊपर की ओर झुकाते हुए उन्हें जुडाउ काम से पृथक् रखना चाहिये। समुद्री किनारे पर क्षारयुक्त जल वायुसे भी चद्दरें निरुपयोगी हो जाती हैं। ऐसी दशामें उन्हें व्यवहृत करनेके पूर्व्व उनपर अलकतरे या किसी तैलरङ्गका पुट दे देना चाहिये।

चद्दरदार छप्पर कमखर्च बालानशीन होते हुए वजन और मजदूरीकी दृष्टिसे विशेष सुलभ होता है। उनसे पानी चूने का भय नहीं रहता। बन्दरगाहवाले शहरोंमें केवल मालीदार ही क्या अपितु मगरोली सपरोंके आच्छादन भी नुक्सानदारक होते हैं। ऐसी यहाँ पर चद्दरके आच्छादन और भी अधिक मान्य पूर्ण है। किन्तु उसमें अवगुण यही है कि, (१) यह ग्रीष्मतापके कारण अत्यन्त गरम हो जाता है। (२) शीतकालमें अत्यधिकरूपसे ठण्डा हो जाता तथा (३) जन्धड़के कारण उड़नेका भय बना

रहता है। ग्रीष्मताप का प्रतिकार करनेके हेतु निम्न लिखित कोई भी उपाय काम में लाया जा सकता है—

१-उसके नीचे तख्तपोशी होना। इस प्रकारकी व्यवस्थाका आयोजन होनेसे बत्तोंके निचले भागमें 'स्क्रू' की सहायतासे लकडीकी तख्तिया जड दी जाँय। इससे छप्पर की शोभा बढकर चद्दर तथा तख्तियोंके बीचमें बत्तोंकी मोटाईके बराबर अर्थात् ३।५ इञ्च तक की मोटाईका वायुयुक्त पोलापन रहता है तथा वायु ऊष्णता वाहक न होनेके कारण चद्दरोंकी गर्मी नीचे तक नहीं पहुचने पाती।

२—चद्दरोंपर तीन-तीन फुटके अन्तर १॥ ×१" आकारकी खडी रीफें जडकर उनपर मगरौली खपडोंके लिये १२॥ इञ्चपर १"×१" आकारकी आडी रीफें जडते हुए उनपर मगरौली खपडे बिछा देने चाहिये। इससे लाभ यह निकलता है कि, मध्यवर्त्तीय वायुकी पोलाईके कारण चद्दरें बहुतही न्यून प्रमाणमें तपती हैं। उनपर भार गिरनेके कारण उनके उडनेका भय नहीं रहता तथा एकाध खपडेके टूट जानेपर चद्दरोंकी नालियोंसे पानी बाहर निकल जाता है।

३—चद्दरोंपर आडी और खडी लकडियाँ जडकर उनपर घास-फूससे बनी हुई पतली टट्टी बिछानेसे अत्यन्त ठण्ढक रहती है। किन्तु इसमें दो नुकसान हैं। एक तो यह कि, चूहे घर बना कर रहने लगते हैं तथा दूसरे बर्सातमें पानी तथा जाडेमें ओसके कारण वह निरन्तर भींगती रहनेके कारण २।३ वर्षोंमें खराब हो जाती और दूसरी बनानी पडती है। इस कार्यमें घास-फूसकी जगह बाँसकी फाडियोंसे भी काम निकाला जा सकता है। किन्तु उसे उडनेसे बचानेके लिये उसपर लकडियाँ बिछाना आवश्यक है।

४—चद्दरोंपर तैलयुक्त रग देने चाहिये। काले रगके कारण चद्दरें अत्यन्त उत्तप्त हो उठतीं हैं। उस दृष्टिसे सुफेद रग अच्छा

होता है। किन्तु उसमें शीघ्रही पीलापन आ जाता है। उससे गौण रंग होता है,-हरा। किन्तु वह भी शीघ्रही फीका पड़ जाता है। अतः खाकी (Slate) अथवा पीतवर्णीय या रक्तचन्दनी (Chocolate) रंग देना विशेष उपयुक्त है।

सुफेद चुना पानीमें मिलाकर उसमें १५% अलशीका तेल डालते हुए उस सम्मिश्रणके १-२ पुट चद्दरोंपर चढानेसे उनकी गर्मी बहुतही कम हो जाती है।

वायुसे चद्दरदार छप्परका संरक्षण करनेके हेतु निम्नलिखित उपायोंका अवलम्ब लिया जा सकता है —

१—रीढकी सन्निकटस्थ चद्दर को दीवालस्थ लग्घियों (Wall plate) पर स्क्रूसे जड़ दिया जाता है। १—उक्त लग्घियोंके दोनों अग्रभाग तारसे कस कर नीचे दीवालमें जड़ी हुई लकडियोंसे बान्ध देते हैं। ३—दीवालोंसे वायुको घरमें घुसने तथा सामनेसे बाहर निकल जानेके हेतु रीढके नीचे आगे की और पिछली दीवालोंमें खुली खिडकियाँ होनी चाहियें। ताकि चद्दरोंके अग्रभाग ऊपरको न उठ सकें। चद्दरोंके नीचे आडी दिशासे बहनेवाली वायु घरमें जाकर विपरीत दिशामें बनी हुई खिडकियोंके मार्गसे बाहर निकल जानेपर प्रायः छप्परके उडनेकी सम्भावना नहीं होती।

जस्तेके चद्दरोंकी तरह आजकल बाजारमें सिमेण्ट और ॲस्बेस्टॉसके चद्दर (Eternit sheets) मिलते हैं। धूपके कारण यह विशेष तपते नहीं, किन्तु महँगे अधिक होते हैं। रवेदार होनेके कारण उनके टूटनेका भी भय रहता है।

५–स्लेटके पत्थर

इस पत्थरकी १५॥'×१५॥ आकारकी सिल्लियाँ मिलती हैं। मगरौली खपडोके विधानकी तरह इसमें२से २॥ फुट तकके अन्तर
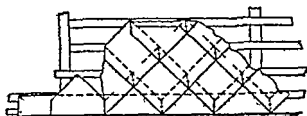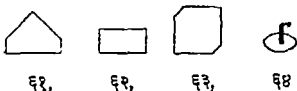
आकृति न ६५

पर खडे तरके जडकर उनपर ९। अन्तरपर १॥×१" सागवानी रीफ जडी जाती है। रीढकी सम्मिकटस्थ रीफ ७॥ इञ्चपर जडी जाती है। पश्चात् रीढके पास १५॥ लम्बे तथा उसकी आधी चौडाईके स्लेटके चौकोर टुकडे (देखिये आकृति ६२) लेकर उन्हे उन रीफोंपर एक सतहमें बिछा देते हैं। पश्चात् उनपर तिकोने खण्ड (आकृति ६१) तथा उनपर कोण कटे हुए स्लेटके चौकोर टुकडे। (आकृति ६३) की रुमाली जडकर निचले फौवे-लुओंके कोणस्थ छिद्र, ताम्बेकी (आकृति ६४) चकत्तीम जडी हुई तार ऊपर खींचकर उसे झुकाते हुए उससे सलग्न कर दिये जाते हैं। (आकृति ६५) इस प्रकारका छप्पर अत्यन्त हल्का टिकाऊ और अग्निकेभयसे रहित होता है। किन्तु यह धूपसे तपता अधिक है। एक ग्रासमे प्राय ८१ स्लेटके टुकडे लगते हैं।

कमान (मेहराव)

प्रमुखतया कमान निर्माण करनेके दो उद्देश होते हैं। एक तो सौन्दर्यकी वृद्धि करना। दूसरे घरन सदृश ऊपरी भार ऊपर ही ऊपर तुला रखना। सौन्दर्यकी दृष्टिसे उसमें समानता (symmetry) का होना आवश्यक है। कमानकी कोर यदि किसी स्थानसे चौथाई इञ्च भी ऊपर चढ गयी या नीचे उतर गयी तो वह तत्क्षण आँखको अखरती है। इसमें-१-किञ्चिद्गोल (Segmental) २-अर्द्धगोल (Semicircular) ३-समथल (Flat) ४-अण्डाकृति (Elliptical) ५-नोकदार (Pointed) आदि प्रकार हैं।

इसका मुख्य तत्व यह है कि, इसके शिरोभागपर जो भार पडनेवाला हो, वह इसके गर्भ अर्थात् चाभीके पत्थर (Keystone) पर दो भागोंमें विभक्त होकर दोनों ओर कमानके पट्ठोंसे गुनियामें आता और कमानकी सन्निकटस्थ दीवाल अर्थात् अन्त्यपार्श्वों (Abutments) पर उर्ध्वरेषामें सरल जा गिरता है। किन्तु यदि कमान किञ्चित् गोल हो तो वह पूर्णरूपसे खडा न गिरकर उसकी प्रवृत्ति कमानकी ओरकी दीवालोंको अर्थात् कमानके अन्त्यपार्श्वोंको बाहरकी ओर ढकेलनेकी रहती है। इसकी उठान (Rise) जितनीही कम हो उतनाही वह उक्त दीवालोंको अधिक ढकेलता है। अत्यन्त न्यून उठान (Minimum Rise) की कमान समथल (Flat) होती है तथा अत्यधिक उठान (Maximum Rise) की अर्द्धगोल। इन दो छोरोंकी मध्यवर्त्तीय दशा किञ्चित् गोल कमानकी होती है। उस दशामें भारका कुछ भाग खडी तथा कुछ आडी दिशासे गिरता है। अत बगलकी दीवालें मजबूत न होनेसे अर्द्धगोल कमानही श्रेयस्कर होती है। उससे किसी प्रकारका धोखा नहीं होने पाता।

जब एक दूसरीसे सटी हुई अनेक कमाने होती हैं तब बगलकी
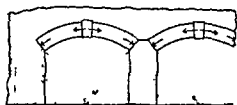
आकृति न ६६

दोनों कमानोंका गाला और उढान एक समान होनेपर,-वह एक दूसरेको तौल रखते हैं।

मध्यपाद (Lier) को दोनों ओरसे लगनेवाले आडे जोर परस्पर विरुद्ध दिशासे आनेके कारण यह फल निकलता है। देखिये आकृति ६६।

चाहे जिस प्रकारकी कमानें हों, उनमें अत्यन्त महत्वके भाग दो होते हैं। एक चाबी (key stone) तथा दूसरा कटि-प्रस्तर-(Springer)। भवनसम्बन्धी महत्वपूर्ण कार्यमें ईंटोंकी सम्पूर्ण कमान होनेपर भी इस भाग विशेष स्थानपर विशेषतया चाबीके लिये पत्थर या सिमेण्ट कांक्रीटका ढोका (खण्ड) ही व्यवहृत होता है।

समथल कमानें पत्थर या ईंटोंकी भी हो सकतीं हैं। पत्थरकी होनेसे पारेका प्रत्येक पत्थर नीचेकी ओरसे सकुचित तथा ऊपरकी ओरसे फैला हुआ गढकर बनाया जाता और व्यवहारमें लाया जाता है। नीचे आधार तख्तियाँ (centering) देकर उनपर कमानकी रचना होती है।

पत्थरकी समथल कमानें भारतीय प्राचीन शिल्पशास्त्रका एक वैशिष्ट्य है। आजकल घरू काममें ईंटोंकीही समथल कमानें बनती हैं। उनके प्रीत्यर्थ गालेके गर्भमें गुनिया लगाकर उसपर कहीं भी एक मध्यबिन्दुकी कल्पना करते हुए कमानकी रचना इस प्रकार की जाती है कि, उसके सारे जोड उस मध्यबिन्दुसे

निकले हुए किरणोंके समानान्तर होते हैं। (आकृति ६७) समथल कमानका गाला तीन फुटके ऊपर होनेसे उसके पेन्देमें थोडासा उभाड (camber) दे देना चाहिये।

ईंटोंकी समथल कमानें बनाना अत्यन्त सरल है। उनके पेन्देमें उतनाही सख्तीका आधार देनेसे काम चल जाता है। जुडाईके लिये गिलावेमें थोडासा (८ : १ प्रमाणमें) सिमेण्ट मिला दिया जाता है। जिससे वह जल्दी सूखकर विशेष मजबूत हो जाता है। कुछ लोग इन समथल कमानोंपर विश्वास नहीं करते और सम्पूर्ण भार उनपर गिरने न देनेके विचारसे उनके शिरोभागपर और भी गूगी-कमानें उठाते हैं। ये कमानें इस प्रकार उठानी चाहिये कि सम्पूर्ण समथल कमानें (कमसे कम खिड़की और दरवाजेका गाला तो अवश्यही) सम्पूर्ण रूपसे गूगी कमानके पेटेमें चला जाय। (आकृति ६७ देखिये)

बडा गाला होनेकी दशामें, उसपर अर्द्धगोल कमानका सृजन करनेसे उसकी ऊचाई अत्यधिक रूपसे बढ जाती है। किञ्चित् गोल कमानकी रचना उतनी सुशोभित नहीं मालूम होती। मध्यवर्त्तीय भागको छोड़कर उसकी ऊचाई कम आती एवम् उसके अन्त्यपार्श्व मजबूत होनेकी आवश्यकता होती है। वैसी स्थितिमें
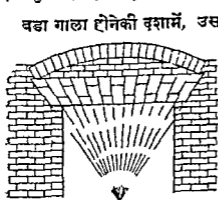
आकृति न ६७

अद्याकृति कमानका आयोजन होता है। इसमें दो विन्दुओंकी आवश्यकता होती है। इसके सृजनकी सर्व्व सुलभ प्रणाली यह है—

जहाँ कमान उठानी हो वहाँ लकड़ीका एक आड़ा लट्ठा रख दिया जाता तथा गालेके मध्यबिन्दुसे इच्छानुसार उठान (Rise) उसपर लम्ब रेषामे रखी जाती है। आकृति संख्या ६८ म 'क' उठानका शिरोभाग है। इस 'क' नामक मध्यबिन्दु (centre) से गालेकी आधी लम्बाई त्रिज्या (Radius) से लट्ठेपर अङ्कित कर उसपर 'अ' और 'ब' नामक चिन्ह बना दिये जाते हैं। पश्चात् उन चिन्हित स्थानोंपर कँटिया जडकर 'अ' 'ब' और 'क' नामक बिन्दुओंको अपने पेटेम रखनेलायक भरपूर लम्बाईकी सुतली लेकर उसे तानते हुए उसके अन्तिम छोरमें गाँठ लगायी जाती और हाथमे एक पेन्सिल सीधी पकडकर उससे अण्डाकृति गोलक अङ्कित किया जाता है। इस सुतलीमें मरोड न पडनी चाहिये। नहीं तो आकृति भ्रष्ट हो जाती है।
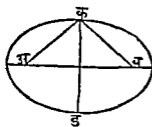
आकृति न ६८

किसीभी प्रकारकी कमानके लिये आधार अवश्य लगता है। यह आधार दो प्रकारके होते है। एक लकडीका तथा दूसरा मिट्टीका। लकडीके आधारको पारिभाषिक प्रयोगम (centering) 'पकड' और मिट्टीके आधारको 'कल्बूत' कहते हैं। सुदृढ कमानके सृजन कार्यमें नीचे बालूसे भरे हुए बोरे एकपर एक रखकर उनपर पत्थर या ईंटोंके कल्बूतकी जुडाई मिट्टीसे होती है। साधारण कार्यमें लकडीके आधार- पकड 'सेही काम लिया जाता है। मिट्टीके कलबूत पर उसके शिरोभागमें गिलावेका एक इञ्ची स्तर दे देते तथा उसपर ईंटेका चूर्ण छिडकते हुए, गिलावेके कुछ जम जानेपर उसपर कमान उठाते हैं। ५।६ फुटसे अधिक गालेकी कमान होनेसेही इतने परिश्रम करने पडते है। खिडकि-योंकी ऊपरी कमानोंके प्रीत्यर्थ यह स्तर देनेकी आवश्यकता नहीं होती। कमानें यदि भारी और महत्वपूर्ण हों तथा यदि बहुतसी कमानें थोडेसे लकडीके आधारोंपर उठानी हों तो जोडके गिला-

वेम थोडासा सिमेण्ट मिला दिया जाता है। ताकि पहिला आधार शीघ्र निकालकर दूसरी कमानोंको उठानेके कार्यमें वह प्रयोगान्वित हो सके। खिडकियों और दरवाजोंकी ऊपरी कमानोंके आधार ७।८ दिन पश्चात् निकाल लिये जा सकते हैं। भारी कमानें होनेसे उन्हें १५ दिन या उससे भी अधिक दिनतक ज्यों का त्यों रखा जाता है। बडी कमान होनेसे उन्हें धक्के एवम् आघातसे बचानेके हेतु आधार निकालते समय वालूके बोरोंमें छिद्र कर देते हैं। जिससे उनमेंसे अत्यन्त धीरे धीरे सारी वालू निकलकर नीचेका आधार अलग हो जाता है। खिडकी तथा दरवाजोंके ऊपरी कमानोंके कलबूतोंके निचले आधार दोहरे पत्थरोंपर रखे जाते हैं। ताकि वाहरसे पत्थर ठोंककर आधार निकालना सुलभ हो जाय। आधार जितना अधिक हो उतनाही दीवालको ढकलेनेवाला अगल-बगलका जोर धीमा हो जाता है। किञ्चित् गोल कमानके सम्बन्धमें निम्नलिखित सूचनाएं देखिये।

उठान गाला		१।२	१।३	१।४	१।५	१।६
त्रिज्या(Radius)गालेके	गाला×	०·५	०·५४	०·६१५	०·७१५	१·३०
ऊपरी गोलाकार मेरहाव (Arc) की लम्बाई	गाला×	१·५१	१·२७	१·१६	१·१०	१·०११
वर्तुलाकृतिका क्षेत्र (Area of segment)	उठान गाला×	०·७८५	०·७३	०·७०	०·६९	०·६७

नोकदार कमान (Pointed Arch) निकालनेकी कृति यह है कि, (आकृति ६९) मानिये अब नामक रेषापर 'क' ऊचाइ की नोकदार कमान खडी करनी है। ऐसी दशामें 'बक' के मध्य विन्दुसे 'प' से लेकर 'बक' के गुनियाम 'प र' नामक रेषा तथा ब अ नामक रेषासे जहां 'र'

आकृति नबर ६९

मिलता हो वहां तक रेषा खींचे। पश्चात् 'र' को मध्यबिन्दु मानकर 'र ब' नामक त्रिज्यासे 'कपब' नामक वर्तुल-खण्ड अङ्कित करे और उसी प्रकार 'कफअ' चित्रित करे। बस, नोकदार कमान तैय्यार है।

सादा और पुनर्दृढीभूत कांक्रीट

सिमेण्ट कांक्रीटमें, कूटी हुई गिट्टी, कङ्कड़ (बारीक गिट्टी) जल प्रवाहान्तर्गत रोड़े, बजरीका चालन (Gravel) बॉयलरका भीतरी कीट चूना बालुकाश्म पत्थरका चूरा, जलप्रवाहकी बालू, बॉयलरके भीतरकी खुरचन आदि-आदि पदार्थ तथा सिमेण्टकी आवश्यकता होती है।

कांक्रीटकी मजबूती सर्वथा उसके ठोसपन अर्थात् अविरलता या पोलाई न रहनेपर निर्भर रहती है। किसी भी श्रेणीकी गिट्टी किसी एक विशिष्ट आकारकी रहनेसे पोलाईको अधिक गुञ्जाइश मिल जाती है। कांक्रीटकी मजबूतीकी दृष्टिसे आवश्यक यह है कि, उसमें सम्मिश्रित होनेवाली बालू और छोटी-मोटी गिट्टीका प्रमाण इस तरह हो कि, बारीक कङ्कड अर्थात् गिट्टी बड़ी गिट्टीकी पोलाइमें जम जाय तथा बालूकी पोलाईमें सिमेण्टका समावेश हो जाय। इस प्रकारसे सम्पूर्ण सम्मिश्रणका एकसन्धी, बालानशीन और पुख्ता कांक्रीटका पत्थर तैय्यार होना चाहिये। इस तत्वके अनुसार छोटे-बड़े आकारके कङ्कड लेकर यदि वे २॥ इञ्चके छिद्रवाली चलनीसे चाले जा सके तो उनसे बना हुआ कांक्रीट अत्यन्त मजबूत होता है। किन्तु इस प्रकारके कङ्कड कोने-कतरेमें भली भाँति जमते नहीं। अत कार्यको देखते हुए उसके अनुसार छोटे बड़े कङ्कडोंका व्यवहार करना उत्तम है। उदाहरणार्थ नींव और मोटी दीवालोंके लिये बड़े-बड़ेसे रोड़े अर्थात् २॥

इञ्ची कङ्कड, पुनर्दृढीभूत काँक्रीटके लिये पौन इञ्चसे एक इञ्ची परिधिके कङ्कड पतली पड्‌दियोंके लिये १ इञ्ची, कमानके लिये १॥ इञ्ची इस प्रकार आवश्यकतानुसार प्रत्येक कार्य देखते हुए कङ्कड़ोंका निर्व्वाचन होना चाहिये।

गोल गिट्टीके पेटेमें जो पोलापन रहता है उससे अधिक पोला पन कूटी हुई ओर प्राकृतिक गिट्टीमें होता है। किन्तु फिर भी कूटी हुई गिट्टीमें पत्थरका जो बारीक चूरा होता है उसके कारण कांक्रीटमें विशेष मजबूती आ जाती है। तथापि जहाँ जलप्रवाहमें पड़े हुए रोंडे, बालूकी छाजन प्रभृति पदार्थ यथेष्ट और सस्ते मिलते हो वहाँ जानबूझकर बाहरसे कूटी हुई गिट्टी मगवाना अच्छा नहीं।

कांक्रीटकी मजबूती तदानुपङ्गिक सम्मिश्रणपर विशेषरूपसे अव लम्बित रहती है। कितनीही बार उसमें सम्मिश्रित किये जानेवाले सिमेण्टसे विशेष लाभ नहीं होता। उदाहरणार्थ, यदि एक सम्मिश्रणमें सिमेण्ट, बालू आर गिट्टीका प्रमाण १:२ ४ हो और उसमें मिली हुई गिट्टी एकही आकारकी हो तो दूसरे सम्मिश्रणमें, जिसमें उपरोक्त प्रमाण केवल १ ३ ६ रहे अर्थात् सिमेण्टका प्रमाण पहिले की अपेक्षा न्यून रहे किन्तु गिट्टीका आकार छोटा–बडा सभी प्रकारका हो तो उस दशामें यह सम्मिश्रण अधिक उपयोगी सिद्ध होते हुए मजबूतीकी दृष्टिसे अधिक महत्त्वपूर्ण रहता है।

विशेषतया जिस कांक्रीटसे जलका सम्बन्ध अधिक होता है उदाहरणार्थ, छत, पानीके हौज, नाले और नालियाँ प्रभृति, यहाँ कांक्रीट ठोस प्रकारसे कूटे जानेकी आवश्यकता है। ऐसी स्थितिमें उस सम्मिश्रणमें सिमेण्टका प्रमाण अधिक कर नेकी आवश्यकता है या उसके सहायक स्वरूप उसम चूनेका चूर्ण मिलाना आवश्यक है। सिमेण्टके कारण आवश्यक मजबूती आती ही है। किन्तु शेष पोलापन नष्ट करनेके विचारसे उसमें

चूनेके चूर्णका सम्मिश्रण करनाभी अवश्यम्भावी है, ताकि कांक्रीटसे निसृत होनेवाले जलका प्रतिकार हो जाय । यह क्रिया व्ययकी दृष्टिसे भी अत्यन्त सन्तोषप्रद सिद्ध होती है । पाठकोंके परिचयार्थ विभिन्न कार्योंको दृष्टिकोण में रखते हुए नीचे सिमेण्ट कांक्रीटके विभिन्न सम्मिश्रणों के प्रमाण दिये गये हैं—

प्रकार भेद	सिमेण्ट	बालू	गिट्टी	से लेकर तक		
दीवालकी चौडी नींव	१	३	६	१	४	८
दीवालें	१	२	४	१	२॥	५
दरवाजों और खिड-कियोंपरके छाजन	१	२	४	१	२।	४॥
पुनर्दृढी भूत सि कां	१	२	४			
पे स्टो प्राथमिक स्तर	१	२	५			
" " ऊपरी स्तर	१	२॥				
छत-सतह्गव् स्तर	१	२				
ऊपरी स्तर	१	२	४	१ २	चूनेका	चूर्ण
जलका हौज	१	२				
पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट	१	२				
कांक्रिट खम्भे		१॥	४	१।२		
तहखानेकी दीवालें	१	२॥	३	१	२"	४"
कपाउण्डके खम्भे	१	२॥	५	१	चूनेका	चूर्ण
कपाउण्डके मार्ग	१	३	५	१	२	६
भवनके कोने	१	३	६			
सीढ़ियाँ	१	३	६	१	चूनेका	चूर्ण
चौकीके ऊपरी पटाव			६			
या मञ्जिलकी कढ़नी	१	२।	४॥			

कांक्रीटका सम्मिश्रण

कॉंक्रीटकी मजबूतीकी दृष्टिसे सिमेण्ट कॉंक्रीटका समुचित रूपसे सम्मिश्रित होना एक महत्वपूर्ण कार्य है। इसके प्रीत्यर्थ प्रथमत: जमीनको समथल बनाते हुए उसपर शहाबादी फर्शियाँ अथवा सिद्दापुरी तख्तियाँ परस्परसे जोडकर उसका एक चबूतरा (Platform) सा तैय्यार कर लिया जाता है। उसकी दराजोंमें वालू भरते हुए यदि थोडे प्रमाणमें कॉंक्रीट करना हो तो उसपर एक छोटेसे विना पेन्दीके चौकोर खाकेसे बीचमें छीद छड देकर वालू बिछा देते हैं। पश्चात् उसपर समुचित प्रमाणमें इसी विधानानुसार छड देते हुए सिमेण्ट बिछाया जाता और एक दो वार नीचेसे ऊपरतक खुरचनीकी सहायतासे उलट पुलट कर दिया जाता है। यह क्रिया उक्त द्रव्यके शुष्करूपमेंही होती है। पश्चात् उसे सम्यक्‌रूपसे फैलाकर उसपर गिट्टी कड्डड आदि यथेष्ट प्रमाण और उचित नापसे बिछाते हुए उनपर एक ओरसे एक-दो बार खुरचनी चलाकर अन्तमें पानी छिड़कते हुए सारे सम्मिश्रणकी यथेष्ट उलट पुलट कर दी जाती है। इस विधानसे उत्पन्न हुआ कॉंक्रीट अत्युत्कृष्ट तो अवश्य होता है। किन्तु उसमें समय भी अधिक चला जाता है।

दूसरे विधानमें वालू और सिमेण्ट उपरनिर्दिष्ट प्रकारसेही मिला कर बिछाते हैं। किन्तु उसपर गिट्टी बिछानेके पश्चात् उसकी शुष्क रूपमेंही उलट-पुलट न कर एक ओरसे पानी छिडका जाता और खुरचनीसे जलकी धाराके नीचे खुरचकर दो तीन बार उसकी गोडाइ होती है।

यदि बडे प्रमाणमें कांकीट तैय्यार करना हो तो गिट्टीका एक फुट उँचा चौकोर चबूतरा तैय्यार करते हैं। पश्चात् उसपर समुचित प्रमाणमें बालू बिछाकर उसपर-उसी प्रकार सिमेण्ट बिछाया

जाता है। उदाहरणार्थ, ४ः१ः१ प्रमाण हो तो एक फुटके गिट्टीके चबूतरे पर ६ इञ्चका बालूका तथा ३ इञ्चका सिमेण्टका स्तर बिछाते है। सिमेण्टके स्तरकी ऊँचाईका अन्दाज लेना कठिन है। अत गिट्टीकी नाप घनफुटमें निकाल कर योग्य प्रमाणमे मोहोरबन्द किये हुए सिमेण्टके बोरे खोलते और समान मोटाईका सिमेण्ट का स्तर बिछाया जाता है। उदाहरणार्थ, एक ब्रास या १०० घन फुट गिट्टीका चबूतरा होनसे ५० घनफुट बालू तथा २५ घनफुट अर्थात् १० बोरे सिमेण्ट ४ः१ः१ प्रमाणे सम्मिश्रण करना हो तो आवश्यकतानुसार चबूतरा तैय्यार हो जानेपर एक ओरसे शुष्क दशाहीमें उलट-पुलट करनेके पश्चात् जल छिडककर पुन: एक-दो बार उलट पुलट कर दी जाती है। छोटे-छोटे कार्योंमे यह क्रिया ठीक नहीं बैठती। इस प्रकारकी उलट पुलट अर्थात् गोडाई करनेके लिये छोटे छोटे अन्य उपकरण बाजारमे दो तीन सौ रुपयोंमे मिलते है। उनसे गोडाई अत्युत्कृष्ट होती है।

बिछाई और कुटाई

उपरोक्त पद्धतिसे तैय्यार किया हुआ कांक्रीट जहाँतक हो तैय्यारीके पश्चात् आध घण्टेके भीतर बिछाया जाता है। अधिक देरतक ज्योंका त्यों पडा रहनेसे उसकी सकोचन क्रिया आरम्भ होती और गिट्टीसे सिमेण्टके पृथक् हो जानेकी सम्भावना रहती है। कांक्रीट यदि गाढा बनाया गया हो तो उसकी लोहेके 'पीटने' से खूब कुटाई होती है। पतली दशामें न वह तत्क्षण कूटा जा सकता है और न उसे कूटनेकी आवश्यकताही रहती है। ऐसी स्थितिमें उसे धीरे-धीरे डाला जाता है। ताकि उसमें बाह्यवायु न रहने पाये। पतले कांक्रीटकी बिछाई होनेके पश्चात् उसे तत्क्षण किसी लकडी या फौलादके 'पीटने' से स्थान-स्थानपर ऊर्ध्वगत रूपसे 'पीटा' जाता है। ताकि उसमे वायुके कारण उठे हुए बुलबुले रहन न पायें। सयोगवश यदि तैय्यार किया हुआ कांक्रीट आधे-पौन घण्टेकी अवधितक प्रयोगान्वित न किया जासके तो उस

दशामें उसको वारवार उलट-पुलट करते रहते हैं। ताकि उसे (set) जम जानेको अवकाश न मिले। इस प्रकारसे उसे अपेक्षित समयतक ज्यों का त्यों रखा जासकता है। किन्तु इससे उसकी कुछ न कुछ तेजी मारीही जाती है।

काँक्रीटपर वायुके ऊष्णतामानका परिणाम

गरम वायुमें काँक्रीट अतिशीघ्र जम जाता है। ठण्ढी वायुमें ठीक इसके विपरीत दशा होती है। ५० अंशके नीचे पारा जानेसे वह ठीक तरहसे जमता नहीं। उस दशामे उसके प्रतिकारका उपाय उसपर गरम जल बान्ध देने या भाफ देने आदि प्रकारके किसी उपायका अवलम्ब लेकर गर्मी बढाना है। यदि पानी जमने लायक जाडा हो तो काँक्रीटमें समावेशित हुआ पानी जमकर बरफ होजाता और बर्फी-भवनकी क्रियामें उसकी प्रसरण शक्ति बढ जानेके कारण उसका सकोचन-स्वभाव पृथक्करणमें परिवर्तित होजाता है।

सिमेण्ट कांक्रीटके सम्बन्धमें कुछ उपयुक्त ज्ञान

एक घन फुट सिमेण्टमें बालू और गिट्टी निम्नलिखित प्रमाणमें मिलानेसे निम्नलिखित परिमाणमे कांक्रीट तैय्यार होता है:—

सिमेण्ट घ फु	बालू घ फु	गिट्टी घ फु	घन फुट
१	२	४	४१
१	२॥	५	५०
१	३	६	५८
१	४	८	७५

एक घनफुट सिमेण्टमें विभिन्न प्रमाणमें बालू मिलानेके पश्चात् एक इञ्ची मोटाईका निम्नलिखित परिमाणमें गिलावा तैय्यार होता है:—

सिमेण्ट		वालू	गिलावा
१	:	०	९५ वर्ग फुट
१	:	१	१४७५ ,, ,,
१		२	२३० ,, ,,
१		३	३२० ,, ,,

कॉंक्रीटके फर्में (Forms)

कॉंक्रीटके सृजन कार्यमें जिन साँचों या आधार तख्तियोंकी आवश्यकता होती है, उनकी लकडी जलवायुके प्रभावसे नितान्त हीन होनी चाहिये। जलके संसर्गसे उसका फूलना-झुकना या मुड़जाना अच्छा नहीं। आम कटहर इत्यादिकी लकडियाँ इस कार्यके निमित्त सर्वथा अयोग्य हैं। लाल टीककी लकडी झुकती अधिक है। सागवान होता तो अच्छा है। किन्तु महगा अधिक होता है। कार्यका प्रमाण यदि थोडा हो तो भलेही सागवानकी तख्तियाँ व्यवहारमें लायी जा सकती हैं,-किन्तु इसमें भी घढईका खर्च अधिक होता है। सागवानी लकडीके कुन्दे न्यूनाधिक मोटाई होते हैं। साथही अपेक्षित चौड़ाइके सस्ते मूल्यमें मिलते नहीं। पाईन, देवदार या 'डीलवुड'की लकड़ी पर्य्याप्त रूपसे सस्ती होती हुई उसकी तख्तियां सरल लम्बी और आवश्यकता नुसार चौडी मिलती हैं। किन्तु इन्हें झुकावसे रोकनेके हेतु इनके नीचे मजबूती लानेके अभिप्रायसे डण्डे जडने पडते हैं। इन लकडियोंका यदि अधिकांश रूपसे व्यवहार करना हो तो उनके भीतरी भागमें 'क्रूड-आयल' लगाया जाता है। इस तेलके कारण लकडियाँ जल शोषण नहीं कर सकतीं। साथही साथ टिकतीं भी अधिक हैं। यों तो सामान्यरूपसे कांकीट चिपकने न पाये इस विचारसे 'गोबरी' कर देनेसे भी काम चल जाता है।

पुनर्दृढीभूत (Reinforced) सिमेण्ट कान्क्रीट

आजकल पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कान्क्रीटका व्यवहार अधिकांश रूपसे होने लगा है और आशा की जाती है कि, उत्तरोत्तर इसकी उपयुक्तता बढतीही जायगी। विशेष तो क्या?–इसने स्थापत्यशास्त्रमें मानों 'क्रान्ति'सी मचा दी है। क्यों?–इसीलिये कि,—

१ इस पर आग, पानी, दीमक आदिका प्रभाव नहीं होता।

२ सांचेके अनुसार इच्छित आकार दिया जा सकता और नाममात्रके व्ययमें चाहे जैसा कला कौशल्य उत्पन्न किया जा सकता है।

३ मजबूतीकी दृष्टिसे आर्थिक व्यय नितान्त न्यून होता है।

४ चाहे जिस स्थानपर सांचे तैय्यार हो सकनेके कारण कार्यमे सुगमता होती है। बडे भाग उठाकर रखनेकी मेहनत और परिश्रम बच जाते हैं।

५ सारा काम बेजोड और एक समान (monolth) किया जा सकता है।

६ छडोंकी नाप और जडाईका स्थान तथा दशा निश्चित हो जानेपर एक अनाडी भी सम्पूर्ण कार्यको सरलताके साथ कर सकता है। इसके लिये पेशराज बढई आदि महङ्गे कारीगरोंकी आवश्यकता नहीं रहती।

७ कार्य अत्यन्त शीघ्र समाप्त होजाता है।

८ मुख्य पदार्थ सिमेण्ट होनेके कारण आरोग्यकी दृष्टिसे विशेष लाभप्रद होता है।

९ बार-बार दुरुस्ती नहीं करनी पडती।

१० पुराना होनेसे कमजोर न होकर उल्टे मजबूती बढती जाती है।

उपरोक्त सुगमताओंके कारण दिन प्रति दिन भवन निर्माणके कार्यमें पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कॉंक्रीटका व्यवहार होने लगा है। यदि अधिकाँश रूपसे इस प्रकार वैशिष्ट्यसे काम लिया जाय तो खिडकियों और दरवाजों तथा उनके पल्लोंमें जो कुछ लकडी-लोहे और काँचका सामान लगे उसे छोडकर शेष सब कार्य्योंमें, उदाहरणार्थ दीवालें, खम्मे, टोंडे, धरन, छप्पर या छत इत्यादिके सम्पूर्ण भाग इससे अच्छे सुदृढ और तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करनेपर सस्ते बनते हैं। अमेरिकामें भवनका प्रत्येक भाग पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कॉंक्रीटका तैय्यार मिलता है। जिससे आवश्यकतानुसार इच्छित भाग खरीदकर सिमेण्टसे उसकी जुडाई करनेसे ३।४ दिनमें सम्पूर्ण भवन खडा किया जा सकता है।

स्थापत्य-शास्त्रमें जिस मूल तत्वपर पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीटकी योजना प्रमुख रूपसे की जाती है, वह इस प्रकार है'—

" सिमेण्ट कॉंकीटमें दबाव सहन करनेकी शक्ति अद्भुत है। किन्तु तनाव सहन करनेके सम्बन्धमें वह नितान्त असमर्थ साबित होता है। इस सम्बन्धमें नरम फौलाद या माइल्ड स्टील (वर्द्धनीय लोहा) अत्यन्त उत्तम होता है। लोहे या फौलादमें दबाव सहन करनेकी शक्ति है। किन्तु दोनाही कार्य्योंमें उसका उपयोग करनेसे व्यय अधिक होजाता है। इसके अतिरिक्त दोनों ही कार्योंके प्रीत्यर्थ इसका उपयोग करना सुविधा जनक नहीं होता। गर्म्मीमें वह अत्यन्त उत्तप्त होता तथा जाडेमें वेहद रूपसे ठण्डा होजाता है। खुली वायुमें पड़ा रहनेसे उसपर शीघ्रातिशीघ्र जङ्ग चढ जाता है। कॉंक्रीटपर इन सब बातोंका विशेष परिणाम नहीं होता। अत: इन पदार्थोंका यदि जोड़ लगा दिया जाय तो तनावका भार लोहा ले लेता तथा दबावकी जिम्मेदारी कॉंकीट ले लेता है। निसर्गने इन पदार्थोंमें परस्पर स्नेह सम्बन्ध भी जोड दिया है। कारण सिमेण्टमें लोहेको जङ्गसे बचानेकी शक्ति है तथा वह उसके साथ चिपककर बैठ जाता है।

इन दोनोंके गुण परस्परके लिये पोषक होते तथा इष्ट कार्यमें आशातीत सफलता प्राप्त करते है। भवनके किसीभी भागमें जहाँ तनाव अधिक पडता है वहाँ लोहेका सहारा लेनेसे किफायत होते हुए कार्यभी सुचारुरूपसे सम्पादन होता है। सब जगह लोहेका प्रयोग करना लाभप्रद नहीं होता। धरन जातिके कार्यमें,-फिर चाहे वह धरन, कडी, पटाव और छाजन कुछभी हो-उसपर भार पडनेसे वह झुक जाता और जिस ओरसे अधिक दबाव पड़ता है उस ओर की त्वचा पर सबसे अधिक दबाव पड़कर वह एक निश्चित रेषातक उत्तरोत्तर न्यून होता हुआ उस रेषाके आगे धरन जातिके भागमें दबावके विपरीत अर्थात् तनावकी क्रिया आरम्भ कर देता है । यह क्रिया उत्तरोत्तर बढ कर अन्तिम पृष्ठ भागके सन्निकट सबसे अधिक असर पहुचाती है । इस रेषाको पारिभाषिक प्रयोगमें अविकृत अक्षांस (Nutral axis) कहते हैं। अतः यदि तनाव सहन करनेका सम्पूर्ण भार लोहे पर लादना हो तो ऐसी परिस्थितिमें धरनके जिस पृष्ठभाग पर वह जा गिरता है, उसके विरुद्ध पृष्ठ भागके सन्निकट उस लोहेको रखते हैं। उसे नितान्त बाहरकी ओर रखनेसे उसमें जङ्ग लगनेकी सम्भावना होनेके कारण उसको पृष्ठभागके प्राय पौन इञ्चसे एक इञ्च भीतर घुसेड कर रखते है । प्राय सम्पूर्ण धरनोंके ऊपरी भागमें दबाव तथा निचले भागमें तनाव रहता है । अतः अधिकाँशरूपसे निचलेही भागमें लोहा देते हैं। किन्तु फिर भी धरनोंके कुछ भागविशेषमें इसके प्रतिकूल क्रिया की जाती है। उदाहरणार्थ, दो से अधिक खम्भों पर एक अधर धरन या लग्घी (पकड) हो तो अन्तिम दो छोर की दो खम्भोंको छोडकर शेष खम्भोंकी ऊपरी लग्घियोंके भागमें नीचे दबाव और ऊपर तनाव रहता है। अर्थात यह परिस्थिति उपरानिर्दिष्ट सिद्धान्त से नितान्त प्रतिकूल रहती है। इसका कारण यह है कि उक्त लग्घियोंको उनके नीचेके खम्भे नीचेसे ढकेलते रहते हैं। जिसके कारण उतने भाग विशेष

पर धरन उल्टी हो जाती है। यही कारण है कि, लग्घियोंके इस भाग विशेषमें प्रमुखतया ऊपर लोहा दिया जाता है। नीचे भी थोड़ासा देते हैं। किन्तु वह नाममात्रके लिये। इसी प्रकार कहीं कहीं धरनोंका एक छोर दीवालोंमें दबाकर जड़ दिया जाता और दूसरा अधरमें छोड़ दिया जाता है। (उदाहरणार्थ गैलरी, छज्जोंकी धरनें इत्यादि) इस प्रकारकी धरनोंपर ऊपरसे भार पड़नेसे निचले भाग पर दबाव और ऊपरी भागपर तनाव पड़ता है। अत इस दशामें लोहेकी स्थापना उनके ऊपरी पृष्ठ भागके सन्निकट ही होनी चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि, यह विषय शास्त्रीय है और स्थापत्यशास्त्रकी कुछ न कुछ जानकारी हुए बिना दबाव और तनावकी समुचित परिस्थिति का ज्ञान होना असम्भव है। इसीलिये तद् सम्बन्धमें स्थापत्यशास्त्रीकी सलाह लेनाही उचित और उत्तम है। उन्हींसें छडोंकी नाप, प्रमाण और पारिस्थितिका भी ज्ञान हो सकता है।

सिमेण्ट, गिट्टी और बालूके सम्बन्धमें हम ऊपर लिखही चुके हैं। गिट्टी जहां तक हो पौन इश्चसे अधिक बडी न होनी चाहिये। बडी गिट्टी लोहेको भलीभांति पकड रखनेमें समर्थ नहीं होती।

लौह

स्थापत्य शास्त्रियोंने विभिन्न प्रयोग कर यह निश्चित किया है कि, अत्यन्त कठोर फौलाद भी पुनर्हढीभूत कांक्रीटके निमित्त उपयुक्त नहीं होता। इसमें जो छड व्यवहृत किये जानेवाले हों, उनका प्रयोगयुक्त निर्व्वाचन करना भी सर्व्व साधारण समाजके लिये सरल सम्भव नहीं है। इन प्रयोगोंको करनेके जो साधन होते हैं वे अत्यन्त व्ययके होते हैं। सामान्यत जो छड पौन इश्च या उससे कम मोटाईका होता है, उसे उसकी दूनी मोटाईके छडसे अण्टा देनेपर उसका आकार अर्द्धभी,–'श' की तरह हो जाता है और चटकता नहीं, यह छड इस कार्यके निमित्त अच्छा समझा जाता है। यदि छडकी मोटाई पौन इश्चसे अधिक हो तो

उसे उसके तिगुने मोटाईके छडसे अण्टा देनेपर यदि वह तड़के नहीं, तो वह इस कार्यके लिये उपयुक्त समझा जाता है।

कांक्रीटके कार्यमें प्रायः गोल छडही व्यवहृत होते हैं। क्वचित्, प्रसङ्ग पर कार्यको देखते हुए चौकोर छडोंका भी आयोजन होता है। तथापि सर्व्व साधारण दृष्टिसे विचार करने पर गोल छडही अच्छे होते हैं। कांक्रीटसे सम्बद्ध होनेवाला पृष्ठभाग गोल छडोंके कारण जैसा मिल जाता है वैसा अन्य किसी भी आकारके छडोंसे नहीं मिलता। लोहेकी चिपटी तख्तियां तो इस कार्यके निमित्त नितान्त बेकार होती हैं। उन्हें कांक्रीटके कार्यमें व्यवहारान्वित करनेपर तनाव पडतेही सारा कांक्रीट उनसे पृथक् हो जाता और वे खुली पड जाती हैं।

इस सम्बन्धमें दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि, इस कार्यमें अधिक मोटाई के थोडे छड प्रयोगान्वित करनेकी अपेक्षा यदि उस क्षेत्रफलके हिसाबसे कुछ पतले किन्तु संख्यामें अधिक छड़ व्यवहारमें लाये जाँय तो कांक्रीटकी मजबूती अधिक बढती है। पुनःईढीभूत कांक्रीटकी सुदृढता उससे सम्बद्ध हुए लोहेके पृष्ठभागके क्षेत्र फलपर अवलम्बित रहती है। इसलिये जितनेही अधिक छड़ व्यवहारमें लाये जाँय उतनाही पृष्ठभागका क्षेत्र अधिक विस्तृत हो जाता है। उदाहरणार्थ —

(१) पौन इञ्ची ४ छडोंके च्छेदका क्षेत्रफल १.७६७१ वर्ग इञ्च होता है। उसका घेरा अर्थात् परिधि ९.४२४९ इञ्च लम्बी होती है।

(२) $\frac{3}{8}$ इञ्ची १६ छडोंके च्छेदोंका क्षेत्रफल १.७६६४ वर्ग इञ्च अर्थात् प्राय उपरनिर्दिष्ट प्रमाणके बराबरही होता है। किन्तु उनकी परिधि १८.८४९६ अर्थात् ठीक दूनी हो जाती है। इस से स्पष्ट हो जाता है कि, इस प्रकारके कांक्रीटको पहिलेकी अपेक्षा दूनी पकड मिलती है।

छडोंको मोडना और दचर बनाना

पुनर्दृढीभूत कांकीटमें बैठाये जानेवाले छड कहां-कहां मोडे जाते हैं इस सम्बन्धमें विस्तृत विवेचन छाजन, धरन, पाटन, पिलर इत्यादिके वर्णनमें किया गया है। पुनर्दृढीभूत कांकीटकी सारी दृढता सिमेण्ट, कांकीट और लौहके सहकार्यपर अवलम्बित होती है। अत उसमें प्रयोगान्वित होनेवाले छड़ोंके अग्रभागोको मोडकर उन्हें कुन्देकी आकृति दी जाती है। कांकीट या लौहके एक दूसरेसे पृथक होतेही पुनर्दृढीभूत कांकीटसे बना हुआ सम्पूर्ण कार्य नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। अत उक्त छडोंके छोरोंको मोडकर कुन्देकी आकृति देनेसे वे कांकीटको विशेष-रूपसे पकड रखनेमे समर्थ होते हैं।

चाहे जिस स्थानसे छडोंको मोडनेके निमित्त एक विशिष्ट प्रकारके यन्त्र मिलते हैं। किन्तु उनका प्रयोग बडे कार्योंमें किया जाता है।
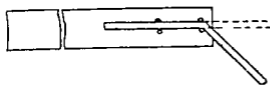
आकृति नंबर ७०

घरू काममें इस प्रकारका कार्य्य अत्यन्त थोडा रहनेके कारण निम्न लिखित उपायकी शरण ली जाती है।

एक छ-सात फुट लम्बी तथा४।५इञ्च चौडी एवम् उतनीही मोटी लकडी लेकर उसके एक छोरके पास प्राय पाच इञ्च लम्बाईके दो चिपटे कांटे लेकर उन्हें प्राय इञ्च सवा इञ्च ऊपरको रखते हुए इस प्रकार जड दिया जाता है ताकि, उनके मध्यमें प्राय पौन इञ्चका अन्तर रहे। (देखिये आकृति ७०) पश्चात् पीछेकी ओर प्राय-३।४ इञ्चके अन्तर पर इसी प्रकार दो और कांटे जड़ दिये जाते हैं। इन दोनो कांटोंके बीचमें छड़को आड़ा रखकर(जैसा कि आकृतिमें दिखलाया गया है) एक ओर खींचा जाता है। इस प्रकार सहज हीमें छड़ इष्ट रूपसे मुड़ जाता और कार्योपयोगी निकल आता

है। उसे जहाँसे मोड़ना हो वहाँ खड़िया मिट्टीसे चिन्हकर देते हैं। आवश्यकतानुसार लकड़ीपर और भी एक दो काँटे जड लिये जाते हैं। थोडीसी मेहनत और अनुभवके पश्चात् यह कार्य सरलता पूर्वक एक साधारण मजदूरभी कर सकता है। इसके पूर्वही छडके छोरको कुन्देकी आकृति दे दी जाती है। कारण वैसा करते समय सम्पूर्ण छड़ पर्य्याप्त दूरीतक घुमाना पड़ता है और यदि पहिलेहीसे और कहीं मुडा हो तो उसे घुमानेमें दिक्कत पडती है। कभी-कभी छडके एक छोरको पीछेसे कुन्देकी आकृति देना श्रेयस्कर होता है। क्योंकि पहिलेसे यह निश्चित नहीं किया जा सकता कि, कार्यमें कितना लम्बा छड प्रयोगान्वित होगा। ऐसी दशामें छडको आवश्यकतानुसार मोड चुकनेके पश्चात् उसे तोडकर किसी आधे या पौन इञ्ची लौह नलिकामें इच्छित प्रमाणानुसार उसका छोर डालते हुए काँटोंके शिकञ्जेमें दिया जाता है और उतनाही छोर नलिकाकी सहायतासे घुमाकर सरलता पूर्वक इष्ट आकृति दी जाती है।

लम्बी लकडीमें काँटे जडनेकी अपेक्षा यदि वह किसी (एठे) लकडीके कुन्देमें जडे जाँय अथवा सिमेण्ट कॉक्रीटका एक ठोका बनाकर उसके ढालते समयही उसमें बोल्ट या काँटे खडे किये जाँय तोभी ठीक, उत्तम और विशेष लाभजनक होता है।

कितनीही बार आवश्यक लम्बाईके छड प्राप्त नहीं होते। ऐसी स्थितिमें उन्हें लोहारसे वर्धित करानेकी अपेक्षा यदि उनके छोर प्रायः एक फुटतक दूसरे पर चढाकर उन्हें तारकी सहायतासे दो जगह बन्द दे दिये जाँय तो यह विशेष उपयुक्त और श्रेयस्कर होता है। तनावकी जगह छडोंके दोनों कुन्दोंको परस्पर में बक्षा देनेसेही काम चल जाता है। किन्तु यह क्रिया दबावकी जगह कारगर नहीं हो सकती। तनाव और दबाव की निश्चित जानकारी अनुभवहीन मनुष्योंको होना नितान्त

कठिन है। अतः ऐसी परिस्थितिमें उक्त जोडकी शरण लेनाही विशेष सुविधा जनक है। वह तनाव और दबाव दोनोंहीके लिये समान रूपसे उपयोगी होता है।

सिमेण्ट कॉंक्रीट ढालनेके पूर्व सतहसे जितनी ऊँचाईपर छडोंका ढच्चर रखना हो, उसी मोटाईतक कड्डूड कूटकर उनपर ढच्चर रखते हुए ऊपरसे कॉंक्रीट ढाला जाता है। कॉंक्रीटकी कुटाई या बिछाईके समय इन कड्डूओंको हिलने न देनेकी ओर विशेष ध्यान दिया जाता है।

फर्म्में (Forms)

आजतक यदि कहीं पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीटका काम नष्ट-भ्रष्ट होनेकी बात सुनी गयी है तो वह उसको फर्म्मेंमें ढालते समयही।

१—वजनके कारण फर्म्मोंको दबनेसे बचानेके निमित्त यदि उनके नीचेकी तख्तियां एक इञ्ची हो तो १–१॥ फुटके अन्तरपर तथा १½ इञ्ची होनेसे ३ फूटके अन्तरपर डण्डे जड दिये जाते है।

२—इसी कारणवश उनके नीचे जो लट्ठे देने हों उनके पेन्देमें लादी अथवा समथल तख्ती रख दी जाती है। (देखिये चित्रसंख्या ७१) ऊपरी अधिष्ठान अर्थात् चौकीके छिद्रसे नोक निकालकर उससे लट्ठोंको सलग्न कर दिया जाता है। यदि मिट्टी पोली हो तो इन लट्ठोंपर घन चलाकर उन्हें जमीनमें गाडी जाता और ऊपर अधिष्ठान अर्थात् पीठेकी स्थापना करते है।

३—फर्म्मोंको खोलनेमें सुविधा करने तथा झटकेसे बचानेके निमित्त लट्ठोंके नीचे दोहरा पच्चर दिया जाता है। तख्तियोंके भीतरी भागमें 'क्रूड आईल' पोता जाता या गाढे-गाढे गोबरकी गोबरी कर देते हैं।
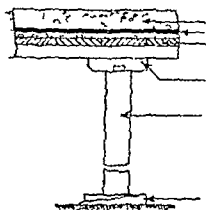
४—फर्म्मोंके लिये देवदार 'डील' या 'फिण्डर' की लकड़ी उत्तम होती है। फर्मों की जड़ाई हो चुकनेपर उनमें छिद्रादि रहने देना अच्छा नहीं। उन्हें तत्क्षण गाढ़े गालेसे मून्द दिया जाता है। उसी प्रकार भीतरी पृष्ठभाग एक समतल है या नहीं, उसमें आवश्यक स्थान पर उभार तो है? जहां गोलची या चौंपकी आवश्यकता है वहां उस आकारके टुकड़े जड़े हैं या नहीं इत्यादि बातोंकी सम्पूर्ण रूपसे जाँच करली जाती हैं।

आकृति नम्बर ७१

पुनर्दृढीभूत कांक्रीटकी भवन सम्बन्धी उपयोगिता

१—छाजन—(छावनी)

दरवाजे या खिड़कियोंपर जो छाजन रहती है, वह भी एक प्रकारकी धरनटी होती है। केवल भेद इतनाही है कि, उसका गाला (Span) छोटा होता है। वह धरन दोनों ओर दीवालोंपर अवलम्ब लेती है तथा उसके शिरोभागपर दीवालका भार पड़ता है। इस भारके कारण उसकी प्रवृत्ति नीचे झुकनेकी ओर होनेके कारण उसके ऊपरी भागमें अविकृत अक्षांस (Neutral axis)से दबाव रहता तथा निचले भागमें तनाव रहता है। तनाव सहन करनेके लिये पेन्देमें लोहेके छड़ देना आवश्यक होता है। इसी प्रकार

-पेन्देसे प्राय' १ इञ्चपर इस प्रकारके छड आडे बैठाये जाते हैं। किन्तु अधिकाँशरूपसे ऐसा होता है कि, इस छावनके दोनों छोर नितान्त स्वतन्त्र नहीं रहते बल्कि उनपर ऊपरी दीवालका कुछ दबाव पड़ जाता है। यदि वह बिल्कुलही खुली होती तो छावनके मुडनेपर दोनों छोर निसर्गतयाही थोडेसे ऊपर उठ गये होते। किन्तु उनपर जो दीवालका दबाव पडता है उसके कारण उन्हें उठनेकी कोई गुञ्जाइशही नहीं रहती। इस दबावका परिणाम धरनके मुडावपर कैसा होता है यह आकृति ७२ में दिखलाया गया है। धरनके छोर खुले होनेसे वह उठाये जाकर आकृति सख्या ७३ के अनुसार बीचमें एकही झुकाव पैदा होजाता है। किन्तु छोरोंपर गिरनेवाले दीवालके दबावके कारण मध्यवर्तीय झुकावके अतिरिक्त दीवालके बगलमें, दोनों ओरसे धरनको और झुकाव आजाता है। (देखिये आकृति सख्या ७२) यह झुकाव उल्टा होता है। अर्थात् इन दो झुकावोंके स्थानपर धरनके ऊपरी भागमें तनाव और निचले भागमे दबाव आजाता है। किसी समय ऊपरी तनाव काँक्रीटकी शक्तिके बाहर जानेसे वहाँ दराज पैदा होकर छावन या धरन टूटनेकी सम्भावना होती है। अत इस परिस्थितिमें तनावको सहन करनेके लिये वहाँभी थोडे बहुत लोहेका रहना आवश्यक है। इसी विचारसे उपरनिर्दिष्ट छड नीचे पेन्देहीमे न रखते हुए उस छोरके बगलमें झुकाकर आकृति ७४ के अनुसार दोनों ओर ऊपरी भागके बगलमें लोहेको लाते हैं। इस प्रकार छावनमेंही नहीं अपितु, पाटन-धरन इत्यादि स्थानोंमें जहाँ जहाँ छोरोंपर ऊपरसे

आ न ७२ आ न ७३

अ ब
क ड इ

आकृति न ७४, ७५

दबाव आकर उनकी हलचलका प्रतिकार करनेकी परिस्थिति पैदाकर देता है, वहाँ वहाँ-इस प्रकारकी व्यवस्था करनी पडती है। कहीं-कहीं आकृति सख्या ७५ में 'ड' नामक स्थानपर दिग्दर्शित प्रक्रियाके अनुसार एक छडको छोडकर दूसरा छड मध्य भागमे झुकाते हुए ऊपरी भागके बगलमें उसका कुछ अंश लानेका प्रयत्न करते है। किन्तु छावनकीसी सादी घरनके लिये वैसा करनेकी कोई आवश्यकता नहीं रहती।

स्तम्भ (Pillar)

स्तम्भपर जो जोर गिरता है, वह प्राय दबावहीके स्वरूपका होता है। किन्तु कितनीही बार वह स्तम्भके गर्भमें न गिरकर थोडासा बगलमें गिरनेकी सम्भावना होती है। ऐसी दशामें उस पर थोडासा तनाव भी आजाता है। यही कारण है कि, स्तम्भमें लोहा देनेकी आवश्यकता होती है। यह लोहा प्राय: बाहरकी ओर देनेकी परिपाटी है। यदि स्तम्भ पर उसके तौलके मानसे अधिक बोझा पड जाय तो उसके भीतरके छड मुडकर बाहरकी ओर फैल जाते और कॉक्रीटसे पृथक् होने लगते हैं। इसीलिये खडे छडोंको चारों ओरसे तारों या लोहेकी पतली पट्टियोंसे जकड दिया जाता है। तारकी मोटाई किसीभी तरह चौथाई इञ्चसे कम नहीं होती तथा उसकी कमसे कम एक गिरह तो अवश्यही देते तथा दोनों छोरोंको मिलाकर 'पेंचकस'की तरह मरोड देते हैं।

स्तम्भका आकार चौकोर या गोल रखा जाता है। चौकोर आकारकी योजना करनेसे उनके चारों कोनोंके स्थानपर चाँप (Champher) आनेके लिये साँचेके कोनेमें जरादीसे एक त्रिकोणा फ़ालि तस्ती जड देते हैं। फर्म्मेकी दृष्टिसे चौकोर स्तम्भकी अपेक्षा गोल स्तम्भही विशेष सुविधा जनक होता है। साथही साथ इससे शोभाभी आती है। इस प्रकारके स्तम्भके निर्म्माणके हेतु एक लोह निर्मित चद्दरका टुकडा लेकर उसके भीतरी पृष्ठभागमें 'कूड

आयल ' चुपड देते तथा उसकी नलिकासी बनाकर एक-एक फुटपर उसके दोनों छोर जोडते हुए उसमें तार पिरोने लायक बारीक छिद्र बना देते है। चद्दर नितान्त समथल एवम् चिकनी व्यवहृत होती है। जहाँ स्तम्भ खडा करना हो वहाँ छडोंका, तारोंसे कसा हुआ ढच्चर गुनियेमें खडाकर उसके ऊपर तकियेकी खोलीके सदृश उक्त नलिका उसी प्रकार गुनियेमें खड़ी कर देते हैं। अर्थात्‌ही इस व्यवस्थासे ढच्चरका सम्पूर्ण भाग नलिकाके पेटेमे चला जाता है। पश्चात् उसे ज्योंकी त्यों गुनियेमे खड़ी रखनेके लिये अगल-बगलकी लकड़ियों या तरकोंका आधार दिया जाता है। चद्दरके पेन्देसे सिमेण्ट वह न जाय इस विचारसे उसके बाहरी भागमें मिट्टीके गालेकी जुडाई की जाती है। इसका अधिक मोटा कवच बनानेसे नलिकाको गुनियेमें रखनेमें विशेष सहायता मिलती है। इन सब प्रारम्भिक क्रियाओंसे निपट चुकनेपर कांक्रीट-का सम्मिश्रण तैय्यार कर उस ऊपरसे थोड़ा-थोडा छोडा दिया जाता है। यह मिश्रण थोडा पतला होना अच्छा है। क्योंकि एक तो योंही नलिकाके भीतर कांक्रीटकी भराई होनेसे उसकी कुटाई आखसे दिखलायी नहीं देती। दूसरे यदि वह गाढा हो तो उसमें पोलाई रहना सम्भव हो जाता है। स्तम्भके लिये तैय्यार किये हुए सम्मिश्रणमें सिमेण्टका प्रमाण थोडा अधिक होता है। कांक्रीट डालनेके लिये स्तम्भकी ऊँचाईके बराबर लकडी या बाँस का पीढा बान्ध देते और उसपर चढकर उक्त विधानानुसार नलिकामे कांक्रीटकी भराई होती है। इसकी कुटाई लम्बे बांससे की जाती है और जहांतक हो सके बांस कांक्रीटसे ऊपर नहीं उठने दिया जाता। इस कुटाईका उद्देश कांक्रीट छोड़नेके कारण नलिकामें जो वायु बन्द हो गयी हो, उसे बाहर निकालना है। सम्पूर्ण कांक्रीटकी भराई हो चुकनेपर एक बार गुनिया लगाकर देखते हैं और यदि कांक्रीटकी भराई या कुटाईके समय नलिका हिल गयी हो तो उसे पुन: व्यवस्थितरूपसे गुनियेमें ला धरते हैं। यह

कार्य कांक्रीटके सूखने या संकुचित हो जानेपर नहीं हो सकता। तीसरे दिन नलिका या चद्दर निकालनेपर ४-८ दिन तक तैय्यारी स्तम्भेपर गीला टाट लपेटकर रखते और उसकी बारबार जल तराई करते है। तदुपरान्त गिलावा करते समय नीचे मोटा और ऊपर क्रमश: कम करते कुछ संकुचित आकार दिया जाता है। ऊपरी छोर और निचले छोरमें आधे इञ्चका भी फर्क होनेसे यथेष्ट शोभा आ जाती है।

आंगनके स्तम्भोंमें कठधरा जडनेके हेतु या ऊपरी भागके सचिकट झिलमिलीदार पल्ले जडनेके हेतु स्तम्भोंमें खांचे या छिद्र रखने हों तो उस आकारकी लकडियां या खूटिया कांक्रीट भरनेके पूर्वही तेल लगाकर अंटका दी जाती और कांक्रीटके सूख जानेपर उन्हें निकाल लिया जाता है।

स्तम्भमें लोहेके ढचरके चारोंतरफ कमसे कम १ से १॥ इञ्चतककी मोटाईका कॉंकीट होना चाहिये। अत्यन्त छोटे कामके लिये है इञ्ची छड भी पर्य्याप्त हो सकते हैं। किन्तु सामान्यत: आध इञ्ची छडाको व्यवहारमें लाना बुरा है। यदि अधिक मजबूती की आवश्यकता हो तो अधिक छड प्रयोगान्वित न कर कॉंक्रीटके सम्मिश्रणमें सिमेण्टका प्रमाण अधिक कर देना चाहिये। देखिये आकृति संख्या ७६ से ७८। इनमें दो मंझिली इमारतके स्तम्भकी रचना किस प्रकार की जाती है, यह दिखलाया गया है। उसके भीतर कहाँपर और कितने छड दिये गये हैं, यह आकृति संख्या ७३-७८ में दृग्गोचर होता है।

ढचरके चारों ओर जो तार लपेटी जाती है उन्हें यथा स्थान जमे रहने देनेके विचारसे खडे छडसे उन्हें बारीक ताखारा जकड दिया जाता है। इनके दो वेष्टनोंके बीचका अन्तर स्तम्भके व्यासके चतुर्थांशसे अधिक नहीं रहता। उदाहरणार्थ, स्तम्भकी मोटाइ १२ इञ्च हो तो उसमें तीन-तीन इञ्च पर वेष्टन होना आवश्यक है।

स्तम्भकी ऊँचाई उसकी मोटाईकी अपेक्षा पन्द्रह गुनीसे
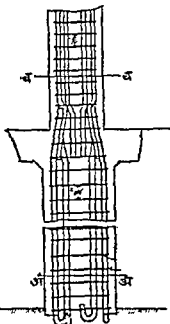
अधिक नहीं होनी चाहिये। आकृति संख्या ७६-७८ मे निचले मंज़िलका एक १५ इञ्ची व्यासका गोल स्तम्भ दिखलाया गया है। उसमे नीचे आध इञ्ची ६ छड देकर उन्हें निचले मंज़िलके शिरोभाग तक चतुर्थांश इञ्च मोटी तारसे तीन-तीन इञ्चपर जकड दिया गया है। ऊपरी मंज़िलके लिये स्तम्भका व्यास ११ इञ्च रखकर उसमें ½ इञ्ची ६ छड ९॥ इञ्चकी दूरीपर उक्त मोटाईकी तारसे परिवेष्टित किये गये है। आकृति संख्या ७६-७८ मे 'अअ' तथा 'बब' नामक रेखाओंके ऊपरवाले स्तम्भोंके च्छेद दिखलाये गये हैं।

आकृति नंबर ७६, ७७, ७८

धरन

अबतक दबाव और तनावके जो दो पृथक्-पृथक् जोर कहे गये हैं उनसे नितान्त पृथक् प्रकारका एक और जोर रहता है जिसे (shear) छेदन उर्फ कतरनका जोर कहते हैं। यह जोर दबाव और तनावके साथ

आ ब

आकृति नंबर ७९

थोडे बहुत प्रमाणमें आता रहता है। उदाहरणार्थ आकृति सख्या ७९ में 'अ और ब' नामक लोहेकी तख्तियोंके बीचमें एक (Revet) पकडनुमा कील जड दीगयी है। ऐसी दशामें यदि ये दो तख्तिया परस्पर विरुद्ध दिशाओंमे तानकर खींचीं जाय तो उसका परिणाम इस (Revet) कीलपर होकर तनाव अधिक होनेसे बिन्दुरेषामें दिग्दर्शित स्थानसे वह कट जायगी। कतरनका यह जोर दबाव और तनावके जोरसे नितान्त पृथक् रहता है। हम आरम्भमें यह लिखही चुके हैं कि दो दीवालोंपर धरनके भीतरी तन्तु ताने जाते हैं। इस प्रकारके अनेक तन्तु स्वतन्त्र न रहकर एक दूसरेसे चिपके रहते हैं। उनके ताने जानेपर ऊपर जो दो लोहेकी तख्तियांका उदाहरण दिया गया है, उसमें जो क्रिया होती है उसी प्रकारकी क्रिया धरनके ताने जानेवाले तन्तुओंमे होती है। उक्त उदाहरणमें (Revet) कील है। धरनके पेटेमे इस कीलके स्थानपर वही कार्य करनेवाली असख्य तन्तुओं को थक्षाकर रखनेवाली शक्ति होती है।

पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीट की धरनपर शास्त्रज्ञोंने अपार भार डाल कर देखा हे। जिससे यह सिद्ध हो चुका है कि धरनमें कतराव नामक जोर के कारण जो दरारें पैदा होती हैं, वे विशेषतया दीवालके सन्निकटही होती हैं। उनका मध्यभागमें वास्तव्य न होते हुए वे वहाँसे मध्यभागकी ओर टेढी होकर महीन होती-होती अविकृत अक्षाँसकी ओर जा पहुँचती हैं। ठीक यही बात गणितसे भी सिद्ध हो चुकी है कि, कतर का जोर मध्यभागकी अपेक्षा दीवाल या आधारके सन्निकटही अधिक होता है। कॉंक्रीट जिस प्रकार तनाव सहन करनेमें असमर्थ है उसीप्रकार वह कतराव को भी सहन करनेमें नितान्त पङ्गु है। यही कारण है कि, जिसप्रकार तनाव सहन करने के निमित्त उसमें लोह देना पड़ता है उसी प्रकार कतर को बरदास्त करने के निमित्त भी उसकी थोडी बहुत व्यवस्था करनी पडती है। स्तम्भम कतर बिल्कुल नहीं आती। छावनमें अत्यन्त अल्प प्रमाणमें आती है और उतनी को सिमेण्ट

फॉंक्रीट झेललेता है। किन्तु बडी धरनोंम उसका प्रमाण विशेष हो जाता है। अत उसके निवारणार्थ निम्न आकृतिमें बतलाये हुए विधानानुसार लौह निर्मित तख्तियाँ या छड मोडकर उन्हें सतहगत् छडों से
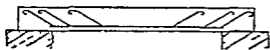
आकृति नम्बर ८०

तारकी सहायता से सम्बद्ध कर देते हैं। इसमें दो प्रकार हैं। पहिले प्रकारमें सतहगत् आडे छड एक दूसरे के पीछे ४५ अंशके फोणमें दोना ओर झुकाकर उनके मुडे हुए अग्रभाग ऊपर को उठाते हैं। (आकृति ८० देखिये) दूसरी प्रथामें आकृति सख्या ८१ और ८२ मे बतलाये हुए विधानानुसार तार या तख्तियोंके वेष्टन दे देते हैं। ये छोरोंकी ओर नजदीक नजदीक तथा मध्यमें अधिक अन्तरपर देते है। गर्भके कुछ हिस्सेमें तो इनका अशमात्र भी नहीं रहता। (आकृति ८१ देखिये) वे किस प्रमाणम और ठीक किस अन्तरपर दिया जाना चाहिये इत्यादि बातें धरनकी लम्बाई, दो दीवालोंके बीचके गाले तथा धरनपर गिरनेवाले भारपर अवलम्बित रहती हैं। इस सम्बन्धके विस्तृत विवेचनके लिये स्थापत्य-शास्त्र-विषयक गणित विभागमें प्रवेश करना होगा। जो प्रस्तुत पुस्तकके परे विषय है।

यदि केवल दोही खम्भों या दीवालोंपर धरन रखनी हो तो उसके लिये पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीट की धरन बनाना विशेष कठिन नहीं है। इसके प्रीत्यर्थ आवश्यकतानुसार नीचे १।३ या अधिक छड़ और कतरावका जोर
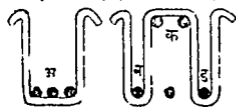
आकृति न ८१, ८२

सहन करनेके लिये उनके चारों ओर खड़ी तख्तियाँ या छड़ोंका वेष्टन अथवा छडाकोरी दोनों ओरसे मोडकर उनके अग्रभाग ऊपरकी ओर तिछे घुमानेसे सरलता पूर्वक काम निकल जाता

है। किन्तु कहीं कहीं तीन या अधिक खम्भोंपर एकही विशाल धरन दी जाती है। उस दशामें केवल नीचे छड देनेसे काम नहीं चल सकता। दोसे अधिक खम्भोंपर की लम्बी इसी श्रेणीकी धरन होती है। उसे नीचेसे जहाँ जहाँसे आधार मिलता है, वहाँ वहाँ वह आधार उस धरनको नीचेसे ढकेलता रहता है। परिणाम यह होता है कि, उसभाग अर्थात् खम्भोंपर तथा उनके दोनों ओर कुछ अन्तर तक वह धरन उल्टी हो जाती है। अर्थात् उसके निचले भागमें दबाव और ऊपरी भागमें तनाव पैदा हो जाता है। यही कारण है कि इस जगह नीचे और ऊपर दोनों ओर लोहा दिया जाता है। (आकृति ८३ देखिये)

आकृति नंबर ८३
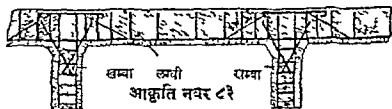
जिस समय स्तम्भोंपर पुनर्दृढीभूत कांक्रीटकी धरन रखी जाती है तथा स्तम्भभी पुनर्दृढीभूत कांक्रीटके ही बने होते हैं, उस समय आकृतिम दिग्दर्शित प्रमाणके अनुसार स्तम्भके शिरोभागके बगलमें कुछ छड कर्णरेषामें मोडकर उन्हें धरनके भीतरी ढाँचमें तारसे बान्धकर समावेशित कर दिया जाता है।

धरनके नीचेकी ओर दस फुटमें चौथाई इञ्च उभार (Camber) देनेकी परिपाटी है। धरनकी सतह सतहगत न रखते हुए बीचमें से वह ऊपरकी ओर गयी हुई तथा बगलमें नीचे उतरी हुई बनाते हैं।

खम्भोंके अगल-बगलकी तख्तियाँ तीसरे दिन तथा सतहगत तख्तिया दसवें दिन निकाल ली जाती हैं।

धरनके फर्म्मोंके भीतर भरा जानेवाला सिमेण्ट कान्क्रीट एकबारगी भरा जाता है। उसमें सन्धि या जोड नहीं रहने देते। इसके अतिरिक्त धरनकी कोरोंमें चांप उठनेके अभिप्रायसे फर्म्मा बनाते समयही कोनेमें एक तिकोनी तख्ती कार्टोंसे जड दी जाती है।

पाटन

सर्व्वसाधारण समाजको यदि कहीं पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीटसे लाभ होता है तो वह दरवाजे, खिडकीयां उनके ऊपरी छाजन तथा पाटनके कार्यमें होता है। हम यह आरम्भमेंही लिख चुके है कि, इसके निर्माण के सम्बन्धमें किसी न किसी अनुभवी की सलाह लेना आवश्यक है। उसके अनुसार पाटनकी रचनामें कितने मोटाईके कितने छड किस प्रकार और कहांपर झुकाने चाहियें इत्यादि बातें अनुभवीसे सलाह लिये बिना नहीं जानी जा सकतीं। फिर भी उक्त समस्याओंके कारणके सम्बन्धमें थोडी बहुत जानकारी होनेसे थोडासा आत्मविश्वास पैदा होकर कार्यमें विशेष सरलता आजाती है। यही कारण है कि, हम इस सम्बन्धके मूलतत्वोंका संक्षिप्त किन्तु ठोस विवेचन नीचे दे देते है –

पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीट की पाटन तीन प्रकारसे की जाती है। १–मध्यभागमें धरन इत्यादि कुछ न देते हुए नीचेसे तख्तपोशीके सदृश समथल सतह दिखलायी दे इसप्रकारकी रचना करना। २–नीचे स्थान स्थानपर लोहेकी धरन (Girders) देकर उसपर बेजोड पाटन खडी करना। ३–नीचे स्थान–स्थानपर पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीटकी धरन तथा उनसे सम्बद्ध पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीटकी पाटन तैय्यार करना। इस रचनाको पारिभाषिक प्रयोगमें 'टी' पाटन कहते है। कारण यह है कि, नीचे की धरन तथा दोनो ओरकी पाटन इन दोनोंका सयुक्ति करण कुछ कुछ अंग्रेजीके 'T' अक्षरसे सादृश्य रखता है।

इनमेंसे पहिले प्रकारमें पुनः दो भेद हैं। (अ) एकमें केवल गालेकी लम्बाईका विचार किया जाता है तथा ढयरकी मोटाई, वजन इत्यादि निश्चित करते हुए गालेकी लम्बाईके सम्बन्धमें एक फूटकाही विचार कर अर्थात् एक फुटपर कितना भार पड सकता है तथा उसके कारण किस भागपर कैसे कैसे जोर पड सकते हैं यह निश्चित कर उसके अनुसार गालेके समानान्तर बिठाये जाने वाले छडोंका आयोजन करते हैं। (ब) दूसरे प्रकारमें यह विचार नितान्त पृथक्‌ तत्वपर किया जाता है। वह तत्व यह है कि, पाटन का या पाटन तथा उसपर गिरनेवाले बोझका भार केवल गालेकी ही दीवालें सहन नहीं करती अपितु वह कमरे की चारों दीवालों पर भी (कुछ न कुछ) प्रमाणमें बँट जाता है। यह सिद्धान्त एक फ्रेंच स्थपतिने प्रयोगसे सिद्ध किया है। उसका कथन है कि, एक चौकोर कमरेकी पाटनपर सारा भार समप्रमाणमें बाँट देने तथा उसे पाटन के नष्ट भ्रष्ट होने की स्थितितक बढानेसे आकृतिसंख्या ८४ में दिखलाये हुए विधानानुसार कुछ अंशमें कर्ण रेषा पर दरारें पडकर मध्यवर्तीय भाग कुछ धँस जाता तथा चारों दीवालोंपर स्थित पाटनके किनारे कुछ उठ जाते हैं। तात्पर्य यह कि, प्रत्येक दीवाल अपने हिस्सेका भार सहन करती है। यदि कमरा ठीक चौकोर हो तो दोनों कर्ण रेषाएं अर्थात् ही बिन्दुमें जा मिलतीं हैं और चारों दीवालें सम्यक् भार ग्रहण करती हैं।

आकृति ८४

इस तत्वके अनुसार कमरेकी चौडाई से लम्बाईका प्रमाण जितना सन्निकट हो उतनी ही पाटनमें मजबूती आजाती है। इस सिद्धान्तका लाभ पुनर्दृढीभूत कॉंक्रीटकी क्रियामें पूर्णरूपसे उठाया जा सकता है। वह इस तरह कि, चारों दीवालें भार सहन करनेके लिये समर्थ बनानेके हेतु छोडेके छड गालेके समानान्तर न जडते हुए, उनके अतिरिक्त थोडेसे छड उनके गुनियेमें देकर उन्हें दूसरी दो दीवालोंपर देते हुए उनका ढयर तैय्यार

करते हैं। इससे लाभ यही होता है कि, पूर्ण चौकोर पाटनमें गालेकी दीवाले ही सम्पूर्ण भार तौल लेती हैं, यह समझकर जितने वजनके छड़ आवश्यक होंगे उस हिसाबसे दो तृतियांश वजनके छड़ उक्त प्रकार सख्या दो अर्थात् 'ब' के अनुसार खडे और आडे जड दिये जाते है। इससे एक तिहाई लोहे की बचत हो जाती है। इसके लिये कमरे जहाँतक हो चौड़े बनाये जाते तथा मध्यमाग मे लोहे की धरन दी जाती है । उदाहरणार्थ, यदि एक कमरा १२×२५ नापका हो तो उसके मध्यमें एक लोहेकी धरन देनेसे १२×१२॥' नापका एक एक खण्ड तैय्यार हो जाता है । उसी प्रकार ११×३०' के कमरे में दो धरन देनेसे ११×१० के तीन चौक अर्थात् प्राय ३ चौकोर हिस्से तैय्यार हो जाते है।

पाटनका अर्थ ही एक प्रकारकी अधिक चौडाई तथा उसके हिसाबसे कम मोटाइकी छावन है। आरम्भ में जैसा कि, हम छावन के सम्बन्धमें लिखते हुए आकृति ७३ में दिखला चुके हैं, उस प्रकार पाटनके बगलके छोर दीवालोपर लम्बाईतक पहुँचा कर उनपर ऊपरी मजिलकी दीवाल उठाते हुए या अन्य किसी प्रकारसे भार डालकर उन्हें यदि उठने न देनेकी व्यवस्था की जाय तो पाटन अत्यन्त मजबूत हो जाती है। किन्तु इस स्थितिमें ऊपरी भाग के सन्निकट लोहेकी और आवश्यकता होती है । आकृति सख्या ८६ में सतहगत छड़ों को मोड़कर उन्ह किस प्रकार शिरोभागपर दिया जाता है, यह दिखलाया गया है । आकृति सख्या ८७ म इसके अतिरिक्त अलग स्वतन्त्र छड़ शिरोभाग पर देकर नीचेके छडोको तारसे बान्ध दिया गया है॥

उक्त प्रकारोंसे पहिले प्रकारके अनुसार अर्थात् जिसमें नीचेकी ओर समथल छत दिखलायी देती है उसके अनुसार पाटन बनानी हो तो पाटनका अचेतन भार प्रति घन फुटके हिसाबसे १५० पौण्ड तथा ऊपर मनुष्योंके भीडका भार अधिकसे अधिक प्रति वर्ग फुटमें ७१ पौण्ड पकडकर कितने बडे गालेमें किस मोटाईकी पाटन उठानी पडती है तथा उसमें किस अन्तरपर कितनी मोटाई

के छड देने पडते हैं इस सम्बन्धमें सम्यक् ज्ञान प्राप्त करनेके लिये निम्न सारिणी दी गयी है—

पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीटकी पाटन

गाला फुट	पाटनकी मोटाई इञ्च	लोह			
		लोहका क्षेत्र फल म व इं	छडोंकी मोटाई इञ्च	दो छडोंके बीचका अन्तर	विशेष
५	४	०·१८	१/४, ३/८	३ ७॥	
६	४	० २१	१/४, ३/८	४॥, ६	
७	४	० २५	३/८, १/२	५।, ९॥	
८	४॥	० २८	३/८, १/२	४॥ ८॥	
९	५	० ३१	३/८, १/२	४। , ८	
१०	५	० ३६	३/८, १/२, ५/८	३॥। ६॥, १०।	
११	५	० ३९	३/८, १/२, ५/८	३॥, ६, ९॥	
१२	६	० ४३	,, ,, ,,	३, ५॥, ८॥।	
१३	६॥	० ४६	,, ,, ३/४	२॥। ५।,८,११॥	
१४	७	० ५०	,, ,, ,,	२॥ ४॥।,७। १०॥	
१५	७।	० ५४	१/२, ५/८, ३/४	४॥, ६॥, ९॥।	
१६	७॥	० ५७	,, ,, ,,	४॥, ६॥।, ९॥	
१७	८	० ६०	,, ,, ,,	४। ६॥, ९।	
१८	८	० ६४	,, ,, ,,	३॥ ५॥।, ८।	
१९	८।	० ६७	,, ,, ,,	३॥ ५॥, ८	
२०	८	० ७१	,, ,, ,,	३।, ५। ७॥	
२१	८॥	० ७५	,, ,, ,	३, ५ ७	
२२	९	० ७८	,, ,, ,,	२॥ ४॥ ६॥	
२३	९	०·८१	१/२ ५/८ ३/४	२॥ ४।, ६।	
२४	९॥	०·८५	५/८, ३/४	४, ६।	
२५	१०	० ९०	,, ,, ,,	४ ५॥	

उदाहरणार्थ, १४ फूट गालेमें पुनर्दृढीभूत कांक्रीटकी पाटन उठानेकी है। अत उक्त सारिणीसे यह स्पष्ट होता है कि, इसकी मोटाई ८ इञ्च होगी, अन्दर ० ६४ घन इञ्चके लोहेके छड देना

पडेगा। ये आध इञ्च मोटाईके हों तो ३॥ इञ्च अन्तरपर देने पडेंगे, ⅝ इञ्च मोटाईके छड ५॥ इञ्चपर या पोण इञ्च मोटाईके, ८। इञ्च अन्तरपर देनेकी आवश्यकता होती।

आकृति संख्या ८५ से ८७ तक उक्त प्रकार (अ) के अनुसार किस प्रकार ढचर तैय्यार किया जाताहै यह १२ फुट गालेके ऊपर प्रति वर्ग फुटके हिसाबसे १५० पौण्ड वजन मानकर एक उदाहरणमें दिखलाया गया है। आकृतिमें दीवालसे १२ फुटके अन्तरपर 'गग' नामक १० ×५ ×३०पौण्ड की फौलादी धरन रखकर उसपर पाटन की गयी है। उक्त सारिणीके अनुसार आध इञ्ची मोटाईके लम्बे छड़ गालेकी एक दीवालपरसे दूसरी दीवालपर ५॥ इञ्चके अन्तरपर रखते हुए ६ इञ्च मोटाईकी पाटन तैय्यार की गयी है। इन छडोंको समान अन्तरपर रखनेके लिये उनके शिरोभागपर चौथाई इञ्च मोटाईके बारीक छड बन्दके रूपमें (Binders) आडे रखते हुए प्रत्येक जोडमें महीन तारसे कस दिये गये हैं।
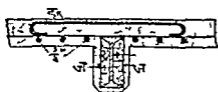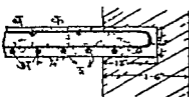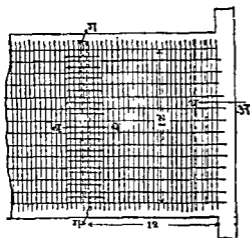
आकृति न ८५, ८६, ८७

आकृति संख्या ८६ में दीवालके शिरोभागपर 'अ अ' नामक स्थानका आड़ाच्छेद (cross section) दिखलाया गया है। उसमें 'अ अ' नामके आध इञ्ची प्रमुख छड ५॥ इञ्चके अन्तर पर हैं। तथा 'ब' नामक चौथाई इञ्चका छड़ ऊपर कस दिया गया है। दीवालके बगलमें जो ऊपरी भागपर तनाव पड़ता है, उसे सहन करनेके निमित्त 'क क' नामके ओर तीन अष्टमांश इञ्ची मोटाईके स्वतन्त्र छड शिरोगत् भागके नीचे, आधे इञ्चपर बन्धे हैं।

आकृतिसंख्या ८७ में 'बब' नामक रेषाके ऊपर धरनका ऊपरी भाग पर का एक आड़ाच्छेद दिखलाया गया है। उसमें भी सतहगत् प्रमुख छड तथा चौथाई इञ्चका ऊपरी बन्द दिखलायी देता है। पाटन का पेन्दा धरन के ऊपरी भागके नीचे प्राय १॥ इञ्चके करीब रखा गया है। इस धरनके कारण पाटनके ऊपरी भागके पास जो तनाव होगा उसे सहन करनेके निमित्त तीन अष्टमांश इञ्चक स्वतन्त्र छड़ एक एक फुटके अन्तरपर बन्धे हैं। आकृतिम 'ड' नामक एक छड़ दिखलायी देता है।

धरनके खुले भागपर तैल रङ्ग के दो पुट देने से काम चल जाता है तथापि यदि उसपर सिमेण्ट कॉंक्रीट का गिलाया कर दिया जाय तो जङ्गका प्रतिकार होने के अतिरिक्त उसमें विशेष मजबूती आजाती है। वैसा करनेके पूर्व्व कॉंक्रीट छोड़ने के पहिले गर्डरके ऊपरी भाग पर लौह निर्मित तारोंकी जाली (टेनिस कोर्टकी जाली के सदृश) बिछाते हैं। उसके दोना छोर धरनके निचले पटाव (Flange) तक पहुँचा कर उन्हीं तारों से जोड देते हैं।

आकृतिसंख्या ८७ में 'जज' नामक जाली दिखलायी गयी है। पाटनके बन चुकने पर आधार तख्तियों की निकासी होनेके पश्चात् धरनके दोनों ओर की छूटमें सिमेण्ट कॉंक्रीट या ईंट के टुकड़े सिमेण्टम जड़कर उनपर दोनों ओरसे जाली फैलायी जाती और उसे नीचेसे जोड़ते हुए ऊपर सिमेण्टके गिलायेका पलस्तर कर देते है। सौन्दर्यके विचारसे आकृतिमें दिग्दर्शित प्रथाके अनुसार सतहगत कोरोंमें (Champher) चौंप जड़ दिया जाता है।

आकृति संख्या ८८ से ९० तक प्रकार (ब) के अनुसार उसी नापके गालेपर दीवालसे ११ फुटकी दूरी रखते हुए १०"×५" आकारकी धरन रखकर उसका ११×११" आकारका खण्ड बनाते हुए पाटनका प्रकार दिखलाया गया है। गालेकी दीवालपर जिस तरह तीन अष्टमांश इञ्ची सुदीर्घ छड़ ६॥ इञ्चके अन्तरपर जडे गये हैं उसी प्रकार उसी मोटाइके छड बगलकी दीवाल और धरन पर उसी अन्तरपर रखते हुए ऊपरी छडोंका ढचर बान्धकर तैय्यार किया गया है।
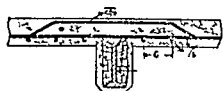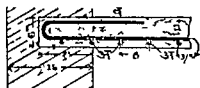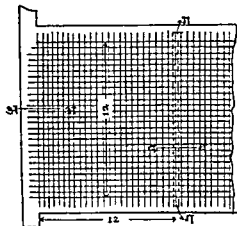
आकृति नंबर ८८ ८९ ९०

आकृति सख्या ८९ में दीवालपरका 'अ अ' नामक च्छेद दिखलाया गया है। उसमें तीन अष्टमाँश इञ्ची 'अ अ' नामक आडे और खडे च्छेद दिखलायी देते हैं। दीवालके संनिकटस्थ शिरो भागके बगलका तनाव सहन करनेके लिये आडे छडाको मोडकर उन्हें उसके संनिकट प्राय' १। फुटके अन्तर तक लाया जाता है। आकृतिमें 'ब' नामक ऐसाही एक छड़ दिखलायी देता है।

आकृति सख्या ९० मे 'ब ब' नामक रेषाके ऊपरकी धरनके ऊपरी भागका च्छेद दिखलाया गया है। उसमें ६॥ इञ्चके अन्तर पर रहनेवाले तीन अष्टमाँश इञ्ची मोटे छड च्छेदके रूपमें दृष्टिगोचर

होते तथा एक आड़ा छड़ भी दिखलायी देता है। धरनके आधारके कारण पैदा होनेवाले शिरोभागके तनावको सहन करनेके लिये आडे छडोंमेंसे एकको छोड़कर दूसरा छड़ मोडते हुए पाटनके बगलमें धरनपर लाते हैं। आकृतिमें 'क' नामक छड़ उसीका निदर्शक है।

दोनों प्रकारकी पाटन डेढ फुट मोटाईकी दीवालमें प्राय डेढ फुट भीतर घुसाकरके ऊपर जुडाऊ (बन्धाऊ) काम किया जाता है।

तीसरे प्रकारकी पाटनमें धरन तथा उसके ऊपरकी पाटन दोनों को एक साथ मिलाकर नीचे आधार तख्तियां देते हुए दोनोंहीमें एक साथ सिमेण्ट कांक्रीट भर देते हैं । इस प्रकारकी पाट
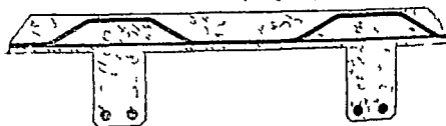
आकृति नंबर ९१

नम किस मोटाईके और कितने अन्तर पर छड दिये जाने चाहियें, इसका सम्यक् ज्ञान प्राप्त करनेके लिये स्थापत्य शास्त्रके गणितमें प्रवेश करना होगा जो कि प्रस्तुत पुस्तककी शक्तिके बाहरका कार्य है। यही कारण है कि, आकृति संख्या ९१ में उसका दिग्दर्शन मात्र कराया गया है।

जीना

पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कोंक्रीटके जीने तीन प्रकारसे तैय्यार होते हैं। पहिले प्रकारमें गलये (Stringers) और सीढी दोनोंमें अलग अलग लोह देकर फर्म्ममें ढाला जाता और पृथक् पृथक्

भाग तैय्यार किये जाते हैं। दूसरे प्रकारमें बगलमें एँगल आयर्न या लोहेकी धरनोंके आधार देकर उन्हें तीन जगह बोल्टोंसे कसते हुए समान अन्तरपर रहने योग्य बनाया जाता तथा उनके पेन्देमें अन्धेरियोंके लिये बगलमें तख्तियोंका आधार देते हुए तात्कालिक रूपसे पेटेमें लोह देकर एक सन्धी जीना तैय्यार किया जाता है। तीसरे प्रकारमें आधार और टप्पेके छडोंसे बान्धकर उनका ढम्बर फर्ममें देते हुए कांक्रीट ढाला जाता है।

पहिले प्रकारमें और भी एक भेद है। उसमे आधार बिल्कुल न देते हुए प्रत्येक सीढीमें योग्य स्थान और योग्य प्रमाणमें लोह देकर सीढियोंका एक छोर दीवालोंमें बझाया जाता तथा दूसरा झूलता हुआ रखा जाता है।

(१) पहिले प्रकारका जीना आकृति सख्या ९१ और ९२ में दिखलाया गया है। आकृति सख्या ९१ में जीनेकी ओर मुँह कर जैसे दाहिनी ओर का एक आधार दिखलाया गया है। उसमे सीढियोंको आधार देनेके हेतु भीतरी भागमे प्राय १॥ इञ्चका टप्पा छोड दिया गया है। इसी प्रकारका एक दूसरा आधार बायीं ओर देकर उसका टप्पा भीतरी भागकी ओर ले जाते है। इस पर आकृति सख्या ९१ म दिखलायी हुई प्रथानुसार स्वतन्त्र रूपसे तैय्यार किये खुले टप्पे एक दूसरे पर चढाते हैं। प्रत्येक टप्पेके नीचेका और तीन अष्टमांश इञ्च मोटाईके २-२ छड घ्छेदके रूपमें दिखलाये गये हैं।
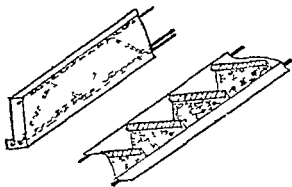
आकृति नबर ९१,९२

प्रत्यक निचले टप्पेके ऊपरकी पिछली कोर तथा ऊपरी टप्पेके नीचेवाली सन्मुखस्थ कोर, इन दोनोंको फम्महीमें ऐसा आकार दिया गया है ताकि वे एक दूसरीपर पूर्णतया बैठ सकें। आधार के पेन्देम आकृति सख्या में ९१ विद्रर्शित प्रथानुसार नीचे से तथा उर्ध्वगत भागके पास एक इस प्रकार आधे इञ्चके तीन छड़ देकर उन्हें जैसा कि, टूटी हुई रेषाओंसे विद्रर्शित किया गया है, बन्दसे जकडकर बान्ध दिया गया है।

दोनों चढ़ाव उर्फ आधार तथा समस्त टप्पोंको एक साथ जोडनेके पश्चात् सिमेण्ट और महीन बालूका पतला सम्मिश्रण तैय्यारकर उसे दराजमें भर देते हैं। चढ़ाव बनाते समय उसके दोनों छोर तथा गभमें तीन तीन छिद्र रखकर उनमें मोटे बोल्ट और वॉशर जडना विशेष हितास्पद समझा जाता है।

इस प्रकारके सूक्ष्ममेदम पूर्व वर्णित पत्थरके जीनोंके विधानानुसार एक छोर दीवालमें बझाते तथा दूसरा खुला छोडते हुए जीनेका सृजन किया जाता है। उक्त आकृति सख्या ९१ म विद्र्शित प्रथानुसार यदि सीढीको सम्यक् आकार दिया गया हो और वह आधारपर पूर्णरूपसे बैठनेके अनुकूल हो गयी हो तो ऐसी दशाम गलथेकेबिना भी सीढियां एक दूसरे पर जडी जा सकती है। किन्तु उस दशामें प्रत्येक सीढीके नीचे जैसे तीन अष्टमांश इञ्ची छड जडे गये हैं उसी प्रकारके दा छड शिरोगत भागपर भी जडना आवश्यक हैं। इस दशामें यदि सतहगत भागमें एकाध छड कम कर दिया जाय तो भी चल सकता है क्योंकि इस पद्धतिमें शिरोगत भागके सन्निकटही तनावका जोर पडता है।

२ दूसरे प्रकारके जीने—दोनों ओर एकुल आयमके चढ़ाव जीनेकी चौडाईके बराबर बोल्टसे सम्बद्ध करते हुए तथा मध्य भागमें दो खडे तथा ३।४ आडे छड देकर उनका ढांचा स्थान-स्थानपर फर्म्मेकी तख्तियासे जकडकर उनमें कॉक्रीट डालते हुए

तैय्यार किये जाते है। यह प्रकार पूर्व वर्णित आकृति सख्या ३४ के जीनेसे ही एक प्रकारसे सादृश्य रखता है। भेद केवल इतनाही है कि, उनके मध्यभागमेंही आयर्न दिया जाता है और इनमें केवल पुनर्दृढीभूत सिमेण्ट कांक्रीटकी व्यवस्था होती है।

३ तीसरे प्रकारमें, जैसा कि, आकृति सख्या ९४से ९६ म दिखलाया गया है जीनेको उतनीही चौड़ाईकी घग्न कल्पितकर इष्ट मोटाईके छड़ोंका ढचर तैय्यार किया जाता है। उक्त आकृतिमें दिग्दर्शित जीना ३ फुटकी चौड़ाईका है। इसमें पांच अष्टमाश इञ्चीके छड़ उर्ध्वगत् रूपमें दिये गये हैं तथा उन्हें ३॥फुट लम्बे तीन अष्टमाश इञ्ची छडोंसे आडे रूपमें बान्ध कर ढचर तैय्यार किया गया है। यह समस्त छड नीचेकी ओर जडे गये हैं। तथापि उनमेंसे दो छड जहां पाटनपर सम्पूर्ण जीना अवलम्ब लेता है वहाँ ऊपरी भागके सन्निकट लाकर पाटनके ढचरमें तारकी सहायतासे बान्ध दिये गये हैं।

पैतानेकी कोरें सम्यक् रखनेके निमित्त काँक्रीटकी भराई होनेके पूर्वंटी कोरके स्थानपर एक जस्तेकी नलिकाका टुकड़ा छिद्रान्वित करते हुए बोल्ट या मोटी तारसे जकड दिया जाता है। देखिये आकृति ९४।
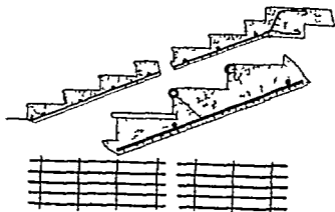
आकृति नं ९४, ९५, ९६

इस आकृतिमें ऊपरी सीढ़ीसे पैर फिसलने न पाये इस विचारसे ढलाऊ पीतल या लोहेका अर्द्धगोल टुकड़ा बोल्टकी सहायता से जड़ दिया गया है। यह कार्य जैसा कि, निचली सीढ़ीमें दिखलाया गया है, उर्ध्वगत् भागपर शहाबादी फर्श जड़ने तथा उसके आगेके भागमें गोलची करदेनेसे भी हो सकता है।

पानीका हौज

पानीके हौजके लिये लोहेका छप्पर बनानेकी अपेक्षा फौलादी तारकी जालियाँ व्यवहृत करना विशेष सुविधाजनक होता है। यदि किसी कारणवश लोहेके छड़ोंसेही काम निकालना आवश्यक हो तो ऐसी दशामें उन छड़ोंको हौजकी ऊँचाईके बराबर उध्वगत् रूपसे खड़ेकर उनमें स्थान-स्थानपर छड़ोंसे बनी हुई कड़ियाँ (Rings) बान्ध दी जाती हैं। अधोगत् भागमें यह कड़ियाँ थोड़े-थोड़े अन्तरपर बन्धी रहतीं तथा ज्यों-ज्यों ऊपर चढ़ते जाते हैं त्यों-त्यों उनका यह अन्तर अधिक किया जाता है। कार्य करते हुए कमसे कम एक फुटके अन्तर पर जोड़ होता है तथा उनके छोर कांटेकी तरह मुड़े रहते हैं। कहीं-कहीं इन आड़ी कड़ियोंको व्यवहारमें लानेके निमित्त काँटेदार तारकी योजना होती है। इस तारमें जो गाँठें होती हैं, वे काँक्रीटको पकड़ रखनेमें विशेष समर्थ होती हैं। ऐसे काँक्रीटमें सिमेण्ट बालू तथा मिट्टीका प्रमाण १:२:४ रहता तथा जलसे अभेद्य बनाने, के विचारसे उसमें आधा भाग चूनेका सत्त (Cream of Lime) मिला दिया जाता है। घरूकाम अर्थात् १४ फुट व्यासके गोल अथवा चौकोर हौज बनानेके लिये यदि थोड़ा विशेष ध्यान रखकर तथा फौलादी जालीका आश्रय लेते हुए, मिश्रणमें थोड़ा जल देनेसे आधार तन्त्रियोंके बिना भी गिलावेकी तरह काँक्रीटका

पलस्तर देनेसेही समुचित रूपसे कार्य हो सकता है। किन्तु इस दशामें गिट्टीके स्थानपर बालूकी चालनका व्यवहार किया जाता तथा उसमें सिमेण्टका प्रमाण कुछ अधिक कर भीतरी भागमें पुन: सिमेण्ट तथा महीन बालू १ १ प्रमाणमें सम्मिश्रित करते हुए उससे आध इञ्ची मोटा पलस्तर किया जाता है। इसे जलाभेद्य बनानेके लिये फिटकिरी और साबुनका पानी पूर्व कथनानुसार प्रयोगमें लाते है।

जलोत्सर्जक (Flushing) सण्डासोंके हौजोंके लिये पुनर्द्ढीभूत कांक्रीटका पेन्दा बनाकर उसमें ईंटोंकी ४॥ इञ्ची मोटाईकी पडदिया चूनेकी जुडाईसे खडी करने तथा भीतर सिमेण्ट कांक्रीटका एक इञ्च मोटाईका गिलावा करनेसे व्यय और परिश्रमकी दृष्टिसे विशेष सुविधा हो जाती है।

पांच फुट व्यास तथा पाच फुट गहराइके पुनर्दृढीभूत कांक्रीटके हौज बनानेके निमित्त चौथाई इञ्च मोटाईके छडकी कडिया नीचे छ छ इञ्च तथा ऊपर क्रमश: ९ इञ्चके अन्तरतक बढाकर रखते हुए १। फुटके अन्तरपर उन्हें रखकर तीन अष्टमांश इञ्ची मोटे छडोंको उर्ध्वगत रूपमें खडे करते हुए तारमें बान्धा जाता और ढचर तैय्यार किया जाता है। इस प्रकारके हौजको ४ इञ्च कांक्रीटकी मोटाई पर्य्याप्त हो जाती है।

मकानकी छुवाई (रङ्गलेप)

सतैल-रङ्गलेप (Paints)

रङ्गलेप कई प्रकारके होते है। प्रमुखरूपसे इनका व्यवहार लकड़ी, लोहा तथा ऐसी ही ऐसी भवननिर्म्माण कार्य्योपयोगी साधन सामुग्रियोंपर होनेवाले जलवायु एवम् रासायनिक परि-

णामाको बचानेके निमित्त एवम् उनके सौन्दर्यको सुरक्षित करनेके निमित्त होता है।

स्थपतिवर्ग जिन रङ्गलेपोंका व्यवहार अधिकौंश रूपसे करता है, वह सब किसी न किसी जमीन पर बनते हैं तथा 'ब्रश'से (Brush) इष्ट साधन-सामुग्री पर विलेपित किये जाते हैं। इस जमीनके मूलमें किसी न किसी धातु विशेपका 'प्राणवायु सयोजक' (Oxide of metal) तथा कुछ तैल पदार्थ जो 'वाहक' कहलाता है, स्थित रहता है। प्रसङ्गवशात् कहीं-कहीं रङ्गलेपकी क्रिया विशेपरूपसे सरल बनानेके निमित्त किसी द्राव (Solvent) का सम्मिश्रण भी आवश्यक होजाता है और वाहक पदार्थ (Vehicle) को शीघ्रतया सुखानेके निमित्त किसी सुखानेवाले पदार्थके मिश्रणकी शरण लेनी पड़ती है। यदि अन्तिम इच्छित रङ्ग जमीनसे पार्थक्य प्रमाणित करे तो ऐसी परिस्थितिमे वस्तुत छटा दिखलानेके निमित्त उसमें अतिरिक्त इच्छित रङ्गके मिश्रणकी व्यवस्था करनी पड़ती है।

रङ्गलेपमें जो पदार्थ सर्व साधारण रूपसे प्रयोगान्वित होते हैं वे ये हैं:—

१ जमीन अर्थात् स्थिर द्रव्य—सफेदा, सिन्दूर, लोहेका प्राण वायु सयोजक, (Oxide of Iron) जस्तेका प्राणवायु संयोजक, सुफेद (Oxide of Zinc)

२ वाहक—तीसी, अलसी अर्थात् बरेका तेल

३ विद्रावक—तार्पीन अर्थात् बिरोजेका तेल

४ अवरोधक—(Litharge) मुरदासङ्ग तथा सिन्दूर

५ रङ्गोत्पादक द्रव्य—(Colouring pigments) हिरमिजी या पीला हरताल, नील, नीलाथोथा, दियेका काजल, खपरेके कोयलेका कपड़छन चूर्ण इत्यादि।

स्थिर द्रव्य—रङ्गलेपमें स्थिरता उत्पन्न करनेके लिये जो द्रव्य व्यवहृत होते हैं, उनमें प्रमुखतया (white lead) सीसेका कार्य

या सफेदा तथा (Red lead, $Pb_2 O_3$) शीसेके प्राणवायु सयोजक (Oxide of lead Red lead) या सिन्दूरका व्यवहार अधिकाँश रूपसे होता है। सिन्दूरयुक्त रङ्गलेप विशेषत लोहेके सामानपर ही सम्यक्‌रूपसे बैठता है। मुरदारसग (Litharge, Pb O) यह भी एक प्रकारका शीसेका प्राणवायुसयोजक (Oxide of lead) ही है। किन्तु इसमें और सिन्दूरमें भेद इतनाही है कि, यह पदार्थ सिन्दूरकी पहिली अर्थात् प्रारम्भिक दशा है। इसी पदार्थ विशेषको और अग्नितापदेनेसे सिन्दूर बनता है। सफेदेसे बनाये हुए रङ्गलेप दीर्घजीवी होते हैं। इन्हें गन्धकका धूँआ,-विशेष तो क्या उसकी गन्धतक विकृत कर डालती है। उसके सम्पर्कमात्रसे सफेदा मिश्रित रङ्गलेपका मूल स्वरूप बदलकर काला होजाता है तथा कुछही दिनोंके उपरान्त उसकी चमक-दमक जाती रहती है। बाजारमें तीसीके तेलमें सफेदा मिश्रित तैय्यारी रङ्गलेप १०, १४, २० तथा २८ पौण्डके डिब्बोंमें मिलता है। चूर्णके रूपमें जो सफेदा मिलता है, उसमें सुफेद चूने इत्यादि पदार्थोंका सम्मिश्रण रहता है। अत यदि वह लेनेका विचार हुआ तो उसमें नत्राम्ल (Nitric acid) डालकर परीक्षा कर लेनी चाहिये। नत्राम्लके सयोगसे विशुद्ध सफेदा घुल जायगा तथा मिश्रित द्रव्य ज्यों का त्यों बना रहेगा।

इस पदार्थ विशेषसे बना हुआ रङ्गलेप यद्यपि लोहेपर अत्यन्त उपयुक्त रूपसे बैठता है तथापि भवनस्थ सूक्ष्म एवम् कलाकौशल युक्त कार्योंमें इसका प्रयोग अच्छा नहीं। ऐसी दशामें उसके स्थानपर जस्तेके प्राणवायु सयोजक पदार्थ (Oxide of Zinc) का व्यवहार करना पडता है। इस पदार्थ विशेषपर धूँएका कोई प्रभाव नहीं होता और यदि अँशात्मक प्रमाणमें कुछ हुआ भी तो साबुनके पानीसे साफ धुल जाता है। रसोंईघर-स्नानागार इत्यादि कमरोंकी दिवालोंपर इसका लेप कहीं अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। किन्तु साथहीसाथ इसमें एक असुविधा यह रहती है कि, यह मिश्रणविशेष रङ्गलेप अधिक कालतक टिकता

नहीं न यह अत्यन्त सूक्ष्म स्तरमें विलेपित ही होता है। गाढ़ा स्तर बनेसे उसकी पपड़ियाँ गिरने लगती हैं। सफेदी और चमक-दमक में यह नितान्त उत्कृष्ट प्रमाणित होता है। किन्तु साथहीसाथ सफेदकी अपेक्षा महँगा भी होता है। आजकल बाजारमें 'टुवक' नामक एक स्थिर द्रव्य चला है। जो कारखानेके नामसे सर्व साधारण समाजमें पहिचाना जाता है। यह अत्यन्त महँगा द्रव्य है।

सिन्दूरके सम्बन्धमें हम अंशात्मकरूपमें ऊपर एक जगह लिखही आये हैं। इसके सम्मिश्रणसे बना हुआ रङ्गलेप चिरस्थायी और रूप-रङ्गमें अपरिवर्त्तनशील है। किन्तु उसका सम्बन्ध शीसा-जनित अथवा शीसायुक्त अन्य किसी पदार्थ विशेषसे होनेपर उसकी यह शक्ति स्थिर नहीं रहती और वह नष्टरूप हो जाता है। अशुद्ध वायु भी उसे काला बना देती है। अधिकाँशरूपसे यह पदार्थ स्थिर द्रव्यकी तरह प्रयोगान्वित न होकर अवरोधकके स्वरूपमें व्यवहृत होता है। सफेदा मिश्रित स्थिरद्रव्यमें इसका सूक्ष्म सम्मिश्रण रङ्गलेपको शीघ्र सुखानेमें अच्छा उपयोगी होता है। कभी-कभी लोग इसे तीसीके तेलमें मिलाकर इसका व्यवहार स्थिर द्रव्यकी तरह छोड़ेपर रङ्गलेप करने तथा जलावरोधक जोड़ोंके स्थानोंको विलेपित करनेमें भी करते हैं। ऐसी दशामें उसमें सफेदेका भी सूक्ष्म अंश सम्मिलित कर दिया जाता है। लकड़ी आदिके कामोंपर प्रारम्भिक पुट देते समय भी इसका कभी कदाचित् व्यवहार होता है।

लोहके प्राणवायुसंयोजक पदार्थका उपयोग भी कभी-कभी स्थिर द्रव्यके रूपमें लोहेके सामानोंपर होता है। इसका कारण यह माना जाता है कि, शीसे अथवा जस्तेसे बने हुए रङ्गलेपके अवरोधक कार्यके कारण लोहा गलकर नष्ट हो जाता है और उसका प्रतिबन्ध करनेके लिये यह पदार्थ विशेष उपयुक्त है। इस पदार्थविशेषसे सम्मिश्रित रङ्गलेपोंपर समुद्री जलवायुका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

उपरोक्त मूल स्थिरद्रव्य सफेदा और जस्तेके प्राणवायुसयोजक पदार्थोंके सम्बन्धमें,-जिनका व्यवहार अधिकाँशरूपसे होता है,- तुलनात्मक विवेचन करते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि, उन दोनोंही पदार्थोंमें गुण और दोष दोनो भरे पडे हैं। उपरानिर्दिष्ट सफेदेके दोषोंके अतिरिक्त एक दोष उसमें यह भी होता है कि, वह अत्यन्त विषाक्त द्रव्य है । जिसका परिणाम उत्पादक एवम् प्रयोगी दोनोंहीके स्वास्थ्यपर बुरा होता है। अत आवश्यकता इस बातकी है कि, इन दोनों द्रव्योंके गुण विशेषको देखते हुए, उनसे सम्यक् लाभ उठाया जा सके एवम् आर्थिक व्ययकी दृष्टिसे भी कम लागत बैठे। इसविचारसे रङ्गलेपका आरम्भिक पुट सफेदा मिश्रित रङ्गलेपका तथा दूसरा और तीसरा पुट जस्तेके ऊँचे रङ्गका ऊँचा तेल मिलाकर देना विशेष हितावह है। इसके कारण लोहे अथवा लकडीके सामान पर पडे हुए प्रकृत दाग लेपके नीचे छिप जाते और यह सुदृढरूपसे उसपर बैठ जाता है। दृयक नामक स्थिर द्रव्यके मिश्रणका अन्तिम पुट देनेसे उस सामानमें चमक-दमक उत्पन्न होकर वह चिरस्थायी बनी रहती तथा उसपर गन्धकमय धूँए अथवा वायुका दुष्परिणाम होकर वह काला नहीं पडने पाता।

द्राटक द्रव्यमें तीसीके तेलका व्यवहार अधिकाँश रूपसे होता है। तथापि प्रसङ्गवशात् काय और परिस्थितिको देखते हुए गरी, तिल्ली, पोस्ता, खसखस तथा बदामके तेल भी व्यवहृत किये जाते है। खसखस तथा बदामके तेलका उपयोग प्राय सूक्ष्म तथा कला-कौशल्यके कामोंमें व्यवहृत होता है। तीसीका तेल अन्य तेलोंकी अपेक्षा शीघ्र सूखने वाला एवम् दृढरूपसे जमने वाला होता है। रङ्गलेपमें व्यवहृत होने वाले इस पदार्थविशेषके तेल दो प्रकारके होते हैं। एक पक्का (Boiled oil) तथा दूसरा कच्चा। कच्चा तेल पक्के तेलकी अपेक्षा पतला और कुछ नम तीसीको घानीमें डाल-कर निकाला जाता है। उत्कृष्ट कोटिका तेल जलकी तरह निर्मल और चमकदार होता है तथा उसमें एक प्रकारकी मधुर सुगन्धि

रहती है। बाजारमें मिलनेवाले तेल सभी अच्छे होते हैं, सो बात नहीं है। जो तेल गन्दा दिखलायी देता है तथा जिसमें सड़ी बू आती है वह व्यवहारोपयोगी नहीं है। कच्चा तेल उबालकर उसके पकाते समय प्रति एक गैलनके पीछे उसमें प्राय: १॥ पौण्ड (Litharge) मुर्दारसङ्ग डाला जाता और उसे पुन: यो एक बार उबाल लिया जाता है। इस क्रियासे तेलमें कुछ गाढापन आकर वह लाल हो जाता है। इस प्रकारके तेलको व्यवहारमें लाते समय उसमें प्रति गैलनके पीछे प्राय: १॥ चम्मच मुर्दारसङ्ग डाला जाता है ताकि वह शीघ्र सूख जाय। उत्कृष्ट प्रकारका पक्का तेल सूखी वायुमें प्राय: २४ से लेकर ३६ घण्टोंमें सूखता है।

विकृत और पुराने तेलमें थोडासा गन्धकका तेजाब (Sulphuric Acid) डालकर उसमें जल मिलाकर धो डालनेसे उसका संशोधन हो जाता और वह स्वच्छ होता है। बाजारमें मिलनेवाले तेलोंमें इलण्डेल क का तेल उत्कृष्ट होता है।

अवरोधक द्रव्य वे हैं, जिनके सम्मिश्रणसे तेल शीघ्र सूखते हैं। इनमें मुर्दारसङ्ग (Litharge) प्रधान है। शीसेका द्रवीकरण करनेसे उसके पृष्ठभाग पर जो एक मलाईकासा स्तर जम जाता है, उसे निकालकर तपानेसे जो एक पीतवर्ण पदार्थविशेषकी उत्पत्ति होती है, उसे (Litharge) मुर्दारसङ्ग कहते हैं।

विद्रावक द्रव्योंमें तारपीन अर्थात् बिरोजेके तेलकी गणना प्रमुख रूपसे होती है। अधिकांश लोगोंकी यह धारणा है कि, इस तेलके व्यवहारसे रङ्गलेप बहुत शीघ्र सूखते हैं। किन्तु उनका यह सोचना नितान्त निर्मूल और निरर्थक है। बिरोजेका तेल शीघ्र उड जाता है। इस कारण रङ्गलेप सूखनेमें थोडे-बहुत अंशमें सहायता भलेही मिलती हो किन्तु वह अत्यन्त थोडे प्रमाणमें। उल्टे तारपीनके व्यवहारसे रङ्गलेपोंमें पतलापन आ जाता है। यह रङ्गलेपोंमें उत्कृष्ट रूपसे सम्मिश्रित होता तथा केशयुक्त 'ब्रश' के साथ (Brush) सम्यक् रूपसे कार्य करनेमें सहायक स्वरूप

होता है। रङ्गलेपमें उत्पन्न होनेवाले कालेपन अथवा फीकेपनका प्रतिकार करनेमें इसकी थोडेबहुत अंशोंमें सहायता होती है। किन्तु साथहीसाथ यदि उसका प्रमाण आवश्यकतासे अधिक हुआ तो रङ्गलेप नितान्त पतले होकर सामान पर बैठनेमें असमर्थ होजाते हैं। ताडपीनके तेलमें रङ्गलेपोंको दृढीभूत करनेकी शक्ति नहीं है तथा उससे युक्त रङ्गलेपोंपर वर्षा एवम् प्रखर उष्णताका दुष्ट परिणाम होता है। जिसके कारण रङ्गलेप नष्टभ्रष्ट होजाते हैं। अत बुद्धिमानी इसीमें है कि, इस तेलका प्रयोग रङ्गलेपके कार्यमें यथासम्भव कम करना चाहिये। यदि ऐसीही आवश्यकता हुई तो सामानके जिस भाग विशेषपर तीनचार पुट देने हों उसपर उसके अन्तिम पुटके समय ताड़पीन मिश्रित तेलका व्यवहार करना चाहिये। पश्चात् उसके सूख जानेपर पुन एक बार असली पक्के तेलका पुट देना चाहिये। इस तेलके असली न होनेसे रङ्गलेपमें चमक-दमक नहीं रहने पाती।

रङ्गोत्पादक द्रव्यों (Colouring Pigments) मे अधिकतया ललाईके लिये काव, गेरु, हिरमिजी या पीला हरताल जिससे कालापन लिया हुआ रङ्ग, जिसे रक्त चन्दनी रङ्ग (Chocolate) कह सकते है तथा हिंगुर (Sulphate of Mercury) व्यवहृत होता है। हिंगुर अन्य द्रव्योंकी अपेक्षा अधिक महँगा बिकता है। हरी छटा लानेके लिये नील तथा पिवडी मिट्टीका सम्मिश्रण, हीराकस (Green Vitriol), जङ्गला, नीला थोथा प्रभृति सामुग्रीका व्यवहार होता है। पीली छटा दिखलानेके लिये अनुक्रमसे हरताल, तथा पिवड़ी मिट्टी, नीलीके लिये नील, कालेके लिये काजल, मयूरके फोयलेका कपडछन चूर्ण शीसेके रङ्गसे सादृश्य मिलानेके लिये सफेदा, नील तथा काजलका सम्मिश्रण उपयोगी होता है।

आजकल बाजारमें तरल रङ्गोंकी जो थैलियाँ (Tubes) मिलती हैं, उनके रग 'एयक'में मिलाकर आवश्यकतानुसार रग तैय्यारकर

रहती है। बाजारमें मिलनेवाले तेल सभी अच्छे होते हैं, सो बात नहीं है। जो तेल गन्दा दिखलायी देता है तथा जिसम खट्टी बू आती है वह व्यवहारोपयोगी नहीं है। कच्चा तेल उबालकर उसके पकाते समय प्रति एक गैलनके पीछे उसमें प्राय १॥ पौण्ड (Litharge) मुर्दारसङ्ग डाला जाता और उसे पुन दो एक बार उबाल लिया जाता है। इस क्रियासे तेलमें कुछ गाढापन आकर वह लाल हो जाता है। इस प्रकारके तेलको व्यवहारमें लाते समय उसमें प्रति गैलनके पीछे प्राय १॥ चम्मच मुर्दारसङ्ग डाला जाता है ताकि वह शीघ्र सूख जाय । उत्कृष्ट प्रकारका पक्का तेल सूखी वायुमें प्राय १४ से लेकर ३६ घण्टोंमें सूखता है।

विकृत और पुराने तेलमें थोडासा गन्धकका तेजाब (Sulphuric Acid) डालकर उसम जल मिलाकर धो डालनेसे उसका सशोधन हो जाता और वह स्वच्छ होता है। बाजारमें मिलनेवाले तेलोंमें व्लण्डेल क का तेल उत्कृष्ट होता है।

अवरोधक द्रव्य वे हैं, जिनके सम्मिश्रणसे तेल शीघ्र सूखते है। इनमें मुर्दारसङ्ग (Litharge) प्रधान है। शीसेका द्रवीकरण करनेसे उसके पृष्ठभाग पर जो एक मलाईकासा स्तर जम जाता है उसे निकालकर तपानेसे जो एक पीतवर्ण पदार्थविशेषकी उत्पत्ति होती है, उसे (Litharge) मुर्दारसङ्ग कहते हैं।

विद्रावक द्रव्योंमें ताड़पीन अर्थात् बिरोजेके तेलकी गणना प्रमुख रूपसे होती है। अधिकाँश लोगोंकी यह धारणा है कि, इस तेलके व्यवहारसे रङ्गलेप बहुत शीघ्र सूखते हैं। किन्तु उनका यह सोचना नितान्त निर्मूल और निरर्थक है। बिरोजेका तेल शीघ्र उड जाता है। इस कारण रङ्गलेप सूखनेमें थोडे-बहुत अंशमें सहायता भलेही मिलती हो किन्तु वह अत्यन्त थोडे प्रमाणमें। उल्टे ताड़पीनके व्यवहारसे रङ्गलेपोंम पतलापन आ जाता है। वह रङ्गलेपोंम उत्कृष्ट रूपसे सम्मिश्रित होता तथा केशयुक्त 'ब्रश' के साथ (Brush) सम्यक् रूपसे कार्य करनेमें सहायक स्वरूप

होता है। रङ्गलेपोंमें उत्पन्न होनेवाले कालेपन अथवा फीकेपनका प्रतिकार करनेमें इसकी थोडेबहुत अंशोंमें सहायता होती है। किन्तु साथहीसाथ यदि उसका प्रमाण आवश्यकतासे अधिक हुआ तो रङ्गलेप नितान्त पतले होकर सामान पर बैठनेमें असमर्थ होजाते हैं। ताडपीनके तेलमें रङ्गलेपोंको दृढीभूत करनेकी शक्ति नहीं है तथा उससे युक्त रङ्गलेपोंपर वर्षा एवम प्रखर उष्णताका दुष्ट परिणाम होता है। जिसके कारण रङ्गलेप नष्टभ्रष्ट होजाते हैं। अत बुद्धिमानी इसीमें है कि, इस तेलका प्रयोग रङ्गलेपके कार्यमें यथासम्भव कम करना चाहिये। यदि ऐसीही आवश्यकता हुई तो सामानके जिस भाग विशेषपर तीनचार पुट देने हों उस-पर उसके अन्तिम पुटके समय ताड़पीन मिश्रित तेलका व्यव-हार करना चाहिये। पश्चात् उसके सूख जानेपर पुन एक बार असली पक्के तेलका पुट देना चाहिये। इस तेलके असली न होनेसे रङ्गलेपमें चमक-दमक नहीं रहने पाती।

रङ्गोत्पादक द्रव्यों (Colouring Pigments) मे अधिकतया ललाईके लिये काव, गेरु, हिरमिजी या पीला हरताल जिससे कालापन लिया हुआ रङ्ग, जिसे रक्त चन्दनी रङ्ग (Chocolate) कह सकते हैं तथा हिंगुर (Sulphate of Mercury) व्यवहृत होता है। हिंगुर अन्य द्रव्योंकी अपेक्षा अधिक महँगा बिकता है। हरी छटा लानेके लिये नील तथा पिवडी मिट्टीका सम्मिश्रण, हीराकस (Green Vitriol), जङ्गला, नीला थोथा प्रभृति सामुग्रीका व्यवहार होता है। पीली छटा दिखलानेके लिये अनुक्रमसे हरताल, तथा पिवड़ी मिट्टी, नीलीके लिये नील, कालेके लिये काजल, बबूरके कोयलेका कपडछन चूर्ण शीसेके रङ्गसे सादृश्य मिलानेके लिये सफेदा, नील तथा काजलका सम्मिश्रण उपयोगी होता है।

आजकल बाजारमें तरल रङ्गोंकी जो थैलियाँ (Tubes) मिलती हैं, उनके रग 'द्रवक'में मिलाकर आवश्यकतानुसार रग तैय्यारकर

लिये जाते हैं। ग्रैलियोंके रंग शीघ्र नष्ट नहीं होते तथापि आर्थिक व्ययकी दृष्टिसे अधिक महँगे पडते हैं। इनपर जलवायुका भी कोई दुष्परिणाम नहीं होता। अतः यदि इन्हें व्यवहारमे लाना ही हो तो ये ऐसी जगह व्यवहृत करे जहाँ जलवायुका विशेष सम्बन्ध आता हो।

भवन निर्माणकी लोह-लकडी इत्यादि साधन सामुग्रियोंपर रङ्गलेप करनेका मूल कारण हम आरम्भमें बतलाही चुके हैं। अतः उसकी पुनरावृत्ति करना यहां व्यर्थ है। इन साधन सामुग्रियोंपर रंगलेपकी क्रिया करनेके पूर्व उन्हें पूर्णरूपसे स्वच्छ कर लिया जाता है। उदाहरणार्थ लकडीपर रंगलेप विलेपित करनेके पूर्व उसका पृष्ठभाग बालुकामय कागजसे रगडकर नितान्त स्वच्छ समथल एवम् चिकना बनाना पडता है। यदि उसमें कहीं छेद अथवा सन्धि हो तो उसे भरनेके लिये एक प्रकारकी लाही बनाई जाती है। यह लाही तीसीके तेलमें खडिया मिट्टीका चूर्ण तथा थोडी सफेदी मिलाकर लुगदीके रूपमें बनती है। लोहेके सामानपर रंगलेप विलेपित करनेके पूर्व एक खुरखुरे लौह खण्ड अथवा लोहेकी तरतीसे उसका पृष्ठभाग भली भांति खुरूचकर उसपर जमा हुआ सम्पूर्ण जग-कीट निकालना पडता है। यदि प्रसंगवशात् उसका प्रमाण अधिक एवम् सुदृढ हो तो खुरूचनेके पूर्व उस सामानको मिट्टीके तेलसे तरकर पश्चात् उसे खुरूचा जाता है। तदुपरान्त सारा सामान नितान्त रूपसे स्वच्छ हो जानेपर उसपर पहिला शुद्ध तीसीके पक्के तेलमें (Boiled Linseed oil) सफेदा मिलाकर उस मिश्रित द्रव्यका दिया जाता एवम् उसे २।३ दिनतक सम्पूर्ण रूपसे सूखने दिया जाता है। पश्चात् जिस रङ्गकी छटा दिखलानी हो वह रङ्ग तीसीके तेलम मिलाकर उसका रंगलेप विलेपित किया जाता है।

योजित रंगको तीसीके तेलमें सम्मिश्रित करनेके पूर्व उसे खरलमें डालकर खूब घोटते हैं। पश्चात् उसमें कुछ तेल डालकर

उसे घोटते हुए एकजी किया जाता है । तदुपरान्त उस रंगीन द्रावको व्यवहारमें लाये जानेवाले सम्पूर्ण तीसीके तेलमें सम्यक्-रूपसे मिलाकर झिरझिरे कपड़ेकी सहायतासे सम्पूर्ण द्रव्योंको किसी पात्रमें छान लिया जाता है ।

आरम्भमें रङ्गलेपका पहिला पुट देते समय केशयुक्त 'ब्रश'का पहिला हाथ आडा तथा तत्क्षण उसपर दूसरा हाथ खड़ा चलाया जाता है । पश्चात् दो तीन दिनके उपरान्त उस पुटके सूखनेपर पक्के तेलम सफेदा घोटकर उसमें आवश्यक रङ्ग एवम् थोडासा ताडपीनका तेल मिलाते हुए उक्त विधानानुसार छान लिया जाता और दूसरे-तीसरे पुटके समय उक्त प्रणालीके अनुसार विलेपित किया जाता है । रङ्गकी अधिकता दूर करनेके लिये 'ब्रश'को प्रत्येक बार रङ्ग पात्रके किनारेपर दबाकर निचोड़ लिया जाता है । रङ्गलेप पतला होनेपर विलेपित स्थानपर लकीरेंसे उठती हैं । जिन्हें देखते हुए मिश्रणमें गाढेपनका प्रमाण निर्धारित किया जाता है । एक पुट जबतक पूर्णरूपसे सूख न जाय तबतक दूसरा पुट नहीं दिया जाता ।

काष्ठलेप (Varnish)

लकडीकी सौन्दर्यवृद्धि करने एवम् उसे जलवायुके प्रभावसे सरक्षित करनेके लिये जिस विशिष्ट प्रकारके लेपका व्यवहार होता है, उसे काष्ठलेप कहते हैं । इसका व्यवहार करनेके पूर्व लकडीका पृष्ठभाग वालुकामय कागजसे रगड़कर नितान्त स्वच्छ एवम् चिकना बनाते हुए तथा उसमें यदि कोई सन्धि अथवा छिद्र हो तो उसमें मोम भरनेके उपरान्त उसपर काष्ठलेपका विलेपन होता है । इस लेप विशेषकी विधान प्रणाली यह है—

(१) एक पौण्ड मोममें ५ तोले राळका चूर्ण मिलाकर उसे अग्नि ताप द्वारा खौला लिया जाता एवम् इच्छित रङ्ग मिला दिया जाता है । पश्चात् उसके ठण्डा हो जानेपर उसमें आवश्यकतानुरूप ताड

पनिका तेल मिश्रित कर इच्छानुसार न्यूनाधिक रूपसे तरल रखा जाता है। व्यवहारके समय एक स्वच्छ चिथड़ा उस मिश्रणमें डुबा-डुबाकर इष्ट सामानका पृष्ठभाग विलेपित कर देते हैं। इस विलेपन क्रियासे उस सामानमें चिकनाहट आ जाती है। तदुपरान्त एक बोतलभर स्पिरिटमें एक पौण्ड चपड़ा-लाह (कच्ची लाह) तथा आधा गैलन पक्का तेल मिलाकर उस मिश्रिणका एक पुट दिया जाता है। (२) चन्द्रस १ भाग, तारपीनका तेल १ भाग, तथा पक्का तेल १ भाग, एकम मिलाकर उसका लेप देते है। (३) तीसरा मिश्रण जो इस क्रियामें व्यवहृत होता है वह यह है कि, एक भाग रालमें एक भाग पक्का तेल मिलाकर उसमें एक भाग तारपीनका तेल मिला देते हैं। अलकतरेको तपाकर उसमें उससे दूना मिट्टीका तेल मिश्रित करनेके उपरान्त उसे पुन' कड़कानेके पश्चात् उसमें अलकतरेसे तिगुना पक्का तेल डालकर लकड़ीके सामानपर लगानेसे उसका रूपरग शीसमकी लकड़ीके समान हो जाता एवम् उसपर जलवायुका दुष्परिणाम नहीं होने पाता। उपरोक्त पदार्थ कड़काते समय उनमें ज्वाला उठानेका भय होता है । अत' वह खुले मैदानमें अत्यन्त सतर्कतापूर्वक कड़काने चाहिये ।

फ्रेञ्च जिलो—(French Polish)

लकड़ीपर फ्रेञ्च जिलो देनेके लिये एक विवक्षित प्रकार एवम् पदार्थोंसे मिश्रण बनाया जाता है । जिसे आजकल सर्व्वसाधारण समाज फ्रेञ्च पॉलिशके नामसे पहिचानता है। उपरोक्त काष्ठलेपकी अपेक्षा इस मिश्रणका पुट लकड़ीपर अत्यन्त सूक्ष्म स्तरके रूपमें बैठता है तथा पारदर्शी होनेके कारण लकड़ीकी नस-नस दिखलायी देती है । उक्त काष्ट लेपका स्तर मोटा होनेके कारण उसके निकल जानेका भय रहता है। तथा इस दूसरे प्रकारके मिश्रणसे वह भय नहीं रहता। किन्तु उसकी जगह एक भय यह रहता है कि, यह वर्षाके कारण शीघ्र

नष्ट होजाता है। भवनके अन्तर्गत मार्गोमे व्यवहृत लकडीके सामानपर भलेही इसका उपयोग किया जा सकता है किन्तु बाह्यगत सामानपर तो कदापि नहीं। इस श्रेणीविशेष मिश्रणका पुट चढानेकी क्रियाकी अपेक्षा, जिसपर वह चढ़ाया जानेवालाहो उसवस्तुको घिसने एवम् उसे नितान्त स्वच्छ बनानेकी ओर विशेष ध्यान रखना पडता तथा परिश्रम करने पडते है।

इसकी विधान प्रणाली यह है कि पहिले थोडासा मोम पिघलाकर उसमें तीसी अथवा ताडपीनका तेल तथा इच्छित रंग डालकर एकबार फडका लिया जाता है। पश्चात् एक स्तर देकर उसके सूखनेपर बालू-विलेपित (Polish Paper) कागजसे पूरी तरह रगडकर चिकना बना लिया जाता है। तदुपरान्त एक स्वच्छ कपडा लेकर उसका पृष्ठभाग सम्यक्‌रूपसे पोंछनेके उपरान्त निम्न लिखित मिश्रणका स्तर चढाया जाता है।

मेथिलेटेड स्पिरिट ४ बोतल, कच्ची चपडा लाह आधा पौण्ड, चन्द्रस ५ तोले, रेवाचीनीका सत ५ तोले, इच्छित रंग १ तोला लेकर स्पिरिटमें चपडेको द्रवीभूत करनके उपरान्त शेष द्रव्य सम्मिश्रित कर दिये जाते हैं और चिथडेकी सहायतासे ऊपर लिखे हुए विधानानुसार लकडीके सामानपर इस मिश्रणका लेप चढाया जाता है। पांच मिनिटके उपरान्त एक स्तरके सूख जाने पर जिलोके कागजसे सामानका पृष्ठभाग हलके हाथसे रगडकर स्वच्छ कपडेसे पोंछते हुए दूसरा एवम् इसी तरह तीसरा चौथा, जितने पुट देने हों, चढा दिये जाते हैं। पुटोंकी अधिकतासे स्तर स्थूल होता एवम् उसमें चमक आ जाती है। गर्मीके दिनोंमें किये हुए पालिशमे चमक अधिक रहती है। दूसरे और तीसरे पुटके समय प्रारम्भिक पुटको रगडनेमें काम आये हुए जिलोदार कागजके टुकडोंका व्यवहार करना चाहिये। इस काममें व्यवहृत होनेवाले रंगके फडुब बाजारमें डेढ दो आने तोले मिलते हैं। कहीं कहीं मोम और तीसीके तेलके पहिले पुटके एवजमें ए—

आफ पैरिस जलमें द्रवीभूतकर उसका पुट चढाया जाता है और उसके सूखने पर उक्त कागजसे भलीभांति घिसाई की जाती है। घिसाई अच्छी होनेसे अन्तिम मिश्रणकाही पहिला पुट देनेसे भी पालिश अर्थात् लेप अच्छा चढता है।

छुवाई

जलमें विद्रावित होनेवाले रंगोंको चार प्रकारके द्रव्योंकी आवश्यकता होती है। १ वाहक-जल, २ स्थिरता उत्पादक-चूना या खडियाका चूर्ण, ३ रंग-जलमें द्रवीभूत होनेवाले, ४ लासा-सरेस, गोन्द, चावलकी माडी इत्यादि।

भवनके कार्यमें रंग देने अथवा भवनकी छुआईके निमित्त सीपोंको भूनकर तैय्यार किया हुआ चूना सर्व्व श्रेष्ठ होता है। यह तीक्ष्ण जातिका चूना है तथा यदि यह ताजी अवस्थामें हो तो उसके रंगीन सम्मिश्रणमें किसी प्रकारका लासा देनेकी आवश्यकता नहीं होती। यह चूना दीवालों इत्यादिपर मजबूतीके साथ बैठता तथा पुतेहुए भागपर शरीर स्पर्श होनेसे देहमें किसी प्रकारका दाग नहीं लगता। छुआईके कार्यमें सुफेदीका पहिला स्तर सादी चूनेकी कालियोंको बुझाकर उसे कपडेसे छाननेके पश्चात उस छने हुए पानीसे देते हैं। तत्पश्चात् दूसरा अस्तर चावलकी माडी या गोन्द मिले हुए चूनेके पानीका दिया जाता है। पहिले अस्तरकी छुआई उर्ध्वगत रूपमें होनेसे दूसरा स्तर आडे रूपमें तथा इसके प्रतिकूल क्रम होनेसे उसी प्रकार परिवर्त्तन कर देते हैं।

कहीं-कहीं उक्त चूनेकी जगह चायना क्लायटिङ्का चूर्ण जलमें विद्रावित कर उससे यह कार्य किया जाता है। किन्तु इसमें लागत अधिक पडती है। हां, चमककी दृष्टिसे इसमें अवश्यमेव विशेषताका समावेश रहता है। यही कारण है कि,

जहा हरे गुलाबी इत्यादि ऊँचे रङ्गोंसे छुआईका काम होता है, वहाँ उसके सन्निकटवाले जोडमें इसीका आयोजन होता है।

पिवड़ी या मूलतानी मिट्टी बाजारमें अत्यन्त सस्ती अर्थात् रुपयेकी १०।१२ सेर मिलती है। उसे जलमें डालकर यदि उसके तिगुने चौगुने चूनेके पानीम मिलाते हुए, कपडेसे छानकर व्यवहारमें लाया जाय तो अत्यन्त थोडे खर्चमें उत्कृष्ट रूपसे घरकी रङ्गाई होती है।

यदि खाकी रङ्गमें घरकी छुआई करनी हो तो एक कपड़ेमे थोडासा काजल बान्धकर उसे उक्त चूनेमें घोटकर मिला दिया जाता और अन्तमें थोडासा नील छोड दिया जाता है।

बकरीकी लेण्डियाँ पीसकर उन्हे चूनेके जलमें विद्रावित करनेसे एक प्रकारका हरियाली युक्त खाकी (Buff) रग तैय्यार होता है।

नीम या अन्य किसीभी प्रकारके वृक्षकी पत्तिया एक दिन सुखाकर उसे जलाते हुए उसकी राख चूनेके जलमें सम्यक्‌रूपसे सम्मिश्रित करनेसे एक प्रकारका नितान्त अच्छा रग तैय्यार होता है।

इसके अतिरिक्त बाजारमें अनेक कम्पनियोंके डिस्टेम्पर रंग पाये जाते है। जो सफेदा, सरेस या गोन्द तथा किसी एक प्रकारके रगका नितान्त महीन सम्मिश्रित रूप है। यह अत्यन्त महँगे होते हैं। किन्तु आवश्यक छटाके प्राप्त होते हैं, यही उनमें विशेषता है।

शौचकूप अर्थात् सण्डास
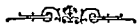
मनुष्यको अपने वास्तव्यस्थानमें जिस प्रकार कुछ प्रमुख कार्योंको करनेके लिये कुछ विशिष्ट कमरोंकी आवश्यकता होती

है उसी प्रकार उसे अपने उदरस्थ मलत्यागके लिये एक और विशिष्ट कमरेकी आवश्यकता होती है। उसी कमरेको जन साधारण भाषामें शौचकूप, सण्डास, पाखाना आदि कहते है। यह शौचकूप साधारणतया तीन प्रकारके होते हैं और उन्हें प्रत्येकके गुणवैशिष्ट्यके अनुसार तीन पृथक् श्रेणियोंमें विभाजित किया जाता है —

१ खाद उत्पादक शौचकूप—इस श्रेणीके शौचकूप प्राय उन स्थानोंमें पाये जाते हैं जहाँ म्युनिसिपैलिटियों अथवा ग्राम पचायतें न हों। ऐसे स्थानोंम जो घर होते हैं, उनके चतुर्दिक घेरेमें पर्याप्त भूमि खाली छोड दी जाती हे और मूल भवनसे यथोचित दूरीपर मलत्यागके लिये जो एक विशिष्ट प्रकारका कमरा बनाया जाता है, उसे खाद उत्पादक शौचकूप कहते हैं। इस प्रकारके शौचकूपोंमें विशेषता यह है कि, वहाँ त्याग किया हुआ मल एक सन्दूकनुमा स्थानमें जमा होता जाता है और उसकी खाद बनती जाती है।

२ नित्य शोधक शौचकूप—इस श्रेणीके शौचकूप उन बडे शहरोंमें पाये जाते हैं, जहाँ मलकी निकासी करने एवम् स्वच्छता रखनेके लिये भङ्गियोंकी नियुक्ति की रहती है और उन्हींकी सहायतासे नित्यही उन शौचकूपोंमें जमा हुए मलकी निकासी होती रहती और स्वच्छता रखी जाती है। इसी गुणवैशिष्ट्यकी दृष्टिसे इस श्रेणीके शौचकूपोंको नित्यशोधक शौचकूप कहा जाता है।

३ जिन स्थानोंमें सार्वजनिक सड़कोंके नीचे बडे-बडे नाले (Sewers मोरियां) बने रहते हैं और उनके भीतरसे अन्यजल प्रवाहके साथ 'मलमयजल'के (Sewage) निकल जानेकी व्यवस्था की रहती है, उन स्थानोंमें जो शौचकूप बनाये जाते हैं, उनकी विशिष्टताको देखते हुए उन्हें जलोत्सर्जक (Flushing) शौचकूप कहा जाता है।

अब देखना यह है कि, उपरोक्त तीन श्रेणीके शौचकूपोंकी

विशिष्ट रचना क्या है और वह किन-किन ध्येयोंको सन्मुख रखते हुए अपनी विशेपता स्थायी रखे हुए है। इसका विचार हम अर्थात् ही उक्त क्रमसे अर्थात् श्रेणी सख्या १ से करेंगे।

१ खाद—उत्पादक शौचकूप इस श्रेणीके शोचकूपोंकी यदि यथोचितरूपसे रक्षा की जाय तो यह अत्यन्त सन्तोपप्रदरूपसे काम देते है। इतनाही नहीं वरन्, यदि इन्हे स्वच्छ रखनेमें विशेप-रूपसे सतर्क रहा जाय तो इनसे न किसी प्रकारकी दुर्गन्धिही फैल सकती है और न इन्हें वास्तव्यस्थानके सन्निकट स्थापन करनेमें कोई प्रतिबन्धही रह सकता है तथापि सर्व्व साधारण दृष्टिसे विचार करनेपर इनका वास्तव्यस्थानसे कुछ दूरीपर निर्म्माण होनाही विशेप उपयुक्त ह।

अग्रेज लोग मल-मूत्र त्याग करनेके पश्चात् स्वच्छताके लिये जलका (आबदस्त) उपयोग नहीं करते, उनके देशकी जल वायु एक तो अत्यन्त ठण्डी है जिसके कारण उन्हें वारम्वार जलकी शरण लेना अत्यन्त कष्टकर मालूम होता है, दूसरे उस शीत प्रधान जल-वायुमे किसी भी पदार्थके इतने शीघ्र सडने अथवा दुर्गन्धिमय होनेकी सम्भावना नहीं रहती। परिणाम यह होता है कि, इस नैसर्गिक नियमके अनुसार वहाँ की जलवायुमें अधिकतया मल शुष्क रहता है और उसकी दुर्गन्धि नष्ट करनेके लिये विशेप प्रयास नहीं करने पडते। किन्तु हमारे भारतवर्पकी प्रकृत-दशा विलायतसे नितान्त विपरीत है। यहाँ की जल्वायु एक तो विलायतकी अपेक्षा अत्यन्त ऊष्ण है जिसके कारण यहाँ कोई भी पदार्थ अत्यन्त शीघ्र सड जाता और दुर्गन्धिमय हो जाता है, दूसरे हम अपने यहाँ स्वच्छताके विचारसे जलकी शरण लिये

बिना एक क्षणभी(फल नहीं ले सकते। जलका प्रयोग करनसे मलका कुण्ड विशेष रूपसे सुविस्तृत बनानेकी आवश्यकता प्रति भासित होती है और जलका अँश सुखानेके लिये पर्याप्त दुर्गन्धि नाशक द्रव्यों,-जैसे सुखी मिट्टी-राख इत्यादिकी यथेष्ट प्रमाणमें शरण लेनी पड़ती ह। अर्थात् पाश्चात्य एवम् पौर्वात्य देशोंकी जल वायु परस्पर प्रतिकूल होनेके कारण निसगनें इस कार्यको थोडेसे स्थानमें सुचारुरूपसे सम्पादन करनेकी जो सुगमता पाश्चात्य देशीयोंको प्राप्त करा दी है, वह हमें नहीं। जलके सम्मि श्रणसे मलका परिमाण बढता है, हमारे यहाँ की जलवायु ऊष्ण होनेके कारण मलम दुर्गन्धि पैदा हो जाती है और शरीरारोग्यकी दृष्टिसे उसे बाह्य वातावरणमें सम्मिश्रित होनेसे रोकना हमारा आद्य कर्त्तव्य हो जाता है। हम उस दुर्गन्धिका नाश करनेके लिये उपरोक्त दुर्गन्धिनाशक द्रव्योंकी शरण लेनेको बाध्य हो जाते हैं। अर्थात् हमें दुर्गन्धि नाश करने और मलमेंसे जलका अँश सुखा नेके लिये एक और सम्मिश्रण करना पडता है। इससे वास्तविक मल जितनी जगह ले सकता है उसकी अपेक्षा कमसेकम तिगुनी-चौगुनी जगह तो अवश्य ही हमारे यहाँके उपरोक्त श्रेणीके शौच कूपके मलकुण्डमें होनी चाहिये। जो कि भूमिके महत्वकी दृष्टिसे अत्यन्त अयोग्य और त्रासयुक्त बोध होता है।

तथापि यदि उक्त असुविधाओंको दृष्टि कोणमें रखते हुए इस श्रेणीके शौचकूपोंमें हमारे यहा कुछ परिवर्त्तन एवम् सुधार किया जाय तो इसमें सन्देह नहीं कि, हम इस प्रकारके शौचकूपोंकी उपयोगिताका पूरा-पूरा लाभ उठा सकेंगे और उनके निर्म्माणमें हमें उतनी भूमि भी नहीं देनी पडेगी जितनी हमें उनकी निर्म्माण

प्रणालीमें बिना आवश्यक सुधार और परिवर्त्तनके देना अनिवार्य हो सकता है। इसके अतिरिक्त हमारे स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी हम इन सुधारों एवम् परिवर्त्तनोंके कारण यथेष्ट रूपसे निश्चिन्त हो सकते है।

हमारे यहाँ यदि आरम्भमेंही इस श्रेणीके शौचकूप निर्म्माण करते हुए उनकी रचनामें देशकी रूढी और नैसर्गिक नियमोंका ध्यान रखकर आवश्यक परिवर्त्तन तथा संशोधन कर दिया जाय तो निःसन्देह स्वास्थ्य, भूमि, और उपयुक्तता इन तीनोंही दृष्टिसे उक्त श्रेणीके शौचकूपोंका महत्व बढ जायगा और हम इस कार्यको अपने देशके अनुकूल बना सकेंगे, यदि हम इस श्रेणीके शौचकूप निर्म्माण करते समय आरम्भमें ही अपनी आवश्यकताओंका समुचित रूपसे सम्पादन करनेके लिये उनका आकार कुछ बडा कर दें और जहाँ तक हो सके वहाँ काममें लाया जानेवाला पानी, मलसे पृथक् रखनेकी व्यवस्था करें तो सम्भव है कि, हमारे अभीष्टका अधिकांश भाग भलीभाँति सिद्ध हो सकता है। इस प्रकारके शौचकूपोंमें, जो मलत्याग हो वह ठीक मलकुण्डमेंही हो तथा पानी (आबदस्त) लेनेके लिये कोनेमें ऐसी जगह बनी रहे जिससे वहाँ गिरनेवाला पानी मलसे पृथक रहकर सीधा नालीके मार्गसे बाहर निकल जाय। इस साधारण सुधारसे ही हम इस श्रेणीके शौचकूपोंको उनका महत्व कायम रखते हुए उन्हें अपने देशकी रूढी एवम् प्रकृति नियमोंके अनुकूल बना सकेंगे। अस्तु,

इस नवीन योजनाको उदाहरण देकर समझानेके लिये बगलमें दो चित्र दिये गये हैं । देखिये चित्र नं ९७ और ९८ इसकी नींवमें कांक्रीट भरा गया है तथा उसकी ऊपरी सतह और चौतर्फा दीवाल पर सिमेण्टकी तरह दी गयी है । वहाँ एकत्रित होने वाले मलकी दुर्गन्धि वायुसे सम्मिश्रित होकर सन्धी हुई अवस्थामें ऊपरही ऊपर पर्याप्त ऊचाईपर छोडने के लिये एक वायुनलिका रखी गयी है। जो चित्र में दाहिनी ओर निर्देशित की गयी है।
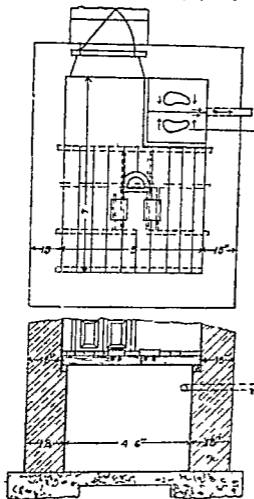
आकृति नं ९७,९८

आकृति सख्या ९८ में (टूटी-टूटी रेखामे) खम्भेकी तरह एक ऊर्ध्वनलिका दिखलायी देती है। इसका एक सिरा भूमिमें उक्त वायुनलिकाके साथ जुटा हुआ है । यह नलिका एक जन साधा-

रण खम्भेकी तरह पर्य्याप्त दूरीतक बाह्य वातारणमें खड़ी है। जिसके दूसरे सिरेसे मलकुण्डकी सारी दुर्गन्धिमय वायु बन्धे हुए रूपमें उक्त नलिकाओंके मार्गसे होती हुई अत्यन्त ऊँचाई पर लहरानेवाली वायु लहरियोंमें समावेशित हो जाती है। आकृति सख्या ९८ में मलकुण्डके ऊपर बनी हुई पत्थरकी बैठक है। जिसपर बैठकर मनुष्य मलत्याग करता है। उसके आगे मूत्र कुण्ड दिखलाया है। इस मूत्रकुण्डकी सतहमें यदि मलकुण्डकी विरुद्ध दिशाकी ओर ढाल कर दिया जाय तो मूत्र सरलता पूर्व्वक मलसे पृथक् रहकर दूर तक बह जाता है। कोनेमें, पानी गिरानेके लिये स्थान एक रखा है। जिसमे दो पावदान हैं। यह जगह सामान्य सतहसे कुछ नीची है इधर एक नलिका रखी गयी है, यह उसी स्थानसे जुटी हुई है और यहाँ गिरनेवाला सारा पानी इसीसे होता हुआ बहकर बाहर निकल जाता है। मुख्य मलकुण्डपर लकड़ीकी चौखट देकर उसपर सागवानी पट्टियोंकी तख्तपोशी की गयी है। जो इच्छानुसार बिछायी और समेटी जा सकती है। मलकुण्डकी स्वच्छताके समय इस तख्तपोशीको समेटना पड़ता है और यह पुन: धो-धुलाकर साफकी जा सकती और बिछायी जा सकती है।

इस श्रेणीके शौचकूपोंको उपयोगमें लानेके पूर्व्व मलकुण्डकी भीतरी सतहपर सूखी मिट्टी बिछा देनी चाहिये। यह इतनी कि, उसका स्तर ४।५ इञ्चसे कम मोटा न हो। मलत्याग करनेके पश्चात् उसपर मिट्टी डालनेके लिये पास ही एक मिट्टीसे हुआ भरा बर्त्तन रखा जा सकता है। जिसमेंसे आवश्यकतानुसार मिट्टी लेकर मलपर डाली जा सकती है। इस सरल उपायके अतिरिक्त यदि वैसीही इच्छा हो तो एक विवक्षित पद्धतिसे बना हुआ डिब्बा भी इस कार्यके लिये प्रयोगमें लाया जा सकता है। उसकी सिकड़ी खींचते ही उसमें भरी हुई मिट्टी आवश्यक परिमाणमें मलपर गिरती है और हाथको मिट्टीका स्पर्श नहीं होने

पाता। किन्तु यह थोडे खर्चका काम होनेके कारण हम पहिले बतलायी हुई व्यवस्थाही को विशेष सुलभ और लाभजनक समझते हैं। अस्तु,

जब मलकुण्डका अधिकांश भाग भर जाय तो तब उसमें पर्य्याप्त मात्रामें सूखी मिट्टी छोड देनी चाहिये और प्राय महिनेभर उस शौचकूपको नितान्त अव्यवहृत अवस्थामे छोड देना चाहिये। पश्चात् एक महिनेके उपरान्त उसकी निकासी करनी चाहिये। यद्यपि सरसरी तौरसे विचार करनेपर इस कार्यको करते समय अत्यन्त दुर्गन्धिसे सामना करनेकी आशङ्का होती हे तथापि यदि आरम्भसेही स्वच्छता की ओर विशेषरूपसे ध्यान दिया जाय और बराबरसेही यथेष्ट प्रमाणमें मलपर मिट्टी पडती रहे तो इस आशङ्काका कोई प्रयोजन नहीं रहने पाता न उस समहित मलमें किसी प्रकारकी दुर्गन्धिही रहने पाती है। ऐसी अवस्थामें मलकी निकासी करनेके लिये भङ्गीको भी बुलानेकी आवश्यकता नहीं है अपितु सरलतासे यह काम प्रत्येक मनुष्य स्वयम् अपने निजी हाथोंसे कर सकता है। वह निकासी किया हुआ संमहित मल एक ऐसी बढियाँ खाद हो जाती है जो निःसत्व भूमिको सत्वशील और उपजाऊ बनाती है। खेती बारी एवम् बागबगीचेमें इसका अच्छेसे अच्छा उपयोग हो सकता है। फल-फूलके वृक्षोंको समृद्ध पुष्ट और निरोग बनानेवाला यह एक अत्यन्त पौष्टिक मसाला है। मलकुण्डकी भली भाँति सफाइ हो जानेपर उसके अन्तर्गत भागमें जो कुछ जीर्णोद्धार करना हो वह करनेके उपरान्त पुनः उसकी सतहपर जैसा कि, आरम्भमें कहा गया है, यथेष्ट मिट्टी डालकर उसका ४।५ इञ्चकी मोटाईका चबूतरासा बना दे। और उसे पुनः पूर्ववत् काममें लाना आरम्भ कर दे।

२ नित्यशोधक शौचकूप इस श्रेणीके शौचकूपोंका निर्म्माण करते समय स्थानीय म्युनिसिपैलिटीके नियमोंकी ओर विशेष रूपसे ध्यान रखना पडता है और उन्हींका पालन करते हुए इसकी

रचना करनी पडती है। उन नियमोंके अतिरिक्त अपनी ओरसे भी इसकी रचना करते समय इस बातका विशेष रूपसे ध्यान रखना चाहिये कि, अपनी उस निजी आवश्यकता की पूर्तिके कारण अपने अडोसी-पडोसियों तथा महल्ले वालोंको जहाँतक हो विशेष उपसर्ग किंवा कष्ट न उठाने पडे। हमारे यहाँ बहुतसे शहरोंमें इस श्रेणीके शौचकूप बने हुए हैं। किन्तु उनमेंसे अधिकाँश शहरोंमें यही देखनेमें आता है कि, वह इतने अव्यवस्थित प्रकारसे और ऐसी अनुपयुक्त जगहों पर बने हैं, जिनके कारण न तो म्युनिसिपैलिटियोंके नियमोंका ही पालन हो सका है और न वह अडोसी-पडोसियों तथा महल्लेके आरोग्यका ही सरक्षण करनेमें समर्थ है। इतनाही नहीं वरन् अधिकाँश रूपसे उन शहरोंमें जहाँ इस श्रेणीके शौचकूप हैं महल्लेके महल्ले बदबू और गन्दगीका घर हो रहे हैं! उक्त शहरोंके अतिरिक्त जो थोडेसे शहर उक्त शिकायतसे बचे हुए हैं और जहाँ इस श्रेणीके शौचकूप वर्त्तमान हैं वहाँ की नगर रचनाही ऐसी व्यवस्थित रूपसे हुई है कि, वहाँ ऐसे शौचकूपोंके होते हुए भी दूषित वायु और गन्दगी फैलनेके लिये गुञ्जाइशही नहीं रह गयी है। उन शहरोंमें प्रत्येक घरके पिछवाडेमें इस श्रेणीके शौचकूपोंकी रचना होती हैं और महल्लेके महल्लेमें थोडीसी गलीनुमा जगह ऐसी छोडी जाती है जहाँसे होकर नित्य सबेरे-शाम भगी समाज आवागमन करता और उन शौचकूपोंकी सफाई किया करता है। इसके अतिरिक्त यदि प्रत्येक घरका मालिक अपने शौचकूपकी स्वच्छताकी ओर थोडा भी ध्यान दे तो उस महल्लेका आरोग्य नष्ट होनेकी किञ्चित् भी संभावना नहीं रहती। दैवदुर्विपाकसे जिन शहरोंमें उक्त प्रकारकी विशिष्ट पद्धतिसे नगर रचना नहीं हुई है वहाँके मकानदारोंको अपने घरमें इस श्रेणीके शौचकूपका सृजन करने पूर्व यह बात सर्व्वदा ध्यानमें रखनी चाहिये कि, उनकी उस घरेलू व्यवस्थाके कारण उन्हें तथा उनके अडोसियों-पडोसियों और महल्लेवालोंको किसी तरह दुर्गन्धियवायु और गन्दगीका शिकार न होना पडे। अपने थोडेसे

दुर्लक्ष्यके कारण अपने अडोसी-पडोसियोंकी नाक मारे दुर्गन्धिके फटने न पाये और सारे महल्लेका आरोग्य नष्ट न हो।

इस श्रेणीके शौचकूप सब प्रकारसे उपयुक्त और सुव्यवस्थित बनानेके लिये विशेषतया निम्न लिखित बातोंपर ध्यान देना अत्यावश्यक है —

१ वह वायुकी दिशामें न हो।

२ उसके आधार स्तम्भ अथवा चबूतरा कमसे कम ३।४ फूटसे कम ऊँचा तो किसी हालतमें न हो।

३ जहाँ तक हो सके उसमें ऐसी व्यवस्था की जाय कि, मल और जल एक दूसरेसे पृथक् रहे।

४ यदि दो बार नहीं, तो कमसेकम एक बार तो अवश्यही प्रतिदिन इस श्रेणीके शौचकूपोंसे मल आर जलकी निकासी हुआ करे।

५. उसमें वायु और प्रकाश दोनोंकी विशेषरूपसे सम्वृद्धि हो।

जिन शहरोंमे इस श्रेणीके शौचकूपोंके निर्म्माणकी परिपाटी है, वहाँ बहुतसे लोग अपने यहाँके शौचकूपोंकी (निचला फर्श) नावगत भूमि काले पत्थरकी बनाते है और उसी पत्थरके मल-मूत्रकुण्ड रखते हैं। इस प्रकारके पत्थरपर मूत्रादिका रासायनिक परिणाम नहीं होने पाता, यह सत्य है तथापि पत्थर कितनाही क्यों न तराशा और चिकना किया जाय उसपर मलके पुट चढ जाना अवश्यम्भाव्य है। शाहाबादी और पोरबन्दरके चूनेके पत्थर तो इस कार्यके लिये अत्यन्तही अनुपयोगी हैं। इनपर मल-मूत्रका रासायनिक परिणाम तो होताही है साथही साथ दुर्गन्धि भी विशेष रूपसे तीव्र-स्वास्थ्यनाशक और दीर्घजीवी हो जाती है। अत उपरोक्त बातोंको देखते हुए स्वास्थ्य, आराम,

टिकाऊपन और खर्च चारोंहीकी दृष्टिसे विचार करनेपर यही प्रमाणित होता है कि, इस श्रेणीके शौचकूपोंके मल-मूत्र-कुण्ड चीनी मिट्टीकी जिलो (Glazed china clay) किये हुए होने चाहिये और तलेकी सतह पर सिमेण्टकी तह चढ़ाकर उसमें (White Glazed Tiles) सफेद जिलो किये हुए ईंटें जड़ देने चाहिये। यदि यह न हो सके तो यह सतह 'सिमेंण्टके पेटेण्ट स्टोन' की भी बन सकती है।

उक्त (White Glazed Tiles) सफेद जिलोदार ईंटोंके स्थानपर यदि एक उपायका अवलम्ब लिया जाय तो व्यय और स्वास्थ्य दोनोंही की दृष्टिसे उसमे विशेष सुविधा होगी। वह उपाय यह है कि, पेन्देकी सतह बनाते समय पहिले उस स्थान पर मिट्टी कूटे। पश्चात् उसपर चूनेकी तह देकर ऊपर थोडासा सिमेण्ट फैलावे। अनन्तर इसके खिडकियों अथवा अलमारियोंमे जो काँचके चद्दर बरते जाते है उन्हें चौकोर ईंटोंके आकारमें काटकर उक्त तैय्यार हुई सतह पर इस तरह एक दूसरेसे सटाकर जड़ दे कि वस्तुत सतह पर जलका अँश मात्र भी न पहुँच सके। इस प्रकारकी फर्शबन्दी अत्यन्त कम खर्चमें तैय्यार होती और आरोग्य तथा मजबूती की दृष्टिसे नितान्त समाधानकारी होती है। यदि कांचके नीचेका मसाला भरपूर और व्यवस्थित रूपसे जमाया गया हो तथा काचके टुकडे भी पर्य्याप्त मोटाईके हों तो उनके टूटने इत्यादिका कहीं भी भय नहीं होता। कांच निसर्गतया अत्यन्त चिकना पदार्थ है और उसपर कोई रासायनिक परिणाम भी नहीं होता। अत आरोग्यकी दृष्टिसे भी इस तरहकी सतह नितान्त सन्तोपजनक होती है। स्वच्छताके सम्बन्धमें तो यह स्पष्टही है कि, कांचपर कोई पदार्थ

नहीं चिपकता। अत जरासे प्रयासमेंही उसपर गिरे हुए मलादि पदार्थ सहजहीमें दूर हो जायगे।

इस श्रेणीके शौचकूपोंके पेन्देमें एक ओर ढाल देकर इस प्रकारकी व्यवस्था करनी चाहिये कि, वहाँ गिरनेवाला सारा पानी सिमेण्टके बने हुए एक कुण्डमें जमा होता जाय और उसकी रोज निकासी हुआ करे। इस कुण्डपर लोहे अथवा सिमेण्ट कांक्रिटका बना हुआ वजनदार ढक्कन रहना चाहिये।

आकृति सख्या ९९ और १०० म हमने एक अत्यन्त थोडे व्ययमें तैयार होनेवाला शौच कूप दिखलाया है। इसके ब्रह्मपीठ (चबूतरे) की दीवाले १५ इञ्ची चौडे पत्थरकी बनी हुई हैं और उनके ऊपर चारों कोनोंपर ९-९ इञ्ची ईंटोंके खम्भे (पिल्‍र) खडेकर मध्यमें सलीह ईंटोंकी बन्धाईकर दी गयी है। भीतर तीन फुटकी ऊँचाई तक सिमेंण्टका मोटा लेप कर दिया गया है। ब्रह्मपीठसे प्राय पाँच फुटकी ऊँचाईपर एक खिड़की बनी हुई है। शौचकूपमें मलत्याग करनेके हेतु बैठनेके लिये तराशे हुए काले पत्थरके दो पांव दान बैठाये गये है, किन्तु यदि उनकी जगह चूनेकी छोटे-छोटे चौकोर चबूतरेनुमा बन्धाईकर उनपर सफेद जिलो किये हुए
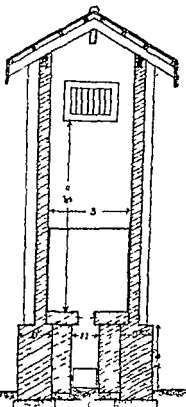
ईंटें जमा दिये जांय अथवा उन चूनेके चबूतरोंपर सिमेण्ट बिछाकर
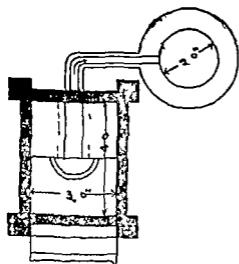
उसपर काचके तावदानी चौकोर टुकडे बैठा दिये जाय तो यह व्यवस्था आरोग्यरक्षाकी दृष्टिसे विशेष उपयुक्त तो होगी ही, साथ ही साथ उक्त व्यवस्थाकी अपेक्षा इसमें आर्थिक व्ययभी कम होगा। इस प्रकारके चूनेके बने हुए पांवदानोंपर जो कांचके तावदान बैठाये जाय वे अधिक बडे न होने चाहियें। क्योंकि वैसा होनेसे पैर फिसलनेका भय रहता है। अस्तु,

सण्डासकी नींचगत सतहपर एक छेद किया हुआ डिब्बा रखा हुआ है। उसके नीचे, सण्डासके पेन्देम दोनों ओरसे ढाल देकर सिमेण्टका बना हुआ एक मध्यवर्त्ती पनाला दिखलाया गया है। जो बाहर प्राय १ फूटकी चौडाईके सिमेण्टका पलास्तर किये हुए कुण्डसे लाकर जोड़ दिया गया है। यह कुण्ड सदा लोहे अथवा सिमेण्ट कांक्रीटके बने हुए वजनी ढक्कनसे बन्द रहना चाहिये। सण्डासके ब्रह्मपीठपर बना हुआ कोठा ४'×३ है। ब्रह्मपीठपर बैठनेके लिये जो पाँवदान बना है वह जमीनसे ३॥ फूटके अन्तरपर है।

२ जलोत्सर्जक शौचकूप-आरोग्य और स्वच्छताकी दृष्टिसे इस श्रेणीके शौचकूपोंका महत्व उक्त दो श्रेणीके शौचकूपोंसे कहीं अधिक है। यह यदि घरके भीतर अथवा उसके सान्निकट भी बनाये जाँय तो भी काम चल सकता है। इसके अतिरिक्त इसके होनेसे भङ्गी इत्यादिके ऊपर सफाईके लिये निर्भर रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं रह जाती।

इस पद्धतिके शौचकूप बनानेके लिये दो बातें अनुकूल होनी चाहिये। एक तो यह कि, जलोत्सर्ग करनेके लिये पानी यथेष्ट परिमाणमें मिलता रहे और दूसरी यह कि, शौचकूपके बाहर जानेवाले मल-जलको शुद्ध करने अथवा उसकी कोई अन्य व्यवस्था लगानेका स्थायी प्रबन्ध उपलब्ध हो। बहुतसे लोगोंकी यह धारणा है कि, इस श्रेणीके शौचकूप वहीं बनाये जा सकते हैं जहाँकी म्युनिसिपॅलिटियोंने अपने यहाँ नल चलाये हों तथा सार्व्वजनिक सड़कोंके नीचे से मल-जलकी निकासी करनेके लिये बड़े-बड़े नाले (Sewers) बान्ध दिये हों और सम्पूर्ण गन्दगीका यथोचित हीला लगानेकी कोई खास व्यवस्था की हो। किन्तु नहीं, ऐसा समझाना भूल है। इस श्रेणीके शौचकूप भी हर जगह बनाये जा सकते है। उनके लिये न 'नल-प्रबन्ध' की ही आवश्यकता है न सार्व्वजनिक नालोंकी ही। जलकी पूर्ति कुएँ-बावडी-तालाब और नदीसे भी हो सकती है तथा घरके पिछवाड़ेमें यदि थोडी बहुत जमीन हो तो भी सरलतासे वहाँ इस श्रेणीके शौचकूपकी रचना हो सकती है। अस्तु,

अब इस श्रेणीके शौचकूपोंका निर्म्माण करने पर विशेषतया सावधानी किन बातोंकी रखनी पड़ती है इसका विचार हम करेंगे। इस सम्बन्धमें विचार करते हुए सबसे आवश्यक ध्यान देनेकी बात यह है कि, ऐसे शौचकूपोंकी रचना करने पर इस बातमें विशेष रूपसे सतर्क रहना चाहिये कि, कहीं भी मल-मूत्र अथवा तदनुषङ्गिक दुर्गन्धिमय पदार्थ खुली अवस्थामें न रहने पायें। ऐसे पदार्थोंकी निकासी सर्व्वदा सिमेण्टके बने हुए जिलो किये हुए खप्पड़के अथवा लोहेके बने हुए नलोंद्वारा बन्द अवस्थामें होनी चाहिये। अन्यान्य श्रेणीके शौचकूपोंकी सफाईका काम भङ्गियों द्वारा होता है। किन्तु इस पद्धतिके शौचकूपोंकी सफाई केवल पानीके प्रवाह द्वारा होती रहती है। इसलिये ऐसे शौचकूपोंमें सम्पूर्ण उत्सर्जन व्यवस्था (flushing system) इस प्रकारकी होनी चाहिये कि, कहीं भी मल अथवा तदनुषङ्गिक अन्यान्य

दुर्गन्धिमय पदार्थ चिपके न रह सके। इसके लिये मलादि पदार्थ की निकासी करनेके लिये जिन नलोंका अवलम्ब लिया जाय वे यथेष्ट रूपसे चिकने-मजबूत और उत्तम प्रकारसे ढले हुए होने चाहिये। इतनाही नहीं वरन् साथही साथ इस बातकी योजना भी पहिलेसेही कर रखनी चाहिये कि, यदि दैववशात् किसी प्रकारसे उनमें दुर्गन्धिमयवायुका प्रकोप हुआ ही तो उसका प्रसार घर अथवा उसके सन्निकट न होते हुए वह तत्काल ऊँचे वातावरणमें परिधावित हो जाय और वहाँ स्वतन्त्र वायुमें सम्मिश्रित हो जाय। इस योजनाकी पूर्ति स्थान-स्थानपर (Trap) 'ट्रैप' बैठाने तथा प्रत्येक ट्रैपपर एक-एक ऊर्ध्वनलिका (Ventilating pipe) बैठानेसे सहजहीमें हो जाती है।

इन सब आवश्यक बातोंके अतिरिक्त यदि इस श्रेणीके शौच कूपोंमें एकत्रित हुए मलके तत्काल धुल जानेकी ओर विशेष ध्यान रखा जाय तो उससे उत्पन्न होने वाली दुर्गन्धिके फैलनेकी कहीं भी गुञ्जाइश नहीं रहती। इस प्रमुख बातको ध्यानमें रखते हुए कुछ कम्पनियोंने ऐसे श्रेणीके शौचकूपोंमें जड़नेके लिये एक विशिष्ट प्रकारके चिकने तथा चीनी मिट्टीके बने हुए कुण्ड (Closet) चलाये हैं। ये कुण्ड प्राय १० से लेकर १७ इञ्च तकके होते हैं। अधिक लम्बाईवाले कुण्डोंके निचले पेन्देमें कुछ कम ढाल रहता है। अत वह वहीं बरते जा सकते हैं जहाँ जलका संग्रह यथेष्ट हो और उसका प्रवाह जोरका हो। कम लम्बाईवाले कुण्डोंमें ढाल अधिक रहता है। अतएव इन कुण्डोंमें एकत्रित हुए मलको उससे जुटे हुए नलके द्वारा बहानेके लिये अत्यन्त अल्प जलसे भी काम चल जाता है। किन्तु साथही साथ इस प्रकारके कुण्डोंमें एक दिक्कत यह भी होती है कि, कुण्डका आकार छोटा होनेके कारण मल पानीमेंही गिरता है और उसके कारण दूषित जलके छींटे बदनपर उठनेकी सम्भावना होती है। इस लिये दोनोंही प्रकारके कुण्डोंके गुण-दोषोंपर विचार करते हुए मध्यम आकारके कुण्ड,-जो १४ से १५ इञ्ची रहते हैं विशेष उपयोगी,

और व्यवहारके लिये निर्भय समझे जाते हैं। जिन स्थानोंमें पानीकी कमी है वहाँपर प्रयोगमें लानेके लिये इधर एक नये प्रकारके कुण्डोंका आविष्कार हुआ है । इनमें विशेषता यह है कि, इनके साथ बैठनेके लिये पाँवदान भी जोड दिये गये हैं तथा कुण्डके बाहरकी इतर्फा जमीनका थोडासा हिस्सा उसीके साथ ढला हुआ है और इस बातकी विशेषता रखी गयी है कि, उसका सारा ढाल मुख्य कुण्डकी ओर हो और उसपर गिरनेवाला जल कुण्डहीमें बह जाय। उपरोक्त सभी प्रकारके कुण्ड मलमूत्रके विसर्जनके लिये बनाये गये हैं और इनमें विसर्जित हुआ मल-जल थोडासा जलोत्सर्ग होनेसेही बहकर उसके एक कोनेमें बने हुए छेदके द्वारा उससे जुटे हुए मल-जल प्रवाहक नलके रास्ते बह जाता है। परिणाम यह होता है कि, कुण्ड पुन पूर्ववत् स्वच्छ और निगन्ध बना रहता है।

देखिये चित्र संख्या —१०१

इसमें एक मलकुण्ड यथास्थान बैठाकर उसका लम्बच्छेद दिखलाया गया है । 'अ' यह प्रमुख कुण्ड है और वह 'ब'
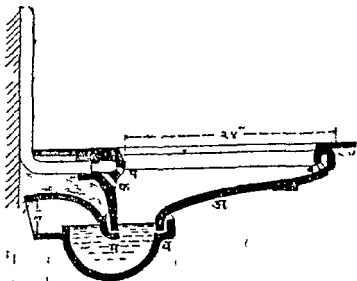
आकृति नंबर १०१

नामक ट्रॅपमें अगल-बगल सिमेण्ट भर कर उसमे बैठा दिया गया है। कुण्डके पिछले हिस्सेसे जलोत्सर्जक नलिका जोड दी गयी है। इसी नलिकाके मार्गसे, दीवालपर रखी हुइ टङ्की में लगी हुइ सिकडीके खींचतेही पानी दौड़ने लगता और वह 'प' 'फ' और 'ब' नामक छिद्रोसे निकलकर सारा मलजनित पदार्थ बहाते हुए शौचकूपको नितान्त शुद्ध और साफ कर देता है। कुण्डके शिरो भागपर 'क' नामक जो थोड़ासा भूमिभाग है, वह भीतरसे पोला होनेके कारण उसके भीतरसे कुछ जल वह निकलता है। जिससे कुण्डको सम्पूर्णरूपसे धुल जानेमे पर्याप्त सहायता मिलती है। निचले ट्रॅपमें म' नामक जो स्थान निर्देशित किया गया है वह सदा जलमय रहता और उसमे ट्रॅपका कुछ हिस्सा डूबा हुआ रहनेके कारण बाह्यवायुको कुण्डके भीतरी हिस्सेमे प्रवेश पानेकी कोई गुंजाइश नहीं रहती। ट्रॅपके बाह्यगत सिरेसे रागे-जस्ते अथवा अन्य किसी धातुकी नलिका जोड दी जाती है। जिसके भीतरसे होता हुआ शौचकूपका सारा मलमय जल एक पनालीदार (Trap) के मार्गसे होता हुआ आगे बढता है। यह अन्तिम Trap सार्वजनिक मार्गके प्रमुख नाले (Sewer) से जोड दिया जाता है। अर्थात् शौचकूपका सारा मल-जल और तदनुषङ्गिक दुर्गन्धिमय पदार्थ क्रमिकरूपसे उपरोक्त व्यवस्थाके अनुसार इसी प्रमुख नालेमे जा गिरते है।

इस श्रेणीके शौचकूपोंम कुण्डके शिरोभागपर, आगे पीछे सफेद जिलो किये हुए खपडे या शाहबादी पॉलिश लादी अथवा और कुछ नहीं तो सिमेण्टका पेटेण्ट स्टोन जड देना चाहिये और इस बातकी सम्पूर्ण सावधानी रखनी चाहिये कि, कुण्डके चारों ओर पर्याप्तरूपसे ढाल बना हो। आजकल उक्त प्रकारके विशिष्ट कुण्डको निचले ट्रॅप सहित प्राय १८ से लेकर २० रुपये तक दाम देना पडता है। जहाँ पानीकी कमी हो वहाँ नलिकाको एक टोटी चाभी अगर (valve) जोड देना चाहिये। जिससे आवश्यकता भरही पानी खर्च होगा। सिकड़ीकी पद्धतिमें एकबारके खिचावम

कमसे कम एक 'घड़ा' पानी खर्च होता है और जबतक कि, ऊपरकी टङ्की दुबारा नहीं भरती तबतक पुन: पानी नहीं मिल सकता, यह विशेष दिक्कत है।

हातेकी दीवाल Compound wall

जहातक सम्भव होता है, हातेकी दीवाल बेजोड़ और बेस्तर की होती है। इसका भीतरी बन्धाऊ काम गालेसेंकर बाहरकी दरारें चूनेके गिलावेसे जोड़ी जातीं तथा यदि अधिक ही हुआ तो इसका शिरोगत मुंडेरा (*Coping*) चूनेका बनाया जाता है। उसपर किसी भी प्रकारका भार न पड़नेके कारण उसकी नींव कठोर मिट्टीपर भी डाली जा सकती है। यह कार्य ८।१० फुटपर १४ इञ्ची चौकोर खम्भे खड़ेकर उनके बीचमें पुनर्दृढीभूत ईंटोंकी ४॥ इञ्ची पड़दियोंको उठानेसे भी हो सकता है। जानवरों अर्थात् पशुओंका उपसर्ग बचानेके निमित्त इनकी ऊँचाइ ४ फुट तथा पड़दानशीनी के लिये ५॥ फुट लगती है।

जिस स्थानपर फाटक बनाना हो, उस स्थानके दोनों ओरके स्तम्भ विशेषरूपसे मजबूत रखे जाते हैं। इसके विपरीत करनेसे उनपर फाटकका सम्पूर्ण भार गिरकर स्तम्भके समूलरूपसे उखड़ जानेका भय रहता है। यदि स्तम्भ पत्थरके हों तो एक के पीछे दूसरे स्तरमें एक-एक अनगढ़ पत्थरकी ही जड़ाई होती है। नहीं तो फाटकके भारके कारण स्तम्भमें खड़ी दरार पैदा होकर उसके चिर जानेका भय रहता है। ईंटका स्तम्भ होनेसे वह कमसे कम १॥ वर्ग फुटका बनाया जाता तथा उसके पेटेमें नींवसे लेकर ऊपर तक भीतर सिमेण्ट कांक्रीट भरी हुई तथा ऊपरसे तैलरङ्गका अस्तरकी हुई लोह नलिका जड़ दी जाती है। जड़े जानेवाले नरको थोड़ी दूरी तक लाकर चित्र संख्या १०१ म वर्णित विधानानुसार

उनके छोरोंकी एक लपेट नलिका में देते हुए सिमेण्ट काक्रीटमे जड दिया जाता है। इस विधानके अतिरिक्त कहीं-कहीं नालिकाके स्थानपर उक्त कथनानुसार एकाध गोल तरकेका टुकडा देकर उसे छिद्रान्वित करते हुए उसमे नरका छोर मोडकर जड देते हैं। नरकी जुडाई स्तम्भके गुनियेमे न कर एक कोनेमे जैसा कि, आकृति १०१ में दिग्दर्शित है, कर्णरेषामें होती है। ऐसा करनेसे फाटक भली भाँति खोले जा सकते है।

फाटकके कार्यमें जो मादिया प्रयोगान्वित होती हैं, वे पल्लोंकी चौडाईके हिसाबसे दो तिहाई लम्बी होतीं है। तथा उन्हें बोल्ट और चकत्तियोंसे कस देते है।

आकृति सख्या१०२म हातेके पल्लेका एक सादा नमूना दिखलाया गया है। पल्ले चाहे जिस प्रकारके भी क्यों न बनाये जांय, उनका समस्त भार नरोंपर ही गिरता तथा वे अधरमे रहते हैं। परिणाम यह होता है कि, उनके जोड ढीले होकर चौखटें गुनियेमे नहीं रहने पातीं। यही कारण है कि, आकृतिमें प्रदर्शित प्रकारानुसार उसमे चौखटकी कर्णरेषामे एकाध लोहे या लकड़ीकी पकड जड दी जाती है।
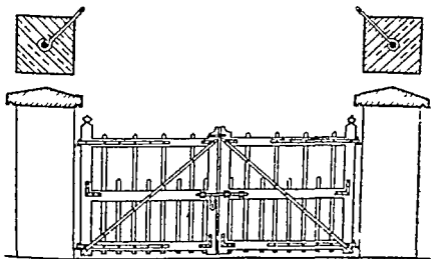
आकृति नबर १०१, १०२

पत्थर या ईंटेकी दीवालोंकी जगहपर कहीं-कहीं कांटेदार तारों या लोहेके उर्ध्वगत एँगल आयर्नकी छडदिवाली खडी करते हैं। इस प्रकारकी छड दिवालीसे पशुओंसे बखूबी बचाव नहीं होता तथापि उसे कम करनेके निमित्त नीचेकी पहिली तार जमीनसे ६ इञ्चपर, तथा उसके ऊपरीकी तारें ८।८ इञ्चपर लगाकर अन्तिम ७ वीं तार एक फुटपर लगा दी जाती है। पश्चात् प्रति आठ-दस फुटके अन्तरपर चूनेके कांक्रीटमें सागवानके गोल लठ्ठे अल कतरेसे विलेपितकर खडेकर दिये जाते और उनके बाहरी ओर तार तानकर उसे बाहरके दोनों ओरवाले जस्तेके हुकोंसे जोड दिया जाता है। तनावके कारण कोणस्थ तरके निकल न पडें इस विचार से उनकी ओर लठ्ठोंका तिर्छा आधार-जोर देते हैं। इस प्रकारके आधार सरल पंक्तिमें भी एक-एक खडे तरकोंके दोनों ओर प्रति सौ फुटके अन्तरपर दिये जाते हैं।

बाजारमें मिलनेवाली तथा जन साधारणरूपसे व्यवहारमें आनेवाली कांटेदार तारोंकी लम्बाई तथा वजन निम्नसारिणीमें दिग्दर्शित किया गया है।

भीतरी व्यास इञ्चमें	मोटाई इञ्चमें	६ फुट लम्बी नलिकाका वजन पौण्डमें
२	३/१६	३४
२½	,,	४१
३	,,	४८
३½	१/४	५४
४	३/८	६९
५	,,	८४

एँगल आयर्नके टुकडे यदि खडे अडने हों तो प्रति आठ फुट पर १॥ × १॥ × ¼ नापके 'टी' आयर्नके खम्भे कांक्रीटमें

मजबूतीसे गाडते हुए (उनमें एक सतहसे ६ इञ्च तथा दूसरा चार फुटपर) आडे ऍंगल अथवा 'टी' ऍंगलके टुकडोंकी जडाई की जाती है। पश्चात् इन दो आडे लोह-साधनोंम ६।६ इञ्चके अन्तरपर नोक निकले तथा मध्य शिरामें छेद किये हुए १"×१"×½" मोटाईके ऍंगल आर्यनके टुकडे पेचसे कस देते हैं। इसके अतिरिक्त एकको छोडकर दूसरे खडे *'टी आर्यनके' खम्भेको नीचेसे* २ २॥ फुटके अन्तरपर छिद्रान्वितकर वहाँसे उसी नापके ऍंगल अथवा टी आयर्नके तिछे तौर जमीनमें कांक्रीटमें गाडकर बैठाये जाते हैं। खडे टुकडे नीचे ५ इञ्ची पोलाई रखकर गाडनेसे ४ ही फुट ऊँचाईके यथेष्ट हो जाते हैं।

गृहसीमान्तर्गत नालीरचना—१

—*अर्थात्*—

(घर के हाते के भीतरवाली नालियोंकी व्यवस्था)

जिस प्रकार मनुष्य को जीवित रहने तथा अपने शरीरका पोषण करनेके लिये भोज्य पदार्थोंकी व्यवस्था कर रखना अनिवार्य है, उसी प्रकार जिस घरमें वह रहता है और जहाँ उसके नित्य नैमित्तिक व्यवहार होते रहते हैं, वहाँकी स्वच्छता रखना किम्बहुना उसे निवासके योग्य रखनेके लिये उसमें एकत्रित होनेवाली दुर्गन्धि एवम् अन्यान्य आरोग्यनाशक पदार्थोंकी निकासी होते रहने की स्थायी व्यवस्था कर रखना भी एक अनिवार्य कार्य है। मनुष्य अपने पेटकी नित्यकी मागको पूरी करनेके लिये नौकरी-व्यापार आदिकी स्थायी व्यवस्था कर रखता है। उसी तरह जिस घरमें वह रहता है, उसम उसके नित्य नैमित्तिक व्यवहारोंके कारण निरन्तर रूपसे दुर्गन्धिमय एवम् आरोग्यनाशक पदार्थ एकत्रित होते रहते हैं उनके निकासीकी स्थायी व्यवस्था करना भी उसका एक आवश्यक और प्रधान

कर्त्तव्य हो जाता है। वह पेटकी माँगको पूरी करनेकी जो स्थायी व्यवस्था कर रखता है, उसे सर्व्वसाधारण शब्द में 'वृत्ति' अर्थात् 'पेशा' कहते हैं। अपने घरसे दुर्गन्धि एवम् अन्यान्य आरोग्यनाशक पदार्थोंकी निकासी की जो स्थायी व्यवस्था उसके द्वारा होती है उसे पारिभाषिक प्रयोगमें Drainage system अर्थात् नाली रचना प्रणाली कहते हैं।

इस प्रकरणमें हम घरके हातेमें (Drainage) दूषित पदार्थों एवम् दुर्गन्धिके निर्य्यातनके लिये जो नाली रचना की जाती है, उसपर प्रकाश डालनेका विचार करते हैं। अत हमें आवश्यक है कि, हम सर्व्वप्रथम इस आवश्यक कार्यके लिये जिन साधनोंकी आवश्य कता पडती है उनका परिचय यहाँ करा दें। पश्चात् हाते भरमें व्यवस्थित की जानेवाली नाली रचनाका भेदाभेद बतलाते हुए अन्तमें उन नालियोंके मार्गसे निसृत होनेवाले विभिन्न दुर्गन्धिमय पदार्थोंकी अन्तिम व्यवस्था किस तरह और क्या का जासकती है, इसे बतलायेंगे।

घरके हातेमें जो नाली रचना की जाती है उसके लिये विशेष-तया चार साधनोंकी अत्यधिक आवश्यकता पडती है। जो ये हैं:-

१ जिलोकी हुई खपड़ेकी नलियाँ (Glazed Stoneware pipes) २ सूम पाइप, ३ ट्रॅप, ४ लोहेकी ढलाऊ नलियाँ।

उक्त क्रमके अनुसार पहिले जिलोकी हुई खपड़ेकी नलियोंका नाम आता है। अत हम पहिले उसीके सम्बन्धमें विचार करेंगे।

जिलोकी हुई खपडेकी नलियाँ Glazed Stoneware Pipes ये नलियाँ भारतवर्पमें प्राय तीन कम्पनियाँ बनाती हैं। पहिली प्रसिद्ध और निपुण कम्पनी है,-बन एण्ड को०। इस कम्पनीकी नलियाँ मजबूत-टिकाऊ और सुन्दर होती हैं। किन्तु मूल्यमें दूसरीकी अपेक्षा महँगी पडती हैं। दूसरी कम्पनीका नाम है — परफेक्ट कम्पनी। इस कम्पनीकी भी नलियाँ अच्छी होती हैं किन्तु

पहिलीके टक्कर की नहीं। हाँ, दाममें अवश्य सस्ती होती है। तीसरी कम्पनी है ग्वालियर पॉटरी वर्क्स यह भी अच्छा काम करती है।

इस प्रकारकी नलिओका आकार सर्वसाधारण रूपसे एक होता है। किन्तु व्यासका परिमाण अवश्य ३इञ्चसे लेकर १८इञ्च तक घटता बढता रहता है। यद्यपि व्यासमें इस प्रकारकी सीमाबद्ध घट-बढ करनेकी गुआइश रहती है तथापि लम्बाई प्राय सभी नलिकाओंकी एक, और वह २६ इञ्च होती है। इन २६ इञ्चोंमेसे १ इञ्च जोड़में चले जाते है और २४ इञ्च अर्थात् दोही फुटकी लम्बाई वास्तवमे बची रहती है। इनके दोनो छोरोंके अग्रभागके वैशिष्ट्यको देखकर अंग्रेजीमें इनके प्रत्येक छोरके अग्रभागका नाम अलग-अलग पड़ा है। जो क्रमश Socket end और Spigot end के नामसे पहिचाना जाता है। हमारी मातृभाषा हिन्दीमे हम उक्त शब्दक्रमका रूपान्तर क्रमश 'मादीमुँह' और 'नरमुँह' कर सकते हैं।

पाठकोंको समझानेके लिये हम 'मादीमुँह' और नरमुँह 'का वैशिष्ट्य समझाना भी आवश्यक प्रतीत होता है। 'मादी मुँह' नलिकाके उस छोरका अग्रभाग है, जो नलीके व्यासकी अपेक्षा अधिक चौड़ा होता है। इसके भीतर निकास्य नलिकाका 'नरमुँह' अर्थात् नलिकाके दूसरे छोरका अग्रभाग,-जो सर्वसाधारण रूपसे नलिकाकेही व्यासका होता है, बैठाकर उसपर सिमेण्टका जाड़ (पलस्तर) दिया जाता है। अल्कतरेमें (coaltar) भिगाकर 'नरमुँह' के चौतर्फा लपेट दिया जाता है और उसे मादीमुहमें बैठाकर ऊपरसे सिमेण्टका पलस्तर कर देते हैं।

यह तो हुआ इन नलिकाओंका सर्व्व साधारण परिचय। किन्तु अब देखना ये है कि, यह बनती किस तरह है? इनके बनानेका क्या उद्देश है? तथा इनके कार्योपयुक्त होनेकी क्या पहिचान है? यह तो हम आरम्भमेंही नलिका की रचनाके साधनोंका नाम निर्देश करते हुए इन्हें खपड़ेकी बनी घोषित कर चुके है। खपड़ा मिट्टीका बनता है, यह सभी जानते है। अत यह भी स्पष्ट है कि, ये मिट्टीकी बनती है। किन्तु भेद इतना ही है कि, इनके बनानेमें

विशेष क्रियाओंका अवलम्ब लेना पडता है। अब वे क्रियाएं क्या हैं इसका विस्तृत विवेचन करना एक तो हमारी पुस्तकका विषय नहीं है, दूसरे हमारे पास उतना स्थान भी नहीं है कि, हम उसपर पूरा प्रकाश डाल सकें। अतः हम उस सम्बन्धमें विस्तारकी शरण न लेकर यहाँ केवल इतनाही उल्लेख करेंगे कि, glazed stoneware pipes अर्थात् जिलोकी हुई खपड़े की नलियाँ मिट्टीकी बनती हैं और उन्हें भट्टीमें आँच देते समय उनपर जिलो किया जाता है। यह किया, जिस मिट्टीकी ये नलियाँ बनती है, उसमें मिलाये हुए 'निमक'के कारण होती है। जब ये भट्टीमें भूननेके लिये छोड़ी जाती हैं तब निमक द्रवीभूत (निमकका रस) हो जाता है और उससे नलिकाओंमें चिकनाहट (glazing) आ जाती है। विशेषतया इन नलिकाओंका भीतरी भाग बाह्य भाग की अपेक्षा अधिक जिलोदार बनाया जाता है। कारण यह है कि, ऐसा करनेसे उनपर किसी प्रकारके प्रखर आम्ल अथवा क्षार पदार्थोंका असर नहीं होता। हमारे यहाँ अचार-तेजाब-मुरब्बे आदि रखनेके लिये जो बर्त्तन व्यवहृत होते हैं वे इसी क्रियासे बनाये जाते हैं। जिसके कारण उनकी मजबूती बढ़ती है और उनपर किसी प्रकारका तेजाबी असर नहीं होता। अत्यन्त चिकनाहट होनेके कारण उसके भीतर रखे हुए पदार्थ बिना सड़े गले या खराब हुए ज्यों के त्यों धरे पड़े रहते हैं।

इस प्रकारकी नलिकाएं लेते समय सदा यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि, वे पूर्णतया समानान्तर (सीधी) हों तथा उन्हें पत्थर या अन्य किसी ठोस वस्तुसे ठोकने पर उनमेंसे खुलकर ध्वनि प्रस्फुटित हो। स्वच्छता साधनके कार्यमें-विशेषतया मल-जलकी निकासीके लिये तो कभी भूलकर भी धागा या डोरा गयी हुई अथवा ठोकफर देखनेपर ठस बोलनेवाली नलिकाओंका प्रयोग न करे। नालिकाएं खरीदते समय सतर्कता पूर्वक यह देख लेना चाहिये कि, उनमेंसे प्रत्येक नालिका का अन्तर्गत हिस्सा पर्याप्त रूपसे जिलो चढा हुआ हो। उनमें न कहीं गाँठसी दिखलायी दे

और न कहीं फोडेकी तरह फूला हुआ सा चिन्हही अङ्कित हो। नलिकाओंकी विशेष परीक्षाके लिये उन्हें एकवार तौलकर देख लेना चाहिये। पश्चात् प्राय ४८ घण्टे तक जलमें डुबा रखनेके पश्चात् पुन निकालकर तौल लेना चाहिये। यदि नलिकाए अच्छी होंगी तो जलसे निकालनेपर उनका वजन १ प्रतिशतसे अधिक न बढेगा।

इन सब परीक्षा प्रकारोंके अतिरिक्त कुछ प्रकार ऐसे है, जिनका अवलम्ब स्थपतिवर्गही ले सकता है। साथही उन प्रकारोंका अवलम्ब लेनेके लिये विभिन्न उपकरणोंकी सहायता लेनी पडती है। जो सर्व्वसाधारण समाजको नहीं प्राप्त हो सकते तथापि जो प्रकार सरल और आसान है, उन्हें यहाँ पर लिख देना सार्व्व जनिक हितकी दृष्टिसे अत्यावश्यक है और उन्हींका हम यहाँ जिक्र कर रहे हैं।

उपरोक्त परीक्षाप्रकारोंके अतिरिक्त नलिकाओंकी मजबूतीका पता एक तरहसे और चल सकता है और वह इस तरहसे कि, उनको जमीनपर रखकर उनपर इतना वजन रख दे कि, उसका सर्व्व साधारण प्रमाण प्रति वर्ग इञ्च ३० पौण्डके हिसाबसे पडे। यदि इतना वजन झेलकर नलिकाए ज्योंकी त्यों बनी रहीं तो समझलेना चाहिये कि वे उत्तम और इष्ट योजनाके अनुकूल हैं। अथवा नलिकाको आडी रखकर उसपर लकडीकी एक तख्ती रख दे। पश्चात् उसपर प्राय १७०० पौण्डका वजन रख दे। यदि इतने पर भी नलिकाको कोई आघात न पहुँचा तो समझ लेना चाहिये कि, वह उत्तम है। म्युनिसिपॅलिटियाँ अथवा अन्य सार्व्वजनिक कामो मे जिन नलिकाओंका प्रयोग किया जाता है, उनके जोड सफाइदार और आवश्यकतानुकूल (Water-tight) जलाभेद्य हैं की नहीं, इसकी परीक्षा पहिलेही करली जाती है और तभी वे काममें लायी जाती हैं।

ह्यूमपाईप –नाली रचनाका दूसरा साधन है,–ह्यूम पाइप! इधर भारतवर्षमें इण्डियन ह्यूम पाईप कम्पनी नामका एक कारखाना खुला हुआ है। जहाँ विशेषकर सिमेण्ट और कांक्रीटकी नलिकायें बनायी जाती हैं।

ये नलिकायें विशेषतया सिमेण्ट और बालूके सम्मिश्रणसे बनती हैं तथा उनके अन्तर्गत भागमें विशेषरूपसे जिलो किया जाता है। बड़ी-बड़ी नलिकाएं बनाते समय उनके गर्भमें फौलादी तारोंका ढ़ांचर (Skeleton) दिया है। जिसके कारण उनके ऊँचाईसे गिरने अथवा उनपर यथेष्ट वजन पड़ने पर, उनके टूटने या नष्ट-भ्रष्ट होनेका भय नहीं रहता। ये नलियाँ प्रायः ६ से लेकर ८ फूट तकके लम्बाईकी होती है। जिसको देखते हुए उनमें अधिक जोड़ पड़नेकी कोई गुञ्जाइश नहीं रहती। आरम्भमें बतलायी हुई खपड़े की नलिकाएं केवल थोड़ी फुट लम्बी होनेके कारण उनकी व्यवस्था में स्थान-स्थान पर जोड़ देने पड़ते हैं। जो अत्यन्त त्रासदायक और व्ययका काम हो जाता है। यदि उनकी जगह ह्यूम पाइप का प्रयोग किया जाय तो उसमें खर्चेकी भी बचत होती है और कार्य भी सुगम हो जाता है।

उक्त कम्पनीकी नलिकाएँ ४ इञ्चसे लेकर ६ फूट तक चाहे जिस व्यासकी भी अपेक्षा हो, मिल सकती है। ये ढलाऊ लोहे की नलिकाओंसे दाममें भी अत्यन्त स्वल्प पड़ती है और मजबूतीमें भी उनसे कुछ कम नहीं होती है। ढलाऊ लोहेकी नलियाँ ऊँचेसे गिरने पर तत्काल टूट जातीं और छिन्नभिन्न हो जाती है किन्तु 'ह्यूम पाइप' से इस प्रकारकी भयङ्कर हानिका भय नहीं रहता। कारण यह है कि, ह्यूम पाइप सलोह कांक्रीटके बने होते हैं। जो आघातकी सहसा परवाह नहीं करते।

पिंजडा Trap और उसका कार्य—इन पिञ्जडोंकी व्यवस्था घरके हातेमें दुर्गन्धिमय वायुको फैलनेसे रोकनेके लिये की जाती है। वैज्ञानिकोंने सिद्ध किया है कि, जलकी अपेक्षा वायु अधिक हल्की है। अत उसे जहाँ जरा भी स्थान मिल जाता है, वहीं वह ऊपर उठनेका प्रयत्न करती है। इसी सिद्धान्तको ध्यानमें रखते हुए घरके हातेमे जहाँ कहीं दुर्गन्धिमय वायुके एकत्रित होनेकी गुञ्जाइश होती है वहाँ उसके प्रकोप-प्रतिबन्धके विचारसे एक तरहके वायु-नियन्त्रक पिंजडे लगा दिये जाते हैं। इन्हीं पिंजड़ोंको अंग्रेजीमे Trap और स्थपतिशास्त्रकी पारिभाषिक भाषामें पानीका पिञ्जडा कहते हैं।

घर अथवा घरके हातेमें बनी हुई मोरियोंमे मल-जलका जो निरन्तर प्रवाह प्रवाहित होता रहता है उसके कारण उन मोरियोंमें एकत्रित हुए सेन्द्रिय पदार्थ सड़ने लगते है और उसके कारण जो दुर्गन्धिमय और आरोग्यनाशक वायु उत्पन्न होती है, वह सदा अपने विकासके लिये स्थान ढूंढा करती है। घरमें स्वच्छताके लिये व्यवहृत किये जानेवाले पानी की अथवा मलजल की जो छोटी-छोटी नलिकाए किसी बडी नलिकासे अथवा (Sewer) नालेसे सयुक्त कर दी जाती है उनसे उस नाले अथवा बडी नलिकामें स्थित रहनेवाली दूषित वायु घरके अन्तर्गतस्थ मोरियोंमें प्रवेश पाकर घरके सम्पूर्ण वातावरणमें फैलनेकी सम्भावना होती है। जिसके कारण केवल उस दुर्गन्धिकी बदौलत ही नहीं अपितु उसमें उत्पन्न हुए आरोग्यनाशक विषाके कारण वह वायु मानवी स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त हानिकर सिद्ध होती है। इसलिये जहाँ सम्भव हो, इस प्रकारकी दूषित वायुको पुन' उल्टे मार्गसे घरमें प्रवेश न मिले इस विचारसे स्थपतिवर्ग trap अर्थात् पानीके पिंजडोंकी योजना करता है। इन पिंजडोंकी सहायतासे दुर्गन्धिमय वायुका जहाँका तहाँ अवरोध हो जाता है और उसके घरमें प्रवेश पानेकी गुञ्जाइश नहीं रहती।

पिञ्जडोंके आकार वैशिष्ट्यके कारण उनके पेन्देमें हमेशा भरपूर
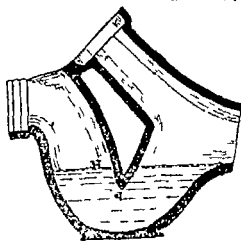
आ न १०४

पानी भरा रहता है। इस पानीमें पिञ्जडेका (चित्रसंख्या १०४ देखिये) 'अ' 'ब' नामक हिस्सा पडदेकासा काम करता हुआ एक ओरकी वायुको दूसरी ओर जाने से रोकता है। यह हिस्सा जितना भी अधिक पानीमें डूबा हो उतनाही अच्छा काम पिञ्जडेसे निकलता है। यदि वायुको दूसरी ओर जाना हो तो उक्त चित्रमें पानीमे डूबकर 'ब' के नीचेसे होते हुए पुन 'अ' की ओर पानीसे ऊपर आना पड़ेगा। अत इस प्रमाणसे यह स्पष्ट हो जाता है कि, चित्रमें 'अब' नामक जो भाग पानीके भीतर डूबा हुआ है, वह जितना लम्बा होगा उतनाही वह अधिक उपयोगी होगा। यदि इस प्रकार एक-एक पिञ्जड़ा घरमें, जहाँ-जहा मल-जल बहानेवाली मोरियाँ हो वहा, तथा नलके पासवाली मोरी, रसोईघर, स्नानागार तथा अन्यान्य ऐसी जगहोंपर जहाँ मोरियाँ हो, वहाँ लगा दिया जाय तो किसी भी मोरीके मार्गसे घरमें दुर्गन्धिमय और विषाक्तवायु प्रसरित होनेकी गुञ्जाइश नहीं रहेगी तथापि कभी-कभी ऐसा भी अवसर आता है जब पिञ्जडा सुचारुरूपसे अपना कार्य करनेमें सम्पन्न नहीं होता। उदाहरणार्थ—

(अ) अगर बहुत दिनोंतक मोरीमे पानी न पडा हो तो पिञ्जडेके पेन्देमें रहा हुआ पानी औट कर 'ब' के नीचे चला जाता है। (उक्त आकृति देखिये) अर्थात् इस प्रकारसे जो थोड़ासा

स्थान रिक्त हो जाता है, (पोला पड़ जाता) उस मार्गसे वायु इधरसे उधर सचार करने लगता है।

(आ) कभी-कभी पानी पिंजडेमें इतने जोरसे भीतर घुसता है कि, वह तत्काल पुन: जोरोंके साथ ऊपर उछाल मारता है। परिणाम यह होता है कि, पिञ्जडेके पेन्देम आवश्यकतासे कम पानी रह जाता है और उससे दुर्गन्धियुक्त वायुको भीतर सचार करनेके लिये मार्ग मिल जाता है।

ऊपर दिये हुए चित्र नम्बर १०४ मे दिखलाये हुए पिञ्जडेमें प्राय: ऐसा होना अशक्य है। क्योंकि उसमें निर्देशित किया हुआ 'अ' का ऊपरी हिस्सा पर्याप्त ऊँचा है। तथापि स्नानागारमें लगे हुए पिञ्जड़ेमें (चित्र सख्या १०५ १०६ देखिये) अथवा जलोत्सर्जक शौचकूपमें स्थित् पात्रके

आ न १०५,१०६ पिछले पिञ्जडेमें इस प्रकार की बात हो जाना अधिकाँश रूपसे सम्भव है।

(इ) यदि नलिकामें उत्पन्न हुई वायुको दूसरे मार्गसे बाहर निकल जानेके लिये (Ventilator) वातनलिकाके समान कोई साधन न रखा हो तो अवरोधित वायु दब जाती है और कभी-कभी उसका दबाव इतना बढ जाता है कि, वह चित्र नम्बर १०४ में दिखलाये हुए 'अ' नामक स्थानमें रहे हुए पानीको भेदकर पिञ्जडेके मुँहकी ओर दौड़नेमें जोर मारती है।

(ई) पिञ्जडेके भीतर कूडा-कर्कट अथवा कागज इत्यादि जमा हो जाँय तो उसमें निर्वात स्थिति (vacuum) उत्पन्न हो जाती है और 'ब' के नीचे पानी चला जाता है। अत इन सब विपदाओंको देखते हुए पिञ्जडाको कार्यसमर्थ बनाये रखनेका आरम्भसे ही ध्यान रखना चाहिये। विशेषतया तीसरे कारणसे उत्पन्न होनेवाली खराबीसे बचनेके लिये मोरी अथवा सण्डासकी प्रत्येक नलिका को एक-एक ऊर्ध्व वातनलिका जोडकर एकत्रित वायु छप्परके ऊपरतक पहुँचानेका प्रबन्ध करना चाहिये।

ऊपर जो चित्र संख्या १०४ दिखलायी गयी है, वह एक गली पिंजड़ा है। इस प्रकारके पिंजडे उन कुण्डोंमें रखे जाते हैं जो उन बड़े नलो (Sewer) के पास, जिनको रसोई घर अथवा स्नानागारमें बनी हुई मोरियोंका पानी बहाने ले जाने वाली छोटी-छोटी नलिकाएं जोड दी जाती है बनाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इन पिंजड़ोंसे एक लाभ यह भी है कि, वह अत्यन्त गहरे होनेके कारण उनमें बालू-मिट्टी-राख इत्यादि जो जड़ पदार्थ एकत्रित होते रहते हैं, वे ऊपरका ढक्कन निकालकर सरलतापूर्व्वक हाथसे निकाले जा सकते हैं। सण्डासकी नलिका मल जलके प्रमुख नल (Sewer) को जोडनेके पूर्व्व, उसके मार्गमें इसी नमूनेके परन्तु तीन मुँहवाले पिंजड़े बैठाये जाते है। (उदाहरणार्थ देखिये चित्र संख्या १०४) इसमें बडी भारी सहूलियत यह है कि, दोनों ओरकी नलिकाओंके सिरे उससे जोडे जासकते हैं। साथही साथ यदि उसके भीतर कोइ पदार्थ जम जाय अथवा अटकजाय तो वह भी ऊपरवाले मुंहके मार्गसे हाथ डालकर सरलता पूर्व्वक निकाला जा सकता है। इस मुंहमें सदैव ' डाट ' बन्द किया रहता है और उसमें अभ्रकका ' वाल्व ' बैठाया हुआ रहता है । यह ' वाल्व ' बैठानेका उद्देश्य यह है कि, उससे वायु भीतर तो जा सकती है; पर बाहर नहीं निकल सकती।
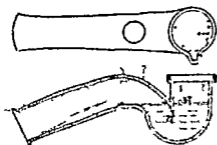
उक्त गली पिंजडेके अतिरिक्त स्नानागार और रसोंइ घर की मोरियोंके पेन्देमें बाह्यगत गली -पिंजडेके अतिरिक्त और एक-एक पिंजडा बैठाया जाता है। जिसे 'स्नान-पिंजडा (Nhaoi Trap) कहते है। चित्रनम्बर १०७ और १०८ में इसी श्रेणीके पिंजडे दिखलाये गये है। प्रथम आकृतिके शिरोभागपर सूक्ष्म

आ न १०७, १०८

छिद्रोंकी जाली लगी हुई है। जिसके कारण नलिकाके अन्दर कोईभी बडा पदार्थ प्रवेश नहीं पाता और जालीपर ज्यों का त्यों पडा रहता है। इसके अतिरिक्त यह जाली उठाऊ होनेके कारण जब चाहे तब उस स्थानसे अलग की जा सकती है और भीतर जमा हुआ मल तथा कूडा करकट सरलता पूर्व्वक हाथसे निकाला जा सकता है।

चित्र संख्या १०७ और १०८ में जो पिञ्जडे दिखलाये गये हैं, उन्हें देखते हुए यह स्पष्ट हो जायगा कि, उन पिञ्जडोंका पानीमें डूबा रहनेवाला हिस्सा अधिक लम्बा न होनेके कारण बाह्यगत वायुका बुलबुलेके रूपमें भीतर प्रवेश पाना विशेष कठिन नहीं है। अत यद्यपि भीतर (चित्र संख्या १०७ और १०८) ऐसा पिञ्जडा लगाया भी जाय तो भी बाहर एक 'गली पिञ्जड़ा' लगानेकी नितान्त आवश्यकता है।

अभी हाल अन्तिम चित्र १०८ मे जो पिञ्जडा दिखलाया गया है वह संख्या नम्बर १०५ और १०६ से कहीं उपयोगी है। उसका पानीमे डूबा रहनेवाला हिस्सा पर्य्याप्त लम्बा रहता है और उसके शिरपर ऊर्ध्वनलिका (Ventilator) जोड़नेके लिये एक छिद्र रखा रहता है।

लोहेकी ढलाऊ नलिकाएं

इन नलिकाओंका व्यवहार घरके छप्परके नीचे जस्तेकी चद्दरके जो पनाले बैठाये जाते हैं और जिनसे होता हुआ वर्षाका पानी एक दो जगह संकलित होता है, उसे बहा ले जाने अथवा जहां जलोत्सर्जक पद्धतिके (Flushing system) शौचकूप बने है वहां, इमारतके ऊपरी खण्डमें बने हुए शौचकूपका मल-जल बहानेमें, तथा रसोई घर-स्नानागार इत्यादि जगहोंमें गिरनेवाले पानीकी

निकासी करनेमें होता है। लिखनेकी आवश्यकता नहीं कि, यद्यपि इस प्रकारकी नलिकाएं उक्त विवक्षित स्थानोंसे जलको निकालनेके लिये जोडी जाती हैं तथापि उनका संयुक्तिकरण उसी बडे नल (Sewer) से होता है, जिसमेंसे होकर घर भरका सारा मल-जल इष्ट स्थानपर पहुँचाया जाता है। इमारती काममें अधिकांश रूपसे २॥ इञ्चसे लेकर ४ इञ्च तकके व्यासकी ढलाऊ नलिकाओंका प्रयोग होता है। दीवालसे सटकर बैठानेके लिये इनके दोनों ओर प्राय २।३ जगह सच्छिद्र कान होते हैं। इन छिद्रोंमें कांटे डालकर उन्हें दीवाल की दरजोंमें मजबूतीसे ठोंक कर बैठाया जाता है। बाजारमें इन नलिकाओंको जोडनेके लिये चाहे जिस आकारके कोने-बैण्ड इत्यादि मिलते हैं तथा यदि दो-तीन नलिकाओंको एक जगह जोडना हो तो उसके लिये भी दुमुँही-तिमुँही छोटी-छोटी युक्त नालिकाएं मिलती हैं। इनका एक दूसरीसे संयुक्तिकरण करनेकी प्रणाली यह है कि, पहिले एक नलिका लेकर उसका मादी मुँह ऊपर किया जाता है और उसमें नरमुँह बैठाकर अगल-बगलमें रही हुई पोलमें चतुर्दिक कूट-कूट कर पाट भरते हैं और ऊपरसे गलाया हुआ राँगा छोड देते हैं। राँगा भी खूब ठूँस-ठूँस कर भरा जाता है और उसी समय उस स्थानमें समावेशित वायु निकाल दी जाती है। पश्चात् अन्तमें शिरोभाग पर 'चप' (champher) जडकर यह कार्य समाप्त किया जाता है।

ये नलिकाएं प्राय: ६।६ फूट लम्बाईकी होती हैं। बम्बई इत्यादि बडे-बडे शहरोंमें यह कार्य (Licensed Plumbers) सनदयाफ्ता ठेकों द्वारा ही होता है। क्योंकि इन्हीं जोडोंकी सुयोग्य जुडाई पर घरके निवासियोंका आरोग्य अवलम्बित रहता है। इन नलिकाओं मे जिन 'बेण्ड' (घुमाव) का व्यवहार होता है, उनके शिरो भाग पर बोल्टोंसे कसे हुए ढकन रहने चाहिये। जिनमें यदि कभी कोई चीज अँटका जाय तो ढकन खोलकर किसी बाँस या लाठी द्वारा भीतरसे वह चीज निकाली जा सके।

गृहः सीमान्तर्गत नाली रचना—२

घरके हातेमें जो पानी इकठा हुआ करता है, वह प्राय तीन प्रकारका होता है। इनमेंसे एक पानी तो वह है जो बर्सातके कारण इकट्ठा हुआ हो। दूसरा वह है जो रसोई घर, स्नानागार इत्यादि जगहोंमें व्यवहृत होता है। तीसरा और अन्तिम पानी वह है जो सण्डास अर्थात् शौचकूपमें गिरा करता है। इन तीन प्रकारों-मेंसे पहिले दो प्रकारोंका पानी खुली नालियाँ बनाकर उनके मार्गसे सार्व्वजनिक नालेतक पहुँचाया जाता है। इन नालियोंका अन्तिम छोर उस नालेको मिला रहता है जिसमेंसे होकर तमाम गन्दा पानी इष्ट स्थानपर पहुँचाया जाता है। किन्तु अन्तिम प्रकारके पानी की निकासीके लिये खुली नालियोंका अवलम्ब नहीं लिया जासकता और उसे निकाल बाहर करनेके लिये बन्द नलिकाओंकाही अवलम्ब लेना पडता है।

बहुतसी जगहोंपर बर्साती जलकी निकासी स्वतन्त्र नालियोंसे करने की परिपाटी नहीं है। जिसका परिणाम यह होता है कि, वह पानी फर्शपर गिरकर फर्शको कमकुवत बना देता है। यदि फर्श मिट्टी या चूनेका हुआ तो वहाँ बडी बडी दरारें (गढ्ढे) पड जाती है। जिनको जोडना एक बडे खर्चका काम है। यदि गढ्ढे अथवा दरारें कुछ दिनोंतक वेसीही रहने दी जाँय और वहाँ मिट्टी न डाली जाय अथवा पलस्तर न किया जाय तो कालान्तरसे उसका परिणाम मकानकी नींव पर होता है। सयोगवशात् घरके हाते की जमीन ढालू न हो और वहाँ पानी एकत्रित होता गया तो उसे वही जमीन सोख लेती है। परिणाम यह होता है कि, वहाँ की वायु सर्द हो जाती है और उससे आरोग्य नाशकी सम्भावना होती है। इतनाही नहीं अपितु यदि दीवाल पत्थर-मिट्टीकी भी हों तो भी उन दीवालोंमें पानी मरने और उनके नष्ट भ्रष्ट होनेकी सम्भावना होती है। अत तात्पर्य यह निकलता है

कि, इमारत चाहे कितनीही मजबूत क्या न बनी हो उसकी नींव के पास पानी भरने देना भयकर भयप्रद है।

रसोंईघर और स्नानगृहमें गिरनेवाले पानीमें साग-पातके डण्ठल-छिलके इत्यादि बहुतसे पदार्थ बहते रहते हैं। अतः यदि उसे वहीं स्वतन्त्र रख छोडा जाय तो आरम्भमें कुछ दिनों तक तो वह वहाँकी जमीनमें भरता रहा है। किन्तु पश्चात् आवश्यकता भर भर जानेपर वह ऊपर ही ऊपर जमा होता जाता है और वहाँ की जमीनपर सील जम जाती है। इसीको दूसरे शब्दमें 'नोना' कहते हैं। इसके अतिरिक्त इस प्रकारसे पानी जमा होते रहनेसे शीतज्वरके मच्छड़ उत्पन्न होकर घरभर मलेरिया ज्वरका शिकार बन जाता है। हमारे यहाँ बहुतसे घरोंमें विशेषतया देहातोंमें इस बातकी ओर अत्यन्त ही दुर्लक्ष्य किया जाता है।

सारांश यह कि, पानी,-फिर वह चाहे जिस प्रकारका हो घरसे जहाँ तक हो सके दूर निकाल देनेकी अथवा उसकी ऐसीही कोई उपयुक्त व्यवस्था लगानेकी निरन्तर चेष्टा करनी चाहिये। घरसे दूर निकाल देनेके जो उपाय सर्व्वसाधारण रूपसे अवलम्बित किये जा सकते हैं, वे ये हैं:-

(अ) घरके चारों तरफ मिट्टी डालकर उसे ढालुआँ आकार देते हुए ऐसी व्यवस्था करे जिसमें सारा पानी एक ओर एकत्रित हो अथवा ड्रेनेजके सार्व्वजनिक नाले निकटस्थ जन-पथके नीचेसे निकाले गये हों तो उसका प्रवाह उनसे मिलादे। संयोगवशात् यदि निकट ही उक्त प्रकारके नालेका प्रवन्ध न हो तो सारा पानी एक जगह एकत्रित कर जहाँसे वह बाहर निकालना हो उस स्थानकी सतह पर चूनेका पलस्तर कर उसे निकटस्थ सड़ककी नालीसे अथवा आसपासके नालेसे जोड़ दे। ऐसा करनेसे यह एकत्रित हुआ पानी उस पलस्तर किये हुए मार्गसे होता हुआ उक्त सार्व्वजनिक सड़कोंकी नाली अथवा आसपासके नालेमें प्रवाहित हो जायगा। साथही साथ घरके हातेमें उक्त चूनेका पलस्तर की हुई जमीनका अन्तर्गत हिस्सा पानीके दुष्परिणामसे साफ बचा रहेगा।

(आ) स्नानागार अथवा रसोईघरमें व्यवहृत होनेवाले पानी की निकासी करनेके पूर्व भीतर चित्र संख्या १०७, १०८ में दिखलाये हुए पिञ्जडेके अनुसार एक पिञ्जडा बैठाकर उसमें एक नलिका जोड दे तथा उसे उसीतरह बाहरतक निकाल कर यदि ड्रेनेजकी व्यवस्था न हो तो उसमें एक गल्ली-पिञ्जडा जोड दे और अन्तमें आगे उसकी मिलान मल जलकी प्रमुख नलिकासे कर दे। यदि दैववशात् वैसी भी कोई व्यवस्था उपलब्ध न हो तो उसे एक चूनेकी बनी हुई नालीके मार्गसे दूरतक निकाल दे और खुली जमीन पर फैलने दे अथवा साग पातके खेतसे जोड दे। खुली नलियोंके काममें चीनीमिट्टीकी जिलोकी हुई अर्द्धगोल नलिकाए विशेष उपयुक्त सिद्ध होती हैं। इस प्रकारकी नलिकाए भीतरसे अत्यन्त चिकनी होती हैं और उनकी जुडाई भी अल्प-स्वल्प खर्च और मेहनतमें हो जाती है। उक्त कार्यके लिये जो नालियाँ बनाइ जाती हैं, उनके बनानेकी एक प्रणाली यह भी है कि, नालीके पेन्दे और अगल-बगलमें शहाबादी लादीके टुकडे चूनेमें जमा दिये जाते हैं। किन्तु इस प्रकारका प्रयोग खर्चकी दृष्टिसे कुछ महँगा पडता है। देहातोंमें जिलोकी हुई नलिकाए अथवा शहाबादी लादी मिलना दुष्कर हो जाता है। वहाँ नालियोंके स्थान पर एक फुट गहरा और सवासे लेकर डेढ़ फुटतककी चौडाईका गढ्ढ खोदकर उसमें ककडोंकी कुटाई करे। पश्चात् उसपर थोडीसी बालू फैलाकर खूब पिटाई करे। इसक उपरान्त कांक्रीटकी नाली बनाकर भीतरसे सममप्राणमें महीन बालू और सिमेण्ट मिले हुए मसालेका हल्कासा पलस्तर करे और खूब घोटे। इस विधिसे बनी हुई नाली अच्छी और थोडे खर्चमें बनती है। इन नालियोंकी सतह चौकोर बनानेकी अपेक्षा अर्द्धगोल और ऊपरसे फैलावदार बनानी चाहिये। जिसमें पानीको द्रुतगतिसे प्रवाहित होनेमें सहायता मिलती है। साथही यह भी ध्यान रखना चाहिये कि, इस प्रकारकी नालियोंमें कमसे कम ५० फुटके पीछे १ फुटका ढाल तो अवश्य ही होना चाहिये।

२२

(ड) जहाँ जलोत्सर्जक पद्धतिसे सण्डास बनाकर व्यवहृतजल (Sullage) और मलजल (Sewage) का संयुक्तिकरणकर बाहर निकासी करनेकी व्यवस्था करनी होती है वहाँ जिलेकी हुई खपड़ेकी नलिकाओंका प्रयोग करना अवश्यम्भावी होता है। इसके लिये ३ इञ्ची खपड़ेकी नलियाँ चल सकती हैं। किन्तु फिर भी इस व्यवस्थाके लिये म्युनिसिपैलिटीके नियमानुसार कमसे कम ४ इञ्ची नलिकाएं व्यवहारमें लानी पड़ती हैं। उनके जोड़ सिमेण्टसे मजबूत करलेने चाहिये और कमसे कम उनमें प्रति ४० फुटके पीछे १ फुट ढाल देना चाहिये। संयोगवशात् इतना ढाल देने की गुञ्जाइश न हो तो ड्रेनेजके सबसे उपरी भागके सन्निकट एक कुण्ड बान्ध दे और उसकी ऐसी व्यवस्था करे जिसमें वह सदैव जलसे भरा रहा करे। यह पानी दिनभरमें कमसेकम एक दो बार तो अवश्यही जोरके साथ ड्रेनेजकी नलिकामें गिरना चाहिये।

इसके अतिरिक्त नीचे निर्देशित की हुई सूचनाओंको ध्यानमें रखना चाहिये—

(१) मल जलकी समस्त नलिकाएं एक सीधी रेखामें हों। यदि संयोगवशात् उनमें एकाद घुमाव पड़जाय तो उसे दो समान रेखाओंसे जोड़ देना चाहिये तथा उस स्थानपर उच्छ्वास (Manhole) अथवा परीक्षाकुण्ड (Insp ction Chamber) का निर्म्माण कर देना चाहिये।

चित्र संख्या १४१ और १४२ मे एक परीक्षा कुण्ड दिखलाया गया है। इसमें दो परस्पर गुणीकृत ४ इञ्ची खपड़ेकी नलिकाओंको परीक्षा कुण्डके केन्द्रमें सिमेण्टका पलास्तर किये हुए अर्द्धगोल नालीसे जोड़ दिया गया है। इस प्रकारकी १।३ अथवा उससे अधिक नलिकाएं भी उक्त परीक्षा कुण्डसे जोड़ी जा सकती हैं। इस परीक्षा कुण्डके निर्म्माणका मुख्य हेतु यही है कि, यदि नलिकामें कुछ अँट गया हो तो वह सरलता पूर्व्वक निकाला जा सके। अत उसका आकार कमसेकम इतना बड़ा होना चाहिये कि,

उसके भीतर एक मनुष्य अच्छीतरह खड़ा हो सके और झुक सके। ऐसा होने उसे परीक्षा कुण्डकी सफाई करनेमें सुगमता
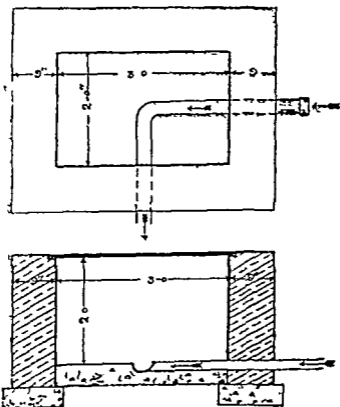
आकृति संख्या १४१-१४२

होगी। सामान्यरूपसे यह परीक्षा कुण्ड ३×२ फुटसे तो किसी तरह छोटे न होना चाहिये। कुण्डकी सतहमें पहिले कांक्रीट देकर उसपरसे चारों ओर एक इञ्च मोटा सिमेण्टका पलस्तर कर दे तथा इस बातका ध्यान रखे कि, पेन्द्रेकी पनालीमें कहीं कोई कोना-कतरा न रह जाय। यदि कुण्डकी गहराई अधिक रखनी हो तो उसमें उतरनेके लिये लोहेकी सीढ़ियाँ लगा देनी चाहिये। ऊपर शिरोभागके चारों ओर ईंटोंकी सतह जमाकर इमारती जुड़ाई

करे अथवा कांक्रीटका छाजन विछाकर मुँह छोटा कर दे और ऊपर एक पूरेपूर नापका लोहेका ढक्कन लगादे। जिसपर यह ढक्कन स्थित रहता है, उसकी चौखट एवम् ढक्कन बाजारमें तैय्यार मिलते हैं।

(II) नलिकाकी लम्बाई यदि अधिक हो तो प्रति सौ फूट पीछे उक्त प्रकारके परीक्षाकुण्डका सृजन करना चाहिये।

(III) जहाँ तक सम्भवनीय हो सके, इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि, खपडे की नलिकाएं जमीनके नीचे कमसे कम ६ इञ्च की गहराईपर दबी हुई हों। ऐसा करनेका उद्देश यह है कि, यदि सयोगवशात् जहाँ वे व्यवस्थित हैं, अगर कोई भारी चीज गिरे तो उससे उनपर कोई आघात नहीं हो सकता। उनके नीचे की जमीन यदि पोली हो तो वहां पर पत्थरका एक मचान सा बान्ध देना चाहिये या चूने का कांक्रीट कर उसमें जल देते हुए खूब कूट-पीटकर उस जमीनमें पुख्तई लानी चाहिये। इस विशेष व्यवस्थाका कारण यह है कि, यदि वह जमीन,-जिस पर उक्त खपड़ेकी नलिकाएं रखी जाती हैं, पोली रह गयी तो नलिकाओंके जमीनके भीतर धँस जानेका भय रहता है और उससे उनमें दिये हुए सिमेण्टके जोड़ोंके तहस-नहस हो जानेकी सम्भावना होती है। यदि इन जोडोंमें एक जरासी भी दरार पड़ जाय तो उससे नलिकाके अन्तर्गत जो दूषित वायु स्थित होती है उसके बाहर निकलनेकी गुञ्जाइश हो जाती है। जो शरीरस्वास्थ्यकी दृष्टिसे बडे ही कष्टका सामना है।

(IV) इमारतके ऊपरी खण्डमें बने हुए शौचकूपोंका मल-जल अथवा स्नानगृह या ऐसेही किसी स्थानका पानी नीचे उतारनेके लिये ढलाऊ लोहे की नालिकाएं काममें लानी चाहिये। खपड़ेकी नालिकाएं लोहेकी नालिकाओंकी अपेक्षा कमजोर होनेके कारण उनका व्यवहार ऐसे स्थानोंपर नहीं करना चाहिये। साधारण व्यवहृत पानीकी निकासीके लिये ३ इञ्च

व्यासकी और मल-जलकी निकासीके लिये ४ इञ्ची व्यासकी ढलाऊ लोहेकी नलिकाओंका उपयोग करना चाहिये। इन नलिकाओंके जोड़ पाटके टुकडे ठूँसकर तथा उनमें गला हुआ रांगा भरकर खूब मजबूतीसे बन्द कर देने चाहियें, ताकि उनमेंसे जरा भी वायु अथवा जलका अँश निसृत न हो सके।

(V) बोल्टोंकी सहायता लेकर हरएक बेण्ड (घुमाव) के शिरोभागपर खूब मजबूतीसे बैठाया हुआ ढक्कन रखना चाहिये। जलोत्सर्जक शौचकूपके पिञ्जडेके छिद्रपर एक ऊर्ध्व वातनलिका (Ventilator) लगाकर उसपर जस्तेकी तारका बना हुआ ढक्कन लगा देना चाहिये। जिसमें उसके भीतर पक्षियोंकी बीट वगैरे पड़नेकी गुञ्जाइश नहीं रहती। यदि स्नानालय अथवा शौचकूपोंके पिञ्जडे बिल्कुल सन्निकट लगे हों तो १.२ ट्रैप नलिकाओंसे उन्हें जोड़कर उन सभोंकी अन्तर्गतवायु एकही ऊर्ध्ववातनलिका द्वारा ऊपर निकाल देनेसे भी काम चल सकता है।

(VI) मल-जलकी मुख्य नलिकासे जिन स्थानोंपर शौचकूप अथवा अन्य मोरियोंकी नलिकाए जोडनी हो उन स्थानोंपर अंग्रेजीमें बतलाये हुए Y अक्षरकी सी नलिका जोड़ देनी चाहिये। यह जोड़ इस प्रकारसे होना चाहिये कि, मोरियोंसे प्रवाहित होनेवाले पानीकी, मल-जल निसृत करनेवाली नलिकाओंके संग्रहित प्रवाहको बहानेमें सहायता पहुँचे। अतः ऐसी दशामें जो जोड देना होगा वह Y इस अक्षरके आकारसे सादृश्य रखनेवाली नलिका ही होना अनिवार्य है। 'टी' अक्षरके आकारसे सादृश्य रखनेवाली नलिकाका ऐसे स्थानों पर प्रयोग होनेसे दोनो प्रवाह एक दूसरे '+' चिन्हके सदृश्य मिलते हैं। जिसके कारण प्रवाहमें बाधा पहुंचना सम्भव है। चित्र संख्या १४३ में एक 'वाई' नलिका दिग्दर्शित की गयी है।

(VII) नलिकाके भीतरका पानी जोरोंसे निकल जानेके लिये निम्नलिखित बातोंकी आवश्यकता है —
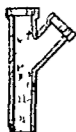
(अ) नलिका भीतरसे चिकनी हो।

(आ) उसमें पर्य्याप्त ढाल देना चाहिये।

(इ) चार इञ्ची नलिकामें ४० में एक,-तथा ६ इञ्ची नलिकामें प्रतिशत के हिसाबसे १ ढाल तो अवश्य ही होना चाहिये।

(ई) नलिका हमेशा आधीसे ऊपर भरी अवस्थामें कार्य करे। लेकिन ऐसा होना घरेलू

आ सख्या१४३ व्यवहारामें शक्य ही हो इसका कोई विश्वास नहीं दिलाया जा सकता। अत उत्तम मार्ग यही है कि, नलिकाओंमें पर्याप्त ढाल दिया जाय।

(VIII) उच्छ्वास अथवा परीक्षा कुण्डके पेन्देमें घुमाव रहते है। अत उनमें प्रवाहित होनेवाले पानीके लिये थोड़ा बहुत बन्धन होना सम्भव है। इसलिये चाहिये कि, उस स्थान पर आवश्यकता भर ढाल दिया जाय।

(IX) मल-जलकी नलिका दीवालके नीचेसे अथवा घरके कुछ हिस्सोंके नीचेसे कदापि न जानी चाहिये। अत जहाँ तक हो सके, शोचकूपोंका निर्म्माण सदा बाह्यगत दीवालोंके सन्निकट ही किया जाय।

(X) पीनेवाले पानीकी नलिकाएं मल-जलकी नलिकाओंके सन्निकट न होनी चाहियें।

(XI) ढलाऊ लोहेकी नलिका और जिलेदार खपड़ेकी नलिकाओंका जोड सिमेण्टमें पाट भिगाकर उसे उसके भीतर ठूँसते हुए उसमें पुन सिमेण्ट भरकर पूरा करना चाहिये।

नीचे चित्र सख्या १४४ मे एक तीन खण्डकी इमारत दिखलायी गयी है। उसमें सामने जमीनपर ड्रेनेजकी जो खपड़ेकी नलिकाएं

दिखलायी गयी है उनपर एक तिर्छा छेद दिखलाया गया है। अब उसमें मल-जलकी एवम् व्यवहृत पानीकी लोटेकी खडी
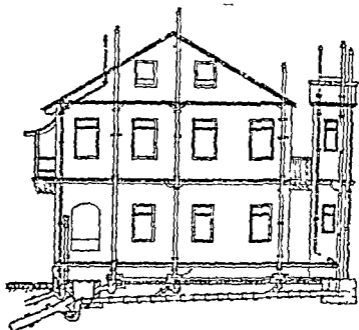
आकृति सख्या १४४

नलिकाएं दिखलाकर वे खपडेकी नलिकाओंसे किस प्रकार और कहां जोडी जाती है तथा वहां ट्रेपोंको किस तरह जोडा जाता है यह दिखलाकर, खपडेकी नलिकाओंमें ययेष्ट ढाल देते हुए बायीं ओर एक परीक्षा कुण्डमें तीन मुहा ट्रेंप (Intercepting Trap) जोडकर सार्वजनिक नाले (sewer) से उसका सयुक्तिकरण कैसे किया जाता है, यह दिखलाया गया है। इस तिमुंहे ट्रेंपके कारण सार्वजनिक नालेकी दूषितवायुको घरकी नलिकाओंमें प्रवेश पानेकी कोई गुञ्जाइश नहीं रहती।

मल और व्यवहृत जलकी व्यवस्था

जिन शहरोंमें म्युनिसिपैलिटियाँ है वहाँ मलकी निकासी करने और उसे दूरतक ले जाकर उसकी अन्तिम व्यवस्था करनेका प्रबन्ध भङ्गियोंद्वारा करा लिया जाता है और वही शौचकूपोंकी सफाई किया करते हैं। किन्तु छोटे-छोटे कसबों, ग्रामों, नगरों एवम् उपनगरोंमें यह प्रश्न बड़ा जटिल एवम् तापदायी होता है। आरोग्यकी दृष्टिसे चाहे जिस तरह भी हो मलकी निरन्तर निकासी करना और उसकी अन्तिम व्यवस्था करना एक अनिवार्य कार्य है। रसोईघर और स्नानालयमें व्यवहृत होनेवाले जलको यदि घरके आसपासही फैलने दिया जाय तो उससे घरमें नोना लगने और मिट्टी सड़कर विषाक्त वायु पैदा होकर उससे भी आरोग्य नाश होनेका भय है। अतः इस व्यवहृत जलकी अन्तिम व्यवस्था करनेका स्थायी प्रबन्ध करना भी उतना ही महत्व पूर्ण है, जितना कि, मलकी अन्तिम व्यवस्था करना। इसके लिये कुछ उपाय जो सुलभ, और सर्व साधारण रूपसे व्यवहारमें लाये जाने लायक ,-ये हैं —

१, मल अथवा व्यवहृत जल घरसे दूर ले जाय और उसे एक गड्ढा खोदकर उसमें गाड़ दे।

२ खाद उत्पादक शौचकूपमें,-मल पर राख, मिट्टी इत्यादि डालकर उसे निरापद कर दे और यथा समय उसकी निकासी करता रहे।

३ जलकी प्रबल धारासे मलान्तर्गत घन पदार्थको फोड़कर उसे जल प्रवाहके साथ बहाते हुए एक हौदमें एकत्रित कर दे। पश्चात् एक प्रकारके सूक्ष्म जन्तुओंकी सहायतासे उसे द्रवरूप बनाकर जमीन पर बहाते हुए सूर्यकिरण और वनस्पतियोंकी सहायतासे उसे निरापद बना दे।

उक्त तीन उपायोंमेंसे पहिले उपायका अवलम्ब लेनेके लिये भङ्गियोंका सहारा लेना पड़ता है। यह सुविधा हर जगह होना नितान्त असम्भवनीय है। कहीं तो भङ्गी मिलते ही नहीं और अगर मिलते भी हैं तो उन्हें भारी वेतन देना पड़ता है। इसके अतिरिक्त तीसरी समस्या जो सर्व्व साधारण रूपसे सन्मुख उपस्थित होती है, वह है परावलम्बीपन। इस उपायका अवलम्ब लेनेसे हमें अपने घरकी स्वच्छताके लिये पराधीन हो जाना पड़ता है।

खाद उत्पादक शौचकूपोंके सम्बन्धमें हम पहिले विस्तारपूर्वक लिखही चुके हैं। यदि इनका उपयोग दक्षतापूर्वक और नियमित ढगसे किया जाय तो वे आरोग्य सवधनके कायमें अत्यन्त सहायक स्वरूप सिद्ध होते हैं। किन्तु यदि उनमें दुर्गन्धिनाशक पदार्थों (सूखीमिट्टी राख इ०) का भरपूर व्यवहार न हुआ हो अथवा वहा गिरनेवाले जलकी निकासीका कोई उत्तम प्रबन्ध न रहा तो उससे शरीरारोग्यको बहुत कुछ उपसर्ग होनेका भय रहता है। अत वह जहाँतक हो सके, घरसे दूर रहनाही अच्छा है। उसके लिये घरमें दूर एक स्वतन्त्र जगह रहनी चाहिये। किन्तु फिर भी बीमार मनुष्यके लिये इतनी दूरका आना-जाना एक कष्टदायी प्रश्न हो जाता है।

(१) तीसरा और अन्तिम उपाय स्वच्छताकी दृष्टिसे अत्यन्त उपयुक्त सिद्ध होता है। (२) जलोत्सर्जक शौचकूप यदि घरके भीतरी हिस्सेमें बने हों तो भी उनसे कोई त्रास नहीं होता वरन् उल्टे आरामही मिलता है। (३) खाद उत्पादक शौचकूपोंमेंसे निश्चित अवधिपर मलकी निकासी करनी पड़ती है। जहाँ सार्व्वजनिक खर्चेसे ड्रेनेजकी व्यवस्थाकी रहती है, वहाँ मालिकको कुछ भी नहीं करना पड़ता और जहाँ यह व्यवस्था नहीं रहता वहां जलोत्सर्जक शौचकूपांके हाद पर्य्याप्त अवधितक बिना निकासी किये रखे जा सकते हैं तथा उनकी निकासी करनेके समय कीचड़ भी बहुत कुछ अंशोंमें थोड़ा निकलता है। इसके अ-

तिरिक्त जलोत्सर्जक शौचकूपमें बने हुए हौदसे निसृत होनेवाला जल,-शाक-पातके लिये प्रवाहीखादके रूपमें उपयोगी होता है।

जिन शहरोंकी म्युनिसिपॅलिटियोंने ड्रेनेजके नाले सार्व्वजनिक सडकोंके नीचेसे चलाये हैं वहाँ घरके हाते और जमीनके नीचेसे नलिकाएँ बैठाकर उनसे ट्रॅप जोडदेने तथा उनका सम्बन्ध एक बडी नलिकासे कर उसे घरके प्रमुख नलसे जोडकर उसका सम्बन्ध सार्व्वजनिक (Sewer) नालेसे कर देनेसे ही घरका सारा मल जल उक्त नलिकाओंसे होता हुआ इच्छित और योग्य स्थानपर पहुँच जाता है। वहाँसे म्युनिसिपॅलिटी स्वयम् उन दूषित पदार्थोंकी अन्तिम व्यवस्था करती है। किन्तु जिन देहातों, छोटे शहरों अथवा निकटस्थ ग्रामोंमें, जहाँ घरके पीछे थोडीसी जमीन रहती है, वहा अपना काम निकालनेके लिये क्या करना विशेष उपयुक्त और सरल है, यही हमें यहाँ दिखलाना है।

यह प्रश्न चार तरहसे हल हो सकता है। एकतो जलकी सम्मृद्धि, दूसरे जलोत्सर्जक शौचकूपोंका निर्म्माण तीसरे ट्रॅप जोड़कर खपडेकी नलिकाओंका ड्रेनेज बनाना और चौथे मल और मल जलका शुद्धीकरण कर उनकी अन्तिम व्यवस्था करना यही चार उपाय उक्त समस्याको पूरी तरह हल कर सकते हैं।

(I) <u>पानीकी सम्मृद्धि</u>-जहां म्युनिसिपैलिटियोंने पानीके नल पहुँचाये हों वहां शौचकूपके शीर्षभागपर एक पानीकी टङ्की बान्धना और उसे सदा भरी रहने देना विशेष सुविधाजनक है। जहां इस प्रकारसे पानी मिलनेका कोई प्रबन्ध न हो वहां कुँओ और तलैय्याका पानी पम्पकी सहायतासे उक्त टङ्कियामें भरा जा सकता है। किन्तु जहां उक्त दोनोंही साधनोंका अभाव हो और भरपूर प्रमाणमें पानी न मिल सके वहां निम्न लिखित गौण उपायोंका अवलम्ब लेनेसे भी पानीकी बहुत कुछ आवश्यकता दूर हो सकती है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि वहां पानीका

बिलकुलही काल हो। निम्न लिखित उपाय केवल गौण कार्य कर सकते हैं। सम्पूर्ण कार्य करनेके लिये उस स्थानपर कमसे कम प्रति मनुष्यके पीछे २ घडे (प्राय ५ गैलन) पानी तो अवश्यही मिलना चाहिये। अस्तु,

वे उपाय ये हैं —

(अ) रसोई घरकी मोरीमें चायके पत्ते, तरकारीके डंठल प्याज आलूके छिलके आदि जो पदाथ जल्दी नहीं सड़ते और जमा हो जाते हैं, उन्हें एक किनारे निकालकर जला देना चाहिये।

(आ) बर्त्तन माजते समय राख-मिट्टी आदि चूर्णपदार्थ जो मोरीमे रह जाँय उन्हें सावधानीसे निकाल लेना चाहिये। मोरीम उनका अंशमात्रभी बहकर न जाने पाये।

(इ) स्नानालयमें अधिकसे अधिक जलका व्यवहार मनुष्य करता है। अत उसे कुछ ऊचाइपर बान्धना चाहिये और वहाँका सब व्यवहृत जल एक चूनेकी बनी हुइ नालीके मार्गसे सिमेण्टकी तह दिये हुए हौदेमें एकत्रित करते रहना चाहिये।

(ई) रसोईघर अथवा अन्य कमरोंकी मोरियोंका सयोग स्नानालयमे बने हुए हौदकी नलिकासे कर देना चाहिये तथा प्रत्येक मोरीको एक एक गली ट्रॅप जोड देना चाहिये। स्मरण रहे, स्नान ट्रॅप होते हुए भी गली ट्रॅप होना अत्यावश्यक है।

(उ) जलोत्सर्जक शौचकूपमे भी एक गल्ली ट्रॅप जोडकर उसकी नालिका स्नानालयमें बने हुए कुण्ड (हौद) की नलिकासे जोड देनी चाहिये। साथही इस श्रेणीके शौचकूपोंमें मलत्याग करतेही इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि, विसर्जित मलपर तत्क्षण जोरोंके साथ एक लोटा पानी छोड दे। उसके प्रबल आघातसे सारा मल तत्क्षण बह जाय।

(ऊ) प्रतिदिन सबेरे प्राय १० बजे कुण्डमें एकत्रित किया हुआ सारा जल एकदम खोल देना चाहिये। जिसमें उसके प्रबल प्रवाहके

कारण मुख्य नाले (Drain) से प्रवाहित होनेवाला सारा मल साफ धुल जाय। सायङ्कालके समय प्रतिदिन शौचकूपमें एक दो बाल्टी तो अवश्यही पानी गिराना चाहिये और वह भी धार धरकर नहीं वरन झोंकेके साथ। ऐसी करनेसे मलको किसी भी तरह वहाँ चिपके रहनेकी गुञ्जाइश नहीं मिलती।

(ए) यह सब पानी एकत्रित करनेके लिये ४ इञ्ची खपड़ेकी *नलिकाओंसे बने हुए मार्गका आयोजन करना चाहिये।* खपड़ेकी नलिकाएं कमसे कम प्रति ४० फुटके पीछे एक फुट ढालके हिसाबसे एक दूसरीके साथ सिमेण्ट द्वारा संयुक्त कर देनी चाहिये और उनकी मिलान रेवकुन्ड (Grit chamber) अथवा पूतिकुण्ड (septic tank) इत्यादिसे कर उसमें पानीकी शुद्धी होनेपर उसका उपयोग खेतके काममें करे।

मल-जलका शुद्धीकरण

मल-जलका शुद्धीकरण करनेके निम्न लिखित तीन प्रकार है। एक तो यह कि, मल और जलको उनकी अपक्क दशामें भूमिपर फैला दे। इस प्रणालीको काममें लाते समय पहिले यह ध्यानमें रखना आवश्यक है कि, (अ) सारा मल फूटकर पानीके साथ द्रवीभूत हो जाय (आ) दूसरे पानीको ग्रहण कर नेके लिये भूमि भी यथेष्ट प्रमाणमें पास रहे। (इ) बर्सातमें भूमि निसर्ग प्रवृत्त पानीके कारण योंही तर रहनेकी वजहसे उक्त प्रणालीकी शरण लेनेवालोंको बड़ी कठिनाइसे सामना करना पड़ता है।

दूसरी प्रणाली यह है कि, मल जलमें और पानी मिलाकर *रासायनिक क्रिया द्वारा उसे शुद्ध करना।* इसके लिये (अ) पानी भरपूर होना चाहिये। (आ) उसमें जिन रासायनिक द्रव्योंका सम्मिश्रण करना पड़ता है, उनके लिये नित्यका व्यय सहन करनेकी क्षमता होनी चाहिये। (इ) नीचे जो कीचड़ जमा होता है उसकी नित्यप्रति सफाई होनेका प्रबन्ध होना चाहिये।

इस प्रणालीका कार्य चूनेकी कली, फिटकिरी अल्युमिनो फेरिक' सदृश पदार्थोंके व्यवहारसे होता है।

सेप्टिक कुण्ड और फिल्टर--इस प्रणालीको काममें लानेके लिये घरके पिछवाडेमें थोडीसी जमीन होनी चाहिये। साधारणतया यह सुविधा छोटे-छोटे गाँवो कसबो और नगरों-उपनगरोंमें अधिकांशरूपसे होती है। अतः यदि आरम्भमें थोडासा अर्थव्यय सहन कर उक्त कुण्ड और फिल्टरकी रचना कर ली जाय तो मलके शुद्धीकरणका काय सहजहीम और बिना किसी विघ्न बाधाके सुचारु रूपसे सम्पन्न होता रहता और भविष्यमें इस कार्यके निमित्त कोई खच उठानेकी भी आवश्यकता नहीं रह जाती। जहाँ भङ्गियोंकी प्राप्ति होना असम्भव हो वहाँ और जहा वह सहजहीमें प्राप्त हो जाते है वहां भी इस प्रणालीका उपयोग अत्यन्त उपयोगी और सरल प्रमाणित होता है। कारण भङ्गी मिलने पर उन्हें वेतन देना पडता और साथही साथ अपने आरोग्यके लिये उनके मुँहताज होकर रहना पड़ता है। अत दोनोंही दृष्टिसे यह प्रणाली विशेप लाभजनक और उपयुक्त है।

इसका अवलम्ब लेनेके लिये सर्व्व प्रथम दो विशिष्ट प्रकारके कुण्डोंका सृजन करना पडता है। जिनमेंसे एकको रेवकुण्ड (Grit chamber) और दूसरे को पूतिकुण्ड (Septic Tank) कहते है। मनुष्य चाहे जितनी भी सावधानीसे काम ले, उसके घरसे व्यवहृत होनेवाले जलमें राख, मिट्टी, बालू, शाक-पातके डण्ठल, छिलके, चायकी पत्ती इत्यादि पदार्थोंका कुछ न कुछ अश रह ही जाता है। उसे पूर्ण सतर्कतासे निकाल कर अलग कर देना चाहिये। दूसरी बात यह है कि, कितनीही बार मल फूट कर जलमें मिश्रित नहीं होता और उसे उसम मिलानेकी नितान्त आवश्यकता होती है। इसी आवश्यकताकी पूर्तिके लिये जिस विशिष्ट प्रकारके कुण्डका सृजन होता है उसे रेवकुण्ड अर्थात् 'ग्रिट चेम्बर' कहते है।
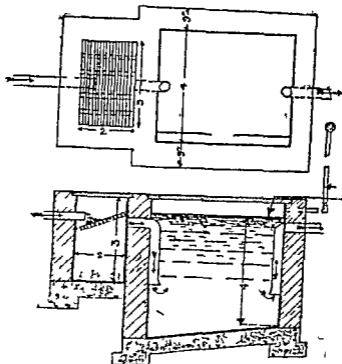
आकृति नं १४५, १४६

इन चित्रोंमे बायीं ओर एक रेवकुण्ड दिखलाया है। इसमें एक लोहेका छड जडकर उसपर तिर्छी चलनी रखते हैं और उसपर प्रमुख नलिकासे आमेवाला सारा पानी छोडा जाता है। उस समय उस जलके साथ मिश्रित डँठल पत्ते इत्यादि पदार्थ ऊपरही रह जाते हैं और वालू इत्यादि जड पदार्थ पेन्देमें जम जाते हैं। पानीका निरन्तर प्रवाह प्रवाहित होता रहनेके कारण मल भी अच्छी तरह फूट कर पानीमे सम्मिश्रित हो जाता है। इस कुण्डसे होकर, चलनीके नीचे बैठायी हुइ एक नलिकाके मार्गसे पूति कुण्डके मध्यभाग तक पानी पहुँचाया जाता है। ऐसा करनेका कारण यह है कि, जिसमें वहां पानी अत्यन्त मन्द गतिसे पहुँचे। वहां पहुँचने पर इस पानीका

शुद्धीकरण (automatically) स्वतन्त्ररूपसे अपने आपही हुआ करता है। क्यों? पूतिकुण्डकी विशिष्ट रचना प्रणालीके कारण।

जो पूतिकुण्ड नया बना हो, उसमें मल-जल छोडतेही आरम्भमें २।३ दिनतक थोडीसी दुर्गन्धि पैदा हो जाती है। किन्तु थोडेही दिनोंमे वहापर एकत्रित हुए पानीके पृष्ठभागके पास एक तरहकी 'काई' अथवा तह जम जाती है और उस नलिकामें अत्यन्त सूक्ष्म अनुर्वोपजीवी (अनुर्व=without oxygen) कीटाणु (Anaerobic) Bacteria पैदा हो जाते है। मल-जलमें जो थोडी बहुत वायु और उसके साथ-साथ उर्व्व अर्थात् प्राणवायु (oxygen) विद्रुत दशामें स्थित रहता है उसका सर्व्व प्रथम मलान्तर्गत सेन्द्रीय द्रव्योपर (organic matter) रासायनिक परिणाम होनेसे, भीत रकी सारी प्राणवायु समाप्त होतेही उक्त कीटाणुओंकी जोरोंके साथ वृद्धि होने लगती है और वह बचे-खुचे सेन्द्रिय द्रव्योंका अधिकांश भाग खा डालते है। परिणाम यह होता है कि, घन पदार्थ द्रवीभूत होकर शेषभागकी वायु बन जाती है। यदि यह न हो तो मल ज्यों का त्यों जहाँ का तहाँ धरा रहे और थोडेही दिनोंमें उसका ढेर लगकर तदान्तर्गत दुर्गन्धि आरोग्य नाशके लिये प्रधान कारण बन जाय। किन्तु उपनिर्दिष्ट कारणसे उसकी आधी व्यवस्था तो यहीं लग जाती है। अर्थात् न मलका ढेरही रहने पाता है न उसमें आरोग्यनाशक दुर्गन्धिही यथेष्ट प्रमाणमें रह जाती है। जो कुछ थोडाबहुत अवशेष भाग रह जाता है वह आरोग्यका उतना घात करनेवाला नहीं रहता और उसकेभी शुद्धीकरणका कार्य सरल हो जाता है। इस कुण्डके शीर्षभागकी सतहपर जो काई जम जाती है, वह अत्यन्त महत्व पूर्ण होती है। उसको स्थायी रखनेके लिये अत्यन्त सतर्क रहना चाहिये। इसीलिये कुण्डस्थ जलको स्थिर रखनेके विचारसे रेवकुण्टस निसृत होनेवाली नलिका पूतिकुण्डके मध्यतक लाकर छोडी जाती है तथा पूतीकुण्डसे जानेवाले पानीकी नलिका इसीप्रकार मध्यसे ऊपरतक ले जाते हैं।

पूतिकुण्डका निर्म्माण

घरू कामके लिये चौकोर पूतिकुण्ड बनाना अच्छा है। उसका आकार किञ्चित् लम्बा होना चाहिये। चौड़ाई जहाँतक बने कम रहे। किन्तु समयानुसार मनुष्य उसमें उतर सके इस विचारसे कमसे कम २ फुट चौड़ाई तो अवश्यही रहनी चाहिये। इस कुण्डके पेन्देमे, जिस दिशासे पानी भीतर आता रहता है उस ओर १० मे १ से १५ मे १ तक ढाल दिया जाता है तथा पेन्देसे प्रायः २।३ इञ्च तक नीचे जमा हुआ कीचड सट्जहीमें निकाला जासके इस विचारसे एक तीनसे लेकर ४ इञ्च तकके व्यासकी नलिका भी कहीं-कहीं बैठा दी जाती है। इस नलिकाको बाहरसे एक काग लगा रहता है। कतिपय कुण्डोंके मध्यभागमें एक अथवा दो पढदे और बनाये रहते हैं। ये पढ़दे सलोह कांक्रीट अथवा ईंटके बने रहते हैं। इनके बनानेमें विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि, उनकी ऊँचाईके तीन हिस्से कर मध्यवर्तीय भागमे डेढसे लेकर २ इञ्च तकके व्यासके छिद्र रखे जाते हैं। उद्देश्य यह कि, ऐसा करनेसे उन छिद्रोंसे होता हुआ पानी इस कुण्डके इस हिस्सेसे उस हिस्सेमें जा सके। इन पढदोंके सृजनका मुख्य उद्देश्य यही है कि, जलका मूल वेग रोककर कुण्डके पृष्ठ भाग पर जो 'काई' की सतह जम जाती है, वह ज्योंकी त्यों स्थिर एवम् अचल बनी रहे। कुण्डका भीतरी हिस्सा सिमेण्टका पलास्तर किया हुआ और तदन्तर्गत पृष्ठभाग जहाँतक सम्भव हो चिकना जिलोदार बनाना चाहिये, तथा ऊपर एक जस्ते की चद्दर लकडीकी चौखटमें बैठाकर उसका ढक्कन के स्वरूपमें उपयोग होना चाहिये। इस ढक्कनपर 'रिङ्ग' लगानसे उठाई-धराईमें सुविधा होती है। अस्तु

यह कुण्ड जमीनके भीतर होना बुरा नहीं तथापि इससे वर्षा-तमें उसके भीतर पानी पहुँचनेकी सम्भावना होती है। अतः सर्व श्रेष्ठ बात यही है कि, इसका २ फुट तककी ऊँचाईका भाग जमीनसे ऊपर निकला रहे तथा शेष अङ्ग जमीनमें ही गडा रहे।

कुण्डके भीतर से बाहर जानेवाले पानी की नलिका जमीन पर कुछ ऊँचाईपर रहनेसे, एक लाभ यह भी होता है कि, उस पानीका उपयोग खेतोंकी सिंचाईके लिये सहजहीमें हो सकता है।

गार्हस्थिक पूतिकुण्ड आवश्यकतासे कुछ बडा बनाना अच्छा है। याने कमसे कम उसमें दो-तीन दिनका मल-जल तो अव श्यही रह सके। ऐसा करनेसे एक तो उसमें स्थित पदार्थका शुद्धीकरण करनेमें पर्याप्त अवसर मिलता है दूसरे समयानुसार यदि घरमें मेहमान और अतिथियोंका जमघट इकट्ठा हो जाय तो उस समय भी इसी एक कुण्डसे काम चल सकता है।

कुछ शास्त्रज्ञोंका कथन है कि, सालमें एकबार अथवा यदि सम्भव हो तो सालमें ३।४ बार तो अवश्यही पूतिकुण्डकी सतहमें जमे हुए कीचडकी सफाई होती रहनी चाहिये। किन्तु हमारी समझसे उनका ऐसा कहना भूल है। क्योंकि हमारे देखनेमें बहुत से ऐसे पूतिकुण्ड आये हैं, जो पाँच-पाँच वर्षतक अव्याहत रूपसे काम देते चले गये हैं। इतनाही नहीं अपितु हमारा यह अनुभव है कि, अधिक दिन तक कुण्डोंकी सफाई न होनेसे उनके पृष्ठ भाग पर जो 'काइ' जम जाती है, उसमें घर बनाकर रहनेवाले कीटाणु अधिक प्रबल और सुपुष्ट हो जाते हैं। जिनके कारण उन कुण्डोंमें प्रवेश पानेवाले मल और दुर्गन्धिका नाश अधिक द्रुत गतिसे होता रहता है। १-२ वर्षोंकी अवधि बीत जानेपर उक्त काईका पृष्ठभाग पत्थरकी तरह ठोस बन जाता है। अत एसी दशामें कितने दिन तक कुण्डकी सफाई न करनी चाहिये, यह बात कुण्डकी कार्यक्षमता पर निर्भर करती है। यदि पेन्देमें अत्यन्त कीचड जमा हो गया हो और उसके कारण भीतर जानेवाले पानीकी शुद्धिमें विलम्ब लगनेकी सम्भावना हो गयी हो तो उस परिस्थितिमें कुण्डकी सफाई करना आवश्यक और अनिवार्य है। कुण्डकी सफाई करनेकी आवश्यकता का पता कुण्डके बाहर जानेवाले पानीकी परीक्षा करनेसे लग सकता है। यदि वह साफ न हो, उसमें बारीक कण तैरते हुए दिखलायी दें और दुर्गन्धि आती हो तो समझ लेना चाहिये कि, कुण्ड सफाई मांगता है।

कभी-कभी ऐसा देखनेमें आता है कि, घरके फर्शको धोते समय किसी ऐसिड अथवा डिस-इन्फेक्टरका प्रयोग करनेसे उसका परिणाम कुण्डस्थ जन्तुओंपर बहुतही बुरा पडता है और उसके कारण कुण्ड उचितरूपसे कार्य करनेमें असमर्थ हो जाता है। ऐसी दशामें यह ध्यानमें रखना चाहिये कि यदि कुण्ड किसी कारणवश पूरा काम न देता हो तो उसे सहसा साफ नहीं करना चाहिये। वरन् ३-४ दिनतक उसमें मल-जल छोडना नितान्तरूपसे बन्द कर देना चाहिये। ऐसा करनेसे परिणाम यह होता है कि, कुण्डस्थ जन्तु उस अवधिमें भूखसे व्याकुल हो जाते हैं और उक्त अवधिके पश्चात् मल-जल छोडनेसे बुभुक्षित होकर अपने खाद्य पदार्थको दूने जोर-शोरके साथ खाने लगते हैं। इसके अतिरिक्त इस प्रयोगके कारण ऊपर जमी हुई काईकी मोटाई भी पर्य्याप्तरूपसे कम हो जाती है और सफाईके योग्य हुआ कुण्ड पुन पूर्ववत् काम देने लगता है।

कुण्डकी सफाई करनेके पूर्व उसे तीन-चार दिनतक पूर्ण विश्रान्ति देनी चाहिये। ऐसा करनेसे भीतरी शीर्षभागकी तह प्राय फुटभर नीचे दबी हुई मिलेगी। पश्चात् फावडेसे भीतरका कीचड़ निकालकर जमीनमें प्राय १॥ फुट गहराईका गड्ढा खोदकर उसमें उसे गाड दे और ऊपर खूब मिट्टी लोट दे। कुण्डके पेन्देमें जमे हुए इस कीचडमें बिल्कुल भी दुर्गन्धि नहीं रहती।

आ नं १४७

पेन्देमें ज्यो-ज्यों कीचड जमता जाय त्यों-त्यों उसके निकालनेमें सुविधा हो, इस विचारसे कुछ उपाय भी निर्धारित किये हुए हैं। चित्र सख्या १४५ में उन उपायों मेंसे एक उपाय अङ्कित
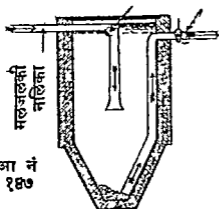
किया गया है जो 'डार्टमण्ड टैङ्क' के नामसे प्रसिद्ध है। बायीं ओरसे मल जलकी नलिका लाकर वह भाग आधी गहरायी तक छोडी गयी है। पृष्ठभागपर जमी हुई काई (Scum) दिखलाई गयी है। पेन्देमें जमनेवाला कीचड साधारणतया प्रवाही दशामें रहता है। उस कीचडके शीर्षभागपर एक खडी नलिकाका मुह है। इसी मुहके मार्गसे वह खडी नलिकामें घुसकर कुण्डान्तर्गत पानीके दबावके कारण ऊपर खसक जाता और कुण्डके बाहर, दाहिने हाथकी ओर जो एक 'वाल्व' रखा हुआ है, उसके खुलते ही उसके भीतरसे बाहर निकल आता है। इस पद्धतिसे कुण्डका कार्य अव्याहतरूपसे चलते हुए ही कीचड निकाला जा सकता है।

कुण्ड साफ करनेकी अवधिमें बाधा न पहुँचे इस विचारसे कहीं-कहीं एकही आकार-प्रकारके दो पूतिकुण्ड बनाये जाते हैं। इस दोहरी व्यवस्थाका सम्यक् रूपसे लाभ उठानेके निमित्त मल जलकी मुख्य नलिका अथवा नालेमें दो मार्ग रखे जाते हैं। जिनसे उक्त किसी भी कुण्डमें जल भर्ती किया जा सकता है और उसके लिये किसी एक विशिष्ट और स्वतन्त्र बडे कुण्डकी आवश्यकता नहीं रह जाती। यदि घरके सन्निकट काई खुली जमीन हो और विशेषतया पानी निचोडे जाने लायक वहां बालू, रेत अथवा लाल रवादार मिट्टीही हो तो कुण्ड साफ करनेकी अवधिमें ५-६ दिनके लिये सारा मलजल उस खुली जमीन पर भी फैलने दिया जा सकता है। किन्तु ध्यान रहे, यह बात वर्सात में नहीं की जा सकती। जहां नितान्त काली और चिकनी मिट्टीकी जमीन हो वहां दो पूतिकुण्ड बनानेकी व्यवस्था विशेष फलप्रद सिद्ध होगी।

कुण्डका नवीन सृजन होनेपर अथवा उसकी सफाई की जानेके पश्चात् उसे पुन चालू करनेके समय उसम आरम्भमें प्रायः १.१ इञ्च तक सादा जल भर देना चाहिये। पश्चात् उसम मल-जलकी भरती आरम्भ कर देनी चाहिये। आरम्भके ४।५ दिन कुण्डस्थ

मल-जलपर कमसे कम ३ इञ्चकी काईकी तह जमने तक वायु लहरीके साथ उसमेंसे कुछ दुर्गन्धि निकलने लगती है।

पूतिकुण्डसे निसृत हुआ जल पूर्णरूपसे शुद्ध हुआ न समझना चाहिये। उसमें एकत्रित हुए मल-जलका शेष ७० फीसदी निकल जाता है। शेष ३० फीसदी मलाँश द्रवीभूत होकर जलसे समरूप होजाता है और आवश्यकता आ पडती है कि, उस अँशको भी पानीसे निकाल दिया जाय और उसे पूर्णरूपसे शुद्ध किया जाय। स्थपतिवर्गनें इसके शुद्धीकरणके दो उपाय निर्धारित किये है। जिनमेंसे एकतो यह है कि, उक्त अर्द्ध सशोधित जलका वायुसे जितना अधिकसे अधिक सयोग हो सके, उतना करनेकी निरन्तर चेष्टा करना। फिर चाहे इसके लिये किन्ही कृत्रिम उपायोंका अवलम्ब क्यों न लेना पडे। ऐसा करनेसे वायुमें मिले हुए प्राण वायुसे (oxygen) तदन्तर्गत सेन्द्रीय द्रव्योंका सम्बन्ध होकर जलकी अशुद्धता नष्ट हो जाती है। दूसरा उपाय यह है कि, उक्त अर्द्ध शुद्ध जल जमीन पर फैलने दिया जाता है और वहां शाक पात इत्यादि लगादिये जाते हैं। ऐसा करनेसे उसमें रहे हुए सारे सेन्द्रीय पदार्थ नष्ट हो जाते हैं। पहिले उपायको कार्य परिणत करनेके लिये, खगार ईण्टा, कोयलेके बडे-बडे टुकडे तथा अन्यान्य सच्छिद्र जड पदार्थ खुली जमीन पर तहनुमा फैलाकर उन्हें एक फिल्टरकासा रूप दिया जाता है तथा उसपर पूति-कुण्ड से निसृत होनेवाला जल फौव्वारेसे निकलनेवाली धाराओं की तरह अथवा अन्य प्रकारसे छिडका जाता है। इस विधिसे वायुसे उस जलका विशेष सयोग हो जाता है। यह फिल्टर जमीन के नीचे न कर उसके ऊपरही करना विशेष श्रेयस्कर है। कारण उससे अधिक से अधिक खुली वायु उस दूषित जलको मिल जाती है। यही कारण है कि, अधिकतया इस प्रकारके फिल्टरोंके चतुर्दिक ऊँची-ऊँची दीवालें नहीं बनायी जातीं। मात्र ऐसे फिल्टरोंसे निकला हुवा जल नितान्तशुद्ध यानी कमी-कमी तो रासायानिक दृष्टिसे नदीके जलकी अपेक्षा अधिक शुद्ध प्रमाणित होता है।

कौटुम्बिक जलोत्सर्जक प्रणालीमें इस प्रकारका फिल्टर निर्माण करना अत्यन्त खर्च और त्रासका कार्य है। क्योंकि सुविधाकी दृष्टिसे फिल्टर बनाने पडते हैं। ताकि, एकके कामपर लगे रहनेकी अवधितक दूसरा विराम लेता रहे। अत इस दशामें निम्नलिखित प्रकारका अल्पव्ययी और बहुगुणी फिल्टर यदि काममें लाया जाय और उसमेंसे निकला हुआ जल जमीन पर फैलने दिया जाय तो व्यय भी कम होता है और कार्य भाग भी उत्तमताके साथ सिद्ध हो जाता है।

इस योजनामें पूतिकुण्डसे थोडे अन्तर पर जमीनमें एक ३ फूट लम्बा १-३ फूट चौडा और १ फूट गहरा गढ्ढा खोदना चाहिये और उसमे चारों ओरसे ९ इञ्ची ईंटे लगाकर चूनेकी पक्की जुडाई कर देनी चाहिये। याद रहे चूनेका पलास्तर न रहे। पश्चात् उस गढ्ढेको खपडेके टुकडे, खडार ईंटे, कोयलेके मोटे टुकडे और कङ्कड इत्यादि सच्छिद्र पदार्थोंसे भरपूर भर दे। तदुपरान्त उस पर एक जस्तेकी चद्दरकी बनी हुई ६ इञ्च व्यासकी सच्छिद्र पनाली रखदे। वह इस प्रकार उतरती रखनी चाहिये कि, पूतिकुण्डका सारा जल उसके छिद्रोंद्वारा नीचेके गढ्ढेमें फैलजाय। इस नमूनेके दो गढ्ढे होना विशेष हितकर है। जिसमे क्रमश ८-१५ दिनतक एक गढ्ढेमें पश्चात् उधरसे घुमाकर दूसरे गढ्ढेमें पानी छोड़ा जा सके। ऐसा करनेसे जो गढ्ढा विरामकी अवधिमें रहेगा उसमेंके सारे सछिद्र जड पदार्थ धूपसे सूख कर पुन कार्यके लिये समर्थ हो जाते हैं। एकही गढ्ढेका अवलम्ब होने से महिने दो महिने की अवधि के उपरान्त उसमेंके सारे जड पदार्थ निकालकर धूपमें सुखा देने चाहिये और उसमें नये पदार्थोंका समावेश कर देना चाहिये।

गढ्ढेके बाहर निकलनेवाला जल खपड़ेकी अद्धगोल जिलेदार (glazed) नलिकाओंके मार्गसे निकालकर खेतमें छोड देना चाहिये किन्तु याद रहे, यह पानी प्रतिदिन खेतके एकही विभागमें न पहुँचाया जाय।

यदि जमीन सूखी और वालुकामय हो तो ८–१० मनुष्योंके लिये ५।६ सो वर्गफुट जमीन पर्याप्त होती है। ललाई लियेहुए रवादार मिट्टीकी जमीन प्रायः १३०० से २४०० वर्गफुट तक लगेगी। जमीनके पृष्ठभागकी मिट्टीकी अपेक्षा उसके १ फुट नीचे जिस प्रकारकी मिट्टीका स्थर हो उसपर बहुतेरी बातें निर्भर करती हैं। यदि नीचे बालू अथवा उसीसे सादृश्य रखनेवाला स्थर हो तो जल शोषणकी दृष्टिसे नितान्त हितावह है। इस काममें लायी जानेवाली जमीनको ३।४ महिनेकी अवधिमें एकवार अवश्य खोद देना चाहिये।

चित्रसंख्या १४५–१४६ में जो एक १५।२० मनुष्योंके परिवारको व्यवहारमें लाये जानेलायक रेवकुण्ड और पूतिकुण्ड दिखलाया गया है उसके सृजनके लिये अन्दाजन कितना खर्च बैठेगा यह निम्नलिखित तालिकासे जाना जा सकता है—

कामका विवरण	घनफुट	दर		प्रत्येक	कीमत
		रु०	आ०		
				घनफुट	
मिट्टी और रेतीमें खुदाई	१५६	१		१००	१—८
कांक्रीट (चूनेका)	११०	३०		,,	३६—०
९ इञ्ची ईंटेकी चूनेसे जुड़ाई	१४५	५०		,,	७१—८
सिमेण्टका पलास्तर	१७८वर्गफु	२०		,,	३५-१०
रेवकुण्डकी लोहेकी जाली २′×३′	१ नग	५		,,	५—०
नलिकाएं बेण्डसहित (मजूरी लिये)	१५ फुट	१		प्रति नग	१५—०
३ इञ्ची वेण्टिलेटर नलिका	११ ,,	×	१२	प्रति फुट	९—०
लकडीका ढक्कन	३० वर्गफुट	१	×	,,	३०—०
फुटकर				,,	५—०
कुल					२०९-१०

विद्युद्दीपन (Electric Lighting)

बिजली उत्पन्न करनेवाले यन्त्रको अंग्रेजीमें Dynamo अर्थात् 'गतिजन्य विद्युत् यन्त्र' कहते हैं। यह बिजली किसी एक केन्द्र (धुरि) के चारों ओर, चुम्बकके उत्तर तथा दक्षिण ध्रुवके बीचमें, फौलाद की पतली और चिपटी शलाकाओंको एक साथ बान्धकर उन्हें इन्धन या जलप्रवाहकी शक्तिसे अत्यन्त वेगके साथ घुमानेसे उत्पन्न होती है। पारिभाषिक प्रयोगमें इन शलाकाओंके एक छोरमें उत्पन्न होनेवाली बिजलीको positive अर्थात् धन तथा दूसरे छोरवाली बिजलीको Negative अर्थात् ऋण धारा कहते हैं। इस सम्बन्धमें शास्त्रियोंद्वारा यह समझा जाता है कि, बिजली की धारा अनवरत रूपसे धनकी ओर से निकलकर ऋण की ओर जाती रहती है। गतिजन्य विद्युत् यन्त्रमें दो प्रकार की बिजली उत्पन्न होती है। एक तो यह जो सतत रूपसे धनकी ओरसे निकलकर ऋण की ओर जाती तथा दूसरी वह जो प्रत्येक सेकन्डमें अनेकबार अपनी गतिकी दिशा बदलती रहती है। पारिभाषिक प्रयोगमें इन दो श्रेणियोंकी बिजलीको क्रमश Direct अर्थात् सरल या Continuous current अर्थात् सतत धारा (D C.) तथा दूसरीको Alternating current अर्थात् यातायातिक धारा (A C) कहते हैं। सामान्य दृष्टिसे यदि पूछा जाय तो प्रत्येक गतिजन्य विद्युत् यन्त्रमें यातायातिक विद्युत् धाराही उत्पन्न होती है। किन्तु उसमें Commutator अर्थात् एक ऐसे प्रकारकी योजना होती है जो यातायातिक विद्युत् धाराको आबद्धकर उसे सरल धारामें परिवर्त्तित कर देती है। अंग्रेजीके Commute से Commutator बना है। जिसका अर्थ है, आयद्ध करनेवाला या सुपुर्द करनेवाला। इन दो श्रेणीके विद्युद् धाराओंके गुण धर्म एक दूसरेसे नितान्त विभिन्न है। इनमेंसे किसी भी विद्युद् धाराका प्रवाह जारी करनेके लिये घुण्डी बन्द कर देनी पड़ती है।

यातायातिकविद्युद् धाराकी क्रिया बहुत कुछ अंशोंमें जेबी घड़ीके (Balance wheel) तौलचक्रसे साम्य रखती है। केवल भेद इतना ही होता है कि, उसकी गतिकी दिशा कुछ धीमे रूपसे बदलती रहती है और यह धारा अपनी गतिकी दिशा से प्रत्येक सेकन्दमें कितनेही सौवार परिवर्त्तित करती है। प्रकाशकी दृष्टिसे दोनोंही प्रकारकी विद्युत् धाराए एकसी होती है।

कौनसीही प्रवाही या चलत् बिजलीपर कुछ भार (Electric Preessure) हुआ करता है। उसकी चाभी (Switch) खोलकर घुण्डीके बन्द करनेसे जिस ओर दबाव कम होता है उसी ओर वह प्रवाहित होने लगती है। यह दबाव अर्थात् भार (volts) वोल्टस विद्युत्चालकशक्तिके निर्धारित गणना क्रममें गिना जाता है। बिजलीकी गणना एम्पियर अवरमे होती है। बिजलीके प्रवाह और दबाव का हिसाब जतलानेके लिये पारिभाषिक प्रयोगमें इस प्रकार कहते हैं कि, अमुक एम्पियरका प्रवाह अमुक वोल्टके दबावका है। एक घण्टेमें प्रवाहित होनेवाली एम्पियरकी संख्याको वोल्टकी संख्यासे गुनाकर देनेसे watt hour वॉट अवरमें फल निकलता है। १००० हजार वॉट अवरसे १ यूनिटस् (B T U) (Board of Trade Unit) होता है। उदाहरणार्थ १० एम्पियर का प्रवाह १०० वोल्ट प्रेशर अथवा १० एम्पियरका ५० वोल्ट प्रेशरसे घण्टे भरतक प्रवाहित होनेसे एक यूनिट पूरा हो जाता है। अस्तु।

विद्युत् धारा प्राय: प्रत्येक पदार्थमेंसे प्रवाहित होती है। धातु वर्गसे उसका अंशात्मक प्रतिकार (resistance) भले ही होता हो किन्तु वह प्राय: नगण्यके समान है। कुछ पदार्थ इनसे कुछ अधिक प्रतिकारक होते हैं। किन्तु उनमें भी इसका अल्प-स्वल्प प्रवाह बहता ही रहता है। पत्थर, मिट्टी, चूना आदि द्रव्य तो विशेष रूपसे विद्युद्ग्राहक होते हैं। लकडी, रबर, काच इत्यादिमें इसके विपरीत यथेष्ट प्रतिकारक शक्ति वर्त्तमान होती है। यही कारण है कि उन्हें (Insulator) अर्थात् विद्युद्रोधक पदार्थ कहते

है। यों तो हवामें भी थोडी बहुत विद्युद्वाहक शक्ति है ही तिसपर वह नम हो जाने पर तो उसमें विद्युत् प्रवाही गुण द्विगुणित हो जाता है। यही कारण है कि बिजलीकी तारोंपर रबरकी खोलियाँ चढा देते हैं। इस प्रकारकी खोलियाँ चढानेसे एक तो हवाकी नर्मीके कारण बिजलीका अपव्यय नहीं होता, दूसरे किसीका स्पर्श होनेपर उसे धक्का नहीं बैठता। संसारके प्रत्येक पदार्थमें कुछ न कुछ निश्चित वाहिनी शक्ति (Conductivity) हुआ करती है। जिसमें जितनी अधिक वाहिनी शक्ति हो उतनी ही न्यून मात्रामे उसम विद्युत्प्रतिकारक शक्ति होती है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, प्रतिकारकशक्ति घातकशक्तिके नितान्त विरुद्ध है। प्रकृति निर्मित समस्त पदार्थोंम धातुवर्ग विशेष रूपसे वाहिनी शक्तिसे सम्पन्न है। तिसमें विशेष कर चान्दी। इसमें तो सबसे अधिक वाहिनी शक्ति होती है। किन्तु मूल्यमें विशेष महगी होनेके कारण इसका मनोनुकूल प्रयोग नहीं होने पाता। इसके अतिरिक्त इस शक्तिमे सम्पन्न होता है ताम्बा। इसमें भी अन्य धातुओंकी अपेक्षा अधिक वाहिनी शक्ति होती है। मूल्यमे चान्दीकी तरह महगा नहीं होता। अत इस कार्यमे अधिकांश रूपसे इसीका प्रयोग होता है। विद्युत् प्रवाहका प्रतिकार करनेवाले पदार्थोंको पारिभाषिक प्रयोगमें 'ओह्म' कहते हैं। प्रवाहका परिमाण (Quantity) एम्पियर उसका दबाव वोल्ट तथा उसके प्रतिकारकी गणना ओहममें होती है।

निश्चित एम्पियरके प्रवाहका परिमाण यदि दूना करना हो तो या तो उसमें दूने वर्ग इञ्चवाले क्षेत्रफलकी तार जोड दी जाती या वोल्टेज अर्थात् दबाव दूना कर दिया जाता है। दूनी मोटाइकी तार व्यवहारान्वित करनेमे उसका प्रतिकार आधा हो जाता तथा प्रतिकारके आधे होनेसे प्रवाह द्विगुणित हो जाता है। इसी प्रकार तारकी लम्बाई ज्यों-ज्यो बढती जाती है त्यों-त्यों प्रतिकारभी बढता जाता है। घुण्डियोंम प्रतिकारके व्यस्त प्रमाणम प्रवाह घटता रहता है। किसी घुण्डीमें किसी भूल या आकस्मिक कारण

(accident) वश तारके दोनों छोर यदि एक दूसरेके सन्निक आगये हों तो उस दशामें उनमेंसे अकस्मात् बहुतसा प्रवाह निस्र होने लगता और ऊष्णताका प्रमाण अत्यधिक होकर दोनों छो उत्तप्त होकर पिघलने लगते है । इसीको पारिभाषिक प्रयोग short Circuiting शार्ट सरकिटिङ्ग कहते है। कभी-कभी इ अवस्थामें सारे भवनमें आग लग जानेकीभी नौबत आपहुँचती है

बिजली पैदा करनेके लिये गतिजन्य विद्युत् यन्त्र चलाकर र शक्ति उत्पन्न की जाती है वह या तो (Steam, oil-Gas Engine भाफ ईंजिन या अन्तर्ज्वलन इंजिन चलाकर प्रस्तुत करते हैं र किसी नदी अथवा जलप्रवाहपर बन्द बान्धकर उसके पानीव रोकते हुए उसे एक नलिकाके मार्गसे जोरोंसे निकालकर उस प्रवाहसे पैदा करते है। इन दोनों प्रकारोंमेंसे पहिले प्रकार उपायका निर्वाचन होनेसे इञ्जन या डाइनेमोको शहरके मध्य किसी ऐसी जगह जडते हैं जहांसे सारे शहरमें बिजली पहुचाने खम्भें तथा तार कमसे कम मात्रामें व्यय हो सकते हों। दूस प्रकारमें निसर्गतयाही बाध्य होकर डाइनेमो जलप्रवाहके सन्नि कट जडना पडता तथा वहींपर बिजली पैदा करनी पडती है। इ पद्धतिसे तैय्यार की हुई बिजली स्थान-स्थानपर खम्भे गाडक उन परसें तारोंकी सहायतासे शहरके मध्यमें पहुँचायी जाती तथ वहांसे घर-घरमें बांटी जाती है। इस पद्धतिमें आर्थिक व्ययव न्यून करनेकी दृष्टिसे जहां बिजली पैदा की जाती है वहां उसक दबाव अत्यधिक बढाकर यथेष्ट तार समूहों (Cable) की सहाय तासे उसे शहरके सन्निकटस्थ ' Transformer '' मध्यस्थ यन् तक पहुँचाया जाता तथा वहां पुन: उसी यन्त्रकी सहायता उसका दबाव १०० से लेकर १५० तक लाकर घर-घरमें बिजल पहुँचायी जाती है।

Transformer अर्थात् मध्यस्थ यन्त्र यह एक अत्यन्त साप और अचल यन्त्र होता है। अथवा यों कहिये कि वह एक प्रक रका सवेष्टन (Insulated) तारोंको एक पर एक लपेटकर तैय्या

किया हुवा बडासा कडा होता है। उसके एक ओरके छोरमें वजनी वोल्टेजके तार जोड देते तथा दूसरी ओरके छोरमें कम वोल्टेज हुई बिजलीको निकालनेके हेतु सामान्य तार सयुक्त कर देते हैं।

हम ऊपर एक जगह लिखही चुके है कि, कम्पनीसे जो बिजली आती है वह प्राय सौ से लेकर दो-ढाई सौ वोल्टेजकी होती है। वहासे प्रत्येक स्थानपर विद्युद्रोधक कवचसे परिवेष्टित धन और ऋण नामकी एक-एक तार पहुचायी जाती हे। पश्चात् उन्हें घरमे लाने पर उनसे (१) मेन स्विच प्रमुख चाभी, (२) कट आउट, (३) मीटर-मापक यन्त्र और (४) ब्रेश्च कट आउट सयुक्त कर देते हैं। पश्चात् अनुक्रमसे लट्टूओंकी चाभी और लट्टूओंकी जडाई होती है। इन सब उपकरणोके सम्बन्धमे क्रमिक विवेचन करनेकेपूर्व हमे यह जान लेना आवश्यक है कि, घरू काममें बिजली लगानेके लिये किस नम्बर और किस मोटाईकी तारकी आवश्यकता होती है तथा इस कार्य्यके निमित्त कौनसा कवच (लकडी या शीसेका कवच) विशेष उपयोगी होता है।

अबतकके विवेचनको पढते हुए हमें यह तो ज्ञातही हो चुका है कि, प्रत्येक जातिकी तार कुछ अशमें विद्युत् प्रवाहका प्रतिकार करतीही रहती है। यह प्रतिकार शक्ति एक विशिष्ट मर्य्यादाके परे चले जानेपर तारमें थोडी—थोडी ऊष्णता उत्पन्न होने लगती है। इसीको तात्विक दृष्टिसे विद्युत चैतन्य Energy का ऊष्णता-रूपी चैतन्यमें परिवर्तित हो जाना कहते है। किन्तु चूंकि हम उस ऊष्णताका उपयोग नहीं कर सकते इस हेतु उतनी बिजली व्यर्थ चली जाया करती है। किन्तु यदि तारोंकी ऊष्णता अपेक्षासे बाहर हो जाय तो उनके सान्निध्यमें रहनेवाले पदार्थोंको आग लगकर क्रमश सारे भवनमें अग्निकाण्ड होनेका भय रहता है। हम अपने घरमें लगी हुई तारोंमें किसीभी तरह किसी मर्य्यादित प्रवाहके बहनेकीही क्यों न योजना करें किन्तु फिरभी किसी आकस्मिक

कारण वश उस प्रवाहमें न्यूनाधिक्य होता ही रहता है। यही कारण है कि दूरदर्शी एवम् तज्ञ गण अपने घरमें कुछ मोटी तार लगाते हैं। अन्तरराष्ट्रीय मण्डलने तो इस सम्बन्धमें यह मर्य्यादा निश्चित कर दी है कि, एक वर्ग इञ्च क्षेत्रकी तारमें एक हजार एम्पियर से अधिक प्रवाह किसीभी तरह प्रवाहित न हो। भवनम बिजली लगानेकी योजना उसके उपयोग और कारणको देखते हुए की जाती है। उदाहरणार्थ भवनमें हमें कितने कैण्डल पावर कितने लट्टू आवश्यक हो सकते हैं, तथा कितने विशेप समय काममें लाये जा सकते है? यदि पङ्खे और रसोईके लिये बिजलीका आश्रय लेना हो तो उस हालतमें कितने एम्पियरका प्रवाह हमें आवश्यक हो सकता है, इत्यादि बातोंका हिसाब बैठाकर उसके अनुसार तारकी मोटाई तथा विद्युत् प्रवाहकी मर्य्यादा निर्धारित की जाती है।

बिजलीकी तार

बिजलीकी तार नितान्त विशुद्ध ताम्बेकी होती हे। उसके ऊपर जो दूसरा रङ्ग हम देखते हैं, वह राङ्गेका पानी होता है। इसपर प्रथमत विशुद्ध रबरका कवच देकर उसपर वलकनाइज्ड रबरका स्तर दिया जाता है। यह वलकनाज्ड रबर वह पदार्थ है, जिसमें एक निश्चित प्रमाणमें गन्धक मिला रहता है। गन्धकको रबरके साथ पिघलाकर उस सम्मिश्रित द्रव्यको ढाल देते हैं और वही उक्त नामक रबर कहलाता है। इस पदार्थ विशेप पर शीतोष्णका कोई प्रभाव नहीं होता। तार पर इस पदार्थका कवच देनेके उपरान्त इस पदार्थमें तर किया रेशमका फीता उसपर लपेट देते तथा अन्तमें सूत या रेशमकी जालीदार डोरीसे उसे ढँक देते हैं। इस फीते या डोरीकी योजना विद्युद्रोधक साधनको सुरक्षित करनेके हेतु होती है। तारपर धातुका पानी चढानेका उद्देश यह है कि, उससे ताम्बेकी तारपर जङ्ग नहीं चढने पाता तथा साथही साथ वलकनाइज्ड रबरके अन्तर्गत गन्धकसे उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता।

बिजली लगानेकी क्रियामें योग्य नापकी तथा योग्यप्रकारसे विद्युद्रोधक की हुई तारका प्रयोग करना विशेष रूपसे आवश्यक है। इसके विपरीत करनेसे व्यर्थही बिजली अधिक खर्च होकर आर्थिक हानि होनेकी सम्भावना होती है।

ये तार दो प्रकारकी होती है। एक तो वह,-जिसपर C M A. अक्षर लिखे रहते हैं तथा दूसरी वह जिसपर N A लिखा रहता है। पहिले प्रकारकी तारोंपर फीता लपेटा रहता तथा उस पर कम्पनीका नाम लिखा रहता है। शीसेके कवचमें समावेशित तार सदा जोडदार हुआ करतीं तथा एकका ऊपरी कवच लाल तथा दूसरीका काला रहता है। यह भेद दिखलानेका कारण इतनाही है की, लालरङ्गसे धन तथा कालेसे ऋण तारोंका बोध होता है। C M A तार महँगी तो अवश्य होती है किन्तु विश्वसनीय भी उतनी ही होती है।

तारोंमें जो वारीक तार होती है उसकी नाप ०४४ अर्थात् उसका व्यास ४४/१००० इञ्च होता है। इससे वारीक तारका निर्वाचन करनेसे वहुतसी तारोंको रस्सीनुमा बँटकर प्रयोगमें लाना पडता है। उदाहरणार्थ ३/०१९ की या ७/०३६ की तार अर्थात ०१९ की तीन अथवा ०३६ इञ्ची व्यास की ७ तारोंको एक सात बँटकर तैय्यार की हुई तारें अनुक्रमसे तैयार होती है।

निम्नसारिणीमें एक वर्ग इञ्चमें एक हजार एम्पियरके प्रमाणसे तारोंकी मोटाई, उनके भीतरसे प्रवाहित होनेवाली विद्युत् धारा तथा उनपर १६ कैण्डल पॉवरके कितने लट्टू लगाये जा सकते हैं यह दिखलाया गया है।

तार संख्या और व्यास	१ वर्ग इञ्चमें १ हजार इञ्च के प्रमाणमें प्रवाहित हो नेवाली धारा	तारसे अधि कसे अधिक कितना प्रवाह पौंद कर सकता है	१६ कैण्डल पावरके (२० वाट) २०० वोल्टके दबा वके लिये कितनी बत्तियाँ लग सकेंगी
१–०४४	१५	६१	१५
३–०३६	३०	१२०	३०
७–०२९	४५	१८२	४५
७–०३६	७०	२४०	७०
७–०४४	१००	३१०	१००
७–०५२	१४५	३७०	१४५
७–०६४	२२५	४६०	२२५
१९–०५२	४००	६४०	४००
१९–०६४	६००	८३०	६००
१९–०७२	७५०	९७०	७५०
१९–०८३	१०००	११८०	१०००

बहुतसे कामोंमें उक्त तार व्यवहृत नहीं हो सकतीं। उदाहरणार्थ पङ्खे की तारें, टेबलकी बत्तियाँ, वॉल प्लगको व्यवहारमें लानेके लिये जोडी जानेवाली तारें इत्यादि। ऐसे स्थानोंपर गाँठ देनेमें सरलता हो इस विचारसे (Flexible) तारोंका व्यवहार होता है। उनके भीतरकी ताम्बेकी तार अत्यन्त महीन होती तथा उसपर वल्कनाइज्ड रबरका कवच देकर उसपर सादे रबरका कवच देते हुए ऊपरसे सूतका जालीदार फीता लपेटा रहता है।

घरू पङ्खे बत्तियाँ इत्यादिमें जो तारें जोडी जाती हैं, वे दो प्रकारोंसे जोडी जाती हैं। पहिले प्रकारमें उक्तविधानानुसार शीसेकी नलिकामें इन्शुलेशन कीहुए युक्त तारें मिलती हैं। उन्हें दीवालपर स्थान-स्थान पर धातुकी चद्दरोंके टुकडे जड़कर उन पर इन्हें बैठाया जाता और उन टुकडोंके छोर ऊपरकी ओर मोड़कर वे एक दूसरेमें बझा दिये जाते हैं। इस प्रकारकी तारें दीवालपर भलीभाँति बैठतीं और थोडी मेहनत एवम् थोडे समयमें

सतोषजनक काम निकल जाता है। व्ययकी दृष्टिसे विचार करनेपर यह तार यद्यपि कुछ महगी अर्थात् १०० गजके पीछे प्राय ३० रुपयेके लागतकी पडती है तथापि इसकी जडाईमें मजदूरीका खर्च नितान्त न्यून होनेके कारण अन्तमें लकडीके कवच तथा इसमें बराबर ही लागत बैठ जाती है। किन्तु यदि उसकी स्थापना समुचित रूपसे न हुई तो हात लगतेही धक्का बैठने तथा बिजलीके अधिकमात्रायें निकल जानेका भय रहता है। जहां बरसात अधिक होती है, वहां इस प्रकारकी तारोंपर जल वायुका प्रभाव अत्यन्त शीघ्र होकर जल्द ही ये बेकाम हो जातीं और उनकी जगह नयी तारें जडनी पड़ती है। ऐसी स्थितिमें लकडीके कवचका ही उपयोग विशेष सन्तोषजनक होता है। क्योंकि उसमे यदि नयी तार भी बैठानी पडें तो भी उसके अन्तर्गत (V I R) (Vulcanised India rubber) तार ७ रुपये बण्डलके हिसाबसे मिलती है, तथा कवचका ऊपरी ढक्कन निकाल कर उन्हें जडने और पुन ढक्कनको पूर्ववत् बैठा देनेमें अधिक व्यय नहीं होता। किन्तु आरम्भिक स्थितिमें दोनोंही प्रकारकी जडाईमें एकसा व्यय होता है। कारण इस प्रकारकी आरम्भिक जडाई मजदूरी अधिक खा जाती है। लकडीके कवचमे रङ्ग और पॉलिश देना भी आवश्यक होता है। क्योंकि उसके बिना वह भद्दा मालूम होता तथा उसकी दराजोंमे खटमल, मच्छड, तिलचट्टे इत्यादि अपना घर बना लेते हैं।

जन साधारण रूपसे किसी भी प्रकारकी बिजलीकी तार१०-१५ बरसोंके पश्चात् बदल देनी पड़ती है। विशेषत जहाँकी जल-वायु नम हो वहाँ तो इससे भी शीघ्र इनकी बदली करनी पडती है। नहीं तो वह बेकाम होकर विद्युद्धाराको बेकार बहाती रहती हैं और आर्थिक समस्याके सामने मनुष्यको हैरान होना पडता है। अस्तु,

१—स्विच.

स्विच अर्थात् चाभी घुमानेसे विद्युद् धारा बहने लगती है। कभी-कभी इसका उपयोग एक ओरका प्रवाह बन्द कर दूसरी ओरका प्रवाह जारी करनेमें भी होता है। (Electric supply) कम्पनीसे आयी हुई तार घरके जिस स्थान पर पहुँचायी जाती है वहाँ जो स्विच जड़ते है उसे पारिभाषिक प्रयोगमें मेन स्विच कहते है। इस मेन स्विच और लट्टूके स्विचमें बहुत बड़ा अन्तर नहीं होता। स्विचका बटन नीचे खींचते ही तारोंके दोनों छोर एक दूसरेसे मिल जाते तथा ऊपर उठाते ही एक दूसरेसे पृथक् हो जाते है। सरकिटके बन्द किये विना विद्युत् प्रवाह जारी नहीं होता यह हम आरम्भमें ऊपर एक जगह लिखही चुके हैं।

जन साधारण रूपसे स्विचके दो प्रकार माने गये हैं। जिनमेंसे एक तो वह है जिसे डबल पोल स्विच तथा दूसरेको सिङ्गल पोल स्विच कहते हैं। डबल पोल स्विच् धन और ऋण तारोंको जोडती और तोडती है। इन तारोंके एक दूसरीसे पृथक् होनेसे सरकीट दूर हो जाता है। किन्तु उन दोनों तारोंके छोर नितान्त पृथक् होनेके कारण सन्देह करने की कोई गुञ्जाइश नहीं रहती। यही कारण है कि, प्रमुख तारोंसे सम्बन्धु स्विच डबल पोलकी रखी जाती है। सिङ्गल पोल स्विच् सदा एक ही तारके छोरको दूसरीसे पृथक् कर देती है। किन्तु दैववशात् यदि किसी कारणवश वह पूर्णरूपसे पृथक् न हो सकी तो बिजलीका रूपान्तर चिनगारीआमें हो जाता और समूचे घरमें आग फैलनेकी सम्भावना होती है।

स्विच्का पेन्दा चीनी मिट्टीका होना विशेष श्रेयस्कर है। कारण इसके विपरीत किसी ज्वालाग्राही उदाहरणार्थ, लकड़ीका पेन्दा होनेसे भी अग्निकाण्ड होनेका भय रहता है। उसका बटन स्प्रिङ्गदार होनेसे किसीभी तरफ उसे खींचतेही स्विच् ऑन (सर-किट जोडने) या आफ् (सरकिट पृथक् करने) की दशामें वह

रट सकता है। स्विचके प्रत्येक खिंचावके समय उसकी एक स्थितीमें चिनगारी पैदा होती है। उस स्थितिमें अधिक देर तक रहनेसे तारके दोनों छोर कुछ सन्निकट आजाते और उनके बीचमें ज्वाला सुलुगकर कभी-कभी आग लगनी सम्भव हो जाता है।

इष्टकार्यके निमित्त व्यवहारमे आनेवाली स्विचोंका निर्वाचन नितान्त सतर्कतासे होना आवश्यक है। वे सम्यक्‌रूपसे मजबूत होनी चाहिये। साथही साथ उनकी स्थापना भी जाँच परख और विचार कर की जानी चाहिये। मेनस्विच कभी ऐसी जगह स्थापित न हो जहां बाल-बच्चोंके हाथ पहुँच सके। लट्टूकी स्विचेंभी ऐसीही जगह स्थापित होनी चाहियें कि, जिसमे अन्धेरेमेभी उनकी डुंडियां सरलतापूर्व्वक खींची और बन्द की जासके।

कहीं कहीं २ या ३ स्विचोंसे एकही बत्ती जलाने और बुझानेकी व्यवस्था करनेसे विशेष सहूलियत हो जाती है। ऐसी दशामें 'टू वे स्विच'का निर्व्वाचन किया जाता तथा उसे आवश्यकतानुसार २ या तीनकी संख्यामें लेकर उनका सम्बन्ध कौनसेही एक लट्टूसे करते हुए उन्हें पृथक्-पृथक् स्थानोंमें जडदिया जाता है। नाट्यशाला, घर, जीने इत्यादि स्थानोमें यह व्यवस्था विशेषरूपसे उपयोगी सिद्ध होती है।

२—कटआउट

यदि किसी समय किसी आकस्मिक कारणवश बिजलीका प्रवाह अत्यधिक वेगसे यह निकले तो उस दशामे 'सरकिट'को अकस्मात् तोड देनेके लिये 'कटआउट' का व्यवहार होता है। तारोंके दोनों छोर प्रायः १॥ इञ्चके अन्तर पर रहे हुए दो स्क्रूके चारों तरफ लपेटकर इन स्क्रूके मध्यवर्त्तीय अन्तरमें ताम्बे रांङ्गे

या काँसेकी तारोंका जोड़ देदेते हैं। यही व्यवस्था पारिभाषिक प्रयोगमें कटआउट कहलाती है। इसमें जहाँ विद्युद्धाराका प्रमाण अधिक होता है, (उदाहरणार्थ पावर हाउसमें) वहाँ विशेषतया ताम्बेकी तारें ही व्यवहृत होती हैं। यदि बिजलीका प्रवाह किसी कारणवश निश्चित मर्य्यादासे परे चला जाय तो उस दशामें ये तारें तत्क्षण द्रवीभूत हो जातीं और सरकिटमें दरार होकर वह टूट जाता तथा विद्युत् प्रवाह बन्द हो जाता है। इन्हीं तारोंको पारिभाषिक प्रयोगमें 'फ्यूज' कहते हैं। यह विभिन्न प्रवाह-मानको निर्धारित करते हुए उसीके अनुसार ताम्बेमें रांगे और शीसेका यथोचित सम्मिश्रणकर इष्ट मोटाई की तैय्यार की जा सकती है।

कट आउट के तलेमें चीनी मिट्टीका पेन्दा तथा ऊपर उसीका पेंचदार ढक्कन होना चाहिये। भवनके प्रत्येक मंजिलके लिये जहाँ-जहाँ तारें पहुँचानेकी आवश्यकता होती है वहाँ-वहाँ एक-एक कट आउटका होना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं तो प्रत्येक कमरे तथा बत्तीके लिये भी एक-एक पृथक् कट आउट लगाया जाता है।

३—सीलिङ्ग रोज

छतमें बत्ती टाँगते समय केसिंङ्ग (कवच) की तारोंसे (Flexible) नरम तारों की डोरी तथा उसके छोरमें बत्ती जोड़ने के लिये जो चीनी मिट्टीका साधन जोड़ा जाता है उसे पारिभाषिक प्रयोगमें सीलिङ्ग रोज कहते हैं। उसमें कितनी ही बार फ्यूजकी तार देकर कट आउट और सीलिङ्ग रोज दोनोंका काम एकही जड़ाईसे पूरा किया जाता है। किन्तु तात्विक दृष्टिसे विचार करने पर वैसा करना उपयुक्त नहीं है। क्योंकि उससे फ्यूजके जलचुकने पर उतनी ऊँचाई पर चढ़कर पुनः नये फ्यूजकी जड़ाई करना विशेष तापदायी हो जाता है।

४–वाल प्लग

कभी-कभी प्रसङ्ग विशेषपर काम निकालनेके लिये यदि अधिक लट्टू लगाने हों अथवा बिजलीके पङ्खे चलाने या समय विशेषपर बिजलीकी सहायतासे चायका पानी गरम करना हो तो उस दशाम सहूलियत प्राप्त करनेके लिये स्विचके सन्निकट दिवालपरही एक फिटिङ्ग किया रहता और उसमें तारोंके लिये दो पीतलकी नलिकाए जडी रहती हैं। पङ्खा, इस्त्री इत्यादिकी तारोंके अन्तिम छोरमें उनमें भली भाँति बैठने वाला तारोंसे संयुक्त लकडीका ठट्टा उनके अन्तर्गत भागमें जडा रहता है। उससे जोडी हुई अन्य पीतलकी नलिकाए उक्त फिटिङ्गकी नलिकाओंमें जोडकर स्विच खींचनेसे विद्युद्‌धारा चलना आरम्भ हो जाता है। प्रत्येक वाल प्लगमें एक-एक स्विचका होना आवश्यक है तथा उसकी दीवाल वाली फिटिङ्गमें जड़ी गयीं पीतलकी नलिकाओंके अग्रभाग भीतरकी ओर गहरेमें घुसे रहने चाहियें; ताकि, स्विचके खिंचे रहने पर भी किसीका हाथ उन पर पड़कर धक्का न बैठने पाये। रसोईके निमित्त व्यवहृत होनेवाली बिजलीके प्लग बड़े आकार के होते हैं।

५–बत्तियाँ या लट्टू

बत्तियोंके प्रमुखतया तीन भाग होते हैं। १–ऊपरका काँचका गोलक (globe) या चिमनी। २–भीतरकी सूक्ष्म तार। ३–ठट्टेदार कटोरी।

काँचके गोलक विभिन्न रङ्गके पाये जाते हैं। उनका जैसा रङ्ग होता है, वैसा ही वे प्रकाश देते हैं। इन गोलकोंका पृष्ठभाग काला-मलीन होनेसे प्रकाशमें भी उसके अनुसार न्यूनाधिक हो जाता है। यही कारण है, कि, उनकी बारम्बार सोडेके पानीसे सफाई की जाती है। लट्टूके भीतरवाली तार अत्यन्त पुरानी हो जानेसे उसके सूक्ष्म अणु झड़कर काँचके अन्तर्गत भागमें चिपक जाते और लट्टूको धुँधला बनानेके कारण बन जाते हैं। ऐसी

परिस्थितिमें उन लट्टुओंको बदलनेके अतिरिक्त दूसरा मार्ग नहीं है।

लट्टुओंके भीतरकी तारोंकी प्रमुख क्रियाका ज्ञान होने तथा कैण्डल पॉवरका वस्तुत अर्थ और उसका विद्युद्धारासे कार्य-कारण सम्बन्ध जाननेके लिये हमें उनके सम्बन्धमें भी दो शब्द लिख देना आवश्यक प्रतीत होता है।

अंग्रेजीमें कैण्डल कहते हैं मोमवत्तीको और पॉवर कहते हैं शक्तिको। मोमवत्तीकी शक्ति उसका प्रकाश है। अतएव यह स्पष्ट हो जाता है कि, मोमवत्तीकी प्रकाशशक्तिको कैण्डल पॉवर कहते हैं। बिजलीके कार्यमें जितनीही महीन तार हो उतनीही वह विद्युद्धाराका अधिक प्रतिकार करती है। यही कारण है कि, वह उक्त प्रतिकार शक्तिके कारण उत्तप्त होकर लाल हो जाती और प्रकाश फैलानेमें समर्थ होती है। लट्टुओंकी कैण्डल पॉवरका अर्थ उनकी सापेक्ष प्रकाशन शक्ति समझना चाहिये। उदाहरणार्थ, दस कैण्डल पॉवरके लट्टूका अर्थ दस मोमवत्तीको एक साथ जलानेसे जितना प्रकाश हो सकता उतना एकही लट्टूके जलानेसे मिले। बाजारमें यह लट्टू ८-१६-३२-४०-५०-१०० अथवा उससे भी अधिक कैण्डल पॉवरके मिलते हैं। आजकल उक्त निर्धारित क्रमके भीतरकी शक्तिवाले लट्टूभी मिलने लगे हैं। इनकी न्यूनातिन्यूनशक्ति १ कैण्डल पॉवर तक होती है।

लट्टूकी प्रत्येक कैण्डल पॉवरके पीछे खर्च होनेवाले विद्युत् प्रवाहका परिमाण जाननेके लिये आजकल लट्टुओंकी पहिचान कैण्डल पॉवरसे न करते हुए 'वॉट' से की जाती है। 'वॉट' यह संख्या है, जो वोल्ट और एम्पियरका गुणाकार जतलाती है। एक कैण्डल पॉवरमें खर्च होनेवाले 'वॉट' का परिमाण अधिकांशरूपसे

लट्टुओंमें व्यवहृत होनेवाली तारों पर निर्भर रहता है। पूर्व कालीन कार्बनकी तारवाले लट्टुओंमें प्रति कैण्डल पॉवरके पीछे ३॥ से ४ 'वॉट' तक व्यय होते थे। पश्चात् उनमें कुछ सुधार कर 'फिलमेण्ट' की तार बरती जाने लगीं। यह फिलमेण्ट किसी धातुविशेषसे नहीं बनता, वरन् यह भी कार्बनही की तार होती है। किन्तु उसपर बिजली की भट्टीमें एक विवक्षित क्रिया होनेके कारण वह धातुके सदृश मजबूत होती और मेटल फिलॅमेंण्ट कहलाती है। इसका आविष्कार हुए भी दिन बीत गये। अब पुनः दुबारा इस सम्बन्धमें सुधार हुआ है और टॅटॅलम् तथा टङ्गस्टन् नामक कठोर धातुओंकी तारें इस कार्यके लिये जगत्के सन्मुख आयीं है। टॅटॅलमके लट्टूमें १०७ वाट तथा टङ्गस्टनके लट्टूमें १०१ या इससे भी कम वॉट खर्च होते है।

बिजलीके आरम्भिक युगमें जिस समय लट्टुओंमें कार्बनकी तारोंका व्यवहार होता था उस समय लट्टूके भीतरकी सब वायु निकालकर उसमें निर्व्वात स्थिति (Vacuum) उत्पन्न की जाती थी। आजकल उस प्रणालीकी जगह ज्वलन क्रियाको यत्किञ्चित् भी सहायता न पहुँचानेवाली नत्रयुक्त (Nitrogen) वायुके सदृश उदासीन वायुसे लट्टू भर देते हैं। जिससे 'टङ्गस्टन' नामक तारके लट्टूमे 'वॉट' का खर्च और भी न्यून अर्थात् १ कैण्डल पॉवरके पीछे ½ ही होने लगा है। इसमें सन्देह नहीं कि, ये बत्तियाँ कुछ महँगी अवश्य होती है। किन्तु फिर भी उनमें बिजली अत्यन्त अल्पमात्रमें खर्च होती है। फिलिपके आधे वाटके लट्टू यही होते हैं।

जन साधारण रूपसे विचार करनेपर १६ कैण्डल पावरकी १०० वोल्टकी बत्तीसे जितना प्रकाश मिलता है उतनाही उतनीही कैण्डल पावरकी २०० वोल्टकी बत्तीसे मिला करता है। किन्तु

भेद इतना ही है कि दोनोंमें एक ही संख्यामें 'वॅाट' खर्च होनेके कारण १०० वोल्ट का प्रवाह दूसरीसे दूना खर्च होता है। लट्टूकी औसत आयुमर्यादा प्राय: १००० घण्टे होती है। किन्तु जबतक वह जल न जाय तबतक काम निकालते रहनेसे वह ४-५ हजार घण्टे तक भी टिक सकता है। परन्तु इससे उसकी कांच काली पड जाती और प्रकाशमें धुँधलापन आजाता है।

लट्टुओंकी कलोरी तथा लट्टुओं पर कुछ विवक्षित अक्षर और चिन्ह अङ्कित रहते हैं। जितना आशय यह है —

२२० V ३० WX अर्थात् २२० वोल्टेजके प्रवाहमें काम आनेवाला लट्टू। ३० W का अर्थ ३० वॅाट होता है तथा X अक्षर कम्पनीका चिन्ह प्रकट करता है। ३० वाटकी बत्ती प्राय: २० से २४ कैण्डल पॅावर तक प्रकाश देती है। कुछ लट्टुओंपर वाटकी जगह C P कैण्डल पावर लिखा रहता है।

कम वोल्टेजका लट्टु अधिक वोल्टेजकी विद्युद्धारामें लगानेस उसे ४-६ घण्टे तक तो कुछ भी आघात नहीं पहुँचता। किन्तु इसके बाद वह अधिकाँश रूपसे जल जाती है। इसी प्रकार यदि अधिक वोल्टेजका लट्टू कम विद्युद्धारामें लगा दिया जाय तो वह अपनी शक्तिकी अपेक्षा कम प्रकाश देता है। सरल (Direct) म लगनेवाले लट्टु यातायातिक (Alternating) धारामें भी काम देते हैं। किन्तु यह बात पङ्खोंके साथ नहीं होती। इसका कारण उसके भीतरकी मोटर है। इलेक्ट्रिक मोटर डायनेमोके नितान्त विपरीत होती हैं। डायनेमोंको इञ्जन या अन्य किसी शक्तिका सहारा देकर उससे बिजली पैदा करनी पडती है। बिजलीकी मोटरमें ठीक इसके विपरीत अर्थात् बिजलीकी शक्ति पर यान्त्रिक शक्ति तैय्यार होती है। सरल विद्युद्धाराके सहारे चलनेवाली मोटर यातायातिकधाराके साथ कभी नहीं चल सकती।

एक यूनिट १००० वाट अवरके बराबर तथा १ वाट वोल्ट एम्पियरके बराबर होता है, यह हम ऊपर लिख ही चुके हैं। लगाये गये लट्टुओंसे यूनिट मालूम करनेके लिये नीचे एक सारिणी दी जाती है—

३० दिनमें विभिन्न वॅाटके लट्टूओंमे खर्च होनेवाली बिजली

रोज कितने घण्टे बिजली चालू	कितने वाटके लट्टू									
	१०	२०	३०	४०	५०	६०	१००	१२५	१५०	२००
१	० ३	० ६	० ९	१ २	१ ५	१ ८	३ ०	३·७५	४ ५	६ ०
२	० ६	१ २	१ ८	२ ४	३ ०	३ ६	६ ०	७·५	९ ०	१२ ०
३	० ९	१·८	२ ७	३ ६	४ ५	५ ४	९ ०	११ २५	१३ ५	१८ ०
४	१ २	२ ४	३ ६	४ ८	६ ०	७ २	१२ ०	१५ ०	१८ ०	२४ ०
५	१ ५	३ ०	४ ५	६ ०	७ ५	९ ०	१५ ०	१८·७५	२२ ५	३० ०
६	१ ८	३ ६	५ ४	७ २	९ ०	१०·८	१८ ०	२२ ५०	२७ ०	३६ ०
७	२ १	४ २	६ ३	८ ४	१० ५	१२ ६	२१ ०	२६ २५	३१ ५	४२ ०
८	२ ४	४ ८	७ २	९ ६	१२ ०	१४ ४	२४ ०	३० ०	३६ ०	४८ ०
९	२ ७	५ ४	८ १	१० ८	१३ ५	१६ २	२७ ०	३३·७५	४० ५	५४ ०
१०	३ ०	६ ०	९ ०	१२ ०	१५ ०	१८ ०	३० ०	३७·५०	४५ ०	६० ०
११	३ ३	६ ६	९ ९	१३ २	१६ ५	१९·८	३३ ०	४१ २५	४९ ५	६६ ०
१२	३ ६	७ २	१०·८	१४ ४	१८ ०	२१ ६	३६ ०	४५ ०	५४ ०	७२ ०

टेबुलपर रखे जानेवाले बिजलीके पङ्खे ६० से ८० तककी वॉट साइजके होते हैं। यहाँ छतके पङ्खे १०० से २०० वाटके होते हैं। उनमेंसे हरएकके लिये लगनेवाली बिजलीके यूनिटका ब्यौरा निम्न सारिणीसे जाना जा सकता है—

पङ्खेका आकार	वोल्टेज		प्रतिघण्टे खर्च होने वाले यूनिट	विशेष
	११०	२२०		
वॉट	एम्पियर	एम्पियर		
६०	० २८	० १४	० ०६०	टेबल पङ्खे
७५	० ५४	० २७	० ०७१	टेबल पङ्खे
८०	० ६८	० ३४	० ०८१	
१००	० ९०	० ४५	० १०	छतके पङ्खे
१२०	१ १०	० ५५	० १२	छतके पङ्खे
१५०	१ ३४	० ६७	० १५	छतके पङ्खे
१८०	१ ६४	० ८२	० १८	छतके पङ्खे
२००	१ ८२	० ९१	० २०	छतके पङ्खे

उपयुक्त सूचनाएँ

बिजलीके व्यवहारमें किफायत की दृष्टिसे क्या-क्या सुविधाएं की जा सकती हैं, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे लिखा गया है —

१ नयनमनोहर फिटिङ्गका सामान खरीदनेमें अधिक व्यय करनेकी अपेक्षा यदि दामी तार खरीदनेम पैसा लगाया जाय तो वह स्थायीरूपसे लाभजनक होता और मनुष्य वारम्वारकी खर्चेकी झञ्झटसे मुक्त हो जाता है।

२ कमदामके साधारण लट्टुओंका व्यवहार करना ठीक नहीं। कारण उससे यद्यपि आरम्भमें किफायत होती हुई मालूम होती है तथापि अन्तिम परिणाम हानिजनकही होता है। दामी लट्टुओंका व्यवहार करनेसे उनके प्रीत्यर्थ होनेवाले अतिरिक्त व्ययकी

भरपाई १।२ महिनेमें ही पूरी हो जाती है। ये लट्टू जहाँतक सम्भव हों 'मेटलाइज्ड फिलमेण्टके ही' व्यवहृत होने चाहिये।

३ जहाँ जैसा काम करना हो उसीके अनुसार न्यूनाधिक प्रकाश देनेवाले लट्टुओंकी योजना होनी चाहिये। यह नहीं कि नवाब वाजिद अलीखाँ बनकर सर्व्वत्र ऊँची शक्तिके लट्टू लगाये जाँय। इससे आर्थिक व्यय अधिक होकर आँखोंको हानि पहुँचती है। अत (अ) समुचित स्थानपरही लट्टूकी योजनाकर (ब) समुचित प्रकारकी शेड (Reflector) लगाते हुए (क) लट्टू इच्छित ऊँचाई पर लगाकर (ड) कम शक्तिवाले लट्टुओंसे भी कम खर्चमें पर्याप्त प्रकाश लिया जा सकता है।

४ भीतरकी ओरसे लट्टू धुँधले हो जानेपर उनको बदल देना चाहिये। क्योंकि ऐसे लट्टुओंमें बिजली उतनीही खर्च होती और प्रकाश अत्यन्त कम मिलता है।

५ लट्टू और शेड्सको हमेशा स्वच्छ रखना चाहिये। यह सफाई यदा-कदा इस सामानको साबुनके पानीसे धोनेसे हो सकती है। रसोईघर इत्यादि स्थानोंके लट्टू प्रत्येक पक्षमें एक बार निरतर धोते रहनेसे उनमेंसे लुप्त हुई प्रकाश शक्ति १५ से १० प्रतिशत तक पुनः वापिस चली आती है।

६ यदि कोई स्विच् धक्का पहुँचाती हो तो मेन स्विचको बन्दकर उसकी समुचित रूपसे दुरुस्ती करनी चाहिये। यदि वह कहींसे किञ्चित् भी गरम होती हो तो उसे तत्क्षण निकाल कर उसकी जगह दूसरी लगा देनी चाहिये।

६ झूलती हुई तारें बारम्बार देखते रहना चाहिये। यदि उनमें कहीं मरोड़ या गाँठ बैठनेके कारण तदन्तर्गत ताम्बेकी तार खुली पड़ी हो तो तत्काल उसकी जगह दूसरी लगा दे।

८ कितनी ही बार 'लोड' अर्थात् भार अधिक हो जानेसे सारे लट्टू अकस्मात् बुझ जाते है। लोडका अधिक होना ही अकस्मात् विद्युत्धाराके एम्पियरका बढना है। इसीके कारण फ्यूज जलकर लट्टू बेकाम हो जाता है। अतः उस दशामें काम आनेके लिये थोड़ी बहुत 'फ्यूज'की तार घरमें संग्रह कर रखनी चाहिये। इसका प्रयोग करते समय पहिले मेन स्विच बन्द कर मेन कट आउटकी जाँच कर लेनी चाहिये। यदि उसमें दोनों फ्यूज ठीक हों तो ब्रान्च कटआउटकी जाँच करें। इसमेंसे किसी न किसी जगह जला हुआ फ्यूज मिलता है। उसे बदलकर नया लगा दे। ऐसा करनेसे मेन स्विचके खोलते ही पुनः लट्टू जलने लगते हैं।

९ कितनेही घरोंकी वायरिङ्गका एकाध जोड़ कच्चा रहनेसे अथवा अन्य किसी कारणवश खासकर बर्सातम बिजली चूने लगती है। परिणाम यह होता है कि, उसके कारण तारोंको हस्त स्पर्श होतेही धक्का बैठता है। सशक्त प्रकृतिके मनुष्य १५० वोल्ट तककी धाराशक्तिको किसी प्रकार सहे जाते हैं अर्थात् मरते नहीं। किन्तु अशक्त प्रकृतिके मनुष्यों तथा बालकोंकी प्राणहानिके लिये इतनीही शक्ति पर्य्याप्त होती है। इस आकस्मिक आपत्तिका प्रतिकार करनेके लिये पानीके नलकी (Waterpipe) एक नलिकामें कमानीसे आयी हुई बिजलीकी तारोंके शीसेके बने हुए वेष्टनको लोहेकी मोटी तारोंको जकड कर बान्ध देना चाहिये। ऐसा करनेसे कहींसे यदि कोई विद्युत् धारा यदि खुली रह गयी हो तो वह नलिकाके मार्गसे जमीनमें समा जाती है। जिस घरमें पानीके नलकी व्यवस्था न हो वहाँ भूमिकी सतहके २-३ फुट नीचे नम जमीनमें ताम्बेकी मोटी चद्दर गाडकर उसमें उक्त तारोंको जोड देनेसे भी काम चल जाता है। इन दोनों क्रियाओंको पारिभाषिक प्रयोगमें 'अर्थिङ्ग' अर्थात् भूमिगत करना कहते हैं।

वायरिङ्ग और फिटिङ्गमें होनेवाला व्यय

यदि फिटिङ्गका सब सामान मकान मालिक खरीद कर दे तो। उस हालतमें वायरिङ्ग करनेकी मजदूरी—

१ लेडकव्हर वायर प्रति पाइण्टके हिसाबसे १। रु०

१ लकडीका कवच (केसिङ्ग) „ „ २ रु०

प्रति पाइण्टके हिसाबके पडती हैं। पाइण्टका अर्थ सर्व साधारण व्यवहारमें प्रति लट्टू या छतका पङ्खा होता है। इन दोनों साधनोंमें व्यवहृत होनेवाले, कटआउट, सीलिङ्गरोज, स्विच् इत्यादिकी जडाईका समावेश भी इसीमें होता है। वालप्लग आधे पाइण्टके बराबर समझते हैं। घरमें यदि २० लट्टू तथा ६ प्लग हों तो उनका जोड़ २३ पाइण्ट माना जाता है।

इस सम्बन्धके उत्कृष्ट अंग्रेजी सामानके वर्त्तमान प्रचलित दरें प्राय सब जगह ये हैं—

१	हेन्ले लेडकवर वायर	१०० गजी बण्डल-	१८) रु०
२	वी० आई० आर „ (Vulcanised Indian Rubber)	„ ,	६॥) रु०
३	स्विच इंग्लिश	प्रतिदर्जन	६) रु०
४	„ „ कॅाँन्ट्री	„	७॥) रु०
५	ब्रेकट	प्रतिदर्जन	११ रु
६	कट आउट	„	४ रु
७	वालप्लग	„	११ रु
८	पेटेण्ट होल्डर	„	४॥ रु.
९	वाटर-टाइट ब्रॅकेट (बाहर लगानेका)	१ नग	४ रु
९	शेड (सुफेद)	प्रतिदर्जन	७ रु
१०	फिलिप १ वाट लट्टू ५० वॅाटतक	„	१५ रु.-

उक्त सामानका व्यवहारकर तार जोड़ देना, लेडकवर या उड-कैसिङ्ग प्रत्येक पाइण्टके हिसाबसे (मय मालके दामके) ९ रु

इसमें मेन स्विच भी आ जाती है। पृथक् मेन स्विचको ४ रु देने पड़ते हैं।

कम्पनीसे मिलने वाली बिजली मीटरकी सहायतासे नापीजाती है। यह मीटर सरल और यातायातिक धाराओंके पृथक्-पृथक् होते हैं। उनसे कितने किलोवाट अवर (१००० वाट) बिजली खर्च हुई यह पता चलता है। इस मीटरके लिये कम्पनी ८ आने महिना किराया लेती है। घरू मीटरमें १०।११ रुपयेका खर्चा है। वह भी कम्पनीसे पास करवाते समय उसे एक रुपया दक्षणा देनी पड़ती है। साधारणतया बिजलीका दर कम्पनीमें ४ आनेसे ८ आने तक होता है।

कामकी नाप-जोख

परिशिष्ट—अ

सिल्ली और टोड़े इनको एक पंक्तिमें रचनेके पश्चात् उनकी फीतेसे नाप-जोख की जाती है। पारिभाषिक प्रयोगमें इस नाप जोखको Running Foot अर्थात् दौड़ती हुई नाप कहा जाता है। इस प्रकारकी सम्पूर्ण नाप हो जानेपर ५ से १० प्रतिशत तक छूट देते है। इस सम्बन्धमें इससे उत्तम उपाय यह है कि, गढ़ाई होनेके पश्चात् भवनमें व्यवहृत होनेपर उनकी नाप ली जाय। इससे ऊँचे-खाले तथा टेढे-मेढे भागकी नाप अर्थात् ही गणनामें नहीं आती और सन्त्रास अच्छा पत्थर देखकरही कामपर लाते हैं।

अनघड़ पत्थर इनका एक चौकोर ढेर बनाकर उनकी लम्बाई चौड़ाईकी औसत नाप निकाल ली जाती तथा ऊँचाईको दो तीन जगहसे नापकर उसकी औसत निकालते हुए उससे लम्बाई चौड़ाईको गुणा देकर घन फुटमें नाप निकाल ली जाती है। इस सम्बन्धमें कहीं-कहीं पोलेपनके लिये ५ से १० फीसदी तक छूट देनेकी भी परिपाटी है। इस सम्बन्धमें आरम्भमे ही करार-मदार हो जाना अच्छा है।

हेदर बन्द और ६ से ८ इञ्ची कोण नगोंके हिसाबसे नापे जाते हैं। हेदरको एक मुँहा-दुमुँहा ऐसे दो प्रकार होते हैं। दुमुहें हेदरमें दाम अधिक पडता है। एक फुटसे बडे कोण सङ्गीन कामके पत्थर, पटिया इत्यादि जिसपर मठाऊ गढाई की जाती है उनकी नाप वर्ग फुटके हिसाबसे ली जाती है। उदाहरणार्थ १५ × ९ × १२ कोणकी १५ × १२ = १। तथा १२ × ९ की ३/४ मिलकर १ वर्ग फुट नाप हुई।

कङ्गनी (String course) के पत्थरोंकी नाप वर्ग फुट या रनिङ्ग फुटमें ली जाती है।

ईंटो और कोयेलुओंका भाव प्रति हजारके हिसाबसे निश्चित करते हैं। इनकी फूटटूटकी पूर्ति करनेक लिये सैकडेके पीछे ६ नग 'घलुआ'के रूपमें मुफ्त मिलते हैं। मगलौरी खपड़ोपर यह मुफ्तखोरी नहीं लादी। ईंटोकी नाप लेते हुए उनके फूट जानेसे दो-दो ईंटोंकी एक ईंट जोड़कर उस हिसाबसे सैकडेके पीछे ०।२ ईंटे लेनेकी परिपाटी है।

शहाबाद, तान्दूर, पॉलिश लादीकी नपाई प्रतिसौ वर्ग फुट (ब्रास) के हिसाबसे होती है।

सुफेद या रङ्गीन जिलोदार कौवट्ट नगोंके हिसाबसे खरीदे जाते हैं।

चूनेक चूर्णकी नाप व्रास या फरामें ली जाती है। ५ × ५' × १ का एक फरा तथा ४ फरेका एक व्रास होता है। कम तायदादमें लेनेसे मन और पसेरीके हिसाबसे भी बिकता है।

जिलोदार खपडेकी गोल तथा अर्द्धगोल नलिकाएं नगोंके हिसाबसे मिलती हैं। ये नलिकाए प्राय १ फुट लम्बी होती हैं।

कान और नर-मादी मुँहवाली ढलाऊ लोहेकी नलिकाएं प्रति हण्ड्रेडवेट तथा फुटके हिसाबसे बिकती हैं। इन नलिकाओंकी लम्बाई ६ फुट होती है।

जस्तेकी नलिकाए रनिङ्ग फुटके हिसाबसे बिकती हैं। उनके जितने टुकडे हों उतने ही जोड़ मुँह (Sockets) उनके साथ मिलने चाहियें।

बालू, मोरम, गिट्टी, कङ्कड़, बालूकी चालन इत्यादि सामान फरेके हिसाबसे नापकर मिलता है। भरावके लिये यदि मिट्टी और मोरम खरीदनी हो तो उसकी नाप दो तरहसे ली जाती है। १—जिस स्थानसे वह खोदकर निकाली गयी हो उस स्थानके गड्ढे की नाप लेना। किसी भी स्थानसे खोदकर उसकी ढुलाई होनेके पश्चात् फरोंमें उसकी नाप निकालना। इनमसे पहिले प्रकारमें यदि गडढे की जगह समथल हो तो लम्बाई चौड़ाईकी औसत तथा ऊँचाईकी औसतका गुणाकार कर नाप निकाल ली जाती है। पेशराज-बेलदार लोग इसप्रकारकी नापके समय आँखोंम धूल झोंका करते हैं। ये खुदाईके लिये पहिलेही ऐसी जगह चुन लेते हैं जिसके बीचमें गड्ढा तथा चारों तरफ उभार हो। इससे उन्हें ऊँचाईकी नाप मुफ्त मिल जाया करती है। इससे बचनेका सर्वोत्कृष्ट मार्ग या तो स्वत ही जमीनकी खुदाईका स्थान निर्धारित कर देना है या नपाईके समय स्वेच्छानुसार स्थान चुनकर उसपर ढीमें रखते हुए भूमृष्ट भागकी परीक्षा कर उसकी नाप लेना है। दूसरे प्रकारमें मिट्टीकी पोलाई ध्यानमें रखते हुए १४ इञ्च ऊंचाई के फरेको १२ इञ्च गिनते हैं। बालू कठोर मोरम, चुनकङ्कड़, गिट्टी आदिकी नाप १३ इञ्च पकड़ी जाती है।

कामकी नाप

नींव या बुनियादकी नपाई तदनुपङ्क्तिक जड पदार्थोंका न्यूनाधिक्य देखते हुए उसके अनुसार विभिन्न प्रकारसे होती है। मजदूर लोग मिट्टी और नरम मोरमको प्रायः एकही श्रेणीमें गिनकर दोनोंका काम एकही भावमें करते हैं। इस्टिमेटमें नींवकी चौडाई जितनी पकडी गयी हो, उतनी चौडाई नापमें भी पकडनी चाहिये। कामकी सहूलियतको देखते हुए ठेकेदार यदि अधिक चौड़ाईके गड्ढे खोदे तो उसकी जिम्मेदारी मकानमालिकपर नहीं रहती। नींवसे निकली हुई मिट्टी जितनी दूर तक ढोकर डालनी हो, उसका उल्लेख स्पष्टरूपसे करारनामे में लिखा हुआ होना चाहिये। सरकारी काममें १०० फुटकी लम्बाईतक की ढुलाई उसी दरमें समझी जाती है। किन्तु शहरोंके काममें ५५ फुट की दूरीतक उसी हिसाबमें ढुलाई करना मजदूरोंको भारी कहरसा मालूम होता है और वे नाक-भौ सिकोड़ने लगते हैं। नींवमें मिट्टीके नीचे यदि मोरम मिल जाय तो मालिकके कहनेसे उसे निकालकर अलग ढेर कर देना भी इसी दरमें गिना जाता है। गड्ढेकी गहराई यदि स्थान स्थान-पर पृथक् हो तो ऐसी हालतमें तीन स्थानकी ऊँचाई लेकर उसकी औसत निकालते हुए एक निश्चित ऊँचाई स्थिर कर ली जाती है। नींवकी खुदाई करते समय दोनों ओरके किनारोंको ढहनेसे बचानेके लिये उसके भीतर जो लकडीके चाण दिये जाते है, उनका सारा खर्च ठेकेदारके जिम्मे उसी हिसाबमें गिना जाता है। नींवमें यदि अकस्मात् पानीका सोता मिले तो उस हालतमें पानीकी निकासीका खर्च मकानमालिकको सहना पडता है।

यदि केवल नींवकी खुदाई करनेका काम बेलदारको दिया गया हो तो उस दशामें उक्त विधानानुसार आँके हुए पेन्देमें सब नाप गुनिये तथा सूत लगाकर की जाती है।

कॉंक्रीटकी नपाईमें भी यदि मालिकने इस्टिमेटके अतिरिक्त अधिक चौड़ाईके गड्ढे खोदनेकी आज्ञा न दी हो तो उसकी चौड़ाई इस्टिमेटमें उल्लेखित ही निर्धारित की जाती है।

गड्ढेकी गहराईके ½ या ⅓ जैसे किसी भी गुणकमें कॉंक्रीट की भराई हुई तो कॉंक्रीटकी नाप पृथक् लेनेका कोई प्रयोजन नहीं होता। केवल गड्ढेकी नापको उस गुणकसे गुणाकर देनेसे ही कामकी नाप निकल आती है।

कॉंक्रीटकी ऊँचाईकी नाप कॉंक्रीटके शिरोभागसे जमीनके पृष्ठभाग तककी नाप लेकर उसे गड्ढेकी कुल गहराइमसे घटादेनेसे ही निकल आती है। नींवकी जमीनके पेटेमें हुए बन्धाऊ काम की नाप कॉंक्रीट तरह ही होती है।

चौकीके पटाव यदि गढ़ाऊ पत्थरके हों तो उनकी नाप वर्ग फुटमें लेनेकी परीपाटी है। सरकारी कामोंमें मढाऊ गढाई किये हुए पत्थरोंकी नाप घनफुटमें लेते हैं। किन्तु जनसामान्य कामोंमें यह नाप पृष्ठभागके वर्गफुटके क्षेत्र फलसे निर्धारित की जाती है। इसमें ८ वर्ग फुटका १ गज पकड़कर प्रतिगजके हिसावसे गढाई या गढाई-जुड़ाईकी नापका दाम निश्चित किया जाता है।

आठ इञ्च तककी ऊँचाईके छोटे कोण तथा एक मुँहे-दोमुँहे हेदरकी गढ़ाईका भाव नगके हिसावसे होता है। इससे बढे कोण वर्गफुट के हिसावसे गढ़ाईके क्षेत्रफलसे गिनते हैं। यही प्रणाली कङ्गनी और आर्चकोणकी नापमें अङ्गिकार की जाती है।

दीवालकी नाप लेते समय लम्बाईकी मध्यरेषाकी नाप × चौड़ाई × ऊँचाइका गुणाकार कर घनफुटमें निकालते हैं। दीवालोंकी नापसे खिड़कियाँ-दरवाजे इत्यादि पूर्णरूपसे घटा देते हैं। अल्मारियोंका घटाना करारनाम पर अवलम्बित रहता है। तथापि यदि अत्यन्त थोड़ी १।२ ही अल्मारियाँ हों तो वह घटा दी जाती है। खिड़कियाँ, दरवाजोंके ऊपरकी छावन इत्यादिकी नाप हिसावमें नहीं ली जाती।

ईटाकी ९ इञ्ची पड़दियोंकी नाप सरकारी तौरसे घनफुटहीमें लेते हैं। घरू कामोंमें प्राय वर्गफुटके हिसाबसे ही इसकी गणना करते हैं। घनफुटमें लेने पर १४ इञ्ची बन्धाऊ कामकी अपेक्षा उसका दर थोडा अधिक होता है। क्योंकि उसके प्रीत्यर्थ अभङ्ग ईंटे ही प्रयोगान्वित होते और कामको देर लगती है । ४॥ इञ्ची पढदियोंकी नाप वर्ग फुटमें ही लाती तथा उसमेंसे दरवाजे खिडकियाँ इत्यादि की नापको घटा देते है।

दरवाजे, खिडकियाँ इत्यादिकी सतहोंमें प्रयोगान्वित हुई लादी-की नाप वर्ग फुटमे पृथक् लेनेका नियम है । उसी प्रकार जमीन पर की लादीकी नाप भी निकाली जाती है। दीवालकी नापमेंसे दरवाजे और खिडकियोंकी नापको घटाते हुए चौखटके भीतरी भागकी नपाई होती है । दरवाजे और खिड़कीयोंकी नाप लेते हुए उसी प्रकार अर्थात् पल्लोंकी नाप ली जाती है। उसमें चौखटकी नाप नहीं पकड़ी जाती । इस कार्यका वर्गफुटके हिसाबसे जो दर निश्चित हुआ हो, उसीमें कड़ी, कुन्दे, कब्जे, सिटकिनी चौखटका समावेश हो जाता है। उनके पृथक् दाम नहीं देने पडते । खिडकियोंके छड़ खिडकियाके दरमें शुमार होते हैं।

खिड़कियाँ और दरवाजे उठाकर यथास्थान गुनियेमें खडे करनेमें पेशराजोंका यथेष्ट समय व्यय होता है। अत यदि यह कार्य मजदूरीके ठेकेसे दिया गया हो तो उस हालतमें उनकी गुर्राहटसे बचनेके लिये पहिलेहीसे करारनामे में इस प्रकारकी शर्त्त होनी चाहिये। यदि वह न की गयी हो तो उस हालतमें प्रति नगके पीछे ४ आने अतिरिक्त मजदूरी देनी पडती है। बिना देहलीके दरवाजोंकी बाहोंके नोक नीचे कॉक्रीट या बन्धाऊ काममें जडनेमें विशेष मेहनत होती है। अत उन्हें खड़े करनेकी मजदूरी प्रति नगके हिसाबसे ८।१० आने तक दी जाती है।

खिडकियों और दरवाजोंके ऊपरकी कमानको नापनेके लिये कमानके दर्शनी भागके मध्यमें गोलाकार लम्बाई नाप ली जाती

तथा उसे दीवालकी चौड़ाई तथा कमानकी मोटाईसे गुणा देकर घन फुटमें सम्पूर्ण नाप निकाल ली जाती है। उसका दर पृथक् होता है। किन्तु वह काम दीवालकी नापसे बाद देना पड़ता है। गूँगी कमान (relieving arch) खडी करनेके लिये कलबुत नहीं भरना पड़ता। अत: उसका हिसाब प्रतिनगके हिसाबसे चार-आठ आने अधिक रखकर दीवालके हिसाबमें समाविष्ट कर दिया जाता है।

खिडकियों, दरवाजों तथा अल्मारियोंपरके छावनोंकी नाप घनफुटमें निकाली जाती है। यदि यह कार्य मजदूरीके दरसे दिया गया हो तो उस दशामें लौह-सगठित कॉंक्रिटकी छावनें पेशराज द्वाराही भरवाई जातीं तथा प्रति नगके हिसाबसे उसकी मजदूरी ४-६ आने अधिक पकड़ कर सम्पूर्ण छावनकी नापको दीवालकी नापमे ही सयुक्त कर दिया जाता है।

गिलावा:—गिलावेकी नाप वर्गफुटमें लेनकी परिपाटी है। यदि दिवालके एक ही ओर गिलावा हो तो खिडकियों और दरवाजोंकी नाप घटा नहीं देते। परन्तु उसके ऐवजमें पल्लोके पार्श्ववर्त्तीय तथा शिरोगत भागोंमें दीवालोंकी मोटाईके बराबर जो गिलावा किया जाता है उसकी नाप नहीं ली जाती तथा दोनों ओर गिलावा होनेसे एक ओरकी नापमें दरवाजे और खिडकियोंकी नाप घटा दी जाती है।

पुराने मकानोंकी खरीद
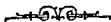
परिशिष्ट—आ

प्राय: यह देखा गया है कि, कभी-कभी बने बनाये पुराने तैय्यारी भवन लेना भी विशेष लाभजनक होता है। इसके कारण अनेक हैं। जिनमेंसे प्रमुख कारण ये हैं कि, एक तो उस भवनकी वस्तुत स्थिति,-जहाँ पर वह बना होता है, उस स्थानका महत्त्व

खरीददारके सन्मुख स्पष्ट रहता है। दूसरे उससे यह अन्दाज लगाया जासकता है कि, उसे खरीदनेसे अधिकसे अधिक कितना किराया उठ सकता है। इन दोनों बातोंको देखते हुए उसमें लगाई जानेवाली पूँजीका भी निश्चय किया जासकता और यह मालूम किया जा सकता है कि, कितनी पूँजी खरीदी और मरम्मतमें लगानेसे हानि नहीं हो सकती। इसके अतिरिक्त तैय्यारीभवन खरीदनेसे नींवसे लेकर ऊपरतक भवनको खडा करनेमें जो समय-की हानि और परिश्रम करने पडते है, वे बच जाते हैं। नया भवन बनवानेमें एकबार लगाया हुआ हिसाब गलत प्रमाणित होकर अधिक खर्च लगनेकी सम्भावना होती है। पुराने तैय्यारी घरको लेनेसे इसका किञ्चित् भी भय नहीं रहता। केवल एकबार निश्चित रकम गिन देनेसे ही सारी झञ्झटोंसे छुट्टी मिल जाती है।

किन्तु फिर भी जिसमें अमृत है उसीमें विष है, जिसमें लाभ है उसीमें हानि है यह प्रकृतिका एक मात्र सर्व्वव्यापी वैचित्र्य है। उसीके अनुसार तैयारी पुराने भवनकी खरीदीमें जैसे उक्त लाभोंकी सम्भावना होती है उसी प्रकार उसमें हानियोंकी भी बहुतेरी गुञ्जाइश रहती है। उदाहरणार्थ, सर्व्वप्रथम इच्छा-नुकूल आवश्यकता और योजनाके अनुसार तैय्यारी घर मिलना ही असम्भव है। जिसके कारण भाग्यसे जो पल्ले पड़े उसीमें सन्तोष करना पड़ता तथा आगे पीछे परिवर्त्तन एवम् सशोधन (Additions-Alterations) करने की ठरनने पर इच्छा-नुसार व्यवस्था नहीं होने पाती। उसमें व्यय भी अधिक होजाता है और कार्यमें एक-एक नयी विघ्न-बाधा खड़ी होजाती है। इन नयी विघ्नबाधाओंके भी कारण बहुतसे है। प्रथम कारण तो यह है कि, तैय्यारी घर लेनेसे उसमें लगे हुए माल-मसाले की श्रेणीका ठीक तौरसे पता नहीं लगता। दूसरे अधिक बरसोंतक भार सहन की हुई उसकी नींवके सन्निकट नया बन्धाऊ काम करनेसे प्राचीन धँसी हुई नींवसे और उससे सम्यक् प्रकारेण जोड़ नहीं बैठता। पुराने के साथ नया काम खडा करनेसे उसम

दरारें पड़नेका भय होता है। अतिरिक्त इसके सबसे भारी धोखा होता है पुराने घरमें लगी हुई लकड़ी तथा वन्धाऊ काममें लगे हुए मसालेकी पहिचाननेमें। पॉलिश और रङ्गलेप इत्यादिके सहारे उनका अन्तरङ्ग छिपानेकी चेष्टा की जाती है। आजकल इस प्रकारकी धोखा धड़ीका व्यापार धूम धड़ल्लेसे होरहा है। लोग पुराने एवम् जीर्ण-शीर्ण घरोंका तकलादी जीर्णोद्धार करा-कर तड़क-भड़क बढाते हुए एकके आठ रुपये आँखके अन्धे, गाँठके पूरे लोगोंसे वसूल कर लेते हैं।

ऐसे घरोंमें पहिले तो १।२ बरस तक उतने दोष नहीं दिखलायी देते। जिनके कारण ठग विक्रेताओंकी खूब बन आती है। किन्तु पीछे! वही करमपर हाथ!! और आठ-आठ आंसू!!!

इन सारी बातोंकी ओर ध्यान रखते हुए पुराना भवन खरीदते समय निम्न लिखित बातोंकी ओर ध्यान देना अनिवार्य है—

१ पहिले तो यह मालूम कर लेना चाहिये कि, मकान कितना पुराना और कबका बना है? १०१५ वर्षके भीतर बने हुए मकान के छप्पर लग्घी, पकड़ इत्यादिमें व्यवहृत हुई लकड़ी किसी प्रकार यत्किञ्चित् भी झुकाव होना अच्छा नहीं। घरकी आयु न जाननेपर भी ५० वर्षसे अधिक पुराना तथा आधुनिक समयका घर छिपा नहीं रहता। प्राचीन पद्धतिके घरोंमें चौकीके पत्थर बड़े और मठाऊ व्यवहृत होते थे। उस समयकी दीवालें विशेष-रूपसे मोटी तथा चन्द्रकेदार हुआ करती थीं। लकड़ी प्रयोग खुले हाथोंसे होता था। स्तम्भ ७×७" से कम नाप के नहीं होते थे। आजकल ४×४" या ५ ×५ आकारसे अधिक बड़े स्तम्भ दो मञ्जिलके घरोंमें भी नहीं मिलते। पहिले काढियाँ और धरन तक कोदीपर न बैठाते हुए समथल बैठायी जाती थीं। पहिले खम्भोंकि नीचेकी कुर्सियां बढ़ियाँ पत्थरकी और नकाशीदार मठाऊ गढ़ाईकी होती थीं। आजकल सतहमें एक समथल सिलीसी दी जाती और उसपर खम्भा खड़ा किया जाता है। प्राचीन कालमें धातुवर्गमें लौहकी अपेक्षा ताम्रका अधिक व्यवहार होता था। यह सब बातें

घरको किञ्चित् ध्यानपूर्वक देखनेसेही ज्ञात हो सकती हैं। यदि प्राचीन पद्धतिका भवन होगा तो उसकी नींवकी मजबूतीके सम्बन्धमें कोई शङ्काही न होगी। किन्तु अन्य बातोंके सम्बन्धमें खास कर जमीनके नीचेवाले नोनेकी जाँचकर लेना अत्यावश्यक है। प्राचीन समयमें व्यवहृत जलकी निकासीके लिये मोरियोंको यथेष्ट ढाल देकर उसे दूरतक निकाल लेजानेके सम्बन्धमें दुर्लक्ष्य किया जाता था। पानीकी रुकावट आदि जाननेकी कोई व्यवस्था नहीं होती थी। परिणाम यह होता था कि, वह पानी आसपास भरता रहता था। उस दशामें यद्यपि चौकीके ऊँचे होनेके कारण उसे प्रत्येक रूपसे तात्कालिक बाधा नहीं होती थी तथापि दीवालोंमें नोना लगता और दीवालसे तद्रूप हुए खम्भोंके पेन्दे सड जाते थे। इनके सडनेसे उनके आधार पर रहनेवाले भवनके शेष भागका अधिकाँश रूपसे सम्भवनीय होता है। दीवालोंमें तो पहिलेहीसे नोनेकी भरमार होती है अत वह खम्भोंकी सहायता करनेमें नितान्त असमर्थ होती है। इसलिये स्पष्ट है कि, प्राचीन घराको खरीदते समय नोनेकी जानकारी कर लेना अत्यावश्यक ओर आद्य कर्त्तव्य है।

२ उसके पश्चात् कुछ दूरीपर खडे होकर मार्मिक रूपसे यह देखलेना भी आवश्यक है कि, भवनकी सारी दीवालें ऊपरसे नीचे-तक गुनियेमें सो हैं। यह बात आँखासे भली भाँति देखी जा सकती है। यदि उसमें कुछ सन्देह होजाय तो गुनिया लगाकर तत्क्षण उसकी जाँच कर ले। यदि जाँचमें १२ फुट ऊँचाईमें एक इञ्चसे अधिक-फर्क मिले तो तत्काल उसे प्रतिकूल लक्षण समझना चाहिये। दो इञ्चसे अधिक फर्क होनेसे निश्चयही उसे धोखेकी जड़ समझ लेना चाहिये।

३ इसी प्रकार कडो-पटाव की परिक्षा करलेना भी आवश्यक है। धरन, खम्भे तथा लग्घियोंको स्थान-स्थान पर भी हथौड़ी चलाकर देखलेना चाहिये। भद्दा या भद्दा आवाज निकलनेसे लकडीम घुन लगनेका तत्क्षण ज्ञान होजाता है।

४ तदुपरान्त छप्पर। इसे प्रथमतः बाहर दूरपर खडे होकर देखलेना चाहिये। उसके पृष्ठ भागपर कहीं ऊँचा-खाला नहो तथा रीढकी सूतमें हो तो उससे उसके अच्छी दशामें होनेका अनुमान निकाला जाता है। जिस स्थानपर दीवालोंपर छप्पर अवलम्ब लेता है वह स्थान भीतरबाहरसे खूब होशियारीसे देख लेना चाहिये। छप्पर यदि अन्य किसी स्थानसे चूता हो तो वह विशेष आक्षेपार्ह नहीं है। किन्तु यदि किसी समय वह दीवालपर चुआ हो और पीछेसे उसकी दरज बन्दी की गयी हो तो भी उससे दीवालके नष्ट होनेकी सम्भावना होती है। रङ्ग यदि पुराना हो तो उसपर उठे हुए धब्बे तथा होनेसे फूली या पपड़ी छोडी हुई दीवालसे यह बात तत्क्षण पहिचानी जा सकती है।

५ पुराने घरोंके खरीदनेके पूर्व दीवालोंकी दरारोंका अनुसन्धान करना ही भी आवश्यक है। खासकर दरवाजे और खिड कियोंके ऊपरकी कमानोंको तो अवश्य ही देख ले। यदि उनमें केवल दरारेंही हो तो विशेष हानि नहीं। किन्तु यदि उनके कारण दीवालोंमें झुकाव पैदा हो गया हो,-खास कर बाहरकी ओर तो ऐसी परिस्थितिमें उस घरको खरीदनेका विचारही छोड देना चाहिये।

६ लकडीके जीनोंकी मजबूती उसपर चढते समय जो ध्वनि प्रस्फुरित होती है उससे तथा कठघरोंकी सुदृढतासे जानी जाती है।

७ गच अर्थात् छत चूता है या नहीं इसकी परीक्षा दीवालोंपर पड़े हुए धब्बोंसे हो सकती है।

८ मोरियाँ (खासकर ऊपरके मञ्जिलकी) कहीं बन्द तो नहीं हो जातीं इसे देख लेना चाहिये। यदि ड्रेनेज किया गया हो तो उसमें गलीट्रेप और वातनलिका है या नहीं इसकी भी जाँच कर ले।

९ आरोग्यकी दृष्टिसे खरीदे जानेवाले मकानके आसपासकी जमीनका उतार देख लेना चाहिये। इससे बर्साती पानीकी

निकासीका ज्ञान हो जाता है। कहीं-कहीं दो घरोंकी मध्यवर्तीय जमीनपर कूटाकर्कट पड़ा रहता और उसपर पानी गिरकर वह जहाँ तहाँ भरता रहता है। इससे मकानकी नींवको भारी आघात पहुँचनेका भय रहता है। अतः इसे दृष्टिकोणमें रखते हुए मकान की जमीनपर नङ्गे पैरसे चलकर देख ले कि, कहीं विशेष ठण्ढी तो नहीं है। जमीनका अत्यधिक ठण्ढापनही उसमें पानी भरनेका सूचक है। सन्निकट भवनके दातेकी जमीन, खरीद किये जाने-वाले भवनकी चौकीसे ऊँची या एकही सतहमे हो तो बर्सातमें नोना लगनेका अन्देशा रहता है। व्यवहृत तथा शौचकूप इत्यादि का जल सन्निकटस्थ स्थानमें भरते-रहनेसे उसका आरोग्यपर बहुत बुरा परिणाम होता है। अतः उसकी भी जाँच कर लेना आवश्यक है। उससे निसृत होनेवाली दुर्गन्धि निरन्तर फैलती रहनेके कारण घरके निवासी उसके अभ्यस्तसे हो जाते है। किन्तु वह बाहरी मनुष्योंको तत्क्षण खटकती और घरके सारे प्राणियोंका आरोग्य नाश करती है।

१० उसी तरह पीनेके जलकी व्यवस्था देखना भी आवश्यक है। इसका अर्थ यह नहीं कि, घरके अगल-बगल या मध्यमें मीठे पानीका कुआ रहनेसेही काम बन जाता है। अपितु यह देख लेना चाहिये कि, वह शुद्ध और आरोग्यसवर्धक है या नहीं। कुएँके पास शौचकूप इत्यादिका पानी भरना या घूरा अर्थात् कतवार खाना होना भयङ्कर तापदायी और आरोग्यकी दृष्टिसे विघातक है।

११ उक्त दस महत्वपूर्ण प्रश्नोंके अतिरिक्त मकान खरीदते समय इस बातकी जाँच कर लेनी चाहिये कि उस मकानकी जमीन किसीकी निजी मिल्कियत की तो है? यदि नहीं तो वह किन शर्तोंपर उसके पास आयी है। मुद्दती किरायेपर दी हुई होनेसे उसकी मोहल्लत कमसे कम ९९ वर्षकी होनी चाहिये तथा उसका भाड़ा हिसाबसे अधिक न होना चाहिये।

१२ इजमेण्टकी धाराओंके अनुसार उसके सारे हक सुरक्षित हैं या नहीं, इसकी जाँच कर लेनी चाहिये।

१३ अन्तमें जिस बस्तीमें खरीदा जानेवाला घर हो, वहाँ मकान किरायेके दर क्या हैं, उनके हिसाबसे खरीदे हुए मकानसे कितना किराया उतर सकता है, उसकी वार्षिक किरायेकी आमदनीमेंसे ३ महिनेकी आमदनी, मरम्मत म्युनिसिपैलिटी तथा सरकारी चुँगीके लिये निकाल कर कितनी बचत हो सकती तथा उसपर कितना व्याज बैठ सकता है इत्यादि बातोंकी ब्यौंत लगाते हुए उस हिसाबसे मकानका दाम कूतना चाहिये।

कामकी मजूरीके दर

परिशिष्टः—ड़

अन्तम गृहरचनाकायम मजदूर तथा कारीगरोंके छोटे-मोटे कामकी कितनी मजदूरी दी जा सकती है, इसका अन्दाजी ब्यौरा नीचे दिया है। इसमें सन्देह नहीं कि, यह दर अन्दाजी और स्थूल हैं तथा इनमें देश-काल पात्रको देखते अशात्मक रदोबदल हो सकते हैं। तथापि सरसरी दृष्टिसे विचार करनेपर इस अन्दाजमें उल्लेखनीय फर्क कदापि नहीं हो सकता।

१ खुदाई

सूखी हुई खेवार मिट्टी	८ आने	प्रति ब्रास
चिकनी, गीली	१२	„
सेलडी	१ रुपया	„
नरम पीली	१० आने	
कठोर	१४ „	„
नरम मोरम	१४ „	„

कठोर	१॥ रुपया प्रति ब्रास
मिट्टी मिश्रित मोरम	२ ,, ,,
नरम चट्टान	४ ,, ,
कठोर ,, सुरङ्गलगाकर	६ , प्रतिब्रास बढ़ीताय शादमें
,, ,, ,,	८ ,, ,, ,, छोटी ,,
,, ,, छेनीसे काटकर	६० ,, प्रति ब्रास

२ ढुलाई

० से ५० फुट	२ आने	आदमियोंसे ढुलाई
५०-१०० ,	३ ,,	
१००-२२० ,	४ ,,	
६६ ० फुटसे ३ फर्लाङ्ग	१॥ रु	गदहों या खचरोंसे ढुलाई
३ फर्लाङ्गसे १ मील	२॥ रु	

इससे अधिक दूरी की ढुलाई गाड़ीसे किफायतमें पड़ती है।

३ कान्क्रीटकी भराई

कांक्रीट मिलाना और फैलाना	३॥) रु	प्रति ब्रास
,, , , और कूटना	४) ,,	, ,,

४ गढ़ाईका काम

६ इञ्ची टुकड़े गढ़ना (टेढा तिर्छापर निकालकर १ इञ्ची फलासीकी गढ़ाई)	१॥ रु प्रति सौ र. फुट
८ इञ्ची	० ,, सादी गढ़ाई पिटाऊ
६ ′×९ ×६ ″ कोणकी गढ़ाई	१ रु० १० नग
८ ×११ ×० ″ ,, ,,	१ ,, १६ ,,
१२ ×१८ ×१२″ कोणकी गढ़ाई	१ रु० ४ नग
शहाबादी लादी गुनियेमें ,	१॥ ,, प्रति ब्रास
हेदर पक फुँदा	१॥ , १०० नग
,, दुफुँदा	२। ,, ,, ,,
नरम पत्थर मढ़ाऊ गढ़ाई ८ व० फु	३॥ , प्रति गज
,, ,, चलतू मढ़ाई	३ , ,

सुपर माठ	५ प्रति ग्रास
सुपर माठ गढाई-जुडाई	७ ,, ,
चलतू माठ ,, ,,	४ ,, ,,
पिटाऊ ,, ,,	३ ,, ,,
शहाबादी लादीमें चौंप, गोलचियाँ जड़ना, मोटाई १॥ इञ्ची	१ आना एक रनिङ्ग फुट

५ जुडाऊ काम

नींवका बिना स्तरका बन्धाऊ काम	३॥ रु प्रति ग्रास
चौकीका बन्धाऊ काम, आसार १ फुट (अ) सामने शिलाखण्ड पीछे अनगढ पत्थर	७ ,, ,,
(आ) भीतर बाहर अनगढ पत्थर ..	५॥ ,, ,

चौकीके ऊपरका बन्धाऊ काम

(अ) कली काम जुड़ाई-गढाई १॥ फुट आसार	११ ,
(आ) बाहर सिली भीतर अनगढ पत्थर	१०
(इ) दोनों ओर स्तरहीन बिना कलीका	७॥
(ई) एक ,, कली दुसरी ओर ,,	९ ,
(उ) ,, ,, , ,, १। फुट आसार	९॥ ,,
पत्थर मिट्टीकी जुडाई १॥ , ,	८॥ ,,
अनगढ पत्थरकी ,, ,, ,, ,,	७। ,,
ईंटोंका काम १॥ ईंटका आसार	८ , प्रति ग्रास
, २ , ,,	७ ,, ,,
, , १ ,, ,,	१० ,, ,,
२ ईंटका (४॥) १०० वर्ग फुट बागवाद देकर	४॥ ,, ,,
कङ्गनी मठाऊ, पत्थरकी गढाई-जुडाई सहित	२॥ , १ र० फुट
पिटाऊ ,, ,, ,, ,, ,,	१ ,, १ ,, ,,
ईंटकी मोटाईके प्रति इञ्चके हिसाबसे (गिलाये सहित)	१ आना प्रति फुट
शहाबादी लादी सादी गढाई-जुड़ाई, मुरजा सहित	१॥ रु० प्रति ग्रास

शहाबादी लादी रुमाली गढाई जुड़ाई और दरजोसहित	५ रु०	प्रति ग्रास
पेटेण्ट स्टोनकी फर्शबन्दी	५॥ ,,	,,
पॉलिश शहाबाद लादी रुमाली	९ ,	,,
सङ्गमरवर, जिलोदार (पॉलिश सहित)	१६ ,	,,
जिलोदार कौवेलुओंकी ,, ,	१० ,,	,,
कपड़ी फर्शी (Mosaic)	१४ ,,	,,
मोरमकी जमीन	७॥ ,,	,
खिड़कियाँ तथा दरवाजेके ऊपरकी ईटोंकी कमानें	१॥ से २ रु	,
पाटनके गर्डरकी मध्यवर्तीय कमानको उठाना	६ से ८ रु	प्र सौ व फु-
सलोट सि० का० के छद झुकाना	२॥से ,, ,	,, ,, ,, ,,
,, , छावनकी भराइ	५ आने	नगको
सिमेण्ट कांक्रीट मिलाना, फैलाना, कूटना (बड़े प्रमाणमें)	६ रु	प्रति ग्रास
सिमेण्ट कांक्रीट मिलाना, फैलाना, कूटना (छोटे प्रमाणमें)	७ रु०	,, ,,
दरजें पत्थरके बन्धाऊ कामकी सलईदार	१४आ से१रु	,,
, , कटाऊ	७ रु०	,
,, ईंटेकी सलईदार	१। ,,	,,
गिलावा पत्थरके बन्धाऊ काममें	३॥ ,	,,
,, ईंटेके ,, ,	३। ,,	,,
रफ कास्ट	२॥,	,,
बड़ी कमान ६ फुटके गालेतक	१२ आने	प्रति फुट

६ बढई काम

दरवाजेकी चौकटें सादी तैय्यार करायी	१॥ रु
,, ,, कलमदानकी छटयुक्त	७॥ ,
खिड़कियोंकी ,, सादी ,,	१ ,,

खम्भे, लग्घी, रन्धाईकर खड़ी करना	१॥ आना र फुट
कड़ी पाटकी पाटन, कड़िया, अन्धेरियों और किलचियोंसहित	१२ रु प्रति ग्रास

दरवाजे, खिड़कियोंके पल्ले

विना पत्तेके	३ आने प्र व फु
पैनेलके (दोनो ओरसे)	७ ,, ,, ,,
,, ,, एक ओर पैनेल	६ ,, ,, ,,
कांचकी पैनेलके	७ ,, ,, ,,
घूमनेवाले वैनिशियनके	१४ ,, ,, ,,
पक्के ,,	६ ,, ,, ,,

अल्मारीके पल्ले बनाना

प्लायउडके तख्ते दे कर	६ ,, ,, ,,
रीपोंकी रुमालीदार जाली (Trellis work)	२ ,, ,, ,,
तसवीरों या कपड़ेकी सीलिङ्गके लिये लकड़ीका गलथा तैय्यार करना और जोड़ना १ इ चौड़ाई	१ आ र फु
लकड़ीकी प्लायवुडकी पड़ी	३ ,, प्र व फु
सागवानी तख्तपोशी परसे ठोकना	४ ,, प्रति ग्रास
,, ,, जीभीदार जोड़ बनाकर	६ ,, ,,
साधन या गुलेबन्द कैंची ११ फुट गालेतक	५ रु प्रति नग
एकस्तम्भीय ,, ,, ,,	६ ,, ,,
दो स्तम्भीय ,, ,, ,,	९ ,, ,,
छप्पर चद्दरदार पाटे और तरकोंकी जड़ाइ सहित	४ ,, ,,
,, मङ्गलौरी कवेलू	९ ,, ,,
छप्पर नलीदार कौवेलुओं और गोलतरकोंका	११ ,, प्रति ग्रास
सादी पानपट्टी तैय्यार करना और जड़ना	१॥ आना ,,

नकशीदार „ „ , २ से ६ „
जीनेका सादा चोसर १॥ रु , „
, घुमावदार ४ से ४॥ रु
जीनेका कठधरा सादा (लकडीके छड) २॥ आना प्रति वर्गफीट
„ नकशीदार (लोह छडोंकी जली ५ „ „ „
अनगढ लम्बी (आधार) स्तम्भकी
खडी कराई १॥ „ फीट

७ रङ्गलेप तथा छुवाई

ऑइल पेण्ट तीन हाथ (दीवालमें १। रु प्रति व्रास
„ लकडीको दो हात १ „ „ „
„ सफेदी „ , ५ आने ,
डिसेटम्पर , १० आने „ „

८ फुटकर

वालू चलाई १ रु० „ „
घानी भराई तथा पिसाइ ४ से ४॥ रु „ „
मङ्गरोला कवेलू बिछाई १४ आनेसे १ रु „ „
ढापकी गिलावेमें जुडाई ३ पैसे प्रति र फु
रिडकियोंमे कांज जडना
(केवल मजूरी ३ पैसे प्रति नग
जस्तेके चद्दरकी समथल पनालिया
तैय्यार करना ३ आने प्र र फु
„ नलिकाए तैय्यार करना ५ „ „ „
पुरानी चद्दरके छिद्र बन्द करना १। रु प्रति सेकडा

एक गाडीकी भार भराई

अनगढ पत्थर (टोंके) १२ घ फु से १५ घ फु तक
मोरम १६ „ „ २० „ „
फूटी हुई गिट्टी १५ „ , २५ „ „

मालूकी चालन	१५ „ , २० „	,
चूनापिसा हुई बोरोंमें	१० , „ ११½ „	„
मिट्टी	१८ „ , २५ „	,
घुनकङ्कड	१५ „ , २० „	„
पत्थरका कोयला	१८ „ „ २० ,	,
वालू	१८ „ „ २२ „	„
ईंटे अंग्रेजी		२५० नग
मङ्गरौली कौवेलू		„ „
„ छाप		१६० „
कटाऊ लकड़ी		१५ से २० घ फु
अनगढ		१५ „ „
नलीदार कौवेलू		७०० नग
लोह इत्यादि जड़ पदार्थ		¾ टन
सिमेण्ट		१२ से १५ बोरे
कोयला		३५ घ० फु०
वबूरकी लकड़ी सूखी		१५ मन
शहाबादी फर्शी १॥ मोटी		७० से ८० घ फु.

गणितकी सारिणीयाँ

लम्बाई निदर्शक सारिणी			जमीनका क्षेत्रफल जाननेकी सारिणी		
१ सूत	=	१/८ इञ्च	१ आना	=	१ फुट पौन इञ्च
१२ इञ्च	=	१ फुट	१६ आने ३३ फुट	=	१ जञ्जीर (पैमाइशी)
३ फुट	=	१ गज	३३ फु×३३फु १०८९ वर्गफुट	=	१ बीसा
६६६ „	=	१ फर्लाङ्ग	४० बीसा	=	१ एकड़
८ फर्लांग १७६० गज ५२८० फुट	=	१ मील	९ वर्ग फुट	=	१ वर्ग गज

लौह निर्म्मित छड तख्तियांका मोटाई जाननेकी तालिका	वजन निदर्शक सारिणी
२ आने = १ सूत १।८ इञ्च	५ तोले = १ छटांक
१६ आने = ८ सूत १ इञ्च	२ छटांक = १ आधपई
	४ ,, = १ पाव
	८ छटांक, ४० तोले = १ पौण्ड, आध सेर
	८० तोले, २ पौण्ड = १ सेर
	४० सेर = १ मन
	२८ मन = १ टन

पत्थरका कोयला, गर्डर इत्यादिकी तालिका	गिट्टी–बालू–चूना इत्यादिकी नाप
२८ पौण्ड = १ क्वार्टर	२५ घ० फु० = १ फरा
४ क्वार्टर, ११२ पौण्ड = १ हण्ड्रेडवेट	४ फरे, १०० घ० फु० = १ ब्रास
२० हं० वे, २८ मन = १ टन	

लकडीके पैमाइशकी सारिणी.

१४४ वर्ग इञ्च = १ वर्ग फुट	१२॥ घन फुट = १० मन
१७२८ घान इञ्च = १ घन फुट	८० मन, ५० घ फु = १ टन

सांकेतिक चिन्हः—

इञ्च " जैसे ४"

फुट ' जैसे १२"

वर्ग इञ्च ▭ ' जैसे ४ ▭' अर्थात् ४ वर्ग इञ्च

वर्ग फुट ▭ ' ११ ▭' ,, ११ वर्ग फुट

उपयुक्त सूचनाएं

मोटरखाना–साधी मोटर १० × १५ दीवालके भीतर ८ फुट ऊंची
लारी १२ × १८ " " ९ " "

परीक्षणार्थ नीचे घननेवाले तहखानेकी (Pit) नाप ७' × १ ६" × ३ ६' होनी चाहिये । लारीके लिये ९ तक लम्बाई रखी जाय । ऊपर १। से १॥ इञ्ची तख्तेका ढकन (पल्ला) रहे ।

बाडा चौडाई ९ फुट हो । बीचमें मजबूत और मोटा खम्मा गाडनेसे प्रत्येक पशुको ६ फुट जगह यथेष्ट हो जाती है । घोडेके लिये ८ फुटकी चौडाई रखी जाय ।

टेनिस का मैदान

सिङ्गल ७८' × २७' } अतिरिक्त इसके लम्बाइके ओर दोना छोरोंकी
डबल ७८ × ३६ } तरफ १०/१२ फुट तथा चौड़ाइकी ओर दोनों तरफ ६।६ फुट खुली जगह छूटी रहे ।

बैडमिण्टन कोर्टः—

सिङ्गल ४४' × १७
डबल ४४ × २०

अतिरिक्त इसके दोनों ओर कमसे कम ५।५ फुटतक तो अवश्यही खुला स्थान छूटा रहना चाहिये ताकि कुल जगह ५४ × १७ तथा ५४' × २०' रहे ।

बिलियर्ड टेबल १२' × ६'
सिङ्गल पलङ्ग ६' × ३' × ६ या अधिक

सङ्गमरमरको सफा करना'—दो भाग पापडखार और १।१ भाग क्रमश झाव ईंटे तथा खड़ियाका चूर्ण लेकर उसे चालनीसे चालते हुए पानी मिलाकर सङ्गमरमर पर रगडे और साबुनके पानीसे धो डाले ।

परिशिष्ट क

साधन सामग्री ।

पत्थर परिचय

पत्थर प्रमुखतया ४ वर्गोंमें विभक्त होते हैं ।

१ आग्नेय (इग्निअस) जिसमें वज्रपाषण (Basalt) काल-पाषाण (Trap) और शालिग्राम (Granite) की गणना होती है।

२ जलोद्भव (Aqueous) इसमें वालुकाश्म (Sandstone), चुनपत्थर (Lime stone) आते हैं ।

३ कीट पाषाण (Coral) म भूँगा (कोरल) शक्कर-पत्थर अथवा अस्थिपत्थर समाविष्ट होते हैं ।

४ विकृत (Metamorphic) जिसमें स्फटिकाश्म या मारबुल (Marble) चकमक (Flintstone), छापेका पत्थर (Litho stone) स्लेट इत्यादि आते हैं ।

इमारती कामोंमें व्यवहृत होनेवाले पत्थरोंका निर्वाचन करनेमें निम्नलिखित बातोंकी ओर ध्यान देना चाहिये—

१ पत्थरोंका स्वरूप या रङ्ग,२ उनका टिकाऊपन, ३ मजबूती, ४ कठोरता, ५ गढाइकी सुगमता १ पत्थरका रङ्ग सब जगह एकसा और समीपस्थ कार्यके अनुकूल होना चाहिये। उसमें कहींपर भी जल वायुके प्रभावसे विकृति उत्पन्न न हुई हो तथा वह पर्याप्त रूपसे पक्का हो। पत्थरके मूल रङ्गपर कहीं कालसे जल वायुके प्रभावसे कोई भी विभिन्न रङ्गके चिन्ह अथवा दाग और धब्बे न रहें। जिस पत्थरमें जलवायु शोषण करनेकी शक्ति होती है उस पर धूप, वायू तथा वर्साती जलस्थित पसिद्ध इत्यादिका असर होकर वह शीघ्र गल जाता है वह अनुपयोगी है । आघात और

सम्पीडन सहन करनेके लिये पत्थरमें कठोरता एवम् दृढताका होना अत्यावश्यक है। फिरभी वह कठोर होता हुआ चार्कीला (Brittle) न होना चाहिये। अत पत्थरोंका परीक्षण करते समय यह भी देखना आवश्यक है कि, उनमें उक्त गुणोंके अतिरिक्त गढाईके लिये पर्याप्त रूपमें लोच और नरमाई भी होनी चाहिये।

यदि पत्थर स्तरयुक्त श्रेणीका (Stratified) हो तो उसका क्षारवाला पेटा उसके उपर आनेवाला भारको गुनियेमें (At right angles) बैठाना चाहिये। यदि वह दर्शनी पृष्ठके समानान्तर खडे रुख लगाया जायगा तो खडी दाबके कारण उसके स्तर या सिल्लिया बाहर की ओर निकल जायँगी।

हथोडे चलाकर देखनेसे अच्छे पत्थरमें टङ्कारे की ध्वनि स्पष्ट रूपसे प्रस्फुरित होती है। यदि किसी पत्थरसे भद्दी या मद्दी ध्वनि निकले तो उसे निरुपयोगी, फटा हुआ या सम्यक्रूपसे पकसा नहीं है ऐसा समझकर कामसे खारिजकर देना चाहिये।

ईंटे और खपडे

(Bricks and Tiles)

ईंटे प्रमुखतया तीन प्रकारके होते है। (१) ककइया अर्थात् जिनका आकार प्राय ५"×२¾×¾ होता है (२) देशी गुम्मा जो प्राय ८"×४×१¾ आकार के होते हैं और (३) तीसरा प्रकार नम्बरी इटोंका जिनका आकार प्राय ९ ×४½×२½ निश्चित है। देहला पाटणा आदि भागोंम १०"×५"×३ आकारकें भी नम्बरी ईंटे होते हैं।

उत्तम ईंटे सर्व्वदा सीदे, सधे एवम् चौकार होते हैं। उनकें समस्त कोर अखण्डित सरल तथा कोण सधे-सरल और गुनियेमें होते हैं। ये सम्यक्रूपसे पके हुए तथा चटकन एठन एवम्

फुटकियोंसे, रहित होते हैं। रङ्गकी दृष्टिसे बढ़ियाँ ईंटेकी पहिचान यह है कि वे गहरा लाल किन्तु कुछ नीलापन लिये रहते हैं। उनका बाह्यभाग अत्यन्त चिकना और साफ रहता है। तथा अत्यन्त कठोर एवम् ठोस अनुभूत होते हैं। ऐसे ईंटोंको बजानेसे उनमसे धातु जैसी टङ्कार प्रस्फुरित होती है। जलमें प्रायः १६ घण्टे तक डुबा रखनेसे उनके स्वाभाविक वजनमें १६ से २० तक प्रति शतसे अधिक वृद्धि नहीं होती। उत्कृष्ट ईंटोंकी सपीडन शक्ति ६० से १०० टन तक प्रति वर्गफूटके हिसाबसे होती है। ईंटोंमें कुछ चूनेका या कङ्कडोंका अंश हो तो यदि उन्हें जलमें डुबा दिया जाय तो उनके अन्तस्थ भागमें रहे हुए कङ्कड खिलने लगते हैं और ईंटे फट जाते हैं।

भवन निर्म्माणके कार्यमे ईंटोका व्यवहार दीवाल आदि बनानेमें होता है। उसी तरह छत-पाटन इत्यादि कार्योंमें जिस मृत्तिकामय साहित्य विशेषका प्रयोग होता है, उसे पारिभाषिक भाषामें खपडे या कौवेलू कहते हैं। भवन निर्म्माण कार्यमें जैसा ईंटोका महत्व है उसी तरह खपडो अर्थात् कौवेलूका भी है।दोनोकी सृजनप्रणालीमें बहुत कुछ साम्य है। भेद कुछ होता है, तो वह केवल आकारमें।

उपयोग एवम् परिस्थिति भेदसे खपडोंके तीन वर्ग होते हैं। (१) छावनी अर्थात् छतके खपडे (२) मोरियो या नालियोंके खपडे तथा (३) फर्शी खपडे छावनके खपडे सादे-चिपटे, प्रयागी या कानपुरी, सियालकोटी, तथा मंगलोरी इत्यादि भिन्न नामसे मिलते हैं। नालियाँ या मोरियाँ दो प्रकारकी होती हैं। एक नितान्त मिट्टीकी वह छिद्रमय (Porous) रहती है तथा दुसरी चिनी मिट्टीकी जिलेदार (Glazed stone ware)। फर्शी खपडे चिपटे चौकोर, षट्भुज, अष्टभुज, तथा कतिपय भिन्न आकारके छोटे बडे नापके होते हैं।

चूना (Lime)

चूनेके कङ्कड दो रूपमें पैदा होते हैं। एक रूप तो पत्थरका सादृश्य रखता है। यह भूमिगत कङ्कडोंके स्तरमेंही केवल नहीं अपितु सङ्गमरवर, पोरबन्दर, शहाबाद पत्थरके रूपमें अथवा शङ्ख, सींप इत्यादि कीट रूपमेंही पाया जाता है। कोटा, कटनी मुर्नी दक्षिणशाहबाद, सोनके दहिने, उत्तरी पञ्जाब तथा ग्वालियरमें सबलगढ एवम् कैलारस आदिस्थानोंमे पत्थररूपमें पाया जाता है।

चूनेका दूसरा मूलरूप छोटे छोटे दानो एवम् कङ्कडोंका होता है, जिसे सर्वसाधारण लोक 'बिछुआ' कहते हैं। यह नदी नालोंके किनारों, पहाडी गुफाओं, खोहों एवम् तराइयों कम उवर भूमिखण्डों पर पाया जाता है।

इमारती कामकी उपयुक्तताके अनुसार चूनेके दो वर्ग किये जाते हैं। (१) तीक्ष्ण एवम् वायुस्नेही (Fat lime) और (२) जलस्नेही (Hydraulic) तीक्ष्ण अथवा वायुस्नेही चूनेमें विशेषता यह रहती है कि, वह पकनेपर उसपर पानी डालनेसे यह चटचट आवाज करके शीघ्र खौलने लगता और खिलकर चूर्णरूप बन जाता है। वह कर्बिकाम्लिक्म्ल (carbonic acid gas) संयुक्त होनेसेही घनीभूत दृढ [illegible] जहां [illegible] मिल पर्याप्तरूपसे मिलता नहीं वहां [illegible] कि [illegible] रहती है। इसमें थोडी ज्यादह [illegible] ने वह [illegible] जाता है और [illegible] होनेके का[illegible] है। उसके [illegible] १२ दिनमें [illegible] होता है।

जलस्नेही (Hydraulic) चूना पकनेपर जलसयोगके कारण आकस्मिकरूपसे नहीं खौलता तथा चट्चट ऐसा आवाजभी नहीं देता। इसके खौलनेकी गति अत्यत धीमी और इसका चूर्णका परिमाण भी थोडा होता है। वह पानीमेंही दृढ एवम् कठोर बन जाता है और १० दिनमें शीघ्र गतिसे नहीं अपितु १०।१५ दिनोंमें। उसको कर्बिकानिलसे कुछ भी फायदा नहीं होता।

वायुस्नेही (Fat) चूनेके कङ्कडमें रासायनिक रीतीसे मिली हुइ मिट्टी (Alumina) का अँश नितान्त न्यून अथवा अल्प होता है। इसके कारण यह जलस्नेही चुनेकी अपेक्षा बहोतही कम मजबूत रहता है। हम उपर एक जगह लिखही चुके हैं कि, यह कर्बिकानिलसे मिलनेसेही कठोर होता है। अत जहाँ जहाँ उसको कर्बिकानिलसे सयोग पानेका मौका नहीं मिलता--उदाहरणार्थ दीवालके भीतर तथा बुनियादमें-वहाँ वहाँ यह पर्याप्तरूपसे दृढीभूत नहीं होता। हाँ, अब यदि कृत्रिम उपायोंसे उनमेकी मृत्तिकाकी कमी दूर कर दी जाय तो यह जलस्नेही चूना बन जाता है और उसमें दृढीभूत होनेका गुण उत्पन्न हो सकता है। उदाहरणार्थ,- फुंके हुए वायुस्नेही (Fat) चूनेमें पर्याप्त प्रमाणमें सुरखी या अन्य तरहसे पकी हुई मिट्टी पिसनेके पूर्व मिल दिया जाय तो वह भी। जलस्नेही (Hydraulic) चूनेकी तरह अत्यत कठोर बन जायगा।

भवननिर्म्माणके कार्यमें वायुस्नेही चूनेका उपयोग पलस्तर (Plaster) मेंही अच्छी तरहसे होता है। अन्यत्र सभी कार्योंमें जलस्नेही अर्थात् हैड्रॉलिक चूना लगाया जाता है।

चूनेका गिलावा (Mortar)

बजरी अथवा सुर्खीको चूनेम मिलाकर जलके साथ पीसे हुए मिश्रणको पारिभाषिक प्रयोगमें ' गिलावा ' कहते हैं।

चूनेम मिलायी जानेवाली वालू अर्थात् बजरी कठोर, भारी

एवम् गरगरे रवेकी होनी चाहिये। उसमें धूल-मिट्टी अथवा फूटा कर्कटका रहना अच्छा नहीं। न किसी प्रकारके क्षारयुक्त पदार्थोंका सम्मिश्रणही होना चाहिये। प्रयोगमें लानेके पूर्व उसे भलीभांति जलसे धोकर अथवा उबाकर स्वच्छ कर लेना चाहिये। यदि बजरी अर्थात् बालूमें मलीनताका कुछ भी अंश शेष रह जाता है तो वह चूनेको पकडनेमें कृतकार्य नहीं होता। क्षारके वास्तव्यसे चूनेमें कुछ काल के उपरान्त नोना लग जाता है और सांधेपर क्षारके सुफेद दाग दिखलायी देते हैं।

जहां उत्कृष्ट बजरी अर्थात् बालूका अभाव होता है वहाँ उत्तम रूपसे पकी हुई ईंटोंका या खपडोंका चूर्ण उसके स्थानपर व्यवहृत होता है। इसीको पारिभाषिक प्रयोगमें सुर्खी कहते हैं। ईंटोंको अथवा खपडोंको पहिले भली भांति कूट पीसकर बारीक चूर्ण बना लिया जाता है। पश्चात् उसे चलनी द्वारा छान लिया जाता है कहीं ईंटोंकी सुर्खीके स्थानपर सिंडरका छना हुआ चूर्ण प्रयोगमें लाते हैं। उसमें ध्यान यह रखना चाहिये कि, उसमें कच्चा कोयले अथवा राखका सम्मिश्रण नहो। सामान्यत जलस्नेही (Hydraulic) चूनेका एक भागम डेढसे ढाई भाग तक पूरकद्रव्य (बजरी, बालू, सुर्खी, सिंडर आदि) इस हिसाबसे रखा जाता है।

Fat अथवा वायुस्नेही चूना सुर्खीका सम्मिश्रणसे अच्छी तरहसे जलस्नेही अर्थात् ठोस, मजबूत बन जाता है यह हम पहिलेही लिख चुके हैं। यदि सिर्फ बजरी अथवा बालूही मिलानेकी हो तो एक भाग वायुस्नेही (Fat) चूनेमें ढाइसे तीन भागतक बालू इस हिसाबसे सम्मिश्रण करनेसे फायदा होता है। क्योंकि बालूसे सम्मिश्रण होनेसे वह सच्छिद्र (Porous) बन जाता है और कार्बिकाम्लि शोषण करनेका मौका मिलनेसे वह कठोर एवम् ठोस बन जाता है।

गिलावा (Mortar) पीसनेसे दो कार्य सिद्ध होते हैं। (१) चूना तथा बजरी एकजी होते हैं और (२) चूनेमें पकनेपरभी कुछ कठोर दाने रहते हैं उनका पीसनेसे चूर्ण होता है। यदि वे

उस समय वैसेही रह जाय तो बन्धाऊ काममें लगानेके उपरान्त कहीं महिनेसे खौलने लगते और उन स्थानोंपर चूनेमें दरारें पड़नेकी सम्भावना रहती है।

चूना पीसनेका अत्यन्त सरल साधन 'चक्कस' होता है। इसका निर्माण समथल भूमिपर होता है। इस भूमिके उपर तलमें तथा ईर्द गिर्द पत्थरकी जुड़ाई करके कुंडलाकार नाली बनाने लगती है, जिसका अन्तर्गत भाग १० इच चौड़ा तथा १० इचसे १ फूटतक ऊचा रहता है। उस नालीमें ४॥ से ६ फीट तक व्यासका ७ से ९ इच तक मोटा एक गोलाकार पत्थरका चक्र-पाहिया (Roller) बैठ कर केन्द्रमें लोहे या लकडी का लट्ठा लगा
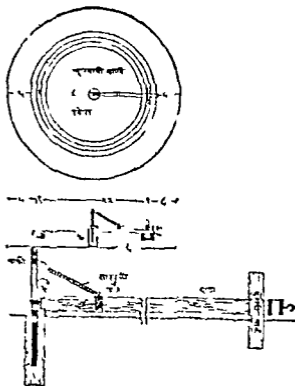
दिया जाता है। (देखिये आकृति संख्या १४८ से १५०) आकृतिमें

कुण्डल के मध्यमें एक लोहधुरी एक इञ्च मोटी और भूपृष्ठके ऊपर ३ फीट ऊची बिठलायी गयी है। उस पर २॥ फीट तक ८ प्रति इञ्चके हिसाबसे चूडियो (Threads) तथा उन्हींकि सदृश एक ढिबरी (Nut) का आयोजन किया है यह ढिबरी लट्ठेसे जोडदेनेके कारण उसके साथ घुमा करती एवम् चक्रकी परिभ्रमण सख्या गिनती रहती है। साधारणतया चक्रकी १८० परिभ्रमणमें चूनेकी उत्तम पिसाई होती है। चक्रका परिभ्रमण होते समय उसके पीछे एक लोहेका चम्मच (Spoon) हाथमें पकडकर एक आदमी चल रहता है जिससे सब गिलावा उलट पुलट होकर चक्रके नीचे आकर चूर्णीभूत एवम् एकजी होता है। प्राय ४।५ घण्टोंमें एक घान पिसा जाता है।

तैय्यारी गिलावा ज्यों का त्यों २।३ दिनोंमें काममें लगाना चाहिये। अधिक समयतक पडा रहनेसे वह घनीभूत होने (Set) लगता है। ३।४ से अधिक दिन तक रखने की जरूरत हो तो उसकी दररोज पावडेसे उलट पुलट करते रहनेसे वह ८।१० दिन तक ताजासा रहता है। प्रसगवशात् ८।१० दिनासे ही बासे हुए गिलावेमें और थोडा चूना मिलाकर चक्रमें डालकर फिर पिस नेसे वह पुन अच्छी तरहसे काम आता है।

गिलावेके काम मगर ये पलस्तर, बन्धाऊ काम क्यों न हो मन्द गतिसे सूखने चाहिये। आकस्मिक ढंगसे सूखनेपर उसका बल कम होकर वे दृढ नहीं होते। अत चूनेका कामपर कमसे कम १५ दिनतक पानीसे तराई आय

सिमेण्ट अर्थात्

सिमेण्ट अर्था

जिस कडुडमे दै

मिट्टीका प्रमाण

नैसर्गिक कड्कडके बदले सामान्य चूनेका कड्कडका चूर्ण और मिट्टी पर्याप्त प्रमाणमें मिलकर गुन्धकर उसके गोले बना देते है और भट्टेमें खूब आँच लगाकर लौह कीटके सदृश पका देते है। तदुपरान्त उसको पीस कर जो चूर्ण बना देते है उसको सिमेण्ट कहते है।

उत्तम श्रेणीका सिमेण्ट अत्यन्त बारीक ताजा, रङ्गमें भूरा कुछ हरा फलसर, गुठली इत्यादिसे विहीन होता है। उसमें जल डालनेमात्रसेही किञ्चित् उष्णताका प्रादुर्भाव हो जाता है। सिमेण्टकी उत्तमताका परीक्षण करनेके लिये उसके तीन भाग लेकर उसमे एक भाग जल मिला देना चाहिये। इस समय यदि वह ताजा हो तो थोडा गरम दिखाइ देना चाहिये। इतना जल पर्याप्त न हो तो वह उत्तमताका लक्षण है। जरूरतके अनुसार और भी जल डालकर उसे गून्धकर उसका एक गोला ऐसी तरहसे बना देना चाहिये कि, वह नीचे रखा दिया जाय तो बगर फैलने वैसाही रह जाय। गोला बन जानेका समय कलाक मिनिटमें एक जगह लिख देना चाहिये। तदुपरान्त वह जमने तथा दृढ बनने (Set) लगता है। कहीं देरसे वह इतना ठोस हो जाता है कि उसमें बगैर जोरसे अंगुली नहीं घुस जा सकती। वह समय भी लिख देना। दोनोंकि बीचमें आघासे एक घण्टातक जितना ज्यादह काल हो उतना वह सिमेण्ट उत्तम श्रेणीका है ऐसा मालुम होता है।

बासा सिमेंटमें गुठलिया हो जाते है और उनमेंसे कहीं पत्थरसे कठोर बन जाते है। वह सिमेंट कामके लिये नितान्त बुरा है।

सिमटकी तौलका औसत परिमाण प्रायः प्रतिघन फूटके हिसाबसे ९० पौंड होता है। कम्पनीसे जिस बारेमें आता है उसका विस्तार सव्वा फूट अर्थात् वजन एक हंड्रेडवेट या ११२ पौंड होता है।

लकडी निर्वाचन

इमारती कामके लिये जिन लकडियोंका निर्वाचन किया जाय उनमें प्रमुखतया नीचे लिखे गुण बातोंका होना अत्यावश्यक है।

१ उनका रङ्ग कलसर, गहरा, २ तौल भारी, ३ रवा बारीक और ठोस, ४ वार्षिक वृद्धिके समकेन्द्र (annular) चक्र सँकडे और सूक्ष्म, ५ रेषाएँ सम्यक् एवम् सकीर्ण, ६ नस सूक्ष्म और ठोस, ७ चिरानकी सतह चिकनी और कठोर, ८ तथा बुरादा बारीक होना चाहिये।

जिस लकडीके चिरानकी सतह खुरदरी और नरम हो उसका बुरादा मोटा और रङ्ग सुफेद हो तथा उसम गांठ गर्द, टेकी, रगें ओर मजीरे हो ऊपरसे छिद्र दिखलायी दे फटनकी धारियां पडीहों, सर्द हवासे फूले और गरम हवासे फट जाय, तथा पानीमें पडनेसे सडती हो, वह लकडी इमारती कामके लिये नितान्त अनुपयोगी है।

लकडीकी रक्षाके उपाय

लकडियां हमेशा गीली और बन्द हवाम रखनेसे सडा करती है। ऐसे स्थानोंपर जो लकडियां रखी जाती है उनके अन्तगत भागमें तो घुन लग जाता है और बाहरसे उनपर दीमक अपना कब्जा कर लेती है। अत इन सब आपदाओंसे लकडियोंको बचानेके लिये निम्न लिखित उपायोंकी शरण लेना विशेष उपयुक्त एवम् लाभजनक है:—

१ लकडिया सदा सूखी वायुमें रखनी चाहिये। तथा उनको खुली हवा निरन्तर मिलजाय ऐसी तरह इमारतमें उनका आयोजन करना आवश्यक है। उदाहरणार्थ, घरनका दीवालस्थ अग्र भाग "ताखा" कामम गाड देनेके ऐवजम उघर थोडा पोला पन रखकर उसम हवा यथेष्ट देना चाहिये,

२ लकडीको मिट्टीके तेलमे पकानेका दुसरा उपाय है । इसके लिये पहिले एक बन्द कोठरीमें लकडी रखदे तथा उसके जिगरसे नमी और वायुका सारा अंश निकाल डाले । पश्चात् उसके भीतर पम्पोंकी सहायतासे १२० पौण्ड प्रति इञ्चके दावसे कोलटार मिश्रित गरम मिट्टीका तेल प्रवेशित करदे । अंग्रेजीमें इस पद्धतिको क्रिओ-सोटिंग (Creosoting) कहते है ।

३ लकडीका प्रयोग जहां जहा दीवाल, कांक्रीट, तथा अन्यान्य नमीकी जगहोंपर करना हो वहा वहां लकडीके उतने भागपर गरम अलकतरेकी गाढी पुताई करदे ।

४ तेलपानीसेही लकडीका खुला (Exposed) भागकी रक्षा होती जाती है । उसकी क्रिया इस तरह है कि, दो सेर वर्र (तीसी) का तेल लेकर उसमें आधा सेर मोम डालदे और जब-तक तेल और मोम एकरूप न हो जाय उसे आंचपर कढका ले । पश्चात् उसे नीचे उतार कर उसमे १० पौण्ड ताडपीनका तेल डालदे और चियडेकी सहायतासे लकडीपर पोतदे ।

लकडीकी नाप ।

लकडी फाटकर समथल (चौकोर) बनानेपर उसकी नाप घनफुटों मे निकाली जाती है । आजकल घनफुटोंकी नापमें दशमलव अर्थात् दशांश पद्धतिका आश्रय लिया जाता है । पहिले १२ प्रति इञ्च = १ इञ्च, १० इञ्च = १ घनफुट इस हिसाबसे नपाई होती थी । जो अभीभी कहीं कहीं बराबर इस पद्धतिसे होती है । बडी बडी कम्पनियोंमें लकडियां वजनपर टनके हिसाबसे बिकती है । सरकारी जङ्गल विभाग (महकमें) की दूकानोंमें बिम-भनेके हिसाबसे बिकती है । वहाँ १२॥ घ० फु० का एक बिसमना और ४ बिसमने अर्थात् ५० घ० फु० का एक टन समझा जाता है ।

अनघड लकडी अथवा लकडियोंके कुन्दाकी माप तना, मध्य, और शीर्षभाग, इन तीन जगहोंकी अथवा कमी कमी केवल मध्यभागके घेरेकी नपाइ कर उसे चारसे भाग दिया जाता है पश्चात् जो संख्या निकलती है उसी नापकी यह लकडी करार दी जाती है अर्थात् उतनीही चौडाई और मोटाई निर्धारित कर उसका क्षेत्र फल निकालते हैं और लम्बाईसे गुणाकर ' घननाप ' निकालते हैं।

इस पद्धतिसे जो नपाई होती है वह ठीक नहीं होती। दूसरी पद्धति जो विशेष उपयुक्त है वह यह है कि, तना, मध्य और शीर्ष, तीनोके घेरेका अलग अलग चतुर्थांश निकालकर उनके जोडके वर्गको ९ से भाग दे। उदाहरणार्थ, $अ_1$, $अ_2$, $अ_3$ यहाँ यदि क्रमश: तना, मध्य और शीर्षके घेरे हों तो $\left(\frac{अ_1}{४}+\frac{अ_2}{४}+\frac{अ_3}{४}\right)^२ - ९$ पूर्ण क्षेत्रफल अथवा $\left(\frac{अ_2}{४}\right)^२ =$ क्षेत्रफल समझकर उसे लम्बाईसे गुणाकारकर घनफूटमें नाप निकालते हैं।

यह क्षेत्रफल यदि वर्ग इंचमें आया हो तो उसे १४४ से भाग देकर उसके वर्गफूट निकाल लेने चाहिये। और उसे लम्बाइके फुटोंसे गुणाकार कर घनफूट निकालना चाहिये।

इमारती कामके लिये उपयुक्त लकडियाँ

१ देवदार—यह वृक्ष हिमालयमें ७००० फीट की ऊँचाइ पर होता है। इसका घेरा बडा नहीं होता वरन् इसकी पेडी या स्कन्ध (Trunk) शङ्कुके सदृश अत्यंत उंची सीधी बढती है। वजनमें इसकी लकडी अत्यन्त हल्की, रङ्ग भूरा, रेषाएँ बारीक, और नसें स्पष्ट होतीं हैं। गढने तथा रन्धाईके काममें इसकी लकडी अधिक परिश्रम नहीं लेती और मजबूती तथा टिकाउपनमें यथेष्टरूपसे प्रबल होती है। खिंचाव (Tension) और आडे दमके बाप

(Transverse Strain) को सहन करनेकी शक्ति इसमें पर्याप्त रूपसे रहती है। किंतु अत्यधिक खडा दाब पडनेपर इसकी रेषाओंके फट जानेका भय रहता है। इसमें गन्धाविरोजा तेल रहता है जिससे ताडपेन (turpent oil) बनाया जाता है। इसका उपयोग कांक्रीटके फर्मे के लिये तथा फर्निचर बनानेके काममें करते हैं।

२ साल या साखु—यह वृक्ष अत्यन्त विशाल और सरल होता है रवा मोटा और सगठित, रङ्ग कुछ ललाई लिये हुए भूरा होता है। इसे गढना और रन्धना परिश्रमका काम है। इसमें धूपमें मजीरे और ऐंठन उत्पन्न हो जानेका भय रहता है। इमारतमें सभी कामोंमे इसका उपयोग होता है। अधिक दाबके कारण यह झुक जाती है।

३ सागवान—यह लकडी भारतमें मलबार, बर्मा, विन्ध्याचल और दख्खनमें पैदा होती है। रङ्ग कुछ पीलापन लिये हुए भूरा होता है। रवा बारीक लोचदार होता है। चिराई, रन्धाई और पॉलिशके कार्य इसपर बडे सुन्दर होते हैं। वजनमें सालसे हल्का होता हुआ भी मजबूतीमें यह श्रेष्ठ है। इसकी विशेषता यह है कि, इसपर दीमक आदि किटाणुओंका प्रभाव नहीं चलता। इमारती कामोंमें खम्भे, धरन, तख्ते, जाली तथा नाव इत्यादि बनानेमें व्यवहृत होती है तथा फर्निचर कामम इसका व्यवहार विशेष रूपसे होता है।

४ आम—हिंदुस्थानके सब मुल्कोंम यह पैदा होती है। इसका व्यवहार साधारण सस्ते काममें अधिकतासे किया जाता है। रङ्ग भूरा, रवा मोटा और मजबुती कम है इसमें घुन एवम् दीमक लग जाते है। जलसे भिगनेसे और ऐंठनेसे खराब हो जाती है। तथापि मूल्यमें सस्ती होनेके कारण घरू काममें-विशेषत देहातोंमे इसका व्यवहार यथेष्ट रूपसे होता है।

५ शीसम्—यह वृक्ष विशाल तथा सुपुष्ट रहता है किन्तु इसमें सरलता नहीं रहती। रङ्गमें थोड़ी ललाई लिये हुए काला होता है। यह अत्यन्त मजबुत टिकाऊ होता हुआ रन्धाई चिराईके लिये सागसे परिश्रम लेता है। रवा बारीक गठा हुआ होता है। शीसमकी लकड़ी सागसे भाकीली (Brittle) होती है। फर्निचर कामके लिये यह विशेष उपयुक्त होनेके कारण महँगी रहती है। इमारतमें कीनसाही कामपर चल सकती है। इस पर पालिश बहोतही अच्छी चढती है।

६ बबूर या किकर—यह भारत वर्षका सर्वव्यापी वृक्ष है। रङ्गमें मध्यवर्ती भाग कुछ ललाई लिये हुए काला रङ्गका होता है। यह अत्यन्त कठोर मजबूत और टिकाऊ लकडी है। गाडियों के पहिये, खेतीके औजारों और कुओंके नेवक आदि काममें विशेष रूपसे आती है। इस वृक्षकी तीन जातियाँ हैं। पगली बबूर मीठी बबूर और देवबबूर। पगली और देवबबूरका इंधन और कोयला बनानेके काममें उपयोग होता है। मीठी कीकरका व्यवहार उपरोक्त और इमारती काममें होता है। इसकी धरन, छाजन, खम्भे आदि बनते हैं। इसके उपर पालिशभी अच्छी चढती है।

७ सिरस —रङ्ग गर्भमें कुछ कत्थर लाल और बाहरसे सुफेद होता है। मजबूतीमें मध्यम रेषायें टेढीमेढी होती हैं। इमारती कामम खम्भे आदिम खेतीके औजारों, और तेल पेरनेके कोलुओंको बनानेमें व्यवहृत होती है।

८ नीमः—उस लकडीका मध्यभाग रक्तचंदन जैसा कत्थर लाल और बाह्यभाग पीलापन लिये हुआ सुफेद होता है। इसपर दीमक और घुन आदि कीटोंका आक्रमण नहीं होता। ठण्डी और नम (moist) वायुमें यह अत्यधिक रूपसे झुक जाती है। इसका व्यवहार छाजन, खम्भे, खेतीके औजारों गाडिया तथा मकानके तीर आदि बनानेमें होता है।

९ सेनः—जिसे ऐनमती या सगडा भी कहते हैं। यह वृक्ष सालके सदृश वडा और इसकी लकडी भी उसीके सदृश होती है। इसे गढना और रन्धना बडे परिश्रमका कार्य है। इसमें दीमक बहुत कम लगती है। सूखती बहुत देरसे और जलशोषण शक्ति विशेष है। तीव्र धूपमें इसमें दरारें पडती हैं। बाजारमें इसे लोग सालकी लकडी बताकर बेंचते हैं। कैची, तीर तथा नावके बनानेके काममें इसका उपयोग होता है।

१० तुनः—इसका रङ्ग पीलापन लिए हुए भूरा एवम् लोचदार होता है। इसकी रेषाएँ अत्यन्त बारीक होती हैं। मजबूती और टिकाऊपनमें यह लकडी बडी कीमती है। बल्कि बडे नापके टुकडे न मिलके कारण इसका व्यवहार इमारती कामोंमें थोडाही होता है। इसपर पॉलिश अच्छी चढती है। अत फर्निचर तथा ऐसेही दुसरे छोटेही कामोंमे इसका आयोजन होता है।

११ चुकः—यह एक अच्छी मजबूत और टिकाऊ लकडी है। परतु मिलती अत्य त कम। अधिकाशरूपसे बारीक कामोंमें आती है। रङ्ग भूरा, रवा बारीक और लोचदार रहता है।

१२ अञ्जनः—इसका आकार बडा रङ्ग कलसर ललाई लिये हुए काली रेखायुक्त, रवा बारीक, रेषाएँ आडी, भारी, कडी और टिकाऊ लकडी है। यह ऐंठती नहीं किन्तु फटती है। वजनमें प्रति घन फूट ८२ पौंड होनेसे पानीमें डुब जाती है। गढाई रन्धाई इत्यादिमें बडे परिश्रम लेती है। इमारतके सब काम के लिये उत्तम है।

१३ अर्जुनः—पेड बडा, काली धारियोंके साथ भूरा रङ्ग, लकडी अत्यन्त कठोर, तथा खुली हवामें और धूपमें चटकती है। कौनसेभी इमारती काममें चल सकती है।

१४ अवनुस.—रङ्ग गहरा काला, वजन भारी, रवा बारीक, लोचदार, यह जलवायुसे विकृत होती है। फर्निचर आदि बारीक कामोंमें तथा पच्चेकारीके कामोंम इसका व्यवहार होता है।

१५ इमली:—राजपुतानेके अतिरिक्त सभी जगह इसकी उत्पत्ति होती है। आकारमें यह बड़ा वृक्ष है। कलसर, बारीक रेषाएँ, बदामी भूरा रङ्ग, मजबूत और गढ़ने रन्धनेके काममें बहोत परिश्रम लेनेवाली लकडी है। कोल्हू, मलेट, छुआके चेमों, हथियारके डण्डो, तथा गाडियोंके काममें व्यवहृत होती है।

१६ फरूई:—पीलापन लिए हुए लाल रङ्ग, बड़ी मजबूत, ठोस, लचकदार, गढ़ाई रन्धाईके कामोंमें बड़ी अच्छी लकड़ी होती है। इमारतमें खम्भो छावन इत्यादि, खेतीके औजारो तथा जहाँ जहाँ दाब (Compression) अधिक हो उन सब कामोंमें इसका उपयोग होता है।

१७ फरमू, फरसना:—यह हिमालय, सिलटा और मलाया द्वीपमें पाया जाता है। यह पेड ८० से १०० फीट तक ऊचा होता है। लकडी बहुत भारी होनेके कारण सूखनेपर भी पानीमें डूबती है। इमारतमें सभी कामोंमें उत्कृष्ट लकडी होती है। यह एक प्रकारका भारतका 'ओक' (Oak) है। अत्यत ठोस, मजबूत और टिकाऊ होता है।

१८ फल्मा:—पेड बडा, लकडीका रङ्ग गुलाबी, मादल भूरा, साधारण कड़ी, एकसी रेषा, मजबूत और गढ़ाई रन्धाइके काममें अच्छी लकडी है। फर्निचर तथा खेतीके औजारोमें इसका विशष प्रयोग होता है।

१९ खैर:—पेड छोटा लकडीका अन्तर्भाग कत्थई या चकरेजी बाह्य भाग कुछ पीला होता है। भारी तथा मजबूत लकडी है। पानीमें बिलकुल सडा नहीं करती। छोटे खम्भों, खेतीके औजारो गाडीके पहियों इत्यादिमे इसका व्यवहार होता है।

२० जम्बई:—रङ्ग ककरेजिया, रवा बारीक, वजन भारी, मजबूत टिकाऊ लकडी है। इसपर दीमक घुन इत्यादिका आक-

मण होता है । इमारतके विशेपत देहातोंमे सभी कामपर चलती है।

२१ विजयसाल, हन्नी, विवलाः—लकडी भूरे हरे रङ्गकी, मजबूत, ठोस तथा टिकाऊ होती है। रवा बारीक सघन; रन्धाई गढाईके काममें वडी मुष्किलसे आती है। इसे न तो दीमकही लगती है, न जलवायुकाही प्रभाव इसपर असर करता है। सभी इमारती कामोंम, गाडियोंके डाचोंमे, खेतीके औजारोंमें, तथा फर्शबन्दी, रेल्वेस्लीपर्स आदि कामोंमें आती है।

२२ मशवलः—इसके लट्ठे १० फीटतक लम्बे बाजारमें विकते हैं। यह अत्यन्त कर्री, टिकाऊ और बारीक रेपेकी लकडी है। खम्भों, कचियों तथा फर्निचरके काममे इसका प्रयोग होता है।

२३ हरसू या हेमलसूः—वृक्षका आकार बडा तथा अन्तर्गत काष्टका रङ्ग पीलापन लिये हुए भूरा होता है। यह लकडी सामान्यरूपसे कर्री होती है, तथा ऐंठती नहीं। जलप्रभावसे नितान्त अबाधित रहती है। इसका उपयोग नाव बनाने, फर्शकाम, नौकादण्ड इत्यादिमे होता है।

२४ हरः—रङ्ग भूरा, रवा बारीक, रन्धाई गढाइके कामम परिश्रम लेनेवाली यह लकडी है ' यह मजबूत और कठोर होती है। विशेप करके हल्के घरू काममें, फर्निचरमें, खरादका काममें और स्लीपर बनानेमें इसका उपयोग होता है। फलोंसे रङ्ग बनाया जाता है।

धातु समूह

लोहा:—आज कल लोहा प्रमुखतया तीन प्रकारका होता है। (१) ढलाऊ लोहा (Cast iron) (२) गढाऊ लोहा (Wrought iron) तथा (३) फौलाद अथवा इस्पात (steel)

ढलाउ लोहा—उसका टुकडा काटकर देखनेसे उसमें नीले नीले कण दिखलायी देते हैं। यह अत्यंत झणकीला समझा जाता है। उसमें चमक पर्याप्त रहती है। शुभ्र रङ्गके अथवा स्थान स्थानपर काले दागवाले प्रभाहीन कण होनेसे निकृष्ट और मजबूतीमें न्यून समझा जाता है।

ढलाऊ लोहा अत्यंत चाफीला (Brittle) रहता है। उत्तम ढलाऊ लोहेका पृष्ठभाग अत्यन्त चिकना होना चाहिये। उसके सब किनारे सम्यक रूपसे ढलेहो। हल्के हाथसे हथौड़ा चलातेही उसमेंसे स्पष्ट रूपसे टङ्कार ध्वनि निकलता है। कारण आघात करनेसे वहाँपर आघातचिन्ह अङ्कित होकर उसका कोनाही भाग चिपटा हो जाय। ढलाऊ लोहेके उत्पादनके समय यदि उसके भीतर वायु (हवा) घुस जाय तो उसमें पोलापन आजाता है और ऐसे परिस्थितिमें उसपर हथौडेका, आघात करनेसे पोली ध्वनि निकलती है। उसके सामानमें कहीं घेरा, सन्धि न होना चाहिये।

ढलाऊ लोहा कभी झुकता नहीं। ऊचाईसे गिरने अथवा उसपर जोरका आघात होनेसे उसके टुकडे टुकडे हो जाते हैं। यह लोहा तपाकर लाल करनेके पश्चात् उसपर जल छोडनेसे टूट जाता है। ललाई आने तक इसे उष्णता देनेसे यह मुलायम हो जाता और सुफेदी आने तक तपानेसे सरलतापूर्वक जोड़ा जा सकता है। यह चुम्बक से अत्यन्त शीघ्र आकर्षित हो जाता और उसकाभी चुम्बक बनाया जाता है। किन्तु चुम्बकका आकर्षण

गुण उसमें अधिक कालतक टिकता नहीं। नम जलवायुमें इस पर जग चढ जाता है। ढलाउ लोहेका एक घनइञ्चका वजन० २६ पौण्ड तथा घनफूटका ४५४ ५ पौण्ड होता है।

२ गढाऊ लोहा (wrought iron)—आजकल बाजारमें उत्तम फौलाद अल्प मूल्यमें पाये जानेके कारण गढाऊ लोहेका व्यवहार बहोतही कम होने लगा है। फिर भी पनालीदार या सादी जस्तविलेपित चद्दर (galvanised iron sheets) गोल और चोकोर छड, जल वाहक पतली नलिकाएँ, झिरियाँ (Rivets) बुलट, पेचकस (Screws) इसके ही बनते हैं।

यह लोहा तपानेपर पर्याप्तरूपसे नरम होता है और ठोक पीस कर इष्ट आकार दिया जा सकता है। इसका वजन प्रति घन इञ्चका ० २८ ओर घनफुटका ४८० पौण्ड होता है। यह श्रेणी विशेष ढलाऊ लोहेसे कर्बन (carbon) निकालकर तैय्यार किया जाता है।

३ फौलाद—फौलादमें नरम (Mild) एवम् कठोर (Hard) दो प्रमुख जातियाँ हैं। गर्डर, एँगल आयर्न, टी आयर्न, इत्यादि सामान विशेषतया नरम फौलादके बनाते हैं। कठोर फौलाद

आकृति न १५१ से १७४
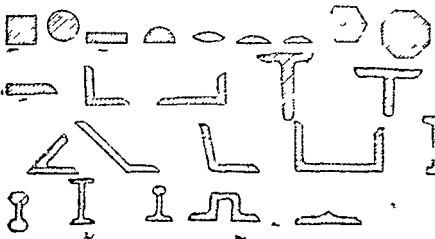
हथियार आदि बनानेमें व्यवहृत होता है। यह महगा रहता है। नरम फौलादके व्यवहारमें आनेवाले प्रकार आकृति १५१ से १७४ में दिये गये हैं।

फौलादके गुणधर्म—फौलादको आगमें तपाकर उसे अकस्मात् जलमें डुबाकर ठण्डा करनेसे उसमें अत्यन्त कठोरता आ जाती है। इसीको फौलादको या हथियारको पानी देना कहते हैं। कभीकभी फौलादसे बने हुए हथियार तथा अन्यान्य सामानका पृष्ठभाग कठोर बनानेके लिये उसको जानवरोंका सींग, चपड़े, हड्डियाँ अथवा खुरों जलाकर उस राखमें गाड़ दिया जाता और लोहारके भट्टेमें उसे मध्यम आंचमें तपानेके उपरान्त उसे निकालकर आंचमें लाल किया जाता है। और जलमें छोड़ दिया जाता है। ऐसे करनेसे उसका कवच कठोर बन जाता है। उसको अंग्रेजीमें Case hardening कहते हैं।

लोहेका जङ्ग—लोहेको नम (जलयुक्त) वायुमें रखनेसे उसपर ऑक्सिजनका परिणाम होकर अत्यन्त शीघ्र जङ्ग चढ़ जाता है। लोहेके चद्दरोंपर विशेषतया समुद्रके निकटस्थ क्षारयुक्त नम वायुमें उसका विशेष भय रहता है। आरम्भिक थोड़ेसे चढ़े हुए जङ्गके कारण उसमें एक प्रकारका विद्युत्प्रवाह प्रवाहित होकर पहिले जङ्गमें और भी वृद्धि होती है। लोहेपर जस्तेका पतला स्तर देनेसे यह भय कम हो जाता है। समुद्रकिनारेकी जलवायुमें स्थित लोहेके जस्तविलेपित चद्दरोंके उपर तैलरङ्गके विशेषतया (Red lead) रंगका भस्म शिशीका तेलमें मिश्रितकर उसके विलेपनसे और भी थोड़ा कम होता है। आजकल चद्दरोंका ऊपरी भागपर सिमेण्ट पानीमें मिलाकर उससे पहिला

पतला (३/१६ इञ्च) लेप देते है और वह सूखजानेपर आठ दस दिनके पश्चात् उसपर और भी एक दूसरा इतनाही पतला लेप देते है। उस समय उसपर १५।२० दिनोंतक पानीका तर देना आवश्यक है। इससे जङ्गका भय बिलकुल नहीं रहता।

निम्नलिखित सारिणीमें लोहेकी अन्तिम धारण शक्ति (Ultimate stress) तथा व्यवहार धारण शक्ति (working stress) दिये हैं।

लोहेकी श्रेणी	अन्तिम धारणशक्ति प्रति वर्ग इ. टन		व्यवहार धारणशक्ति प्रति वर्ग इ. टन		विशेष
	तनाव	दबाव	तनाव	दबाव	
ढलाऊ लोहा Cast Iron	१०	५०	१॥	८	ढलाऊ लोहेको ढालते समय उसमें अधिक दोष रह जाते है, इस हेतु व्यवहारमें धारण शक्ति न्यून गिनी जाती है।
गढाऊ लोहा Wrought Iron	२४	२०	५	४	
फौलाद Mild Steel	३१	३०	८	७॥	

मोटाई अथवा व्यास इञ्चमें	चौकोर गज ■		गोल गज ●		छड़की परिधि अथवा लपेट-इञ्च	विशेष
	१ फुट लम्बे गजका वजन पौण्ड	गजके छेदका क्षेत्रफल वर्ग इञ्च	१ फुट लम्बे छड़का वजन पौण्ड	गजके छेदका क्षेत्रफल वर्ग इञ्च		
१	२	३	४	५	६	७
१	३ ४००	१ ००००	२ ६७०	७८५४	३ १४१६	ये नग २० से २६ फुट तक लम्बे मिलते हैं।
१/१६	३ ८३८	१ १२८९	३ ०१४	८८६६	३ ३३७९	
२/१६	४ ३०३	१ २६५६	३ ३७९	९९४०	३ ५३४३	
३/१६	४ ७९५	१ ४१०२	३ ७६६	१ १०७५	३ ७३०६	
४/१६	५ ३१२	१ ५६२५	४ १७३	१ २२७२	३ ९२७०	
५/१६	५ ८५७	१ ७२२७	४ ६००	१ ३५३०	४ १२३३	
६/१६	६ ४२८	१ ८९०६	५ ०४९	१ ४८४९	४ ३१९७	
७/१६	७ ०२६	२ ०६६४	५ ५१८	१ ६२३०	४ ५१६०	
८/१६	७ ६५०	२ २५००	६ ००८	१ ७६७१	४ ७१२४	
९/१६	८ ३०१	२ ४४१४	६ ५२०	१ ९१७४	४ ९०८७	
१०/१६	८ ९७८	२ ६४०६	७ ०५१	२ ०७३९	५ १०५१	
११/१६	९ ६८१	२ ८४७७	७ ६०४	२ २३६५	५ ३०१४	
१२/१६	१० ४१	३ ०६२५	८ १७८	२ ४०५३	५ ४९७८	
१३/१६	११ १७	३ २८५२	८ ७७३	२ ५८०२	५ ६९४१	
१४/१६	११ ९५	३ ५१५६	९ ३८८	२ ७६१२	५ ८९०५	
१५/१६	१२ ७२	३ ७५३९	१० ०१	२ ९५८३	६ ०८६८	
२	१३ ३६	४ ००००	१० ४९	३ १४१०	६ ५८३२	

सूचना —छड़की मोटाई निकालनेके लिये निम्न लिखित क्रम व्यवहृत होता है—१/१६ इञ्च=१ आना ()॥) १/८=१ सूत=१ आना ()॥) आनेका प्रमाण अत्यन्त सरल होता है। मोटाईका आः गज = आठ आना (॥))।

टिनपनी पट्टियां Hoop Iron की सारिणी

चौड़ाई इंच / मोटाई इंच	१	१¼	१½	१¾	२"	२¼	२½	२¾	३"	विशेष
१/१६	२०८	२६०	३१३	३६५	४१७	४६९	५२१	५७३	६२५	पाट नग १८ फुट लम्बाई के मिलते हैं।
१/८	४१७	५२१	६२५	७२९	८३३	९३८	१ ०४	१ १५	१ २५	
३/१६	६२५	७८१	९३८	१ ०९	१ २५	१ ४१	१ ५६	१ ७२	१ ८८	
१/४	८३१	१ ०४	१ २५	१ ४६	१ ६७	१ ८८	२ ०८	२ २९	२ ५०	
५/१६	१ ०४	१ ३०	१ ५६	१ ८२	२ ०८	२ ३४	२ ६०	२ ८६	३ १३	
३/८	१ २५	१ ५६	१ ८८	२ १९	२ ५०	२ ८१	३ १३	३ ४४	३ ७५	
७/१६	१ ४६	१ ८२	२ १९	२ ५५	२ ९२	३ २८	३ ६५	४ ०१	४ ३८	
१/२	१ ६७	२ ०८	२ ५०	२ ९२	३ ३३	३ ७५	४ १७	४ ५८	५ ००	
९/१६	१ ८८	२ ३४	२ ८१	३ २८	३ ७५	४ २२	४ ६९	५ १६	५ ६३	
५/८	२ ०८	२ ६०	३ १३	३ ६५	४ १७	४ ६९	५ २१	५ ७३	६ २५	
११/१६	२ २९	२ ८६	३ ४४	४ ०१	४ ५८	५ १६	५ ७३	६ ३०	६ ८८	
३/४	२ ५०	३ १३	३ ७५	४ ३८	५ ००	५ ६३	६ २५	६ ८८	७ ५०	
१३/१६	२ ७१	३ ३९	४ ०६	४ ७४	५ ४२	६ ०९	६ ७७	७ ४५	८ १३	
७/८	२ ९२	३ ६५	४ ३८	५ १०	५ ८३	६ ५६	७ २९	८ ०२	८ ७५	
१५/१६	३ १३	३ ९१	४ ६९	५ ४७	६ २५	७ ०३	७ ८१	८ ५९	९ ३८	
१	३ ३३	४ १७	५ ००	५ ८३	६ ६७	७ ५०	८ ३३	९ १७	१० ००	

कोण लौह (L) की सारिणी

आकार इंच	वज़न पौंड	आकार इंच	वज़न पौंड	आकार इंच	वज़न पौंड
समद्विभुज		३½×३½×१/४	८ ४५	४×२½×१/४	५ ३१
१×१×१/८	८०	×३/८	११ ०५	×५/१६	६ ५८
×३/१६	१ १५	४×४×३/८	९ ७२	×३/८	७ ८१
×१/४	१ ४९	×१/२	१२ ७५	४×३×५/१६	७ ११
१¼×१¼×३/१६	१ ४७	×५/८	१५ ६७	×३/८	८ ४५
×१/४	१ ९१	५×५×१/२	१६ १५	×१/२	११ ०५
१½×१½×३/१६	१ ७९	×३/४	२३ ५९	५×३×५/१६	८ १७
×१/४	२ ३३	६×६×३/८	१४ ८३	×३/८	९ ७२
१¾×१¾×३/१६	२ ११	×१/२	१९ ५६	×१/२	१२ ७५
×१/४	२ ६७	×५/८	२४ १८	६×३×३/८	११ ००
२×२×३/१६	२ ८३	×३/४	२८ ७०	×१/२	१४ ४६
×१/४	३ १९	विषमद्विभुज			
२½×२½×३/१६	४ ४५	३×२×१/४	४ ०४	६×३½×३/८	११ ६४
२½×२½×१/४	४ ०४	×३/८	५ ८९	×१/२	१५ ३१
×५/१६	४ ९८	३×२½×१/४	४ ४६	६×४×३/८	१२ २७
×३/८	५ ८९	×५/१६	५ ५१	×१/२	१६ १५
३×३×१/४	४ ९०	×३/८	६ ५५	६½×४½×५/८	२२ ०४
×५/१६	६ ०५	३½×२½×५/१६	६ ०५	×३/४	२६ १३
×३/८	७ १८	×३/८	७ १८	७×३½×५/८	२० ९८
×१/२	९ ३६	×१/२	९ ३६	×३/४	२४ ८९

ये नग १५ फुट लम्बाईके होते हैं तथा उनमेंसे कुछ तो ३० फुट की लम्बाई तक भी पाये जाते हैं।

फौलादी गर्डरों (I BEAMS)की (धरनकी) सारिणी

नंबर	आकार इंच	एक फूट टुकडेका वजन पौंड	उठावकी मोटाई इंच	नंबर	आकार इंच	एक फूट टुकडेका वजन पौंड	उठावकी मोटाई इंच	विशेष
१	३×१$\frac{१}{२}$	४	० १६	१६	९×७	५८	० ५५	सारिणीके दूसरे खानेकी संख्यामेंसे पहिली संख्या उभाड़ अथवा ऊँचाई दिखलाती है तथा दूसरी मतलबकी चोड़ाई दिखलाती है।
२	३×३	८ ५	० ०२	१७	१०×५	३०	० ३६	
३	४×१$\frac{३}{४}$	५	० १७	१८	१०×६	४२	० ४०	
४	४×३	९ ५	० २२	१९	१०×८	७०	० ६०	
५	४$\frac{३}{४}$×१$\frac{३}{४}$	६ ५	० १८	२०	१२×५	३२	० ३५	
६	५×३	११	० २१	२१	१२×६	४४	० ४०	
७	५×४	१८	० २९	२०	१२×६	५४	० ५०	
८	६×३	१२	० २६	२३	१४×६	४६	० ४०	
९	६×४$\frac{१}{२}$	२०	० ३७	२४	१४×६	५७	० ५०	
१०	६×५	२५	० ४१	२५	१५×५	४०	० ४२	
११	७×४	१६	० २५	२६	१५×६	५९	० ५०	
१२	८×४	१८	० २८	२७	१६×६	६२	० ५५	
१३	८×५	२८	० ३५	२८	१८×७	७५	० ५५	
१४	८×६	३१	० ४४	२९	२०×७$\frac{१}{२}$	८९	० ६०	
१५	९×४	२१	० ३०	३०	२४×७$\frac{१}{२}$	१००	० ६०	

गर्डरों अर्थात् धरनोंमें प्राय दो प्रकार होते हैं। जिनमेंसे एक British Manufactured विलायत निर्म्मित तथा दूसरा (continental) प्रदेशीय कहा जाता है। इन दोनोंमें प्रथम प्रकारका माल उत्कृष्ट एवम् विश्वसनीय होता है। किन्तु वह इच्छित प्रमाणमें नहीं मिलता। बाजारमें जो अधिकांश रूपसे धरन मिलती हैं वे प्राय दूसरे श्रेणीकी अर्थात् प्रदेशीय जातिकी होती हैं। उनके वजन उक्त निर्दिष्ट सारिणीमें उल्लेखित किये अनुसार निर्धारित रहते हैं। यह धरन ४० फुट लम्बाईतककी पायी जाती है। आर्डर

देनेसे यह नितान्त इच्छित लम्बाईके नहीं मिलती। उदाहरणार्थ, १२ फुटकी धरन मंगवानेसे कुछ १२॥ फुट तककी भी आजाती है, परिणाम यह होता है कि इनका मूल्य वजनपर निर्धारित होनेके कारण अवशेष भाग व्यर्थही चला जाता और वह किसी काममें न आने के कारण व्यर्थही अधिक व्ययकी ठोकर सहनी पड़ती है। किन्तु उसके लिये कोई उपाय नहीं है। कितनीही धरनोंमें तो उनकी नवीनावस्थामेंही कुछ तिर्छापन झुकाव पाया जाता है। उन्हें इमारती कामोंमें व्यवहृत करनेके पूर्व उनपर हथौड़े चला कर सम्यक् बनाते हुए काममें लाना पड़ता है। इन धरनोंमें यदि गंज चढ़ा हो तो उसे खुरचकर उनपर मिट्टीके तेलसे तर किया हुआ चिथड़ा घुमाना पड़ता है तथा उसे सूखे चिथड़ेसे पोंछकर तेल रङ्गके दो-चार हाथ घुमाने पड़ते हैं। धरनोंका इमारती काममें व्यवहृत होनेवाले चूनसे प्रत्यक्ष सम्बन्ध होना अच्छा नहीं। उस भागपर वज्रलेप (cement) का व्यवहार करे अथवा (Stove) विलायती चूल्हेके (Burner) ज्वाला उत्पादक यन्त्र उसका गंज जलाकर उसे खुरच डाले।

फौलादी चद्दर

फौलादी चद्दर निम्नलिखित फीट लम्बाई चौड़ाईकी मिलती है—

६×२ ६×८ ८×२, ८×४ १०×३, १०×४, १०×३ १२×४,

इनकी मोटाई १/१६ से, तथा १/८ इस हिसाबसे एक-एक अंशके प्रमाणमें (१/१६ इञ्चके प्रमाणमें) वृद्धिङ्गत होती हुई एक इञ्च तक स्थिर रहती है।

वजन—१/१६ इञ्ची मोटी चद्दरका प्रति वर्ग फुटके पीछे २·५५ पौण्ड होता है। इससे चाहे जिस मोटाईकी चद्दरका वजन निकाला जाता है। उदाहरणार्थ—१/८' मोटी चद्दरका वजन २·५५×२= ५·१०, १/४ चद्दरका २·५५×१०=१०·२० पौण्ड प्रति वर्गफुट (Galvanised) होता है।

जस्तेका पानी चढायी हुई चद्दर

इन चद्दरोंमे दो श्रेणियाँ होती है। एक तो समान् अर्थात् समथल पेटेकी तथा दूसरी पनालीदार। इनकी मोटाई इञ्चोंमें न निकालकर ' बर्मिंङ्गहम वायरगेजके नम्बरोंमें निकाली जाती है। उसे B W G नम्बर अमुक अथवा केवल २२ गेजी, २४ गेजी इस तरह कहते हैं। पनालीदार चद्दरें २६ से ३२ इञ्ची चौड़ाई तथा १८,२०,२२ तथा २४ गेजी मिलती है। उनकी सारिणी नीचे दी गयी है—

पनालीदार चद्दर

चद्दर की लम्बाई	२६ इञ्ची चौडे पनालियोंकी रत्तलमें				३२ इञ्च चौडी पनालियोंकी रत्तलमें			
	गेज १८	२०	२२	२४	१८	२०	२२	२४
६	३१	२४	१९½	१६	३६	२८½	२३	१९
७	३६½	२८	२३	१९	४२½	३३	२७	२२½
८	४१½	३१	२६	२२½	४३	३८	३१	२५½
९	४६½	३६	२९½	२४	५५	४२½	३४½	२९
१०	५१½	३९	३२	२७	६१	४८	३९	३२

दो हण्ड्रेडवेटमें एक गट्ठा इस हिसाबसे लोहेकी चद्दरोंकी गाँठे आती है। कम लम्बाईवाले चद्दरोंको कुछ अधिक मूल्य देना पड़ता है।

पनालीदार चद्दरें जड़नेके लिये जस्तेका पानी चढाये हुए पेंच बजनसे मिलते है। उन्हें बिरञी, स्क्रूल, एक सूत, आधा सूत इत्यादि नामासे पहिचानते हैं। एक तथा १॥ इञ्ची लम्बे एवम् ½ इञ्ची मोटे काँटे मोसके भावसे मिलते हैं।

एक हंड्रेडवेटमें जस्ती स्क्रू १½ इंच लम्बाईके २४ ग्रोस आते हैं

१¾	"	"	२२ "	"
२	"	"	१६ "	"
१½ × ½ हर्चा बुगडी बोल्ट			२१ "	"
१¼ × ½ "	"		२४ "	"
½ × ½ "	"		३१ "	"
½ × ½ "	"		३१ "	"

समथल चद्दर (जस्ती)

आकार	१/१६ इंच मोटा	१/८ इंच मोटा	१८ गेज	२०	२२	२४	
६'×३'	६७	९४	३७½	३०	२५½	२०	पौंड
६'×४'	९५	१३०	५०	४०	३२½	२७	
८'×३'	६३	१०६	५०	४०	३०½	२७	
८'×४'	८७	१७४	६७	५४	४३½	३५½	

इसके उपरान्त ताम्बा-टीन-जस्ता और शीसा ये सब धातु भवन निर्माण कार्यमें अत्यन्त कम व्यवहृत होते हैं। अतः उनका त्रोटक विवरण यहाँ दिया जायगा।

ताम्बा—इस धातु विशेषके मलमिश्रित होकर विकसित रूपमें पाये जाते हैं। कभी-कभी यह धातु विशुद्ध धातुके रूपमें भी मिलती है। किन्तु अधिकतया खदानसे निकले हुए ताम्र उत्पादक अशुद्ध धातुके होकोंमें लोह, गन्धक, सुरमा तथा शङ्खियाका सम्मिश्रण रहता है। इसकी शुद्धीकरण प्रणाली लोहकी प्रणालीसे मिलती जुलती होती है। इसका रङ्ग एक विचित्र रूपका लाल होता है। यह अत्यन्त लोच दार धातु है। जिसके कारण इसकी पतली चद्दरें बनायी जा सकतीं एवम सूक्ष्माति सूक्ष्म तार खींचे जा सकते हैं। इसकी तनाव

सहन करनेकी शक्ति गढाऊ लोहेकी अपेक्षा कुछही न्यून अर्थात् प्रतिवर्ग इञ्चके हिसाबसे १६ टन होती है। भवन निर्माण कार्यमें इसका उपयोग अधिकतया बिजलीके सम्पूर्णकामों, विभिन्न धातुओं के जोडों तथा आवश्यक गुम्बजोंपर छतोंका सृजन करनेमें होता है।

जस्ता—इसका विशुद्धीकरण अन्यान्य धातुओंसे कुछ पृथक् है। इसकी भी पतली चद्दरें बन सकती हैं तथा छत-नालियों इत्यादि कार्य्योंमे व्यवहृत होता है। अधिकतया इसका उपयोग लोहेकी चद्दर और नलिकाओंपर पानी चढाने एवम् जोडमें होता है। इसकी सतहपर शुभ्र क्षारसा जम जाता है। किन्तु वह उसके अन्तर्गत मूल धातुका संरक्षण करनेमें विशेष उपयोगी होता है। समुद्री क्षारयुक्त जलवायु एवम् परिमाणुओंसे यह शीघ्र विनष्ट हो जाता है।

टीन—भवन निर्माणके कार्यमें इसका व्यवहार मूलरूपमें नहीं होता। किन्तु यह जोड अर्थात् टांका देने में विशेष उपयोगी होता है। प्रसङ्गवशात् लोहेकी चद्दरोंपर संरक्षक रूपमें भी इसका प्रयोग होता है। संशोधन प्रणाली अन्य धातुओंसे बहुत कुछ सादृश्य रखती है। टीन अत्यन्त लोचदार एवम् मृदु धातु है। इस पर क्षारका प्रभाव शीघ्र नहीं होता।

शीसा—अशुद्ध एवम् धातु मिश्रित ढोकोंसे इसे भी ताम्रा टीन प्रभृति धातुओंकी प्रणालीसे निकाला जाता है। यह अत्यन्त नरम-चिम्मड सूक्ष्माति सूक्ष्म होनेवाला भारी एवम् तनाव और वर्द्धक शक्तिसे विहीन होता है। भवन निर्माणके कार्यमें इसका उपयोग समथल छत एवम् चीरेबन्दीके काममें होता है प्रसङ्ग वशात् स्थपतिवर्ग इससे पानीके नलोंको एकसाथ जोडने तथा धरनोंको बिछावन देने इत्यादिका काम लेता है। इसका उपयोग पीनेके जलके हौदों अथवा नलोंमें करना स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अच्छा नहीं। क्योंकि संशोधित पेय जलके कारण यह धातु

अत्यन्त सूक्ष्म प्रमाणमें घुल जाती एवम् उसका सम्मिश्रण उस जलके साथ होनेसे यह विषाक्त बनकर रोगोत्पत्तिका कारण बन जाता है। शीसेपर तेजाबकी तरह तीक्ष्ण आम्लका कोइ परिणाम नहीं होता। छत पर एकत्रित होनेवाले वर्षाके जलकी निकासीके लिये बनायी जानेवाली नालियोंके सृजनमें भी इसका व्यवहार होता है।

पीतल—यह मिश्रित धातु है। इसमें जस्ता और ताम्बा अनुक्रम से १ २ प्रमाणमें सम्मिलित रहता है। इसमें उतने शीघ्र जङ्ग लगनेका भय नहीं रहता जितना लोहे और ताम्बेके सम्बन्धम रहता है। साथही माञ्जनेपर इसमें चमक खूब आ जाता है। भवन सम्बन्धी कार्यमें इसका उपयोग, खिड़कियाँ, सिकड़ियाँ, कोण्डे, ताले, पच, इत्यादि छोटे-छोटे कार्योंमें होता है।

भरत-यह भी मिश्रित धातु है। जिसमें ताम्बा और टीनका सम्मिश्रण होता है। यह भी उपरोक्त प्रकारके छोटे-छोटे कार्य्योंमें व्यवहृत होता है।

अन्य मिश्रित धातुओंका सम्बन्ध भवनसम्बन्धी कार्योंसे न होनेके कारण उनका विवरण यहाँ लिखना व्यर्थ और अनवश्यक है।

सूचि

ट वर्ग

त वर्ग

य वर्ग